# तेतिरीय ब्राह्मणम्

#### Colophon

This document was typeset using  $X_{3}$   $M_{E}$ , and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several  $M_{E}$  macros designed by H.L. Prasād. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

#### Acknowledgements

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http://sanskritdocuments.org/ and https://sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma. See also http://stotrasamhita.github.io/about/

FOR PERSONAL USE ONLY
NOT FOR COMMERCIAL PRINTING/DISTRIBUTION

# अनुऋमणिका

| अष्टकम् १        |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 1   |
|------------------|---|---|---|---|---|---|---|---|---|--|---|---|--|---|---|---|---|---|-----|
| प्रथमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 1   |
| द्वितीयः प्रश्नः |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 23  |
| ਰੂਨੀय: प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 37  |
| चतुर्थः प्रश्नः  |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 55  |
| पञ्चमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 74  |
| षष्ठमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 92  |
| सप्तमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 113 |
| अष्टमः प्रश्नः   | • | • | • | • |   |   |   | • | • |  | • | • |  | • |   | • | • | • | 132 |
| अष्टकम् २        |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 144 |
| प्रथमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 144 |
| द्वितीयः प्रश्नः |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 160 |
| तृतीयः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 180 |
| चतुर्थः प्रश्नः  |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 195 |
| पञ्चमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 217 |
| षष्ठमः प्रश्नः   | • |   |   |   |   |   | • |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 231 |
| सप्तमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 260 |
| अष्टमः प्रश्नः   | • | • | • | • | • | • | • | • |   |  | • |   |  | • | • | • | • | • | 280 |
| अष्टकम् ३        |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 305 |
| प्रथमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 305 |
| द्वितीयः प्रश्नः |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 325 |
| तृतीयः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 350 |
| चतुर्थः प्रश्नः  |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 372 |
| पञ्चमः प्रश्नः   |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   | 377 |
|                  |   |   |   |   |   |   |   |   |   |  |   |   |  |   |   |   |   |   |     |

|                                 | षष्ठमः प्रश्नः   |   |            |       |      |      |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 387 |
|---------------------------------|------------------|---|------------|-------|------|------|-----|----|-----|-----|-----|---|--|-----|--|---|--|--|-----|
|                                 | सप्तमः प्रश्नः   |   |            |       |      |      |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 401 |
|                                 | अष्टमः प्रश्नः   |   |            |       |      |      |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 437 |
|                                 | नवमः प्रश्नः     |   |            |       |      |      |     |    |     |     | •   | • |  |     |  | • |  |  | 465 |
| तेरि                            | त्तरीय आरण       | य | क          | म्    |      |      |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 493 |
|                                 | प्रथमः प्रश्नः - |   |            |       | गप्र | श्नः |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 493 |
|                                 | द्वितीयः प्रश्नः |   |            |       |      |      |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 529 |
|                                 | तृतीयः प्रश्नः   |   |            |       |      |      |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 544 |
|                                 | चतुर्थः प्रश्नः  |   |            |       |      |      |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 559 |
|                                 | पञ्चमः प्रश्नः   |   |            |       |      |      |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 586 |
|                                 | षष्टः प्रश्नः .  |   |            |       |      |      |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 617 |
|                                 | सप्तमः प्रश्नः - | _ | <b>ર</b>   | गिक्ष | व    | ह्री |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 631 |
|                                 | अष्टमः प्रश्नः - |   | ء -        | ाह्मा | नन्  | द्द  | ह्य | ो  |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 637 |
|                                 | नवमः प्रश्नः -   | _ | ਮ੍ਰ        | गुव   | र्छ  | Ì    |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 642 |
|                                 | दशमः प्रश्नः -   |   | . <b>F</b> | हा    | नार  | ाय   | ण   | पि | नेष | ात् | . • |   |  |     |  | • |  |  | 647 |
| कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम् |                  |   |            |       |      |      |     |    |     |     |     |   |  | 685 |  |   |  |  |     |
|                                 | प्रथमः प्रश्नः   |   |            |       |      |      |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 685 |
|                                 | द्वितीयः प्रश्नः |   |            |       |      |      |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 698 |
|                                 | ततीयः प्रश्नः    |   |            |       |      |      |     |    |     |     |     |   |  |     |  |   |  |  | 714 |

#### ॥ अष्टकम् १॥

#### ॥प्रथमः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्षत्रश्र सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। इष्श्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। ऊर्ज्श्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टिश्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टिश्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृजाश्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृश्रून्थ्सन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोऽस् जनधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणयन्तु॥१॥

सुवीरौः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशोचिषा। स्तुतोऽसि जनेधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणयन्तु। सुप्रजाः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशोचिषा। सञ्जग्मानौ दिव आपृंथिव्यायुः। सन्धत्तं तन्में जिन्वतम्। प्राण सन्धत्तं तं में जिन्वतम्। अपान सन्धत्तं तं में जिन्वतम्॥२॥

व्यान सम्यंत्तं तं में जिन्वतम्। चक्षुः सन्यंत्तं तन्में जिन्वतम्। श्रोत्र सन्यंत्तं तन्में जिन्वतम्। मनः सन्यंत्तं तन्में जिन्वतम्। वाच् सन्यंत्तं तां में जिन्वतम्। आयुंः स्थ आयुंर्मे धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञायं धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। प्राणः स्थः प्राणं में धत्तम्। प्राणं युज्ञायं धत्तम्॥३॥

प्राणं युज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुंः स्थश्चक्षुंर्मे धत्तम्। चक्षुंर्य्ज्ञायं

धत्तम्। चक्षुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्रई स्थः श्रोत्रं मे धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञपंतये धत्तम्। तौ देवौ शुक्रामन्थिनौ। कुल्पयंतुं दैवीर्विशंः। कुल्पयंतुं मानुंषीः॥४॥

इष्मूर्जम्मासुं धत्तम्। प्राणान्पशुषुं। प्रजां मियं च यजमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपंनुतौ शण्डामर्कौ सहामुनाँ। शुक्रस्यं समिदंसि। मृन्थिनंः समिदंसि। स प्रथमः सङ्कृतिर्विश्वकर्मा। स प्रथमो मित्रो वरुणो अग्निः। स प्रथमो बृह्स्पितिश्चिकित्वान्। तस्मा इन्द्रांय सुतमा जुंहोमि॥५॥

न्यन्त्वपानः सन्धेत्तं तं में जिन्वतं प्राणं यज्ञायं धत्तं मानुषीर्ग्निर्द्वे चं॥ (ब्रह्मं क्षत्रं तिद्यमूर्जः रियं पृष्टिं प्रजां तां पृशून्तान्थ्सन्धेत्तं तत्प्राणमपानं व्यानं तं चक्षुः श्रोत्रं मन्स्तद्वाचं ताम्। इषादिपश्चंके वाचं तां में पृशून्थ्सन्धंत्तं तान्में प्राणादित्रितंये तं मेऽन्यत्र तन्में)॥ [१]

कृत्तिकास्वग्निमार्दधीत। एतद्वा अग्नेर्नक्षेत्रम्। यत्कृत्तिकाः। स्वायांमैवैनं देवतायामाधाय। ब्रह्मवर्चसी भेवति। मुखं वा एतन्नक्षेत्राणाम्। यत्कृत्तिकाः। यः कृत्तिकास्वग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भेवति। अथो खलुं॥६॥

अग्निन्क्षत्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्यामग्निमंसृजत। तं देवा रोहिण्यामादंधत। ततो वै ते सर्वान्नोहांनरोहन्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। यो रोहिण्यामग्निमांधत्ते। ऋभ्नोत्येव। सर्वान्नोहांन्नोहति। देवा वै भुद्राः सन्तोऽग्निमाधिथ्सन्त॥७॥

तेषामनाहितोऽग्निरासींत्। अथैंभ्यो वामं वस्वपांकामत्। ते पुनर्वस्वोरादंधता ततो वै तान् वामं वसूपावंतित। यः पुराऽभद्रः सन्पापीयान्थस्यात्। स पुनर्वस्वोर्ग्निमादंधीता पुनर्वेवनं वामं वसूपावंतिते। भद्रो भंवति। यः कामयेत् दानकांमा मे प्रजाः स्युरितिं। स पूर्वयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत॥८॥

अर्यम्णो वा एतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमिति तमांहुर्यो ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। यः कामयंत भगी स्यामितिं। स उत्तंरयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। भगस्य वा एतन्नक्षंत्रम्। यद्त्तंरे फल्गुंनी। भृग्यंव भंवति। कालुकुञ्जा वै नामासुरा आसन्॥९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वत। पुरुष इष्टंकामुपांदधात्-पुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौं ब्राह्मणो ब्रुवांण इष्टंकामुपांधत्त। एषा में चित्रा नामेतिं। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्त। येऽवाकींर्यन्त। त ऊर्णावभंयोऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्थ्स्यात्। स चित्रायांमुग्निमादंधीत। अवकीर्यैव भ्रातृंव्यान्। ओजो बलंमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तौ ब्राह्मणौंऽग्निमादंधीत। वसन्तो वै ब्राँह्मणस्युर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधार्यः। ब्रह्मवर्चसी भवति। मुखं वा एतदंतूनाम्॥११॥

यद्वंसन्तः। यो वसन्ताऽग्निमांधत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो योनिमन्तमेवैनं प्रजातमाधत्ते। ग्रीष्मे रांजन्यं आदंधीत। ग्रीष्मो वै रांजन्यंस्युर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। इन्द्रियावी भंवति। शुरदि वैश्य आदंधीत। शुरद्वे वैश्यंस्युर्तुः॥१२॥

स्व एवैनंमृतावाधायं। पृशुमान्नंवति। न पूर्वयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। एषा वै जंघन्यां रात्रिः संवथ्सरस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। एषा वै प्रथमा रात्रिः संवथ्सरस्यं। यद्त्तरे फल्गुंनी। मुख्त एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवैनं यज्ञ उपनमैत्। अथादंधीत। सैवास्यर्द्धिः॥१३॥

खल्वांधिथ्सन्त फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीतासन्नपततामृतूनां वैश्यंस्युर्त्कत्तरे फल्गुंनी पद्वं॥——[२]

उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। अपोऽवांक्षिति शान्त्यैं। सिकंता निवंपति। एतद्वा अग्नेर्वेश्वान्रस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वान्रमवं रुन्धे। ऊषां निवंपति। पृष्टि्वां एषा प्रजननम्। यदूषाः॥१४॥

पुष्ट्यांमेव प्रजनेनेऽग्निमाधेते। अथो संज्ञानं एव। संज्ञान् र् ह्येतत्पंशूनाम्। यदूषाः। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते वियती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौं सह यज्ञियमितिं। यद्मुष्यां यज्ञियमासींत्। तद्स्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥

यदस्या यज्ञियमासीत्। तदमुष्यांमदधात्। तददश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषांन्निवपंन्नदो ध्यांयेत्। द्यावांपृथिव्योरेव यज्ञिये-ऽग्निमाधंत्ते। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। आखू रूपं कृत्वा। स पृथिवीं प्राविंशत्। स ऊतीः कुंर्वाणः पृथिवीमन् समंचरत्। तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥

यदांखुकरीष सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्धे। ऊर्ज् वा एत रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहिन्ति। यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा सम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवं रुन्धे। अथो श्रोत्रमेव। श्रोत्र ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकंः॥१७॥

अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तासामन्नमुपाँक्षीयत। ताभ्यः सूदमुपप्राभिनत्। ततो वै तासामन्नं नाक्षीयत। यस्य सूदंः सम्भारो भवंति। नास्यं गृहेऽन्नं क्षीयते। आपो वा इदमग्रें सिल्लमांसीत्। तेनं प्रजापंतिरश्राम्यत्॥१८॥

कथिमदि स्यादितिं। सोंऽपश्यत्पष्करपूर्णं तिष्ठंत्। सोंऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिष् तिष्ठतीतिं। स वंराहो रूपं कृत्वोप न्यंमञ्जत्। स पृंथिवीमुध आँच्छंत्। तस्यां उपहत्योदंमञ्जत्। तत्पुंष्करपुर्णें ऽप्रथयत्। यदप्रंथयत्॥१९॥
तत्पृंथिव्ये पृंथिवित्वम्। अभूद्वा इदिमितिं। तद्भूम्यें
भूमित्वम्। तां दिशोऽनु वातः समंवहत्। ता॰
शर्कराभिरद्द॰हत्। शं वे नों ऽभूदितिं। तच्छर्कराणा॰
शर्करत्वम्। यद्वंराहिवहति सम्भारो भवंति। अस्यामेवाछंम्बद्वारमग्निमाधंत्ते। शर्करा भवन्ति धृत्यैं॥२०॥

अथों श्नन्त्वायं। सरेता अग्निर्घयेय इत्यांहुः। आपो वरुंणस्य पत्नंय आसन्। ता अग्निर्भ्यंध्यायत्। ताः समंभवत्। तस्य रेतः परांऽपतत्। तिद्धरंण्यमभवत्। यिद्धरंण्यमुपास्यंति। सरेतसमेवाग्निमाधंत्ते। पुरुंष् इन्नै स्वाद्रेतंसो बीभथ्सत् इत्यांहुः॥२१॥

उत्तर्त उपाँस्यत्यबींभथ्सायै। अति प्रयंच्छिति। आर्तिमेवाति प्रयंच्छिति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्थे॥२२॥

देवा वा ऊर्जं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर् उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा उदुम्बरंः। यदौदुंम्बरः सम्भारो भवंति। ऊर्जमेवावं रुन्थे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्याऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पर्ण्त्वम्॥२३॥ यस्यं पर्णमयंः सम्भारो भवंति। सोम्पीथमेवावं रुन्थे। देवा वै ब्रह्मंत्रवदन्त। तत्पूर्ण उपांश्रणोत्। सुश्रवा वै नामं। यत्पंर्णमयंः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। प्रजापंतिर्श्रिमंसृजत। सोंऽविभेत्प्र मां धक्ष्यतीतिं। त॰ श्रम्यांऽशमयत्॥२४॥

तच्छुम्यै शमित्वम्। यच्छुंमीमयः सम्भारो भवंति। शान्त्या अप्रंदाहाय। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छ्र्त्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा पुवावं रुन्धे। सहृंदयो-ऽग्निराधेय इत्यांहुः। मुरुतोऽद्भिरग्निमतमयन्। तस्यं तान्तस्य हृदंयमाच्छिंन्दन्। साऽशनिरभवत्। यद्शनिहृतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति। सहृंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

ऊषां अभवन्नभवद्वल्मीकौंऽश्राम्युदप्रंथयुद्धृत्यैं बीभथ्सत् इत्यांहू रुन्धे पर्णृत्वमंशमयदच्छिन्दु ्स्नीणिं

व॥————[3]

द्वादशसुं विकामेष्वग्निमा दंधीत। द्वादेश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेवैनंमवरुद्धा धंत्ते। यद्वांदशसुं विकामेष्वा दधीत। परिमित्मवं रुन्धीत। चक्षुंर्निमित् आदंधीत। इयद्वादंश विकामा(३) इति। परिमितं चैवापंरिमितं चावं रुन्धे। अनृतं व वाचा वंदति। अनृतं मनसा ध्यायति॥२६॥

चक्षुर्वे सृत्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्श्वमितिं। तथ्सत्यम्। यश्वक्षुंर्निमितेऽग्निमांधृत्ते। सृत्य एवैनुमा धंत्ते। तस्मादाहिताग्निर्नानृतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणोऽनांश्वान्गृहे वंसेत्। सत्ये ह्यंस्याग्निराहितः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥

आग्नेयाः प्रावंः। ऐन्द्रमहंः। नक्तं गार्हंपत्यमा दंधाति। प्रशूनेवावं रुन्धे। दिवांऽऽहवनीयम्। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। अधींदिते सूर्यं आहवनीयमा दंधाति। एतस्मिन्वे लोके प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। अथों भूतं चैव भंविष्यचावं रुन्धे॥२८॥

इडा वै मान्वी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽशृंणोत्। असुंरा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथान्वाहार्यपचनम्। साऽब्रंवीत्। प्रतीच्येषा्ड् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा परां भविष्युन्तीतिं॥२९॥

यस्यैवम्ग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भ्रद्रो भूत्वा परांभवति। साऽश्वंणोत्। देवा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। तेंंऽन्वाहार्यपचंनमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथांऽऽहवनीयम्ं। साऽब्रंवीत्॥३०॥

प्राच्येषाड् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा सुंवर्गं लोकमेंष्यन्ति। प्रजां तु न वेंष्यन्तु इति। यस्यैवमुग्निराधीयतें। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा सुंवर्गं लोकमेंति। प्रजां तु न विन्दते। साऽब्रंवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधांस्यामि। यथा प्र प्रजयां पुशुभिर्मिथुनैर्जनिष्यसें॥३१॥

प्रत्यस्मिँ होके स्थास्यसिं। अभि सुंवर्गं लोकं जेष्यसीतिं।

गार्हंपत्यमग्र आदंधात्। गार्हंपत्यं वा अनुं प्रजाः पृशवः प्रजांयन्ते। गार्हंपत्येनैवास्मैं प्रजां पृश्वन्प्राजंनयत्। अथौन्वाहार्यपर्चनम्। तिर्यिष्टिंव वा अयं लोकः। अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रत्यंतिष्ठत्। अथौऽऽहवनीयम्। तेनैव सुंवर्गं लोकमभ्यंजयत्॥३२॥

यस्यैवम्गिरांधीयतें। प्र प्रजयां प्शुभिंमिंथुनैजांयते। प्रत्यस्मिं ह्योके तिष्ठति। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। यस्य वा अयंथादेवतम्गिरांधीयतें। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३३॥

भृगूंणां त्वाऽङ्गिरसां व्रतपते व्रतेनादंधामीति भृग्वङ्गिरसामादंध्यात्। आदित्यानां त्वा देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीत्यन्यासां ब्राह्मणीनां प्रजानाम्। वरुणस्य त्वा राज्ञो व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञः। इन्द्रस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञन्यंस्य। मनौस्त्वा ग्राम्ण्यो व्रतपते व्रतेनादंधामीति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति रथकारस्यं। यथादेवतमग्रिराधीयते। न देवतांभ्य आवृंश्यते। वसीयान्भवति॥३४॥

ध्यायति वै रात्रिश्चावं रुन्धे भविष्यन्तीत्यंब्रवीञ्चनिष्यसेंऽजयद्वसीयान्भवति नवं च॥——[४]

प्रजापंतिर्वाचः स्त्यमंपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन् वै स आंभ्रोत्। भूर्भुवः सुवरित्यांह। एतद्वै वाचः स्त्यम्। य एतेनाग्निमांधत्ते। ऋभ्नोत्येव। अथों स्त्यप्रांशूरेव भंवति। अथो य एवं विद्वानंभिचरंति। स्तृणुत एवैनम्॥३५॥

भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। सुव्रित्यांह। सुव्र्ग एव लोके प्रति तिष्ठति। त्रिभिरक्षरैर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्माधंत्ते। सर्वैः पश्चिमेराहवनीयम्॥३६॥

सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदांहवनीयः। सुवर्ग एवास्मै लोके वाचः सत्य सर्वमाप्नोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा दंधाति। पश्चभिराहवनीयम्। अष्टौ सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तमाधंत्ते॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो ज्योतिरुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यन्तीः प्रजा अभि स्मावर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृह्णीयादुद्धरन्। ज्योतिरेव पश्यन्तीः प्रजा यजमानम्भि स्मावर्तन्ते। प्रजापंतेरक्ष्यंश्वयत्। तत्परां-ऽपतत्। तदश्वोऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥

पुष वै प्रजापंतिः। यद्ग्निः। प्राजापत्योऽश्वः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः पश्यंन्प्रजापंतिरनूदेति। वज्री वा एषः। यदश्वः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। पुनरा वर्तयति॥३९॥ ज्निष्यमाणानेव प्रतिनुदते। न्यांहवनीयो गार्हंपत्य-मकामयत। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। तौ विभाजं नाशंक्रोत्। सोऽश्वंः पूर्ववाङ्गृत्वा। प्राश्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहंः पूर्ववाद्मम्। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। विभंक्ति-रेवैनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौ कुरुते॥४०॥

यदुपर्युपरि शिरो हरैत्। प्राणान् विच्छिन्द्यात्। अधोऽधः शिरो हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रे हरति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्माधंत्ते। प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मां धक्ष्यतीतिं॥४१॥

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौहत्। शान्त्या अप्रंदाहाय। यत्रेधाऽग्निराधीयतें। महिमानंमेवास्य तद्यूहित। शान्त्या अप्रंदाहाय। पुन्रा वंर्तयति। महिमानंमेवास्य सन्दंधाति। पृशुर्वा पृषः। यदर्श्वः। पृष रुद्रः॥४२॥

यद्गिः। यदश्वंस्य प्रदेंऽग्निमांद्घ्यात्। रुद्रायं पृश्निपंदध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यन्नाक्रमयेंत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। पृश्वंत आक्रमयेत्। यथाऽऽहितस्याग्नेरङ्गांरा अभ्यव्वर्तेरन्। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न रुद्रायापिदधाति॥४३॥

त्रीणिं हुवी १षि निर्वपति। विराजं एव विक्रान्तं

यर्जमानोऽनु विक्रमते। अग्नये पर्वमानाय। अग्नये पावकायं। अग्नये श्चये। यद्ग्नये पर्वमानाय निर्वपति। पुनात्येवैनम्। यद्ग्नये पावकायं। पूत एवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। यद्ग्नये श्चये। ब्रह्मवर्च्यमेवास्मिन्नुपरिष्टाद्दधाति॥४४॥ पुनमाह्वनीयं धत्तेऽश्वत्वं वर्तयित कुरुत इति रुद्रो दंधाति यद्ग्रये श्चयं एकं चान[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुपयन्तः। अग्नौ वामं वसु सं न्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तद्ग्निर्नोध्सहंमशक्नोत्। तत् त्रेधा विन्यंदधात्। पृशुषु तृतींयम्। अपसु तृतींयम्। आदित्ये तृतींयम्॥४५॥

तद्देवा विजित्यं। पुन्रवांरुरुथ्सन्त। तेंऽग्नये पर्वमानाय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निर्वपन्। पृशवो वा अग्निः पर्वमानः। यदेव पृशुष्वासींत्। तत्तेनावांरुन्धत। तेंऽग्नयें पावकायं। आपो वा अग्निः पांवकः। यदेवाफ्स्वासींत्। तत्तेनावांरुन्धत॥४६॥

तें'ऽग्नये शुचंये। असौ वा आंदित्यों'ऽग्निः शुचिः। यदेवाऽऽदित्य आसींत्। तत्तेनावांरुन्धत। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तनुवो वावैता अंग्र्याधेयंस्य। आग्नेयो वा अष्टाकंपालोऽग्र्याधेयमितिं। यत्तं निर्वपेत्। नैतानिं। यथाऽऽत्मा स्यात्॥४७॥

नाङ्गांनि। ताहगेव तत्। यदेतानि निर्वपेता न तम्। यथाऽङ्गांनि स्युः। नाऽऽत्मा। ताहगेव तत्। उभयांनि सह निरुप्यांणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्येन्द्रियं

## वीर्यमाप्यते॥४८॥

यौंऽग्निमांधृत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालुमनु निर्वपेत्। आदित्यं चुरुम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयांतयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ताभ्यांमेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्थे। आदित्यो भंवति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्"। अनुडुहंस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावं रुन्थे। घृते भंवति। यज्ञस्यालूँक्षान्तत्वाय। चृत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिंषि जुहोति। पृशवो वा पृतानिं हुवी॰षिं। एष रुद्रः। यदग्निः॥५०॥

यथ्सद्य एतानि ह्वी १ वि निर्वपेत्। रुद्रायं पृश्निपिं दध्यात्। अपृश्र्यजंमानः स्यात्। यन्नानुंनिर्वपेत्। अनेवरुद्धा अस्य पृश्रवः स्युः। द्वादृशसु रात्रीष्वनु निर्वपेत्। संवथ्सरप्रतिमा व द्वादंश रात्रयः। संवथ्सरणेवासमें रुद्र १ शमियत्वा। पृश्नवं रुन्धे। यदेकंमेकमेतानि ह्वी १ वि निर्वपेत्॥ ५१॥

यथा त्रीण्यावपंनानि पूर्यंत्। तादक्तत्। न प्रजनंन-मुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समस्येत्। तृतीयंमेवास्में लोकमुच्छि १ षति प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृशुभिरनु प्रजायते। अथो यज्ञस्यैवैषाऽभिक्रांन्तिः। रथचकं प्रवंतियति।

# म्नुष्युर्थेनैव देवर्थं प्रत्यवंरोहति॥५२॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३) मितिं। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यत्न जुंहुयात्। अग्निः परां भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्ं। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधं ददाति॥५३॥

अग्निम्ंखानेवर्तून्प्रीणाति। उपबर्हणं ददाति। रूपाणामवं-रुद्धे। अश्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। धेनु १ होत्रें। आशिषं प्वावं रुन्धे। अनुङ्गाहंमध्वर्यवें। वह्निर्वा अनुङ्गान्। वह्निरध्वर्युः॥५४॥

वहिंनेव वहिं यज्ञस्यावं रुन्थे। मिथुनौ गावौं ददाति। मिथुनस्यावंरुद्धौ। वासों ददाति। सर्वदेवत्यं वै वासंः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांदशभ्यों ददाति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रतिं तिष्ठति। कामंमूर्ध्वं देयम्। अपंरिमितस्यावंरुद्धौ॥५५॥

आदित्ये तृतीयम्पस्वासीतत्तेनावांरुन्धत् स्यादांप्यते रेतोऽग्निरेकंमेकमेतानिं हुवीःषिं निर्विपंत्प्रत्यवंरोहति ददात्यध्वर्युर्देयमेकं च॥———[६]

घर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृशुभिर्भुवत्। छुर्दिस्तोकाय् तनयाय यच्छ। वातः प्राणस्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृशुभिर्भुवत्। स्वदितं तोकाय् तनयाय पितुं पंच। प्राचीमन् प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभांहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे॥५६॥

अर्कश्चक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृशुभिभीवत्। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तृनः। शुक्रं ज्योतिरजंस्नम्। तेनं मे दीदिह् तेन् त्वाऽऽदंधे। अग्निनांऽग्ने ब्रह्मणा। आन्शे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे। ये ते अग्ने शिवे तृनुवौं। विरार्द्व स्वरार्द्व। ते माविशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ये ते अग्ने शिव तन्वौं। सम्माद्वांभिभूश्चं। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्। ये ते अग्ने शिव तन्वौं। विभूश्चं पिर्भूश्चं। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। ये ते अग्ने शिव तन्वौं। प्रभ्वी च प्रभूंतिश्च। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। यास्ते अग्ने शिवास्तन्वंः। ताभिस्त्वाऽऽदंधे। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ॥५८॥

चर्तुष्पदे जिन्वतां तुनुबुम्ह्यीणिं च॥————[७]

इमे वा एते लोका अग्नयंः। ते यदव्यांवृत्ता आधीयरन्। शोचयंयुर्यजंमानम्। घृमः शिर् इति गार्हंपत्यमा दंधाति। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचंनम्। अर्कश्चश्चरित्यांहवनीयम्। तेनैवैनान्व्यावंत्यति। तथा न शोचयन्ति यजंमानम्। रथन्तरम्भिगांयते गार्हंपत्य आधीयमांने। राथंन्तरो वा अयं लोकः॥५९॥

अस्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमा धंत्ते। वामदेव्यम्भिगांयत उद्धियमाणे। अन्तरिक्षं वै वामदेव्यम्। अन्तरिक्ष एवैन् प्रतिष्ठितमाधंत्ते। अथो शान्तिर्वे वामदेव्यम्। शान्तमेवैनं पश्व्यंमुद्धंरते। बृहद्भिगांयत आहवनीयं आधीयमाने। बार्हतो वा असौ लोकः। अमुष्मिन्नेवैनं लोके प्रति-ष्ठितमाधंत्ते। प्रजापंतिरिग्निमंसृजत॥६०॥

सोऽश्वोऽवारों भूत्वा परांङेत्। तं वांरवन्तीयंनावारयत। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। श्यैतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्यैतृत्वम्। यद्वांरवन्तीयंमिभ् गायंते। वार्यित्वैवैनं प्रतिष्ठितमा धंत्ते। श्यैतेनं श्येती कुंरुते। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशींर्षाणमेवैनमा धंत्ते॥६१॥

उपैनमुत्तरो यज्ञो नंमित। रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। स आधीयमान ईश्वरो यज्ञमानस्य पृशून् हिश्सितोः। सम्प्रियः पृशुभिर्भुवदित्याह। पृशुभिरेवैन् सम्प्रियं करोति। पृशूनामहिश्सायै। छुर्दिस्तोकाय तनंयाय युच्छेत्याह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपर्चनम्॥६२॥

सप्राणमेवैन्मा धंत्ते। स्वृद्धितं तोकाय तनयाय पितुं प्चेत्याह। अन्नमेवास्मैं स्वदयति। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वानित्यांह। विभिक्तिरेवैनंयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पद इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। अर्को वै देवानामन्नम्॥६३॥

अन्नमेवावं रुन्धे। तेनं मे दीदिहीत्यांह। सिमंन्ध एवैनम्ं। आनुशे व्यांनश् इति त्रिरुदिङ्गयित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवेनं लोकेषु प्रतिष्ठितमा धंत्ते। तत्तथा न कार्यम्ं। वीङ्गित्मप्रतिष्ठितमा दंधीत। उद्धृत्यैवाधायांभिमन्नियः। अवीङ्गितमेवेनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। विराद्वं स्वराद्व यास्ते अग्ने शिवास्तनुवस्ताभिस्त्वाऽऽदंध इत्यांह। एता वा अग्नेः शिवास्तनुवंः। ताभिरेवैन् सम्ध्यति। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवस्ताभिरमुं गुच्छेतिं ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। ताभिरेवैनं पर्राभावयति॥६४॥

लोकोऽसुजतैनुमार्धत्तेऽन्वाहार्युपर्चनं देवानामन्नमेनुं प्रतिष्ठितुमार्धत्ते पश्चं च॥———[८]

श्मीगुर्भाद्गिं मंन्थति। एषा वा अग्नेर्यज्ञियां तृनूः। तामेवास्मै जनयति। अदितिः पुत्रकामा। साध्येभ्यो देवेभ्यौ ब्रह्मौदनमंपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञौत्। सा रेतोऽधत्त। तस्यै धाता चौर्यमा चांजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यैं मित्रश्च वरुंणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या अर्शश्च भगश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या इन्द्रंश्च विवंस्वाङ्श्चाजायेताम्। ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्नंन्ति ब्राह्मणा ओद्नम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं समिधोऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिती रेतों-ऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा एतत्। यथ्समिधंः। एतद्रेतंः। यदाज्यम्। यदाज्यंन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुन्त्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताः॥६८॥

इयंतीर्भवन्ति। युज्ञपुरुषा सम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। एतावृद्धे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मिताः। आर्द्रा भवन्ति। आर्द्रमिव हि रेतः सिच्यते। चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥

पुतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्घृतम्। प्रियेणैवैनं धाम्रा समर्धयति। अथो तेजंसा। गायत्रीभिर्न्नाह्मणस्यादंध्यात्। गायत्रछंन्दा वै ब्राह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा वै राजन्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं॥७०॥

जगंतीभिवेंश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यंः। स्वस्य

छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। तः संवथ्सरं गोपायेत्। संवथ्सरः हि रेतो हितं वर्धते। यद्यंनः संवथ्सरे नोपनमैत्। समिधः पुन्रादंध्यात्। रेतं पुव तिद्धतं वर्धमानमेति। न मार्समंश्जीयात्। न स्त्रियमुपंयात्॥७१॥

यन्मा १ समंश्जीयात्। यिश्वयं मुप्यात्। निर्वीर्यः स्यात्। नैनंमृग्निरुपंनमेत्। श्व आंधास्यमानो ब्रह्मौद्नं पंचति। आदित्या वा इत उत्तमाः सुंवर्गं लोकमायन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। एते खलु वावाऽऽदित्याः। यद्ग्रौह्मणाः। तैरेव सन्त्वं गंच्छति॥७२॥

नैनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। यौऽस्मै प्रजां पृशून्प्रंजनयतीति। शल्कैस्ता १रात्रिंमग्निमिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम्रणी निष्टंपेत्। यथंर्षभायं वाशिता न्यांविच्छायति। ताद्दगेव तत्। अपोद्ह्य भस्माग्निं मन्थति॥७३॥

सैव साऽग्नेः सन्तंतिः। तं मंथित्वा प्राश्चमुद्धंरति। संवथ्सरमेव तद्रेतों हितं प्रजनयति। अनांहित्स्तस्याग्नि-रित्यांहुः। यः समिधोऽनांधायाग्निमांधत्त इतिं। ताः संवथ्सरे पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्सरादेवैनंमव्रुध्याधंत्ते। यदिं संवथ्सरेऽनाद्ध्यात्। द्वाद्श्यां पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्सरप्रंतिमा व द्वादंश् रात्रंयः। संवथ्सरमेवास्याहिता भवन्ति। यदि द्वादृश्यां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादध्यात्। आहिता एवास्यं भवन्ति॥७४॥

द्वितीयंमपचचतुर्थमंपचददिती रेतोंऽधत्त सम्मिता घृतवंतीभिरादंधाति राजुन्यः स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनुस्त्वायेयाद्गच्छति मन्थित रात्रयश्चत्वारि च॥———[९]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। स रिरिचानोंऽमन्यत। स तपोंऽतप्यत। स आत्मन्वीर्यमपश्यत्। तदंवर्धत। तदंस्माथ्सहंसोर्ध्वमंसृज्यत। सा विराडंभवत्। तां देवासुरा व्यंगृह्णत। सोंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। मम वा एषा॥७५॥

दोहां पुव युष्माक्मितिं। सा ततः प्राच्युदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अर्थवं पितुं में गोपायेतिं। सा द्वितीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। नर्य प्रजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। शङ्स्यं पश्नमें गोपायेतिं॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंकामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रथ स्भां में गोपायेति। सा पश्चममुदंकामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अहें बुध्निय मर्त्रं मे गोपायेति। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथों पङ्किमेव। पङ्किर्वा एषा ब्राह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यद्ग्निराधीयतैं। तस्मांदेतावंन्तो-ऽग्नय आधीयन्ते। पाङ्कं वा इद॰ सर्वम्ं। पाङ्केनैव पाङ्कर्ं स्पृणोति। अर्थर्व पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्यं प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति। शङ्स्यं पशून्में गोपायेत्यांह॥७८॥

पुशूनेवैतेनं स्पृणोति। सप्रंथ स्मां में गोपायेत्यांह। स्मामेवेतेनंन्द्रिय स्पृणोति। अहं बुध्निय मर्त्रं में गोपायेत्यांह। मर्त्रमेवेतेन श्रिय स्पृणोति। यदंन्वाहार्यपचंने- उन्वाहार्यं पचंन्ति। तेन सौं उस्याभीष्टंः प्रीतः। यद्गार्हं पत्य आज्यंमिधेश्रयंन्ति सम्पत्नीं यांजयंन्ति। तेन सौं उस्याभीष्टंः प्रीतः। यदाहवनीये जुह्नंति॥७९॥

तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यथ्मभायां विजयंन्ते।
तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यदांवस्थेऽन्न् हरंन्ति। तेन्
सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा
आधींयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवमुपंतिष्ठेतैकंमेकम्। यथां
ब्राह्मणायं गृहेवासिने परिदायं गृहानेतिं। तादगेव तत्।
पुनंरागत्योपंतिष्ठते। सा भांगेयमेवेषां तत्। सा ततं
ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्।
रोहिण्यामग्निमादंधीत। स्व एवेनं योनौ प्रतिष्ठितमाधंत्ते।
ऋधोत्येनेन॥८०॥

एषा पुशून्में गोपायेति प्रविष्टा पुशून्में गोपायेत्यांह् जुह्वंति तिष्ठते सप्त चं॥———[१०]

ब्रह्म सन्धंत्तं कृत्तिंकाुसूर्द्धन्ति द्वाद्शसुं प्रजापंतिर्वाचो देवासुरास्तद्ग्निर्नोद्धर्मः शिरं

प्रथमः प्रश्नः

इमे वै शंमीगुर्भात्प्रजापंतिः स रिरिचानः स तपः स आत्मन्वीर्यं दशं॥१०॥ ब्रह्म सन्धंत्तं तौ दिव्यावथों शन्त्वाय प्राच्येषां यदुपर्युपरि यथ्सद्यः सोऽश्वोऽवारों भूत्वा जगंतीभिरशीतिः॥८०॥ ब्रह्म सन्धंत्तमृभ्रोत्येनेन॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥ द्वितीयः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्धन्यमानम्स्या अंमेध्यम्। अपं पाप्मानं यजंमानस्य हन्तु। शिवा नः सन्तु प्रदिश्श्वतंस्रः। शं नों माता पृथिवी तोकंसाता। शं नों देवीर्भिष्टये। आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भि स्नंवन्तु नः। वैश्वान्रस्यं रूपम्। पृथिव्यां परिस्नसां। स्योनमा विंशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृंथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवतुः। ऊषाँन्कृष्णमंवतु कृष्णमूषाँः। इहोभयोंर्यज्ञिय-मार्गमिष्ठाः। ऊतीः कुंर्वाणो यत्पृंथिवीमचरः। गुहाकारंमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। श्वतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसमाभरंन्तः। श्वतं जीवेम श्ररदः पुरूचीः॥२॥

वम्रीभिरनुंवित्तं गुहांसु। श्रोत्रं त उर्व्यवंधिरा भवामः। प्रजापंतिसृष्टानां प्रजानांम्। क्षुधोऽपंहत्ये सुवितं नों अस्तु। उप प्रभिन्नमिष्मूर्जं प्रजाभ्यः। सूदं गृहेभ्यो रस्माभंरामि। यस्यं रूपं विश्रंदिमामविंन्दत्। गुह्ग प्रविष्टा सिर्रस्य मध्यें। तस्येदं विहंतमाभरंन्तः। अर्छम्बद्धारमस्यां विधेम॥३॥

यत्पर्यपंश्यथ्सरि्रस्य मध्यै। उर्वीमपंश्यञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्कंरस्यायतंनाद्धि जातम्। पुणं पृथिव्याः प्रथंन १ हरामि। याभिरद्देषुञ्जर्गतः प्रतिष्ठाम्। उर्वीमिमां विश्वजनस्यं भूत्रीम्। ता नः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्र हरिण्यम्। अद्यः सम्भूतम्मृतं प्रजासुं। तथ्सम्भरंत्रुत्तर्तो निधायं॥४॥

अतिप्रयच्छुं दुरितिं तरेयम्। अश्वीं रूपं कृत्वा यदेश्वत्थे-ऽतिष्ठः। संवथ्सरं देवेभ्यों निलायं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वर्नस्पते शृतवंलशो विरोह। त्वयां वयमिष्मूर्जं मदेन्तः। रायस्पोषेण समिषा मंदेम। गायत्रिया ह्रियमाणस्य यत्ते॥५॥

पूर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽिधं। सोंऽयं पूर्णः सोंमपूर्णाद्धि जातः। ततों हरामि सोमपीथस्यावंरुद्धौ। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतोंऽिस। ततो मामाविंशतु ब्रह्मवर्चसम्। तथ्सम्भर्ङ्स्तदवंरुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमशंमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रदाहाय॥६॥

श्मी १ शान्त्ये हराम्यहम्। यत्ते सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कत्ं भा आँच्छं ज्ञातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उरं नो लोकमनु प्रभाहि। यत्ते तान्तस्य हृदंयमाच्छिंन्दञ्जातवेदः। मुरुतो ऽद्भिस्तं मयित्वा। पृतत्ते तदंशनेः सम्भेरामि। सात्मां अग्रे सहंदयो भवेह। चित्रियादश्वत्थाथ्सम्भृता बृहत्यः॥७॥

शरीरम्भि सङ्स्कृंताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिंताः। तिस्रस्निवृद्धिर्मिथुनाः प्रजात्यै। अश्वत्थाद्धेव्य- वाहाद्धि जाताम्। अग्नेस्तुनूं युज्ञिया् सम्भेरामि। शान्तयोनि शमीगुर्भम्। अग्नये प्रजनियतवे। यो अश्वत्थः शमीगर्भः। आरुरोह त्वे सर्चा। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥

य्जियैं केतुभिं सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाशरीरं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृंतः सीद शिवः प्रजाभ्यः। उरुं नों लोकमनुंनेषि विद्वान्। प्रवेधसें क्वये मेध्याय। वचीं वन्दारुं वृष्माय वृष्णें। यतों भ्यमभंयं तन्नों अस्तु। अवं देवान् यंजे हेड्यान्। समिधाऽग्निं दुंवस्यत॥९॥

घृतैर्बोधयतातिंथिम्। आऽस्मिन् ह्व्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने ह्विष्मितीः। घृताचींर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं स्मिधो ममं। तं त्वां स्मिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामसि। बृहच्छोंचा यविष्ठा। स्मिध्यमानः प्रथमो नु धर्मः। सम्कुभिरज्यते विश्ववारः॥१०॥

शोचिष्केंशो घृतिनिर्णिक्पाव्कः। सुयज्ञो अग्निर्यज्ञथांय देवान्। घृतप्रंतीको घृतयोनिर्ग्निः। घृतैः सिमंद्धो घृतम्स्यान्नम्। घृतप्रुषंस्त्वा स्रितों वहन्ति। घृतं पिबंन्थ्सुयजां यक्षि देवान्। आयुर्वा अंग्ने ह्विषों जुषाणः। घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यम्। पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥

त्वामंग्ने समिधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चंकिरे हव्यवाहम्।

उरुज्रयंसं घृतयोनिमाहुंतम्। त्वेषं चक्षुंदिधिरे चोद्यन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहुंतं घृतेनं। सुम्नायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्रयार्श्से पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रंतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋं अते॥१२॥

इन्धांनो अको विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंर्णामुद्दं नो यश्सते धियम्। प्रजा अंग्रे संवांसय। आशांश्च पृश्भिः सह। गृष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासंन्थ्सिवतुः स्वे। मही विश्पत्नी सदंने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वत्नी जन्यं जातवेदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥

आरोहतं दुशत् शक्वंशिर्ममं। ऋतेनां आयुंषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवंन्त उत्तरामुत्तरा समाम। दर्शमहं पूर्णमां सं यज्ञं यथा यजैं। ऋत्वियवती स्थो अग्निरंतसौ। गर्भं दधाथां ते वामहं देदे। तथ्मत्यं यद्वीरं विभृथः। वीरं जनियुष्यर्थः। ते मत्प्रातः प्रजनिष्येथे। ते मा प्रजाते प्रजनियष्यर्थः॥१४॥

प्रजयां पृश्भिर्ष्रह्मवर्चसेनं सुवर्गे लोके। अनृताथ्सत्य-मुपैमि। मानुषाद्दैव्यमुपैमि। दैवीं वार्चं यच्छामि। शल्कैर्ग्निमिन्धानः। उभौ लोकौ संनेमहम्। उभयौर्लोकयोर् ऋध्वा। अति मृत्युं तराम्यहम्। जात्वेदो भुवनस्य रेतः। इह सिश्च तपंसो यज्जनिष्यते॥१५॥ अग्निमंश्वत्थादिधं हव्यवाहम्ं। श्मीग्रभाञ्चनयन् यो मंयोभूः। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथा नो वर्धया रियम्। अपेत वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अदांदिदं यमोऽवसानं पृथिव्याः। अर्न्नन्निमं पितरो लोकमंस्मै॥१६॥

अग्नेर्भस्मांस्यग्नेः पुरीषमिस। संज्ञानंमिस काम्धरंणम्। मियं ते काम्धरंणं भूयात्। संवंः सृजािम् हृदंयािन। स॰सृष्टं मनों अस्तु वः। स॰सृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वंः प्रियास्तुनुवंः। सं प्रिया हृदंयािन वः। आत्मा वो अस्तु सिम्प्रियः। सिम्प्रयास्तनुवो ममं॥१७॥

कल्पेतां द्यावांपृथिवी। कल्पंन्तामाप् ओषंधीः। कल्पंन्तामग्रयः पृथंक्। मम् ज्यैष्ठ्यांय सन्नेताः। येंऽग्रयः समनसः। अन्त्रा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पंमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्ये मंहिम्रा॥१८॥

अन्तरिक्षस्य पोषेण। सर्वपंशुमादंधे। अजीजनत्रमृतं मर्त्यासः। अस्रेमाणं तरिणं वीडुजंम्भम्। दश् स्वसारो अग्रुवंः समीचीः। पुमार्रसं जातम्भि सर्रभन्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिमि। पूष्णः पोषेण् मह्यम्। दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। श्तर श्रस्य आयुषे वर्चसे॥१९॥ जीवात्वे पुण्यांय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककुञ्जातवेदः। प्राणे त्वाऽमृतमादंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्त्यैं। सुगार्हप्त्यो विदहन्नरांतीः। उषसः श्रेयंसीः श्रेयसीर्दधंत्॥२०॥

अग्नें स्पत्ना र् अप बार्धमानः। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्समासुं धेहि। इमा उ मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरिह संबंसेय। इहो इडां तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौदीदिहि जातवेदः। ओजंसे बलाय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायायुंषे वर्चसे। स्पत्नतूरंसि वृत्रतूः। यस्ते देवेषुं महिमा सुंवर्गः॥२१॥

यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। पृष्टिर्या ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमांण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तिरक्षात्। वातांत्पृशुभ्यो अध्योषधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्बभूथं। ततों नो अग्ने जुषमांण एहिं। प्राचीमनुं प्रदिशुं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो वि भाहि॥२२॥

ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अन्वग्निरुषसामग्रंमख्यत्। अन्वहांनि प्रथमो जातवेदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चे रश्मीन्। अनु द्यावांपृथिवी आतंतान। विक्रंमस्व महा १ असि। वेदिषन्मानुंषेभ्यः। त्रिषु लोकेषुं जागृहि। यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। संविदाने रोदंसी सं बभूवर्तुः॥२३॥

तयौः पृष्ठे सींदतु जातवेदाः। शम्भूः प्रजाभ्यंस्त्नुवैं स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत् आ दंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्त्यै। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तृनूः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनौऽग्ने ब्रह्मणा। आनुशे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे॥२४॥

नर्यं प्रजां में गोपाय। अमृत्तत्वायं जीवसें। जातां जीन्ष्यमाणां च। अमृते सत्ये प्रतिष्ठिताम्। अथंवं पितुं में गोपाय। रसमन्नंमिहायुंषे। अदंब्यायोऽशीततनो। अविषन्नः पितुं कृणा। शङ्स्यं पृशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्पदः॥२५॥

अष्टाशंफाश्च य इहाग्नें। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ सभां में गोपाय। ये च सभ्याः सभासदः। तानिन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहं बुध्निय मन्नं मे गोपाय। यमृषंयस्नेविदा विदुः। ऋचः सामानि यजूरंषि। सा हि श्रीरुमृतां सताम्॥२६॥

चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। मुर्मृज्यमाना मह्ते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। इहैव सन्तत्रं सुतो वो अग्नयः। प्राणेनं वाचा मनसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्। ज्योतिषा वो वैश्वान्रेणोपंतिष्ठे। पुश्चधाऽग्नीन्व्यंक्रामत्। विराट्थ्मृष्टा प्रजापंतेः। ऊर्ध्वाऽऽरोहद्रोहिणी। योनिर्ग्नेः प्रतिष्ठितिः॥२७॥ विश्वन्तु नः पुरूचीविधेम निधाय यत्तेऽप्रंदाहाय वृह्त्यौ ब्रह्मंणा दुवस्यत विश्ववार इममृं अते पुरोगां प्रजनिय्वयथौ जिन्व्यतौऽस्मै ममं मिहुम्ना वर्चसे दर्धथ्सुवर्गो भीहि सम्बभूवतुरायुव्यानिशे चतुंष्पदः सतां प्रजापंतेर्द्वे चं॥—[१]

नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव् वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहाँन्युप्यन्ति। नवस्वेव तथ्सुंवर्गेषुं लोकेषुं स्त्रिणः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परंः सामानः कार्या इत्यांहः। अग्निष्टोमसंम्मितः सुवर्गो लोक इति। द्वादंशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्। उक्थ्यां एव संप्तदशाः परंः सामानः कार्याः॥२८॥

प्शवो वा उक्थानिं। पृश्नामवंरुद्धौ। विश्वजिद्भिजितां-विग्नष्टोमौ। उक्थ्याः सप्तद्शाः परंः सामानः। ते सङ्स्तुंता विराजम्भि सम्पंद्यन्ते। द्वे चर्चावतिंरिच्येते। एकया गौरतिंरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुवर्गो वै लोको ज्योतिंः। ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर् राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहद्वितीयें। वैरूपं तृतीयें। वैराजं चंतुर्थे। शाक्करं पंश्रमे। रैवत १ षष्ठे। तद्ं पृष्ठेभ्यो नयंन्ति। सन्तनंय एते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥

अतिग्राह्याः परंः सामस्। इमानेवैतैर्लोकान्थ्सन्तंन्वन्ति।

मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्याः परंः सामस्। मिथुनमेव तैर्यजमाना अवंरुन्थते। बृहत्पृष्ठं भविति। बृहद्वै सुंवर्गो लोकः। बृह्तैव सुंवर्गं लोकं यन्ति। त्रयस्त्रिष्शि नाम् सामं। मार्थ्यं दिने पवंमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्त्रिश्शृद्धे देवताः। देवतां पृवावंरुन्धते। ये वा इतः परांश्वश् संवथ्सरमृप्यन्ति। न हैनं ते स्वस्ति समंश्जुवते। अथ येऽमुतोऽर्वाश्चमुप्यन्ति। ते हैनः स्वस्ति समंश्जुवते। पृतद्वा अमुतोऽर्वाश्चमुपंयन्ति। यदेवम्। यो ह् खलु वाव प्रजापंतिः। स उवेवेन्द्रः। तदुं देवेभ्यो नयंन्ति॥३२॥

कार्या विराङ्गृह्यन्ते पर्वमाने भवतीन्द्र एकं च॥\_\_\_\_\_[२]

सन्तंतिर्वा एते ग्रहाँः। यत्परंः सामानः। विष्वान्दिंवा-कीर्त्यम्। यथा शालांयै पक्षंसी। एवः संवथ्सरस्य पक्षंसी। यदेतेन गृह्येरन्। विष्ची संवथ्सरस्य पक्षंसी व्यवंस्रः सेयाताम्। आर्तिमार्च्छंयुः। यदेते गृह्यन्तै। यथा शालांयै पक्षंसी मध्यमं वुःशम्भि संमायच्छंति॥३३॥

पुवर संवथ्सरस्य पक्षंसी दिवाकीत्यंमिभ सं तंन्वन्ति। नार्तिमार्च्छंन्ति। एकविर्शमहंभविति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तंब्य्ये सयत्वायं। सौर्यं पुतदहंः पृशुरालंभ्यते। सौर्यो-ऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं पुवैष बुलिरहिंयते। सुप्तैतदहंरतिग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥ सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। असावादित्यः शिरः प्रजानाम्। शीर्षन्रेव प्रजानां प्राणान्देधाति। तस्माध्यप्त शीर्षन्प्राणाः। इन्द्रो वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। स इमाँ होकान्भ्यं जयत्। तस्यासौ होको ऽनंभिजित आसीत्। तं विश्वकंमा भूत्वा ऽभ्यं जयत्। यद्वैश्वकर्मणो गृह्यते॥३५॥

सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। प्रवा पृतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये वैश्वकर्मणं गृह्णतें। आदित्यः श्वो गृह्यते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति। अन्योन्यो गृह्यते। विश्वान्येवान्येव् कर्माणि कुर्वाणा यंन्ति। अस्यामन्येव प्रति तिष्ठन्ति। तावाऽपंरार्धार्थ्यंवथ्मरस्यान्योन्यो गृह्यते। तावुभौ सह महावृते गृह्यते। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। उभयोर्लोकयोः प्रति तिष्ठन्ति। अर्क्यमुक्थं भवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे॥३६॥

समायच्छंत्यतिग्राह्मां गृह्मन्ते गृह्मतें संवथ्सरस्यान्यौन्यो गृह्मते पश्चं च॥————[३]

पुक्रिवृश्श पुष भंवति। एतेन् वै देवा एंकिविश्शेनं। आदित्यिमित उत्तमश् सुंवर्गं लोकमारोहयन्। स वा एष इत एंकिविश्शः। तस्य दशावस्तादहांनि। दशं प्रस्तात्। स वा एष विराज्यंभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा एष उंभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा एष लोकेष्वंभितपंत्रेति॥३७॥

देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचो-

ऽतिपादादंबिभयुः। तं छन्दोंभिरह १ धृत्यैं। देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। अवाचोऽवपादादंबिभयुः। तं पश्चभी रिश्मिभिरुदंवयन्। तस्मादेकवि १ शेऽहुन्पश्चं दिवाकीत्यांनि क्रियन्ते। रश्मयो वै दिवाकीत्यांनि। ये गांयत्रे। ते गांयत्रीषूत्तंरयोः पर्वमानयोः॥३८॥

महादिवाकीर्त्यक् होतुंः पृष्ठम्। विकर्णं ब्रह्मसामम्। भासौंऽग्निष्टोमः। अथैतानि पराणि। परैर्वे देवा आंदित्यक् सुवर्गं लोकमपारयन्। यदपारयन्। तत्पराणां पर्त्वम्। पारयन्त्येनं पराणि। य एवं वेदं। अथैतानि स्पराणि। स्परैर्वे देवा आंदित्यक् सुवर्गं लोकमस्पारयन्। यदस्पारयन्। तथ्स्पराणाक् स्पर्त्वम्। स्पारयन्त्येनुक् स्पराणि। य एवं वेदं॥३९॥

एति पर्वमानयोः स्पराणि पर्श्व च॥

**-**[8]

अप्रतिष्ठां वा एते गंच्छन्ति। येषा संवथ्मरेऽनाप्तेऽर्थ। एकाद्शिन्याप्यतें। वैष्णवं वांमनमालंभन्ते। युज्ञो वे विष्णुंः। यज्ञमेवालंभन्ते प्रतिष्ठित्ये। ऐन्द्राग्नमालंभन्ते। इन्द्राग्नी वे देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ते एवालंभन्ते॥४०॥

वैश्वदेवमालंभन्ते। देवतां एवावंरुन्थते। द्यावापृथिव्यां धेनुमालंभन्ते। द्यावापृथिव्योरेव प्रतिं तिष्ठन्ति। वायव्यं वथ्समालंभन्ते। वायुरेवैभ्यों यथाऽऽयत्नाद्देवता अवं रुन्धे। आदित्यामिवं वृशामालंभन्ते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। मैत्रावरुणीमालंभन्ते॥४१॥

मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्ट शमयन्ति। वर्रणेन दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूपरं महाव्रत आलंभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बिलर्हिंयते। आग्नेयमा लंभन्ते प्रति प्रज्ञांत्ये। अज्ञपेत्वान् वा एते पूर्वेर्मासैरवं रुन्धते। यदेते गृव्याः पृशवं आल्भ्यन्तें। उभयेषां पशूनामवंरुद्धौ॥४२॥

यदतिरिक्तामेकाद्शिनीमालभेरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यतिं-रिच्येत। यद्दौ द्दौ पृशू समस्येयुः। कनीय आयुः कुर्वीरन्। यदेते ब्राह्मणवन्तः पृशवं आलुभ्यन्तैं। नाप्रियं भ्रातृंव्यमभ्यंतिरिच्यंते। न कनीय आयुः कुर्वते॥४३॥

ते पुवालंभन्ते मैत्रावरुणीमालंभन्तेऽवंरुद्धै सप्त चं॥\_\_\_\_\_[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तों ऽशयत्। तं देवा भूताना् र् रसं तेजः सम्भृत्यं। तेनैनमभिषज्यन्। महानंववर्तीति। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रत्त्वम्। महद्भृतमिति। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रत्त्वम्। मृह्तो व्रतमिति। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रत्त्वम्। पश्चविर्शः स्तोमों भवति॥४४॥

चतुर्वि १ शत्यर्धमासः संवथ्सरः। यद्वा एतस्मिन्थ्संवथ्सरेऽधि प्राजायत। तदन्नं पञ्चवि १ शर्मभवत्। मुध्यतः क्रियते। मुध्यतो ह्यन्नंमिश्वतं धिनोतिं। अथों मध्यत एव प्रजानामूर्ग्धायते। अथ यद्वा इदमन्ततः क्रियतें। तस्मादुदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्ततः क्रियते प्रजननायैव। त्रिवृच्छिरों भवति॥४५॥

त्रेधाविहित १ हि शिरं। लोमं छ्वीरस्थि। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तथ्मदृगेव। न मेद्यतोऽनुं मेद्यति। न कृश्यतोऽनुं कृश्यति। पृश्रुदृशौंऽन्यः पृक्षो भंवति। सृप्तदृशौं-ऽन्यः। तस्माद्वया १ स्यन्यत्रमूर्धम्भि पूर्यावर्तन्ते। अन्यत्रतो हि तद्गरीयः क्रियते॥ ४६॥

पृश्चिविष्ण आत्मा भेवति। तस्मान्मध्यतः पृशवो वरिष्ठाः। पृक्विष्णं पृच्छम्। द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण स्ह स्तुवन्ति। सर्वेण ह्यात्मनाऽऽत्मन्वी। सहोत्पतंन्ति। एकैकामुच्छिरंषन्ति। आत्मन्न ह्यङ्गांनि बद्धानि। न वा एतेन सर्वः पुरुषः॥४७॥

यदित इंतो लोमांनि द्तो न्खान्। पृरिमादंः क्रियन्ते। तान्येव तेन् प्रत्युंप्यन्ते। औदुंम्बर्स्तल्पों भवति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। यस्यं तल्प्सद्यमनंभिजित् स्यात्। स देवाना सम्यक्षे। तल्प्सद्यम्भिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। तल्पसद्यम्भिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। तल्पसद्यम्भिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। तल्पसद्यम्भिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। तल्पसद्यम्भिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्।

यस्यं तल्प्सद्यंमभिजिंत् र् स्यात्। स देवाना र साम्यंक्षे। तल्प्सद्यं मा पराजेषीति तल्पंमारुह्योद्गायेत्। न तंल्प्सद्यं परांजयते। ष्रेङ्के शर्सति। महो वै ष्रेङ्कः। महंस एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चं शूद्रश्चं चर्मकर्ते व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णो ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमंऽराथ्सुरिमे सुंभूतमंऋत्रित्यंन्यत्रो ब्रूयात्। इम उद्वासीकारिणं इमे दुर्भूतमंऋत्रित्यंन्यत्रः। यदेवैषां सुकृतं या राद्धिः। तदंन्यत्रोऽभि श्रीणाति। यदेवैषां दुष्कृतं याऽराद्धिः। तदंन्यत्रोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जयिति। अमुमेवाऽऽदित्यं भ्रातृंव्यस्य संविन्दन्ते॥५०॥ भवित भवित क्रियते पुरुषो जयत्यजयअयत्थे च॥——[६]

उद्धन्यमानं नवैतानि सन्तंतिरेकिविष्ट्षा एषोऽप्रंतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तः षट्॥६॥ उद्धन्यमानर शोचिष्केशोऽग्नें सपन्नानितग्राह्यां वैश्वदेवमालंभन्ते पश्चाशत्॥५०॥ उद्धन्यमानुरु संविन्दन्ते॥

### हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंता आसन्। ते देवा विजयमुंप्यन्तः। अग्नीषोमयोस्तेजस्विनींस्तुनः सन्त्र्यंदधत। इदम् नो भविष्यति। यदि नो जेष्यन्तीतिं। तेनाग्नीषोमावपान्नामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमावन्वैच्छन्। तैंऽग्निमन्वं-विन्दत्रृतुषूथ्मंत्रम्। तस्य विभंक्तीभिस्तेजस्विनींस्तुन्र्रवांरुन्थत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तमंघ्नन्। तस्यं यथाऽभिज्ञायं तनूर्व्यगृह्णत्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनर्ाधेयें कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनर्ाधेयें कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनाँग्नेयं वा एतिक्रियते। यथ्समिधस्तनूनपांतिम्डो बर्हिर्यजिति। उभावाँग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनाँज्यभागौ भवत् इत्यांहुः। यदुभावाँग्नेयावन्वश्चाविति। अग्नये पर्वमानायोत्तरः स्यात्। यत्पर्वमानाय। तेनाऽऽज्यंभागः। तेनं सौम्यः। बुधंन्वत्याग्नेयस्याऽऽज्यंभागस्य पुरोऽनुवाक्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः

पत्नीसंयाजानामृचंः स्यः। तेनाँग्नेयः सर्वं भवति। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। प्रजनंनं वा अग्निः। प्रजनंनमेवोपैतीतिं। कृतयंजुः सम्भृतसम्भार् इत्यांहः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खर्लु। सम्भृत्यां एव संम्भाराः। कार्यं यजुः। पुन्राधेयंस्य समृद्धै। तेनोपा १ श्रु प्रचरित। एष्यं इव वा एषः। यत्पुनराधेयः। यथोपा १ शु नृष्टमिच्छति॥ ५॥

ताहगेव तत्। उचैः स्विष्टकृतम्थ्मंजित। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राहायमितिं। ताहगेव तत्। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। तत्तथा नोपैति। प्रयाजानूयाजेष्वेव विभेक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्यातांम्। एवं पेत्रीसंयाजाः॥६॥

तहैं श्वान् रवंत्र्यजनंनवत्तर्मुपैतीतिं। तदांहुः। व्यृंद्धं वा एतत्। अनांग्नेयं वा एतिक्रियत् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। अग्निं प्रथमं विभक्तीनां यजित। अग्निम्तिनमं पंत्रीसंयाजानांम्। तेनांग्नेयम्। तेन समृद्धं क्रियत इतिं॥७॥

अ्रु-धृतैव तद्भवित् सम्भृंतसम्भार् इत्यांहुरिच्छितिं पत्नीसंयाजा नवं च॥————[ $\S$ ]

देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहंरन्त। योंऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्। योऽतिरात्रम्। ते सहैव सर्वे वाज्यपेयंमपश्यन्। ते। अन्यों ऽन्यस्मै नातिंष्ठन्त। अहमनेनं यजा इतिं। तें ऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेतिं॥८॥

तस्मिन्नाजिमधावन्। तं बृह्स्पित्रु र्वजयत्। तेनायजत। स स्वाराज्यमगच्छत्। तिमन्द्रौंऽब्रवीत्। माम्नेनं याज्येति। तेनेन्द्रमयाजयत्। सोऽग्रं देवतानां पर्येत्। अगच्छथ्स्वाराज्यम्। अतिष्ठन्तास्मे ज्यैष्ठ्याय॥९॥

य एवं विद्वान् वांजिपेयेंन् यजंते। गच्छेति स्वारांज्यम्। अग्रं समानानां पर्येति। तिष्ठंन्तेऽस्मै ज्यैष्ठ्यांय। स वा एष ब्राह्मणस्यं चैव रांजन्यंस्य च यज्ञः। तं वा एतं वांजिपेय इत्यांहुः। वाजाप्यो वा एषः। वाज् इ ह्येंतेनं देवा ऐफ्सन्। सोमो वै वांजिपेयः। यो वै सोमंं वाजिपेयं वेदं॥१०॥

वाज्येवैनं पीत्वा भंवति। आऽस्यं वाजी जांयते। अत्रं वै वाज्येयः। य एवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यानादो जांयते। ब्रह्म वै वाज्येयः। य एवं वेदं। अत्ति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्म जांयते॥११॥

वाग्वै वार्जस्य प्रस्वः। य एवं वेदे। क्रोतिं वाचा वीर्यम्ं। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवतीं वाचं वदति। प्रजापितिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्वांज्येपयंमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यद्वांज्येयः॥१२॥

अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पुता उन्नितीः प्रायंच्छत्। ता

वा एता उन्नितयो व्याख्यांयन्ते। यज्ञस्यं सर्वृत्वायं। देवतांनामनिर्भागाय। देवा वै ब्रह्मंणश्चान्नंस्य च् शमंलुमपांघन्। यद्वह्मंणः शमंलुमासीत्। सा गाथां नाराशङ्स्यंभवत्। यदन्नंस्य। सा सुरां॥१३॥

तस्माद्गायंतश्च मृत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्ं। यत्प्रंतिगृह्णीयात्। शमंलं प्रतिगृह्णीयात्। सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृथिव्यां याऽग्रौ या रंथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या बृंह्ति। याऽपस् यौषंधीषु या वनस्पतिषु। तस्माद्वाजपेययाज्यार्त्वंजीनः। सर्वा ह्यंस्य वाचो-ऽवंरुद्धाः॥१४॥

धावामेति ज्यैष्ठ्यांय वेदं ब्रह्मा जांयते वाज्येयः सुराऽऽर्त्विजीन एकं च॥———[२]

देवा वै यद्न्यैग्रहैं य्वंजस्य नावारंन्थत। तदंतिग्राह्यैरतिगृह्यावारंग्थत। तदंतिग्राह्यांणामितग्राह्यत्वम्। यदंतिग्राह्यां
गृह्यन्तें। यदेवान्यैग्रहैं य्वंजस्य नावं रुन्थे। तदेव तैरंतिगृह्यावं
रुन्थे। पश्चं गृह्यन्ते। पाङ्कों युज्ञः। यावांनेव युज्ञः। तमास्वाऽवं
रुन्थे॥१५॥

सर्व ऐन्द्रा भेवन्ति। एक्धेव यजंमान इन्द्रियं दंधित। सप्तदंश प्राजापत्या ग्रहां गृह्यन्ते। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। सोमुग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। एतद्वे देवानां

### पर्ममन्नम्। यथ्सोर्मः॥१६॥

पुतन्मंनुष्यांणाम्। यथ्सुराँ। पुरमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंर-मन्नाद्यमवं रुन्थे। सोमग्रहान्गृंह्णाति। ब्रह्मणो वा पुतत्तेजंः। यथ्सोमः। ब्रह्मण एव तेजंसा तेजो यजंमाने दथाति। सुराग्रहान्गृंह्णाति। अन्नंस्य वा पुतच्छमंलम्। यथ्सुराँ॥१७॥

अन्नस्यैव शमेलेन शमेलं यर्जमानादपेहन्ति। सोम्ग्रहा इश्चे सुराग्रहा इश्चे गृह्णाति। पुमान् वे सोमेः। स्त्री सुराँ। तन्मिंथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनेनाय। आत्मानेमेव सोमग्रहेः स्पृंणोति। जाया १ सुराग्रहेः। तस्माद्वाजपेययाज्यं मुष्मिं ह्योके स्त्रिय १ सम्भविति। वाजपेयांभिजित इद्यंस्य॥१८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपेरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षरं सोमग्रहान्थ्सांदयित। पृश्चाद्क्षरं सुराग्रहान्। पाप्वस्यसस्य विधृंत्यै। एष वै यजंमानः। यथ्सोमः। अन्नर् सुरा। सोमग्रहाइश्चं सुराग्रहाइश्चं सुराग्रहाइश्चं व्यतिषजिति। अन्नाद्येनैवेनं व्यतिषजित॥१९॥

सम्पृचेः स्थ सं मां भ्रेणं पृङ्केत्यांह। अत्रं वै भ्रम्। अन्नाद्येनैवैन् स स्मृंजिति। अन्नस्य वा एतच्छमंलम्। यथ्सुरां। पाप्मेव खलु वै शमलम्। पाप्मना वा एनमेतच्छमंलेन व्यतिषजिति। यथ्सोमग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं व्यतिषजंति। विपृचंः स्थ् वि मां पाप्मनां पृङ्केत्यांह। पाप्मनैवैन् शमंलेन व्यावर्तयति॥२०॥

तस्मौद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यो दक्षिण्यः। प्राङुद्वंवित सोमग्रहेः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रत्यङ्ख्सुंराग्रहेः। इममेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहेः। यावंदेव सत्यम्। तेनं सूयते। वाज्रसृद्धः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृंतेनेव विशु स् स्सृंजिति। हिर्ण्यपात्रं मधौः पूर्णं दंदाित। मध्य्यो-ऽसानीितं। एकधा ब्रह्मण् उपं हरित। एकधेव यजंमान आयुस्तेजो दधाित॥२१॥

आस्वाऽवं रुन्धे सोम्ः शर्मलुं यथ्सुरा ह्यंस्यैनुं व्यतिषजति व्यावंतयित सृजति चृत्वारिं च॥ [३]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। नाग्निष्टोमो नोक्थ्यः। न षोंड्शी नातिरात्रः। अथ कस्माँद्वाज्पेये सर्वे यज्ञऋतवोऽवंरुध्यन्त् इतिं। पृशुभिरितिं ब्रूयात्। आग्नेयं पृशुमालंभते। अग्निष्टोममेव तेनावं रुन्धे। ऐन्द्राग्नेनोक्थ्यम्। ऐन्द्रेणं षोड्शिनः स्तोत्रम्। सारुस्वत्याऽतिरात्रम्॥२२॥

मारुत्या बृंह्तः स्तोत्रम्। एतावंन्तो वै यंज्ञऋतवंः। तान्पश्मिरेवावं रुन्थे। आत्मानंमेव स्पृंणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थ्यंन। वीर्यर् षोड्शिनंः स्तोत्रेणं। वार्चमितरात्रेणं। प्रजां बृंह्तः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थ्यंन॥२३॥

सुवर्गं लोक १ षोंडशिनंः स्तोत्रेणं। देवयानांनेव पृथ

आरोहत्यतिरात्रेणं। नाक रे रोहति बृह्तः स्तोत्रेणं। तेजं प्वाऽऽत्मन्धंत्त आग्नेयेनं पृश्जां। ओजो बलंमैन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाच रे सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं चं मनुष्यलोकं चाभिजंयति मारुत्या वृशयां। सप्तदंश प्राजापत्यान्पशूनालंभते। सप्तदशः प्रजापंतिः॥२४॥

प्रजापंतेरास्यै। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एविमेव् हि प्रजापंतिः समृद्धे। तान्पर्यग्निकृतानुथ्मृंजिति। मुरुतों यज्ञमंजिघा स्मन्य्रजापंतेः। तेभ्यं एतां मारुतीं वृशामालंभत। तयैवैनानशमयत्। मारुत्या प्रचर्य। एतान्थ्यंज्ञंपयेत्। मुरुतं एव शंमियत्वा॥२५॥

पृतेः प्रचंरित। यज्ञस्याघांताय। पृक्धा व्पा जुंहोति। पृक्देवत्यां हि। पृते। अथों पृक्धेव यजमाने वीर्यं दधाति। नैवारेणं सप्तदंशशरावेणैतर्हि प्रचंरित। पृतत्पुंरोडाशा ह्यंते। अथों पशूनामेव छिद्रमिपंदधाति। सार्स्वत्योत्तमया प्रचंरित। वाग्वै सर्रस्वती। तस्मात्प्राणानां वागुंत्तमा। अथौं प्रजापंतावेव यज्ञं प्रतिष्ठापयति। प्रजापंतिर्हि वाक्। अपंत्रदती भवति। तस्मान्मनुष्याः सर्वां वाचं वदन्ति॥२६॥

अतिरात्रमुन्तरिक्षमुक्थ्येन प्रजापंतिः शमयित्वोत्तमया प्रचंरित षट् चं॥————[४]

सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तौत्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांजपेयंस्य पूर्वं यदपंरमितिं। सवितृप्रंसूत एव यंथापूर्वं कर्माणि करोति। सर्वनेसवने जुहोति। आक्रमणमेव तथ्सेतुं यर्जमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्धि। वाचस्पतिर्वाचम्य स्वदाति न इत्याह। वाग्वै देवानां पुराऽन्नमासीत्। वाचमेवास्मा अन्नई स्वदयति॥२७॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। वार्जस्य नु प्रंसवे मातरं महीमित्यांह। यच्चैवेयम्। यच्चास्यामिधं। तदेवावं रुन्धे। अथो तस्मिन्नेवोभयेऽभि-षिच्यते। अपस्वंन्तर्मृतंमपसु भेषजमित्यश्वांन्यल्पूलयित। अपसु वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेन्न्ववंष्लवते। यद्पसु पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्यापसु प्रविष्टम्। तदेवावं रुन्थे। बहु वा अश्वोऽमेध्यमुपंगच्छति। यदपसु पंल्पूलयंति। मेध्यांनेवैनान्करोति। वायुर्वां त्वा मनुर्वा त्वेत्यांह। पृता वा पृतं देवता अग्रे अश्वमयुञ्जन्। ताभिरेवैनान् युनिक्त। स्वस्योज्जित्यै। यजुषा युनिक्त व्यावृत्त्यै॥२९॥

अपाँत्रपादाशुहेम्त्रिति सम्माँष्टिं। मेध्यांनेवैनाँन्करोति। अथो स्तौत्येवैनांनाजि संरिष्यतः। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्लोकान्भिजंयति। वैश्वदेवो वै रथंः। अङ्को न्यङ्काव्भितो रथं यावित्यांह। या एव देवता रथे प्रविष्टाः। ताभ्यं एव नमंस्करोति। आत्मनोऽनाँत्ये। अशंमरथं

## भावुकोऽस्य रथों भवति। य एवं वेदं॥३०॥

स्बद्यति पुल्पूलयंति व्यावृत्त्या अनौतर्ये द्वे चं॥—————[५]

देवस्याहर संवितुः प्रंस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वाजं जेषिमत्याह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वाज्मु यंति। देवस्याहर संवितुः प्रंस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वर्षिष्ठं नाकर्र रुहेयमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्ठं नाकर्र रोहित। चात्वांले रथच्कं निर्मितर रोहित। अतो वा अङ्गिरस उत्तमाः स्वां लोकमायन्। साक्षादेव यजंमानः सुव्गं लोकमेति। आवेष्टयित। वज्रो वे रथंः। वज्रेणैव दिशोऽभिजंयित॥३१॥

वाजिना समर्म गायते। अत्रं वै वाजः। अत्रं मेवावं रुन्धे। वाचो वर्ष्म देवेभ्योऽपाँकामत्। तद्वन्स्पतीन्प्राविंशत्। सैषा वाग्वन्स्पतिषु वदति। या दुन्दुभौ। तस्माँ दुन्दुभिः सर्वा वाचो-ऽतिंवदति। दुन्दुभीन्थ्समाघ्नंन्ति। पुरमा वा पृषा वाक्॥३२॥

या दुन्दुभौ। प्रमयैव वाचाऽवरां वाचमंव रुन्थे। अथो वाच एव वर्ष्म् यजंमानोऽवं रुन्थे। इन्द्रांय वाचं वद्तेन्द्रं वाजं जापयतेन्द्रो वाजंमजियदित्यांह। एष वा एतर्हीन्द्रं। यो यजंते। यजंमान एव वाज्मुजंयति। सप्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। सप्तद्श स्तोत्रं भंवति। सप्तदंशसप्तदश दीयन्ते॥३३॥

स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापतेरास्यै। अवांऽसि सप्तिंरसि वाज्यंसीत्यांह। अग्निर्वा अर्वां। वायुः सप्तिः। आदित्यो वाजी। एताभिरेवास्मै देवतांभिर्देवर्थं युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनक्ति॥३४॥

वार्जिनो वार्जं धावत काष्ठां गच्छतेत्यांह। सुवर्गो वे लोकः काष्ठां। सुवर्गमेव लोकं यंन्ति। सुवर्गं वा एते लोकं यंन्ति। य आजिं धावंन्ति। प्राश्चो धावन्ति। प्राङिंव हि सुवर्गो लोकः। चत्सिभिरनुं मन्नयते। चत्वारि छन्दार्सि। छन्दोभिरेवैनांन्थ्सुवर्गं लोकं गंमयति॥३५॥

प्र वा पृतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च आवंर्तन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्ये। आ मा वार्जस्य प्रस्वो जंगम्यादित्यांह। अन्नं वै वार्जः। अन्नमेवावं रुन्धे। यथालोकं वा पृत उन्नयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥

कृष्णलं कृष्णलं वाज्यसृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं पंरिक्रीयावं रुन्धे। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयः। ता बृह्स्पतिरुदंजयत्। स नीवारान्निरंवृणीत। तन्नीवारांणां नीवार्त्वम्। नैवारश्चरुभंवति॥३७॥

पुतद्वै देवानां पर्ममन्नम्। यन्नीवाराः। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावरम्नाद्यमवं रुन्थे। सप्तदंशशरावो भवति। स्प्तद्शः प्रजापतिः। प्रजापतेरास्ये। क्षीरे भवति। रुचमेवास्मिन्दधाति। सपिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। बार्हस्पत्यो वा एष देवतंया॥३८॥

यो वांज्येयेन यजंते। बार्हस्पत्य एष च्रः। अश्वांन्थ्सरिष्यतः सम्भुषश्चावं घ्रापयति। यमेव ते वाजं लोकमुज्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे। अजीजिपत वनस्पतय इन्द्रं वाजं विम्च्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विम्श्चिति। यमेव ते वाजं लोकमिन्द्रियं दुन्दुभयं उज्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे॥३९॥

अभिजंयित वा एषा वार्ग्दीयन्तेऽस्मै युनिक्त गमयित य आजिं धार्वन्ति भवित देवतंयाऽष्टौ

तार्प्यं यजंमानं परिधापयति। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन् समर्धयति। दुर्भमयं परिधापयति। प्वित्रं वै दुर्भाः। पुनात्येवैनम्। वाजं वा एषोऽवंरुरुसते। यो वाजप्येन् यजंते। ओषंधयः खलु वै वाजः। यद्देर्भमयं परिधापयति॥४०॥

वाज्स्यावंरुद्धै। जाय् एिह् सुवो रोह्यवेत्यांह। पित्रंया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। सप्तदंशारित्वर्यूपो भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरात्यै। तूप्रश्चतुंरिश्रभविति। गौधूमं चुषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥

पुविमेव हि प्रजापंतिः समृद्धै। अथों अमुमेवास्मैं लोकमन्नवन्तं करोति। वासोभिर्वेष्टयति। पृष वै यर्जमानः। यद्यूपंः। सुर्वेदेवत्यं वासंः। सर्वाभिर्वेनं देवतांभिः समर्धयति। अथो आक्रमणमेव तथ्सेतुं यर्जमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्यै। द्वादंश वाजप्रसवीयांनि जुहोति॥४२॥

द्वादंश मासाः संवथ्यरः। संवथ्यरमेव प्रीणाति। अथो संवथ्यरमेवास्मा उपंदधाति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रो। दशिमः कल्पं रोहति। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यथास्थानं कल्पयित्वा। सुवर्गं लोकमेति। एतावृद्वे पुरुषस्य स्वम्॥४३॥

यावंत्र्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुंवर्गं लोकमेति। सुवंदेवाः अंगन्मेत्यांह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्यांह। अमृतंमिव हि सुंवर्गो लोकः। प्रजापंतेः प्रजा अभूमेत्यांह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नैतिं॥४४॥

सम्हं प्रजया सं मया प्रजेत्याह। आशिष्मेवेतामा शास्ते। आसपुटैर्घन्ति। अत्रं वा इयम्। अन्नाद्येनैवेन् समर्धयन्ति। ऊषैर्घन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवेनंमन्नाद्येन् समर्धयन्ति। पुरस्तात्प्रत्यश्चं घ्रन्ति॥४५॥ पुरस्ताद्धि प्रंतीचीनमन्नंमद्यतें। शीर्षता घ्रंन्ति। शीर्षतो ह्यनंमद्यतें। दिग्भ्यो घ्रंन्ति। दिग्भ्य एवास्मां अन्नाद्यमवंरुभ्यते। ईश्वरो वा एष पराङ्कद्यः। यो यूप्र रोहंति। हिरंण्यम्ध्यवंरोहति। अमृतं वे हिरंण्यम्। अमृतर्थ सुवर्गो लोकः॥४६॥

अमृतं एव सुंवर्गे लोके प्रतिं तिष्ठति। शतमानं भवति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। पृष्ठौ वा एतद्रूपम्। यद्जा। त्रिः संवथ्सरस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बस्ताजिनम्ध्यवं रोहति। पृष्ट्यांमेव प्रजनेने प्रतिं तिष्ठति॥४७॥

पुरिधापर्यंति गोधूमां जुहोति स्वं नैतिं प्रत्यश्चं घ्रन्ति लोको नवं च॥————[७]

स्प्तान्नहोमाञ्जेहोति। स्प्त वा अन्नांनि। यावंन्त्येवान्नांनि। तान्येवावं रुन्धे। स्प्त ग्राम्या ओषंधयः। स्प्तार्ण्याः। उभयीषामवंरुद्धे। अन्नंस्यान्नस्य जुहोति। अन्नंस्यान्नस्या-वंरुद्धे। यद्वांजपेययाज्यनंवरुद्धस्याश्जीयात्॥४८॥

अवंरुद्धेन् व्यृंद्धोत। सर्वस्य समवदायं जुहोति। अनंवरुद्धस्यावंरुद्धौ। औदुंम्बरेण स्रुवेणं जुहोति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एवैनं ब्रह्मणा देवतांभिर्भिषिश्चति। अन्नस्यान्नस्याभिषिश्चति। अन्नस्यान्नस्यावंरुद्धौ॥४९॥ पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभिषिश्चित। पुरस्ताद्धि प्रंतीचीन्मन्नंमद्यतें। शीर्षतोऽभिषिश्चित। शीर्षतो ह्यनंमद्यतें। आ मुखांदन्ववं-स्रावयति। मुख्त एवास्मां अन्नाद्यं दधाति। अग्नेस्त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। एष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंमभिषिश्चिति। इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। त्यांह॥५०॥

इन्द्रियमेवास्मिन्नेतनं दधाति। बृह्स्पतेंस्त्वा साम्रांज्येनाभि-षिश्चामीत्याह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनंमभि-षिश्चति। सोम्ग्रहा इश्चांवदानीयानि चर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। सुराग्रहा इश्चांनवदानीयानि च वाज्मुद्धाः। इममेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। अथों उभयींष्वेवाभिषिंच्यते। विमाथं कुर्वते वाज्मुतः॥५१॥

इन्द्रियस्यावंरुद्धै। अनिंरुक्ताभिः प्रातः सवने स्तुंवते। अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। वाजंवतीभिर्माध्यं दिने। अत्रुं वै वाजंः। अन्नमेवावं रुन्धे। शिपिविष्ट-वंतीभिस्तृतीयसवने। युज्ञो वै विष्णुंः। पृशवः शिपिः। युज्ञ एव पृशुषु प्रतिं तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तंमेवैन ई श्रियै गंमयति॥५२॥

अुरुजीयादन्नंस्यान्नस्यावंरुद्धा इन्द्रंस्य त्वा साम्राज्येनाभिषिश्चामीत्यांह वाज्सृतः शिपिस्नीणि

नृषदं त्वेत्यांह। प्रजा वै नृन्। प्रजानांमेवेतेनं सूयते।

լሪ]

द्रुषद्मित्यांह। वनस्पतंयो वै द्रु। वनस्पतींनामेवेतेनं सूयते। भुवनसद्मित्यांह। यदा वै वसींयान्भवंति। भुवनमगन्निति वै तमांहः। भुवनमेवेतेनं गच्छति॥५३॥

अपसुषदं त्वा घृत्सद्मित्यांह। अपामेवैतेनं घृतस्यं स्यते। व्योमसद्मित्यांह। यदा वे वसीयान्भवंति। व्योमागृन्निति वे तमांहुः। व्योमैवैतेनं गच्छति। पृथिविषदं त्वाऽन्तिरक्षसद्मित्यांह। एषामेवैतेनं लोकानारं सूयते। तस्माद्धाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवंरोहति। अपीव हि देवतांनार सूयते॥५४॥

नाक्सद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। नाकंमगन्नित् वै तमांहः। नाकंमेवेतेनं गच्छति। ये ग्रहाः पश्चज्ञनीना इत्यांह। पश्चज्ञनानांमेवेतेनं सूयते। अपार रस्मुद्धंयस्मि-त्यांह। अपामेवेतेन रसंस्य सूयते। सूर्यरिभिर स्मार्भृतमित्यांह सशुक्रत्वायं॥५५॥

गुच्छति सूयते नवं च॥

**-**[3]

इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। सोऽमावास्यां प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञां-ऽगच्छत्। तं देवाः पुनंरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनंरददुः। तेंऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं वः पुनंदिस्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्यः क्रियाता इति॥५६॥

तमेंभ्यः पुनंरददुः। तस्मौत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रियते। यत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः करोतिं। पितृभ्यं पृव तद्यज्ञं निष्क्रीय यजमानः प्रतंनते। सोमाय पितृपीताय स्वधा नम् इत्याह। पितुरेवाधि सोमपीथमवं रुन्धे। न हि पिता प्रमीयमाण आहैष सोमपीथ इतिं। इन्द्रियं वै सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमवं रुन्धे। तेनैन्द्रियेणं द्वितीयां जायामभ्यंश्जुते॥५७॥

पृतद्वै ब्राह्मणं पुरा वांजवश्रवसा विदामंत्रन्। तस्मात्ते द्वेद्वे जाये अभ्याक्षत। य एवं वेदे। अभि द्वितीयां जायामंश्जते। अग्नये कव्यवाहंनाय स्वधा नम् इत्याह। य एव पितृणाम्गिः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। तूष्णीं मेक्षंणमादंधाति। अस्ति वा हि षष्ठ ऋतुर्न वाँ। देवान् वै पितृन्प्रीतान्। मृनुष्याँः पितरोऽनु प्रपिपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितॄन्प्रीणाति। तान्प्रीतान्। मनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। सकुदाच्छित्रं बर्हिर्भवति। सकृदिव हि पितरंः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। पराङावंति॥६०॥ ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौ व्यावृत् उपौस्ते। ऊष्मभांगा हि पितरंः। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। प्राश्या (३) न्न प्राश्या (३) मिति। यत्प्राश्चीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्राश्चीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥

पितृभ्य आवृश्च्येत। अवघ्रेयमेव। तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितरंः प्रयन्तो हरन्ति। वीरं वां ददित। दशां छिनत्ति। हर्रणभागा हि पितरंः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तंर आयुंषि लोमं छिन्दीत। पितृणाः ह्यंतर्हि नेदीयः॥६२॥

नमंस्करोति। नमस्कारो हि पिंतृणाम्। नमों वः पितरो रसाय। नमों वः पितरः शुष्माय। नमों वः पितरो जीवाय। नमों वः पितरः स्वधायै। नमों वः पितरो मृन्यवै। नमों वः पितरो घोराय। पितरो नमों वः। य पुतस्मिं ह्योके स्थ॥६३॥

युष्मा इस्ते ऽन्। यें ऽस्मिँ ह्लो के। मां ते ऽन्। य एतस्मिँ ह्लो के स्थ। यूयं तेषां विसेष्ठा भूयास्त। यें ऽस्मिँ ह्लो के। अहं तेषां विसेष्ठो भूयास्ति। विसेष्ठः समानानां भवति। य एवं विद्वान्यितृभ्यः कुरोति। एष वै मनुष्याणां युज्ञः॥६४॥

देवानां वा इतंरे युज्ञाः। तेन वा एतित्पितृलोके चरित। यत्पितृभ्यः करोति। स ईश्वरः प्रमेतोः। प्राजापत्ययुर्चा पुनुरैति। युज्ञो वै प्रजापितिः। युज्ञेनैव सह पुनुरैति। न प्रमायंको भवति। पितृलोके वा प्रतद्यजंमानश्चरति। यित्पृतृभ्यः करोति। स ईश्वर आर्तिमार्तोः। प्रजापंतिस्त्वावैनं तत् उन्नेतुमर्हृतीत्यांहुः। यत्प्रांजापृत्ययुर्चा पुन्रेति। प्रजापंतिरेवैनं तत् उन्नयिति। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥६५॥ इत्यंश्वते पद्यन्ते पद्यने पद्य

देवासुरा अग्नीषोमंयोर्देवा वै यथादर्शं देवा वै यदन्यैग्रीहैंर्ब्रह्मवादिनो नाग्निष्टोमो न सांवित्रं देवस्याहं तार्प्यं सप्तान्नहोमात्रृषदं त्वेन्द्रों वृत्र हत्वा दर्शा॥१०॥ देवासुरा वाज्येवैनं तस्माँद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजस्यावंरुद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्लीका हि पितरः पश्चंषष्टिः॥६५॥ देवासुरा यजंमानः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

# ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा एते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्चासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें ऽन्य इमें ऽन्य इतिं। स देवान् १ शूनंकरोत्। तान्भ्यंषुणोत्। तान्यवित्रंणापुनात्। तान्यरस्तांत्यवित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहत्वम्॥१॥

देवता वा एता यर्जमानस्य गृहे गृंह्यन्ते। यद्ग्रहाः। विदुर्रनं देवाः। यस्यैवं विदुषं एते ग्रहां गृह्यन्तें। एषा वै सोम्स्याऽऽहुंतिः। यदुंपार्शः। सोमेन देवाङ्स्तंपयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपार्शुं जुहोतिं। सोमेनैव तद्देवाङ्स्तंपयति। यद्गहां जुहोतिं॥२॥

देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यर्चम्सां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेण यजंमानः सुवृगं लोकमेति। किं न्वेतदग्रं आसीदित्यांहुः। यत्पात्राणीतिं। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रांण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥

तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। व्यावृतंमेव तैर्यजंमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयति। यानि मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकम्भिजंयति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। काश्चतंस्रः स्थालीर्वायव्याः सोमुग्रहंणीरितिं। देवा वै पृश्ञिंमदुह्रन्॥४॥

तस्यां एते स्तनां आसन्। इयं वै पृश्विः। तामांदित्या आंदित्यस्थाल्या चतुंष्पदः पृशूनंदुह्नन्। यदांदित्यस्थाली भवंति। चतुंष्पद एव तयां पृशून् यजंमान इमां दुंहे। तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदुहत्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति। इन्द्रियमेव तया यजंमान इमां दुंहे। तां विश्वे देवा आंग्रयणस्थाल्योर्जमदुह्नन्। यदांग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यजंमान इमां दुंहे। तां मंनुष्यौ ध्रुवस्थाल्याऽऽयुंरदुह्नन्। यद्धुंवस्थाली भवंति। आयुंरेव तया यजंमान इमां दुंहे। स्थाल्या गृह्णातिं। वायव्येन जुहोति। तस्मांदन्येन पात्रेण प्शून्दुहन्तिं। अन्येन प्रतिंगृह्णन्ति। अथौं व्यावृतंमेव तद्यजंमानो गच्छति॥६॥

यृह्त्वं ग्रहाँ जुहोत्यंकुर्वतादुहन्नाग्रयणस्थाली भवंति नवं च॥**—————[१**]

युव स्रामंमिश्वना। नम्चावासुरे सर्चा। विपिपाना शुंभस्पती। इन्द्रं कर्मं स्वावतम्। पुत्रिमंव पितरांविश्वनोभा। इन्द्रावंतं कर्मणा दृश्सनांभिः। यथ्सुरामं व्यपिंबः शचींभिः। सरंस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँव्यग्ने ह्विरास्येंते। सुचीवं घृतं चमू इंव सोमंः॥७॥

वाज्यसिन १ रियमस्मे सुवीरम्। प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम्। यस्मिन्नश्वांस ऋषभासं उक्षणंः। वशा मेषा अंवसृष्टास् आहुंताः। कीलालपे सोमंपृष्टाय वेधसें। हृदा मृतिं जनय चारुंमग्रयें। नाना हि वां देवहिंत् सदों मितम्। मा सर्सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हिस्सीः स्वां योनिमाविशन्॥८॥

यदत्रं शिष्ट रिसनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहं तदस्य मनसा शिवेन। सोम् राजानिम्ह भंक्षयामि। द्वे स्नुती अंश्रणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यानाम्। ताभ्यामिदं विश्वं भुवंन् समेति। अन्तरा पूर्वमपंरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायत्रछंन्दाः पाशंः। तं तं पृतेनावं यजे॥९॥

यस्ते देव वरुण त्रिष्टुप्छंन्दाः पार्शः। तं ते पृतेनावं यजे। यस्ते देव वरुण जगतीछन्दाः पार्शः। तं ते पृतेनावं यजे। सोमो वा पृतस्यं राज्यमादत्ते। यो राजा सत्राज्यो वा सोमेन यजेते। देवसुवामेतानि ह्वी १ वि भवन्ति। पृतावंन्तो वे देवाना एतावंन्तो स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एनं पुनः सुवन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥

सोमं आवि्शन् यंजे राज्यायैकं च॥———[२]

उदंस्थाद्देव्यदितिर्विश्वरूपी। आयुंर्यज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय कृण्वती भागम्। मित्राय वर्रुणाय च। इयं वा अग्निहोत्री। इयं वा एतस्य निषीदति। यस्याग्निहोत्री निषीदंति। तामुत्थांपयेत्। उदंस्थाद्देव्यदितिरिति। इयं वै देव्यदितिः॥११॥ ड्मामेवास्मा उत्थापयति। आयुर्य्ज्ञपंतावधादित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय वर्रुणाय चेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अवंर्तिं वा एषेतस्य पाप्मानं प्रतिख्याय निषीदति। यस्यांग्निहोत्र्युपंसृष्टा निषीदंति। तां दुग्ध्वा ब्रांह्मणायं दद्यात्। यस्यात्रं नाद्यात्। अवंर्तिमेवास्मिन्पाप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥

दुग्धा दंदाति। न ह्यदंष्टा दक्षिणा दीयतें। पृथिवीं वा एतस्य पयः प्रविंशति। यस्यांग्निहोत्रं दुह्यमांनु स्कन्दंति। यद्द्य दुग्धं पृथिवीमसंक्त। यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासुं। पयो वृथ्सेषु पयो अस्तु तन्मयीत्यांह। पयं एवाऽऽत्मन्गृहेषुं पृशुषुं धत्ते। अप उपंसृजति॥१३॥

अद्भिरेवैनंदाप्नोति। यो वै य्ज्ञस्यार्ते नानांति सरम्जिति। उभे वै ते तर्ह्यार्च्छंतः। आर्च्छंति खलु वा एतदंग्निहोत्रम्। यद्दुह्ममान् इस्कन्दंति। यदंभिदुह्यात्। आर्ते नानांतं य्ज्ञस्य सरम्जेत्। तदेव यादक्षीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्धा पुनंरहोत्व्यम्। अनांतिनेवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१४॥

यद्युद्धंतस्य स्कन्देंत्। यत्ततोऽहुंत्वा पुनंर्यात्। य्ज्ञं विच्छिंन्द्यात्। यत्र स्कन्देंत्। तित्रृषद्य पुनंर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दंति। ततं पुवैनृत्पुनंर्गृह्णाति। तदेव यादक्षीदक्षं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। अनार्तेनैवार्तं

### यज्ञस्य निष्कंरोति॥१५॥

वि वा एतस्यं यज्ञश्छिंद्यते। यस्यांग्निहोत्रेऽधिश्चिते श्वा-ऽन्तरा धावंति। रुद्रः खलु वा एषः। यद्ग्निः। यद्गमंन्वत्या वर्तयात्। रुद्रायं प्शूनिपं दध्यात्। अपशुर्यजंमानः स्यात्। यद्पांऽन्वतिषिश्चेत्। अनाद्यमग्नेरापंः। अनाद्यमांभ्यामिपं दध्यात्। गार्हंपत्याद्भस्मादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इतिं वैष्णव्यर्चाऽऽहंवनीयांद्ध्वश्सयन्नद्रवेत्। यज्ञो वे विष्णुंः। यज्ञेनैव यज्ञश् सन्तंनोति। भस्मंना पदमिपं वपति शान्त्यां॥१६॥

वै देव्यदिंतिर्मुञ्चति सुजति करोति करोत्याभ्यामपिं दथ्यात् पश्चं च॥————[३]

नि वा पुतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्नोचंति। दुर्भेण हिरंण्यं प्रबद्धं पुरस्तांद्धरेत्। अथाग्निम्। अथाग्निहोत्रम्। यद्धिरंण्यं पुरस्ताद्धरंति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवेनं पश्यन्नुद्धंरति। यद्ग्निं पूर्व्क् हरत्यथांग्निहोत्रम्॥१७॥

भागधेयेंनैवैनं प्रणंयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धेरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरति। अग्निहोत्रम्प्याद्यातमितोरासीत। ब्रतमेव हृतमन् प्रियते। अन्तं वा एष आत्मनो गच्छति। यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभि

#### निम्रोचंति॥१८॥

पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। वरुणो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्रोचंति। वारुणं चरुं निर्वपेत्। तेनैव यज्ञं निष्क्रीणीते। नि वा एतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। नि गार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेति। चतुर्गृहीतमाज्यं पुरस्तौद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथाँग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताद्धरंति। एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यदाज्यम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। यद्ग्निं पूर्वे १ हर्त्यथाँग्निहोत्रम्। भागधेयेनैवैनं प्रणयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः॥२०॥

सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा एतस्मैं व्युच्छन्ती व्युंच्छिति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्यंदेतिं। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देविभिरिन्वितम्। देवेभ्यो मधुंमत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यिङ्कषद्याज्येन जुहुयात्। प्रतीचीमेवास्मै विवासयित। अग्निहोत्रमुंप्साद्यातिमितोरासीत। व्रतमेव हतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छिति॥२१॥

यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्युंदेतिं। पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। मित्रो वा पुतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्युंदेतिं। मैत्रं चुरुं निर्वपत्। तेनैव युज्ञं निष्क्रीणीते। यस्याऽऽहवनीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्य उद्वायेत्॥२२॥

यदांहवनीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यद्वै यज्ञस्यं वास्त्व्यं क्रियतें। तदनुं रुद्रोऽवंचरति। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्त्व्यंमग्निमुपांसीत। रुद्रोंऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यं मन्थेत्॥२३॥

इतः प्रथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योनेरिधं जातवेदाः। स गांयित्रिया त्रिष्टुभा जगंत्या। देवेभ्यों ह्व्यं वंहतु प्रजानित्रिति। छन्दोंभिरेवैन्ड् स्वाद्योनेः प्रजंनयित। गार्हंपत्यं मन्थित। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदनुं पृशवोऽपं क्रामन्ति। इषे रुय्यै रंमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। पृशवो वै र्यिः। पृश्नेवास्में रमयति। सार्स्वतौ त्वोथ्सौ सिमंन्धातामित्यांह। ऋख्सामे वै सारस्वतावुथ्सौं। ऋख्सामाभ्यांमेवेन् र सिमंन्धे। सुम्राडंसि विराडसीत्यांह। रथन्त्रं वै सुम्राट। बृहद्विराट्॥२५॥

ताभ्यांमेवेन् समिंन्धे। वज्रो वै चुक्रम्। वज्रो वा एतस्यं यज्ञं विच्छिनत्ति। यस्यानों वा रथों वाऽन्त्रराऽग्री यातिं। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यदंग्रे पूर्वं प्रभृंतं प्दश् हि तें। सूर्यंस्य र्श्मीनन्वांतृतानं। तत्रं रियष्टामनु सं भंरैतम्। सं नंः सृज सुमृत्या वाजंवत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणैवास्यं युज्ञेनं युज्ञमनु सन्तेनोति। त्वमंग्ने सप्रथां असीत्यांह। अग्निः सर्वा देवतांः। देवतांभिरेव युज्ञश्यस्तेनोति। अग्नयं पिथृकृतं पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वेपेत्। अग्निमेव पिथृकृत् स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स एवैनं युज्ञियं पन्थामिपं नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वृही ह्येष समृद्धे॥२७॥

हर्त्यथाँग्निहोत्रं निम्नोचंति हरेद्देवतां गच्छत्युद्वायेँन्मन्थेद्रमस्व बृहद्विराडिति नवं च (नि वै पूर्वं त्रीणिं निम्नोचंति दर्भेण् यद्धिरंण्यमग्निहोत्रं पुनुर्वरुणो वारुणं नि वा एतस्याभ्यंदेतिं चतुर्गृहीतमाज्यं यदाज्यं पराँच्युषाः पुनर्मित्रो मैत्रं यस्यांऽऽहव्नीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्यो यद्वै मंन्थेदुद्धरेत्॥)॥———[४]

यस्यं प्रातः सवने सोमोंऽति्रिच्यंते। माध्यंं दिन् सवंनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौधंयति मुरुता्मिति धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सुन्ध्यधीतम्। सुन्धीव खलु वा एतत्। यथ्सवंनस्याति्रिच्यंते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। सुन्धेः शान्त्यै। गायुत्र सामं भवति पश्चद्शः स्तोमंः। तेनै्व प्रांतः सवनान्नयंन्ति॥२८॥

मुरुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव माध्यं दिनाथ्सवंनान्नयंन्ति।

होतुंश्चम्समनूत्रंयन्ते। होताऽनुं शश्सित। मध्यत एव यज्ञश् समादंधाति। यस्य माध्यं दिने सर्वने सोमोंऽतिरिच्यंते। आदित्यं तृतीयसवनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौरिवीतश् सामं भवति। अतिरिक्तं वै गौरिवीतम्। अतिरिक्तं यथ्सवंनस्यातिरिच्यंते॥२९॥

अतिरिक्तस्य शान्त्यैं। बण्महा असि सूर्येति कुर्वन्ति। यस्यैवाऽऽदित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्यंते। तेनैवेनं कामेन समर्धयन्ति। गौरिवीत साम भवति। तेनैव मार्ध्यं दिनाथ्सवनान्नयंन्ति। सप्तद्शः स्तोमंः। तेनैव तृंतीयसवनान्नयंन्ति। होतुंश्चमसमनून्नयन्ते। होताऽनुं शश्सित॥३०॥

मध्यत एव यज्ञ समादंधाति। यस्यं तृतीयसव्ने सोमोऽतिरिच्यंत। उक्थ्यं कुर्वीत। यस्योक्थ्यंऽतिरिच्यंत। अतिरात्रं कुर्वीत। यस्यांतिरात्रंऽतिरिच्यंत। तत्त्वे दुष्प्रज्ञानम्। यजमानं वा एतत्प्शवं आसाह्यंयन्ति। बृहथ्सामं भवति। बृहद्वा इमाँ ह्योकान्दांधार। बार्ह्ताः पृशवंः। बृह्तैवास्मं पृश्न्दांधार। शिपिविष्टवंतीषु कुर्वन्ति। शिपिविष्टो वे देवानां पृष्टम्। पृष्ट्येवन् समर्धयन्ति। होतुंश्चम्समनून्नंयन्ते। होताऽनुंश स्सति। मध्यत एव यज्ञ समादंधाति॥३१॥

यन्ति सर्वनस्यातिरिच्यंते शश्सित दाधाराष्टौ चं॥————[५]

एकैंको वै जनतांयामिन्द्रं। एकं वा एताविन्द्रंम्भि

सश्सुंनुतः। यौ द्वौ सर्स्सुनुतः। प्रजापंतिर्वा एष वितायते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावाणो दन्ताः। अन्यत्रं वा एते सर्स्सुन्वतोर्निर्वप्सति। पूर्वेणोप्सृत्यां देवता इत्यांहुः। पूर्वोप्सृतस्य वै श्रेयांन्भवति। एतिंवन्त्याज्यांनि भवन्त्यभिजित्यै॥३२॥

म्रुत्वंतीः प्रतिपदंः। म्रुतो वै देवानामपंराजितमायतंनम्। देवानांमेवापंराजित आयतंने यतते। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। इयं वाव रंथन्तरम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवेनम्नतरंति। वाचश्च मनसश्च। प्राणाचापानाचं। दिवश्चं पृथिव्याश्चं॥३३॥

सर्वस्माद्वित्ताद्वेद्यात्। अभिवर्तो ब्रह्मसामं भेवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिवृत्त्यै। अभिजिद्भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। विश्वजिद्भंवति। विश्वंस्य जित्यै। यस्य भूयार्स्सो यज्ञकृतव इत्याहुः। स देवतां वृङ्कः इति। यद्यंग्निष्टोमः सोमः परस्ताथ्स्यात्॥३४॥

उक्थ्यं कुर्वीत। यद्युक्थंः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञकृतुभिरेवास्यं देवतां वृङ्के। यो वै छन्दोभिरभिभवंति। स सर्स्सुन्वतोर्भिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दार्स्सि वै संवेश उपवेशः। छन्दोभिरेवास्य छन्दार्स्स्यभिभवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्युः॥३५॥

इष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽर्षुः क्षीयते। प्राणांपानौ मृत्योर्मा

पात्मित्यांह। प्राणापानयोरेव श्रंयते। प्राणापानौ मा मां हासिष्टमित्यांह। नैनं पुराऽऽयंषः प्राणापानौ जंहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषांं दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयुः। कूरकृतांमिवेषां लोकः स्यात्। आहेर दहेतिं ब्रूयात्॥३६॥

तं देक्षिणतो वेद्यै निधायं। सूर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वै सर्पतो राज्ञीं। अस्या एवेनं परिंददित। व्यृंद्धं तदित्यांहुः। यथ्स्तुतमनंनुशस्तमितिं। होतां प्रथमः प्रांचीनावीती मार्जालीयं परींयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सूर्पराज्ञीनां कीर्तयेत्। उभयोर्वेनं लोकयोः परिंददित॥३७॥

अथों धुवन्त्येवैनम्ं। अथो न्येवास्में हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अग्र आयूर्षेष पवस् इति प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्त्रसांमेषा्र सोमः स्यात्। आयुरेवाऽऽत्मन्दंधते। अथों पाप्मानंमेव विजहंतो यन्ति॥३८॥

अभिजित्यै पृथिव्याश्च स्यादंध्वर्युर्बूयाङ्कोकयोः परिंददति कुर्वीर्ङ्क्षीणिं च॥———[ $oldsymbol{\xi}$ ]

असुर्यं वा एतस्माद्वर्णं कृत्वा। पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। यस्य यूपों विरोहंति। त्वाष्ट्रं बंहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य एव रूपाणामीशें। सौंऽस्मिन्पुशून् वीर्यं यच्छति। नास्मांत्पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानांमुग्निरुद्वायंति॥३९॥

यदांहवनीयं उद्घायंत्। यत्तं मन्थंत्। विच्छिंन्द्यात्। भातृंव्यमस्मै जनयेत्। यदांहवनीयं उद्घायंत्। आग्नींद्रादुद्धं-रेत्। यदाग्नींद्ध उद्घायंत्। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घायंत्। अतं एव पुनंर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निर्लयते। यत्र खलु वै निर्लीनमुत्तमं पश्यंन्ति। तदेनिमच्छन्ति। यस्माद्दारों रुद्वायेंत्। तस्यारणीं कुर्यात्। कुमुकमिपं कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तृनूः। यत्क्रुं मुकः। प्रिययैवैनं तृनुवा समर्धयति। गार्हं पत्यं मन्थति॥४१॥

गार्हंपत्यो वा अग्नेर्योतिः। स्वादेवैनं योनैर्जनयति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। यस्य सोमं उपदस्यैत्। सुवर्ण् हिरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजी्षेंऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयाद्न्यत्। सोमंमेवाभिषुणोतिं। सोमं जुहोति। सोमंस्य वा अभिष्यमाणस्य प्रिया तनूरुदंक्रामत्॥४२॥

तथ्सुवर्ण् हरंण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण् हरंण्यं कुर्वन्ति। प्रिययैवैनं तनुवा समंध्यन्ति। यस्याक्रीत् सोमंमपहरंयुः। क्रीणीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यस्यं क्रीतमंपहरंयुः। आदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुंणुयात्। गायत्री यः

सोमुमाह्ररत्। तस्य योऽ५शुः पुराऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्रमंहन्। तस्यं वृत्कः परां-ऽपतत्। तानिं फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो वै फाल्गुनानिं। पृशवः सोमो राजां। यदांदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुणोतिं। सोममेव राजांनम्भिषुंणोति। शृतेनं प्रातः सवने श्रींणीयात्। द्र्या मध्यं दिने॥४४॥

नीतिमिश्रेणं तृतीयसवने। अग्निष्टोमः सोमंः स्याद्रथन्तर-सामा। य प्वर्त्विजां वृताः स्यः। त एनं याजयेयः। एकां गां दक्षिणां दद्यात्तेभ्यं प्व। पुनः सोमं क्रीणीयात्। यज्ञेनैव तद्यज्ञमिंच्छति। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। सर्वाभयो वा पुष देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठभ्यं आत्मानमागुरते। यः स्त्रायांगुरते। पृतावान्खलु व पुरुषः। यावदस्य वित्तम्। सर्ववदसेनं यजेत। सर्वपृष्ठोऽस्य सोमः स्यात्। सर्वाभ्य पुव देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठभ्यं आत्मानं निष्क्रीणीते॥४५॥

उद्वार्यति मन्थेन्मन्थत्यक्रामत्प्राऽपंतन्मुध्यन्दिन आगुरते पश्चं च॥————[७]

पर्वमानः सुवर्जनंः। प्वित्रेण विचंर्षणिः। यः पोता स पुनातु मा। पुनन्तुं मा देवजनाः। पुनन्तु मनेवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयवंः। जातंवेदः प्वित्रंवत्। प्वित्रंण पुनाहि मा। शुक्रेणं देव दीद्यंत्। अग्ने कत्वा कतूर् रनुं॥४६॥

यत्तं पुवित्रंमुर्चिषि। अग्ने वितंतमन्त्रा। ब्रह्म तेनं पुनीमहे।

उभाभ्यां देव सवितः। प्वित्रंण स्वेनं च। इदं ब्रह्मं पुनीमहे। वैश्वदेवी पुनती देव्यागात्। यस्ये बह्वीस्तनुवो वीतपृष्ठाः। तया मदन्तः सधमाद्येषु। वयः स्याम पत्रयो रयीणाम्॥४७॥

वैश्वान्तरो रिष्मिर्मिमा पुनातु। वार्तः प्राणेनेषिरो मंयोभूः। द्यावापृथिवी पर्यसा पर्योभिः। ऋतावंरी यज्ञियं मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवित्स्तृभिः। वर्षिष्ठैर्देव मन्मंभिः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपो दिव्यं कशः। तेनं दिव्येन् ब्रह्मणा॥४८॥

ड्दं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येतिं। ऋषिंभिः सम्भृत्रं रसम्। सर्वृदं स पूतमंश्ञाति। स्वृद्तिं मांतरिश्वंना। पावमानीर्यो अध्येतिं। ऋषिंभिः सम्भृत्रं रसम्। तस्मै सर्रस्वती दुहे। क्षीर स्पर्पिर्मधूंदकम्। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः॥४९॥

सुद्धा हि पर्यस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः। ब्राह्मणेष्वमृत १ हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथीं अमुम्। कामान्थ्समध्यन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृताः। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः। सुद्धा हि घृतश्चर्तः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृत रे हितम्। येनं देवाः प्वित्रेण। आत्मानं पुनते सदा। तेनं सहस्रंधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं प्वित्रम्। श्रतोद्यांम र हिर्ण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदो व्यम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमंः स्वस्त्या वर्रुणः समीच्यां। यमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥

अर्नु रयीणां ब्रह्मणा स्वस्त्ययंनीः सुदुघा हि घृंतृश्चुत् ऋषिभिः सम्भृंतो रसंः पुनातु त्रीणि

च॥\_\_\_\_\_[∠

प्रजा वै स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अर्जुह्नतीः। देवा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमं- जुहवुः। तेनाधंमास ऊर्जुमवांरुन्थत। तस्मांदर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्जुमवांरुन्थत। तस्मांन्मासि पितृभ्यः क्रियते। मनुष्यां अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५२॥

तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं द्वयीमूर्ज्मवांरुन्थत। तस्माद्विरह्नां मनुष्येंभ्य उपहियते। प्रातश्चं सायं चं। प्रश्वोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्त-मंजुहवुः। तेनं त्र्यीमूर्ज्मवारुन्थत। तस्मात्रिरह्नंः पृशवः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुरा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५३॥

तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं संवथ्सर ऊर्ज्मवांरुन्धत। ते देवा अमन्यन्त। अमी वा इदमंभूवन्। यद्वयः स्म इतिं। त एतानिं चातुर्मास्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरेवेषां तामूर्जमवृञ्जत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥५४॥

यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यत्पितृभ्यः क्रोतिं। यामेव पितर् ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यदांवस्थेऽन्न् हरंन्ति। यामेव मंनुष्यां ऊर्जमवारुन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यद्दिष्टां यद्दिष्टां यद्दिष्टां यद्दिष्टां प्रदिष्टां तान्तेनावं रुन्थे। यद्दिष्टांणां ददांति॥५५॥

यामेव पृशव ऊर्जम्वारुंन्यत। तान्तेनावं रुन्थे। यचांतुर्मास्यैर्यजंते। यामेवासंरा ऊर्जम्वारुंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृंव्यो भवति। विराजो वा एषा विक्रांन्तिः। यचांतुर्मास्यानि। वैश्वदेवेनास्मिं होके प्रत्यंतिष्ठत्। वृरुण्प्रघासेर्न्तिरक्षे। साक्रमेथेर्मुष्मिं होके। एष ह त्वावेतथ्सर्वं भवति। य एवं विद्वाङ्श्चांतुर्मास्यैर्यजंते॥५६॥ मनुष्यां अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णः स्वधामसंरा अपश्यश्चमसं घृतस्यं पूर्णः स्वधामसंरा ददांत्यितष्ठच्वारि च॥———[९]

अग्निर्वाव संवथ्सरः। आदित्यः पंरिवथ्सरः। चन्द्रमां इदावथ्सरः। वायुरंनुवथ्सरः। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। अग्निमेव तथ्संवथ्सरमाप्नोति। तस्माद्वश्वदेवेन् यजंमानः। संवथ्सरीणाई स्वस्तिमाशास्त् इत्याशांसीत। यद्वरुण-प्रघासैर्यजंते। आदित्यमेव तत्परिवथ्सरमाप्नोति॥५७॥

तस्मौद्वरुणप्रघासैर्यजमानः। परिवथ्सरीणाई स्वस्तिमा-

शांस्त इत्याशांसीत। यथ्सांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तिदंदावथ्सरमांप्रोति। तस्मांथ्साकमेधेर्यजंमानः। इदा-वथ्सरीणाः स्वस्तिमाशांस्त इत्याशांसीत। यत्पंतृयज्ञेन यजंते। देवानेव तद्न्ववंस्यति। अथवा अस्य वायुश्चांनु-वथ्सरश्चाप्रीतावुच्छिंष्येते। यच्छुंनासीरीयेंण यजंते॥५८॥

वायुमेव तदंनुवथ्मरमाँप्रोति। तस्माँच्छुनासीरीयेण् यजमानः। अनुवथ्मरीणाई स्वस्तिमाशाँस्त इत्याशांसीत। संवथ्मरं वा एष ईंफ्सतीत्यांहः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इति। एष ह त्वै संवथ्मरमाँप्रोति। य एवं विद्वाइश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। विश्वे देवाः समयजन्त। तैंऽग्निमेवायंजन्त। त एतं लोकमंजयन्॥५९॥

यस्मिन्नग्निः। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायुंज्यमुपैति। यदा वैश्वदेवेन् यजंते। अर्थ संवथ्मरस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संवथ्मरस्यं गृहपंतिमाप्नोतिं। अर्थ सहस्रयाजिनमाप्नोति। यदा संहस्रयाजिनमाप्नोतिं॥६०॥

अर्थ गृहमेधिनंमाप्नोति। यदा गृंहमेधिनंमाप्नोति। अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवंति। अथ् गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्राँ। एतद्वा एतेषांमव्मम्। अतोतो वा उत्तंराणि श्रेया १सि भवन्ति। यद्विश्वं देवाः स्मयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्यं वैश्वदेवत्वम्॥६१॥ अथांऽऽदित्यो वर्रण्य राजानं वरुणप्रघासरेयजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्नादित्यः। यद्वेरुणप्रघासैर्यजते। एतमेव लोकं जयति। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सायुज्यमुपैति। यदांदित्यो वर्रण्य राजानं वरुणप्रघासे-रयंजत। तद्वेरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथ् सोमो राजा छन्दारेस साकमेधेरयजत॥६२॥

स एतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। यथ्मांकमेधेर्यजंते। एतमेव लोकं जंयित। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। चन्द्रमंस एव सायुंज्यमुपैति। सोमो वै चन्द्रमाः। एष हु त्वै साक्षाथ्योमं भक्षयित। य एवं विद्वान्थ्यांकमेधेर्यजंते। यथ्योमंश्च राजा छन्दाईसि च समैधंन्त॥६३॥

तथ्सांकमेधाना स्याकमेधत्वम्। अथर्तवंः पितरंः प्रजापंतिं पितरं पितृयज्ञेनांयजन्त। त पृतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतवंः। यत्पितृयज्ञेन यजते। पृतमेव लोकं जयित। यस्मिन्नृतवंः। ऋतूनामेव सायंज्यमुपैति। यद्दतवंः पितरंः प्रजापंतिं पितरं पितृयज्ञेनायंजन्त। तत्पितृयज्ञस्यं पितृयज्ञत्वम्॥६४॥

अथौषंधय इमं देवं त्र्यंम्बकैरयजन्त प्रथेमहीतिं। ततो वै ता अप्रथन्त। य एवं विद्वा इस्त्र्यंम्बकैर्यजंते। प्रथंते प्रजयां पृशुभिः। अथं वायुः पंरमेष्ठिन ई शुनासीरीयेणायजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुंनासीरीयेण यजेते। एतमेव लोकं जेयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

वायोरेव सायंज्यमुपैति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र चांतुर्मास्ययाजी मींयता (३) न प्रमींयता (३) इतिं। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदिं वसन्तां प्रमीयंते। वसन्तो भंवति। यदिं ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदिं वर्षासुं वर्षाः। यदिं श्रिदें श्रत्। यदि हेमंन् हेमन्तः। ऋतुर्भूत्वा संवथ्सरमप्येति। संवथ्सरः प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥६६॥

परिवृथ्सरमाँप्रोति शुनासीरीर्येण यजंतेऽजयन्थ्सहस्रयाजिनंमाप्रोतिं वैश्वदेवृत्वः सांकमेधेरंयजत स्मैधंन्त पितृयज्ञ्तत्वं जंयति यस्मिन्वायुरहेंमुन्तस्रीणिं च॥————[१०]

उभये युवः सुराम्मुदंस्थान्नि वै यस्यं प्रातः सव्न एकैकोऽसुर्यं पर्वमानः प्रजा वै स्त्रमांसतान्निर्वाव संवथ्सरो दर्श॥१०॥

उभये वा उदंस्थाथ्सर्वाभिर्मध्यतोऽत्र वाव ब्रांह्मणेष्वर्थं गृहमेधिन् षट्थंष्टिः॥६६॥ उभये वा वैषः॥

# हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

अग्नेः कृत्तिकाः। शुक्रं प्रस्ताञ्च्योतिर्वस्तांत्। प्रजापंते रोहिणी। आपः प्रस्तादोषंधयोऽवस्तांत्। सोमंस्येन्वका विततानि। प्रस्ताद्वयंन्तोऽवस्तांत्। रुद्रस्यं बाहू। मृग्यवंः प्रस्तांद्विक्षारोऽवस्तांत्। अदित्ये पुनर्वसू। वातः परस्तांदाईमवस्तांत्॥१॥

बृह्स्पतें स्तिष्यः। जुह्वेतः पुरस्ताद्यजंमाना अवस्तौत्। सूर्पाणांमाश्रेषाः। अभ्यागच्छंन्तः पुरस्तांदभ्यानृत्यंन्तो-ऽवस्तौत्। पितृणां मुघाः। रुदन्तः पुरस्तांदपश्रू १शोऽवस्तौत्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया पुरस्तांदषभोऽवस्तौत्। भगस्योत्तरे। वहुतवंः पुरस्ताद्वहंमाना अवस्तौत्॥२॥

देवस्यं सिवतुर्हस्तंः। प्रस्ताः प्रस्तांध्यनिर्वस्तांत्। इन्द्रस्य चित्रा। ऋतं प्रस्तांध्यत्यम्वस्तांत्। वायोर्निष्ठां व्रतिः। प्रस्तादिसिद्धिर्वस्तांत्। इन्द्राग्नियोर्विशांखे। युगानिं प्रस्तांत्कृषमांणा अवस्तांत्। मित्रस्यांनूराधाः। अभ्यारोहंत्प्रस्तांद्भ्यारूढम्वस्तांत्॥३॥

इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्प्रस्तांत्प्रतिशृणद्वस्तांत्। निर्ऋत्ये मूलवर्हणी। प्रतिभुञ्जन्तः प्रस्तांत्प्रतिशृणन्तो-ऽवस्तांत्। अपां पूर्वा अषाढाः। वर्चः प्रस्ताथ्समितिर्वस्तांत्। विश्वेषां देवानामुत्तंराः। अभिजयंत्प्रस्तांद्भिजितम्वस्तांत्। विष्णोः श्रोणा पृच्छमानाः। पुरस्तात्पन्थां अवस्तात्॥४॥

वसूनाङ् श्रविष्ठाः। भूतं प्रस्ताद्भृतिर्वस्तात्। इन्द्रंस्य श्तिभिषक्। विश्वव्यंचाः प्रस्ताद्धिश्वक्षितिर्वस्तात्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वैश्वान् रं प्रस्ताद्धिश्वावस्वम्-वस्तात्। अहें ब्रियस्योत्तरे। अभिष्ठिश्चन्तंः प्रस्तादिभि-षुण्वन्तोऽवस्तात्। पूष्णो रेवतीं। गावंः प्रस्ताद्धश्मा अवस्तात्। अश्विनोरश्वयुजौं। ग्रामंः प्रस्ताध्सेनाऽवस्तात्। यमस्योपभर्गणोः। अपकर्षन्तः प्रस्तादप्वहन्तोऽवस्तात्। पूर्णा पृश्वाद्यत्ते देवा अदेधुः॥५॥

आर्द्रम्वस्ताद्वहंमाना अवस्तांदुभ्यारूंढम्वस्तात्पन्थां अवस्तांद्वथ्सा अवस्तात्पश्चं च॥———[१]

यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्वंवीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदेति। अथ नक्षंत्रं नैति। यावंति तत्र सूर्यो गच्छैत्। यत्रं जघन्यं पश्यैत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते। एव॰ ह वै यज्ञेषुं च श्तद्यंम्नं च माथ्स्यो निरवसाय्यां चंकार॥६॥

यो वै नेक्ष्रत्रियं प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः। हस्तं एवास्य हस्तंः। चित्रा शिरंः। निष्ठ्या हृदंयम्। ऊरू विशाखे। प्रतिष्ठाऽनूराधाः। एष वै नेक्ष्रत्रियः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः॥७॥

अस्मि श्रामुष्मि ईश्व। यां कामर्येत दुहितरं प्रिया

स्यादितिं। तां निष्टांयां दद्यात्। प्रियेव भंवति। नेव तु पुनरागंच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपरिष्टादषाढानांम्। अवस्तांच्छ्रोणायें। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥

यद्भ्यजंयन्। तदंभिजितों ऽभिजित्त्वम्। यं कामयेतानप-ज्ययं जंयेदितिं। तमेतस्मिन्नक्षंत्रे यातयेत्। अनुपज्ययमेव जयित। पापपंराजितिमव् तु। प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। ते नक्षंत्रं नक्षत्रमुपांतिष्ठन्त। ते समावन्त पृवाभवन्। ते रेवतीमुपांतिष्ठन्त॥९॥

ते रेवत्यां प्राभवन्। तस्माँद्रेवत्यां पशूनां कुंवीत। यत्किं चाँर्वाचीन् सोमाँत्। प्रैव भवन्ति। स्िललं वा इदमन्त्रासीँत्। यदत्रंरन्। तत्तारंकाणां तारकृत्वम्। यो वा इह यजेते। अमु स लोकं नक्षते। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षंत्राणि। य एवं वेदं। गृह्यंव भंवति। यानि वा इमानि पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षंत्राणि। तस्मादश्चीलनाम इश्चित्रे। नावंस्येन्न यंजेत। यथां पापाहे कुरुते। तादगेव तत्। देवनुक्षत्राणि वा अन्यानि॥११॥

युम्नुक्षुत्राण्युन्यानि। कृत्तिंकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानि देवनक्षुत्राणि। अनूराधाः प्रथमम्। अपुभरंणीरुत्तमम्। तानि यमनक्षुत्राणि। यानि देवनक्षुत्राणि। तानि दक्षिणेन

### परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि॥१२॥

तान्युत्तंरेण। अन्वेषामराथ्स्मेतिं। तदंनूराधाः। ज्येष्ठमेषामवधिष्मेतिं। तज्ञ्येष्ठघ्नी। मूलंमेषामवृक्षामेतिं। तन्मूलवर्हंणी। यन्नासंहन्त। तदंषाढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

तच्छ्रोणा। यदर्श्वणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्तमभिषज्यन्। तच्छ्रतभिषक्। प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजोरयुञ्जत। अपभरणीष्वपांवहन्। तानि वा एतानि यमनक्ष्त्राणि। यान्येव देवनक्षत्राणि। तेषुं कुर्वीत यत्का्री स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥

चका्रैवं वेदोभयोरेनं लोकयोविंदुरजयत्रेवतीमुपातिष्ठन्त नक्षत्रत्वम्न्यानि यानिं यमनक्षत्राण्यश्लोणद्यम-

नक्षुत्राणि त्रीणि च॥

**-[**२]

देवस्यं सिवतुः प्रातः प्रंस्वः प्राणः। वरुणस्य सायमांस्वो-ऽपानः। यत्प्रंतीचीनं प्रातस्तनात्। प्राचीनर् सङ्गवात्। ततो देवा अग्निष्टोमं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेज्ञस्व्यहंः। तस्मात्तर्हिं पृशवंः सुमायंन्ति। यत्प्रंतीचीनर् सङ्गवात्॥१५॥

प्राचीनं मध्यं दिनात्। ततो देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। बृह्स्पतेंर्मध्यं दिनः। तत्पुण्यं तेज्स्व्यहंः। तस्मात्तर्ह् तेक्ष्णिष्ठं तपित। यत्प्रंतीचीनं मध्यं दिनात्। प्राचीनंमपराह्णात्। ततो देवाः षोडशिनं निरंमिमत।

### तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गः॥१६॥

भगंस्यापराह्नः। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मांदपराह्ने कुंमार्यो भगंमिच्छमांनाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्नात्। प्राचीन सायात्। ततो देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। वरुणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि नानृतं वदेत्॥१७॥

ब्राह्मणो वा अष्टाविश्यो नक्षेत्राणाम्। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवि। यच प्रस्तान्नक्षेत्राणां यचावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांदशः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरित। संवथ्यरेणेवास्यं व्रतं गुप्तं भविति। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवं। आग्नेयी रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांदशः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरित। संवथ्यरेणेवास्यं व्रतं गुप्तं भविति॥१८॥

सङ्गुवाथ्योंडुशिनं निरंमिमत् तत्तदात्तंवीर्यं निर्मागीं वंदेद्भवति समानस्याहुः पञ्च पुण्यांनि नक्षंत्राण्यष्टौ चं॥——————[3]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कित पात्राणि यज्ञं वंहुन्तीतिं। त्रयोदशेतिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कुत्स्तानि निरंमिमीतेतिं। आत्मन इतिं। प्राणापानाभ्यांमेवोपाई-

## श्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥

व्यानादुंपा श्रासवंनम्। वाच ऐन्द्रवायवम्। दक्षकृतुभ्यां मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्विनम्। चक्षुंषः शुक्रामृन्थिनौ। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गैभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। यज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो नाद्धियत् समंब्लीयत। स पृतान्प्रजापंतिरिपवापानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स यज्ञमप्यंवपत्। यदंपिवापा भवंन्ति। यज्ञस्य धृत्या असंब्लयाय॥२०॥

उपार्श्वन्तर्यामौ निरंमिमीतामिमीत षद्वं॥——

**-**[8]

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किश्चन। ऋते संमुद्र आहितः। ऋते भूमिरियङ्श्रिता। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥

यद्घर्मः पूर्यवंर्तयत्। अन्तांन्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वरुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सखिंभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आऋांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंर्तये। सत्येन् परिं वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये।

शिवनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्दतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥

यो अस्याः पृंथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वर्रुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रांन्तमुष्णिहां। शिरुस्तपस्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२३॥

एकं मास्मुदंसृजत्। प्रमेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनाभ्यो मह् आवंहत्। अमृतं मर्त्याभ्यः। प्रजामनु प्र जांयसे। तदं ते मर्त्यामृतम्। येन मासां अर्धमासाः। ऋतवः परिवथ्सराः। येन ते ते प्रजापते। ईजानस्य न्यवंतियन्। तेनाहमस्य ब्रह्मणा। निवंतियामि जीवसे अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्तं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥

देवा वै यद्यज्ञेऽकुंर्वत। तदसुंरा अकुर्वत। तेऽसुंरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रूणि। अथोपपृक्षौ। तत्स्तेऽवांश्च आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भंवति। अथं देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योऽपश्यन्। त उपपृक्षावग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रृंणि। अथ् केशान्। तत्स्ते-ऽभवन्। सुवर्गं लोकमायन्। यस्यैवं वपन्ति। भवंत्यात्मना। अथो सुवर्गं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंर्वित्रे मिथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेऽवपतः। अथोपपक्षौः। अथ् केशान्। ततो वै स प्राजायत प्रजयां प्शुभिः। यस्यैवं वपंन्ति। प्र प्रजयां प्शुभिर्मिथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवथ्सरे व्यायंच्छन्तः। तान्देवाश्चांतुर्मा्स्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवनं चतुरों मासोऽवृञ्जतेन्द्रंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावर्तयन्त परि च। वरुणप्रघासेश्चतुरों मासोऽवृञ्जत् वरुणराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावर्तयन्त परि च। साक्रमेधेश्चतुरों मासोऽवृञ्जत् सोमंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावर्तयन्त परि च। या संवथ्सर उंपजीवाऽऽसीत्। तामेषामवृञ्जत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥२८॥

य एवं विद्वा ५ श्वांतुर्मा स्यैर्य जंते। भ्रातृं व्यस्यैव मासो वृक्ता।

शीर्षं नि चं वर्तयंते परिं च। यैषा संवथ्सर उंपजीवा। वृङ्के तां भ्रातृंव्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृंव्यः परां भवति। लोहितायसेन नि वर्तयते। यद्वा इमामग्निर्ऋतावागंते निवर्तयति। एतदेवैना रूपं कृत्वा निवर्तयति। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवंन्त्येति॥२९॥

प्र जांयते। य एवं विद्वाँ ह्लोहितायसेनं निवर्तयंते। एतदेव रूपं कृत्वा नि वर्तयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवंत्रेति। प्रैव जांयते। त्रेण्या शंलुल्या नि वर्तयेत। त्रीणि त्रीणि वै देवानांमृद्धानि। त्रीणि छन्दा रेसि। त्रीणि सर्वनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥

ऋध्यामेव तद्वीर्यं पृषु लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। यचांतुर्मास्य-याज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्च्येत। चृतृषु चंतृषु मासेषु नि वर्तयेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्यं आत्मनोऽवंद्यत्यनांत्रस्काय। देवानां वा एष आनीतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च। देवतां एवाप्येति। नास्यं रुद्रः प्रजां पृशून्भि मन्यते॥३१॥

पृत्येत्ययुञ्जतासुंरा एति लोका मन्यते॥\_\_\_\_\_[६]

आयुंषः प्राणः सन्तंनु। प्राणादंपानः सन्तंनु। अपानाद्यानः सन्तंनु। व्यानाचक्षुः सन्तंनु। चक्षुंषः श्रोत्रः सन्तंनु। श्रोत्रान्मनः सन्तंनु। मर्नसो वाच् सन्तंनु। वाच आत्मान् सन्तंनु। आत्मनंः पृथिवीः सन्तंनु। पृथिव्या अन्तरिक्षर् सन्तंन्। अन्तरिक्षाद्दिवर् सन्तंन्। दिवः सुवः सन्तंनु॥३२॥

अन्तरिक्ष्यः सन्तंनु द्वे चं॥------[७]

इन्द्रों दधीचो अस्थिनिः। वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। ज्ञ्घानं नवृतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणावंति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टुंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनों बृहत्॥३३॥

इन्द्रंमकेंभिर्किणः। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्रं इद्धर्योः सर्चा। सम्मिश्च आवंचो युजां। इन्द्रों वृज्जी हिर्ण्ययः। इन्द्रों दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्यर्थ रोहयद्वि। वि गोभिरद्रिंमैरयत्। इन्द्रं वाजेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिंक्तिभिः। तिमन्द्रं वाजयामिस। मृहे वृत्राय हन्तेवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। इन्द्रः स दामने कृतः। ओजिंष्टुः स बले हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृतः। सबंलो अनंपच्युतः। वृवृक्षुरुग्रो अस्तृतः॥३५॥

बृहचास्तृंतः॥———[८]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स प्रजापंतिरिन्द्रं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनमसुरा बलीया १ सोऽहन्त्रिति। प्रह्लादों हु वै कायाध्वः। विरोचन् १ स्वं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनं देवा अहनन्निति। ते देवाः प्रजापंतिमुपसमेत्योंचुः। नाराजकंस्य युद्धमंस्ति। इन्द्रमन्विच्छामेति। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छन्॥३६॥

तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दन्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छन्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दन्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तस्मां एतमांग्रावैष्ण्वमेकांदशकपालं दीक्षणीयं निरंवपन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तान्पंत्रीसंयाजान्त उपानयन्॥३७॥

ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंम्भि स्मारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छुय्यंन्त उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यम्भि स्मारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तानिडांन्त उपांनयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। तस्मादेता पृतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

पुव ह देवा अर्कुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चराम। तन्नोऽसुराः पाप्माऽनुविन्दन्ति। उपा श्रूपसदां चराम। तथा नोऽसुराः पाप्मा नानुवेथस्यन्तीति। त उपा श्रूपसदंमतन्वत। तिस्र पुव सांमिधेनीर्नूच्यं॥३९॥

स्रुवेणांघारमाघार्य। तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणोंप्सदं जुह्वां चंक्रः। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी इस्वाहेतिं। अशन्यापिपासे ह वा उग्रं वर्चः। एनश्च वैरहत्यं च त्वेषं वर्चः। एतः ह् वाव तर्चतुर्धाविहितं पाप्मानं देवा अपंजिघ्नरे। तथों एवैतदेवंविद्यजमानः। तिस्र एव सांमिधेनीरनूच्यं। स्रुवेणांघारमाघार्यं॥४०॥

तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणांपुसदं जुहोति। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधीक्ष् स्वाहेतिं। अश्वन्यापिपासे ह वा उग्रं वचः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एतमेव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं यजमानोऽपं हते। तेऽिमनीयैवाहंः पृशुमाऽलंभन्त। अह्रं एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांिभनीयेव रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे॥४१॥

तस्मांदिभिनीयैवाहंः पृशुमा लंभेत। अहं पृव तद्यजंमानो-ऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्रचरेत्। रात्रिया पृव तद्यजंमानोऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। स पृष उपवस्थीयेऽहं द्विदेवृत्यः पृशुरा लंभ्यते। द्वयं वा अस्मिँ श्लोके यर्जमानः। अस्थि च मार्सं चं। अस्थिं चैव तेनं मार्सं च यर्जमानः सङ्स्कुंरुते। ता वा पृताः पश्चं देवताः। अग्नीषोमांवग्निर्मित्रावरुंणौ॥४२॥

पृश्चपृश्ची वै यर्जमानः। त्वङ्गार्सः स्नावाऽस्थिं मृज्ञा। पृतमेव तत्पंश्चधाविहितमात्मानं वरुणपाशान्मुंश्चति। भेषुजतांयै निर्वरुणत्वायं। तर सुप्तभिश्छन्दोंभिः प्रातरंह्वयन्। तस्माँथ्मप्त चंतुरुत्त्राणि छन्दार्श्स प्रातरनुवाकेऽनूँच्यन्ते। तमेतयोपसमेत्योपांसीदन्। उपांस्मै गायता नर् इतिं। तस्मादेतयां बहिष्पवमान उपसद्यः॥४३॥

ऐच्छुत्रन्य्र्स्तिष्ठन्तेऽनूच्यानूच्यं स्रुवेणांघारमाघार्यं रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं
मृत्युमपंजिष्ठरे मित्रावर्रुणौ नवं च (देवा यजंमानो देवा देवा यजंमानो यजंमानः प्राचंर् प्रचंरेदालंभुन्तालंभेत मृत्युमपंजिष्ठरे भ्रातृंच्यान्॥)॥————[९]

स संमुद्र उत्तर्तः प्राज्वेलद्भूम्यन्तेनं। एष वाव स संमुद्रः। यच्चात्वांलः। एष उवेव स भूम्यन्तः। यद्वेद्यन्तः। तदेतित्रिंशलं त्रिंपूरुषम्। तस्मात्तं त्रिंवितस्तं खेनन्ति। स सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिंगृहीत आसीत्। तं यद्स्या अध्यजनंयन्। तस्मादादित्यः॥४४॥

अथ् यथ्मुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत् आसींत्। साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहंरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्रद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्रद्शेनादंदत। तं पंश्रदशेनाहंरन्। यावंती पश्रदशस्य मात्रां॥४५॥

त १ संप्तद्शेनाभि प्रास्तुंवत। त १ संप्तद्शेनादंदत। त १ संप्तद्शेनाहं रन्। यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्शेनं हियमांणस्य तेजो हरों ऽपतत्। तमें कि वि १ शेनाभि प्रास्तुंवत। तमें कि वि १ शेनादंदत। तमें कि वि १ शेनाहं रन्। यावंत्येकि वि १ शस्य मात्रां। ते यित्रवृतां स्तुवतें॥ ४६॥

त्रिवृतेव तद्यजंमान्मादंदते। तं त्रिवृतेव हंरन्ति। यावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावद्वा अग्नेदंहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्नेरेवैनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यत्पंश्रदृशेनं स्तुवतें। पृश्रदृशेनैव तद्यजंमान्मादंदते॥४७॥

तं पंश्चद्रशेनैव हंरन्ति। यावंती पश्चद्रशस्य मात्राँ। चन्द्रमा वै पंश्चद्रशः। एष हि पंश्चद्रयामंपक्षीयतेँ। पृश्चद्रयामांपूर्यतेँ। चन्द्रमंस एवेनं तत्। मात्रा सायंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यथ्संप्तद्रशेनं स्तुवतें। स्प्तद्रशेनैव तद्यजंमान्मादंदते। तर संप्तद्रशेनैव हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतिरेवेनं तत्। मात्राष्ट्र सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यदंकिविष्शेनं स्तुवतें। एकविष्शेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तमेंकिविष्शेनेव हंरन्ति। यावंत्येक-विष्शस्य मात्रां। असो वा आंदित्य एंकिविष्शः। आदित्यस्यैवेनं तत्॥४९॥

मात्रा सार्युज्य सलोकतां गमयन्ति। ते कुश्यौ। व्यंघ्रन्। ते अंहोरात्रे अंभवताम्। अहंरेव सुवर्णां ऽभवत्। रज्ञता रात्रिः। स यदांदित्य उदेतिं। एतामेव तथ्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथु यदंस्तमेतिं। एतामेव तद्रजतां कुशीमनुसंविंशति। प्रह्नादों हु वै कांयाध्वः। विरोचंन् क्ष् स्वं पुत्रमुदौस्यत्। स प्रंदरोऽभवत्। तस्मौत्प्रद्रादुंदकं नाचांमेत्॥५०॥

आदित्यः पंश्चद्शस्य मात्रां स्तुवतं पश्चद्शेनेव तद्यजंमानुमादंदते सप्तद्शेनेव हंरन्त्यादित्यस्यैवेनं तिर्द्वेशित चुत्वारि च॥————[१०]

ये वै चृत्वारः स्तोमाः। कृतं तत्। अथ् ये पश्चं। किलः सः। तस्माचतुंष्टोमः। तचतुंष्टोमस्य चतुष्टोमृत्वम्। तदांहुः। कृतमानि तानि ज्योती रेषि। य एतस्य स्तोमा इतिं। त्रिवृत्पंश्चद्रशः संप्तद्रश एंकवि रुशः॥५१॥

पुतानि वाव तानि ज्योती १षि। य पुतस्य स्तोमाः। सौंऽब्रवीत्। सप्तद्शेनं ह्रियमाणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत मेतिं। तमुश्विनौ धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा कंर्म्भेणं। भारती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयस्यंया। तदांहुः॥५२॥

यदिश्वभ्यां धानाः। पूष्णः केरम्भः। भारेत्ये परिवापः।
मित्रावरुणयोः पयस्याऽथे। कस्मादेतेषा हिवषामिन्द्रमेव
यंजन्तीति। पृता होनं देवता इति ब्रूयात्। पृतैरह्विर्भिरिभषज्य इस्तस्मादिति। तं वसंवोऽष्टाकंपालेन प्रातः सवनेऽभिषज्यन्। रुद्रा एकांदशकपालेन माध्यं दिने सवने। विश्वे
देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥

स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सवने कुर्यात्। एकांदश-

कपालान्माध्यं दिने सर्वने। द्वादंशकपालाङ्स्तृतीयसवने। विलोम् तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः सवने कुंर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सर्वने। एकांदशकपालाङ्स्तृतीयसवने। यज्ञस्यं सलोमृत्वायं। तदांहुः। यद्वसूनां प्रातः सवनम्। रुद्राणां माध्यं दिन्ष् सर्वनम्। विश्वेषां देवानां तृतीयसवनम्। अथ् कस्मादेतेषार्ष ह्विषामिन्द्रमेव यंजन्तीतिं। एता ह्यंनं देवता इतिं ब्रूयात्। एतैरह्विर्भिरभिषज्यङ्स्तस्मादितिं॥५४॥

एकविर्श आंहुस्तृतीयसवने प्रांतः सवनं पश्चं च॥————[११]

तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तमेतेषुं सप्तसु छन्दंः स्वश्रयन्। यदश्रंयन्। तच्छ्रांयन्तीयंस्य श्रायन्तीयृत्वम्। यदवांरयन्। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। तस्यावांच प्वावंपादादंबिभयुः। तस्मां पृतानिं सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दाङ्स्युपांदधुः। तेषामित् त्रीण्यंरिच्यन्त। न त्रीण्युदं-भवन्॥५५॥

स बृंहतीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमक्षरांभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कृतमा सा देवाक्षंरा बृहती। यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठत्। द्वादंश पौर्णमास्यः। द्वादशाष्टंकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षंरा बृहती॥५६॥

यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठदितिं। यानिं च छन्दाईस्यत्यरिच्यन्त। यानिं च नोदभंवन्। तानि निर्वीर्याणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रंबीद्वृह्ती। मामेव भूत्वा। मामुप् सङ्श्रंयतेतिं। चतुर्भिरक्षरैरनुष्टुग्बृंह्तीं नोदंभवत्। चतुर्भिरक्षरैं: पुङ्किर्बृह्ती-मत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानिं चत्वार्यक्षराण्यपच्छिद्यां-दधात्॥५७॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। अष्टाभि-रक्षरैरुष्णिग्बृंह्तीं नोदंभवत्। अष्टाभिरक्षरैष्ग्रिष्टुग्बृंह्तीमत्यं-रिच्यत। तस्यांमेतान्यष्टावृक्षराण्यप्च्छिद्यांदधात्। ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। द्वादशभिर्क्षरैर्गायत्री बृंह्तीं नोदंभवत्। द्वादशभिर्क्षरैर्जगंती बृह्तीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि द्वादंशाक्षराण्यपच्छिद्यांदधात्॥५८॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। छन्दार्शस् रथों मे भवत। युष्माभिर्ह्मेतमध्वांनमनु सश्चर्गणीति। तस्यं गायत्री च जगंती च पृक्षावंभवताम्। उष्णिक्वं त्रिष्टुष्य प्रष्ट्रौं। अनुष्टुष्यं पृङ्किश्च ध्रयौं। बृह्त्येवोद्धिरंभवत्। स एतं छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वांनमनु समंचरत्। एतर ह् वे छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वांनमनु सश्चरित। येनैष एतथ्सश्चरित। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥५९॥

अभव-वाव सा देवाक्षंरा बृह्त्यंदधाद्वादंशाक्षरांण्यपच्छिद्यांदधादास्थाय षद्वं॥———[१२]

अुग्नेः कृत्तिंका यत्पुण्यं देवस्यं सिवृतुर्ब्रह्मवादिनः कत्यृतमेव देवा वा आयुंषः प्राणिमन्द्रों दधीचो देवासुराः स प्रजापितिः स समुद्रो ये वै चृत्वार्स्तस्यावांचो द्वादंश॥१२॥

अग्नेः कृत्तिका देवगृहा ऋतमेवर्ध्यामेव तिस्रः परांचीर्ये वै चत्वारो नवंपश्चाशत्॥५९॥ अग्नेः कृत्तिका य उं चैनमेवं वेदं॥

# हिर्रेः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अनुंमत्यै पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वंपति। ये प्रत्यश्चः शम्यांया अवृशीयंन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुंमितिः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन् पूर्वेण् प्रचंरति। पाप्मानमेव निर्ऋतिं पूर्वां निरवंदयते। एकंकपालो भवति। एक्थेव निर्ऋतिं निरवंदयते। यदहुंत्वा गार्हंपत्य ईयुः॥१॥

रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनूत्थायं। अध्वर्यं च यजंमानं च हन्यात्। वीहि स्वाहाऽऽहुंतिं जुषाण इत्याह। आहुंत्यैवेन रं शमयति। नार्तिमार्च्छंत्यध्वर्युर्न यजंमानः। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध निर्ऋत्यै भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋत्यै दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥

स्वकृत इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वै निर्ऋंत्या आयतंनम्। स्व एवायतंने निर्ऋंतिं निरवंदयते। एष ते निर्ऋते भाग इत्यांह। निर्दिशत्येवैनांम्। भूतें ह्विष्मंत्यसीत्यांह। भूतिंमे्वोपावंतिते। मुश्चेमम॰हंस् इत्यांह। अ॰हंस एवैनंं मुश्चति। अङ्गुष्ठाभ्यां जुहोति॥३॥

अन्तत एव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूंषं दक्षिणा। एतद्वै निर्ऋत्यै रूपम्। रूपेणैव निर्ऋतिं निरवंदयते। अप्रतिक्षमायंन्ति। निर्ऋत्या अन्तर्हित्यै। स्वाह्य नमो य इदं चकारेति पुन्रेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहुंत्यैव नंमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावर्तन्ते। आनुम्तेन प्रचरित। इयं वा अनुमितिः॥४॥

इयमेवास्मै राज्यमन् मन्यते। धेनुर्दक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चुरुं निर्वपति। उभयीष्वेव प्रजास्वभिषिंच्यते। दैवीषु च मानुषीषु च। वरो दक्षिणा। वरो हि राज्यः समृद्धौ। आग्नावैष्णवमेकादशकपालं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुंर्यज्ञः। देवताँश्चेव यज्ञं चार्व रुन्धे। वामनो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँग्नेयः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृद्धे। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। अग्नीषोमाँभ्यां वा इन्द्रों वृत्रमंहन्नितिं। यदंग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति॥६॥

वार्त्रप्रमेव विजित्यै। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धौ। इन्द्रों वृत्र हत्वा। देवतांभिश्चेन्द्रियेणं च व्यार्ध्यत। स एतमैन्द्राग्रमेकांदशकपालमपश्यत्। तिन्नरंवपत्। तेन् वै स देवतांश्चेन्द्रियं चावांरुन्ध। यदैन्द्राग्रमेकांदशकपालं निर्वपंति। देवतांश्चेव तेनेन्द्रियं च यजमानोऽवं रुन्धे। ऋष्मो वही दक्षिणा॥७॥

यद्वही। तेनाँग्रेयः। यदंष्भः। तेनैन्द्रः समृंख्यै।

आ्रियम्ष्टाकंपालं निर्वपति। ऐन्द्रं दिथं। यदाँश्वेयो भवंति। अ्ग्निर्वे यंज्ञमुखम्। य्ज्ञमुखम्वर्ष्टिं पुरस्ताँ द्वते। यदैन्द्रं दिथं॥८॥

ड्रन्द्रियमेवावं रुन्धे। ऋषुभो वृही दक्षिणा। यद्वही। तेनांग्नेयः। यदंषुभः। तेनैन्द्रः समृद्धै। यावंतीवे प्रजा ओषंधीनामहुंतानामाश्जन्। ताः परांऽभवन्। आग्रयणं भंवति हुताद्यांय। यजंमानुस्यापंराभावाय॥९॥

देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता इंन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैंन्द्राग्नं द्वादंशकपालं निरंवृणाताम्। यदैंन्द्राग्नो भवत्युज्जित्ये। द्वादंशकपालो भवति। द्वादंश् मासाः संवथ्मरः। संवथ्मरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्थे। वैश्वदेव-श्वरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नम्ं। अन्नमेवास्मैं स्वदयति॥१०॥

प्रथम्जो वथ्सो दक्षिणा समृद्धे। सौम्य श्यांमाकं च्रं निर्वपति। सोमो वा अंकृष्टप्रच्यस्य राजां। अकृष्टप्रच्यमेवास्में स्वदयति। वासो दक्षिणा। सौम्य हि देवत्या वासः समृद्धे। सरंस्वत्ये च्रं निर्वपति। सरंस्वते च्रम्। मिथुनमेवावं रुन्थे। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धे। एति वा एष यंज्ञमुखादध्याः। योंऽग्नेर्देवतांया एति। अष्टावेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रोंऽग्निः। तेनैव यंज्ञमुखादध्यां अग्नेर्देवतांयै नैतिं॥११॥

र्ड्युर्निरवंदयतेऽङ्गुष्ठाभ्यां जुहोत्यनुंमितर्देवतां निर्वपंति वही दक्षिणा यदैन्द्रं दध्यपंराभावाय स्वदयति गावो दक्षिणा समृंद्धो पद्गं॥————[१]

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न प्राजायन्त। सौंऽग्निरंकामयत। अहिम्माः प्रजनयेयमिति। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सोंऽशोचत्प्रजािम्च्छमानः। तस्माद्यं चं प्रजा भुनिक्त यं च न। तावुभौ शोंचतः प्रजािम्च्छमानौ। तास्विग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यैत्॥१२॥

सोमो रेतोंऽदधात्। स्विता प्राजंनयत्। सरंस्वती वाचंमदधात्। पूषाऽपोंषयत्। ते वा एते त्रिः संवथ्सरस्य प्रयंज्यन्ते। ये देवाः पृष्टिंपतयः। स्वथ्सरो वै प्रजापितः। स्वथ्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्राजंनयत्। ताः प्रजा जाता म्रुतौंऽघ्नन्। अस्मानिष् न प्रायुंक्षतितिं॥१३॥

स पृतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वै प्रजाभ्योऽकल्पत। यन्मांरुतो निरुप्यतें। युज्ञस्य क्रुप्त्यें। प्रजानामघाताय। सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वै मुरुतः। गुणुश पुवास्मै विशं कल्पयति। स प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मुरुत्स्ता अंवधिषुः। कथमपंराः सृजेयेति। तस्य शुष्मं आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्धादंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजांयत। आण्डस्य वा एतद्रूपम्। यदामिक्षाः। यद्धाद्धरंति॥१५॥

प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयति। वैश्वदेव्यांमिक्षां भवति। वैश्वदेव्यां वै प्रजाः। प्रजा एवास्मै प्रजंनयति। वार्जिन्मानयति। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतों दधाति। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवति। प्रजा एव प्रजांता द्यावापृथिवीभ्यांमुभ्यतः परि गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्रें यजत। मया मुखेनासुंराञ्जेष्यथेतिं। मां द्वितीयमिति सोमोंऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेतिं। मां तृतीयमिति सविता। मया प्रसूता जेष्यथेतिं। मां चेतुर्थीमिति सरंस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धांस्यामीतिं। मां पंश्वमिति पूषा। मयां प्रतिष्ठयां जेष्यथेतिं॥१७॥

तें'ऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। स्वित्रा प्रसूताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधात्। पूषा प्रंतिष्ठाऽऽसींत्। ततो व देवा व्यंजयन्त। यदेतानिं ह्वी १षिं निरुप्यन्ते विजित्यै। नोत्तरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उंत्तरवेदिः। अजांता इव ह्यंतर्हिं पशवंः॥१८॥

ऐदित्यंशोचद्युद्धरंत्यब्रवीत्प्रतिष्ठयां जेष्य्थेत्येतर्हि पृशवंः॥———[२]

त्रिवृह्यर्हिर्भविति। माता पिता पुत्रः। तदेव तन्मिथुनम्। उल्बं गर्भो जरायुं। तदेव तन्मिथुनम्। त्रेधा बर्हिः सन्नेद्धं भवित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रति तिष्ठति। एकधा पुनः सन्नेद्धं भवित। एकं इवृ ह्ययं लोकः॥१९॥ अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रतिं तिष्ठति। प्रसुवों भवन्ति। प्रथमजामेव पृष्टिमवं रुन्धे। प्रथमजो वथ्सो दक्षिणा समृद्धै। पृषदाज्यं गृह्णाति। पृशवो वै पृषदाज्यम्। पृश्नेवावं रुन्धे। पृश्चगृहीतं भविति। पाङ्का हि पृशवः। बहुरूपं भविति॥२०॥

बहुरूपा हि प्शवः समृंद्धै। अग्निं मंन्थन्ति। अग्निमुंखा वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यद्ग्निं मन्थंन्ति। अग्निमुंखा एव तत्प्रजा यजंमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवांनूयाजाः। अष्टौ ह्वी १षिं। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥

त्रिष्शथ्सम्पंद्यन्ते। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। यजमानो वा एकंकपालः। तेज् आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यमानयति। यजमानमेव तेजंसा समर्धयति। यजमानो वा एकंकपालः। पशव आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव पृशुभिः समर्धयति। यदल्पंमानयंत्। अल्पां एनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्वह्वांनयंत्। बहवं एनं पृशवोऽभुंअन्त उपंतिष्ठेरन्। बह्वांनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बहवं एवेनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठन्ते। यजंमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावद्येत्॥२३॥

यजंमानुस्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यजंमानः। प्र वां मीयेत। स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिव हि सुवर्गो लोकः। हुत्वाऽभि जुंहोति। यजमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयित्वा। तेजसा समर्धयति। यजमानो वा एकंकपालः। सुवर्गो लोक आहवनीयः॥२४॥

यदेकंकपालमाहवनीयें जुहोतिं। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। यद्धस्तेन जुहुयात्। सुवर्गाल्लोकाद्यजंमानमवं-विध्येत्। स्रुचा जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रि। यत्प्राङ्घवेत। देवलोकम्भिजंयेत्। यद्देक्षिणा पिंतृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥

रक्षा रेसि युज्ञ र हेन्युः। यदुदङ्कं। मृनुष्युलोकम्भिजंयेत्। प्रतिष्ठितो होत्व्यः। एकंकपालं वे प्रतितिष्ठंन्तं द्यावांपृथिवी अनु प्रतिं तिष्ठतः। द्यावांपृथिवी ऋतवः। ऋतून् युज्ञः। युज्ञं यजमानः। यजमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यः॥२६॥

वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनंः। तानेव तद्यंजिति। अथो खल्वांहुः। छन्दा रेसि वै वाजिन इति। तान्येव तद्यंजिति। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरी सोम्पानौं। तयोः परिधयं आधानम्। वाजिनं भाग्धेयम्॥२७॥

यदप्रहत्य परिधीं जुंहुयात्। अन्तराधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहत्यं परिधीं जुंहोति। निराधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छति। बर्हिषं विषिश्चन्वाजिनमा नयिति। प्रजा वै बर्हिः। रेतो वाजिनम्। प्रजास्वेव रेतो दधाति। समुपहूर्यं

भक्षयन्ति। पृतथ्सोमपीथा ह्येते। अथो आत्मन्नेव रेतो दधते। यजमान उत्तमो भक्षयति। पृशवो वै वार्जिनम्। यजमान एव पश्नम्प्रतिष्ठापयन्ति॥२८॥

लोको बंहुरूपं भंवत्याज्यंभागौ पृशव आज्यंमवृद्येदांहुवृनीयः प्रत्यक्तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यों भागुधेयंमेते चत्वारि च॥————[3]

प्रजापंतिः सिवता भूत्वा प्रजा अंसृजत। ता एंन्मत्यंमन्यन्त। ता अंस्मादपाँक्रामन्। ता वर्रुणो भूत्वा प्रजा वर्रुणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वर्रुणगृहीताः। प्रजापतिं पुन्रुपांधावन्नाथिम् च्छमांनाः। स एतान्प्रजापंतिर्वरुण-प्रघासानंपश्यत्। तां निर्वपत्। तैर्वे स प्रजा वंरुणपाशादंमुश्चत्। यद्वंरुणप्रधासा निरुष्यन्ते॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुर्न्यंक्र आसींत्। सव्यः प्रसृतः। स एतां द्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुदंहन्। ततो वे स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजंमानो दक्षिणं बाहुं प्रसारयित। तस्मांचातुर्मास्ययाज्यंमुष्मिं ल्लोक उभ्याबांहुः। यज्ञाभिजित् क् ह्यस्य। पृथमात्राद्वेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥

तस्मौत्पृथमात्रं व्यश्सौं। उत्तरस्यां वेद्यांमुत्तरवेदिमुपं वपति। पृशवो वा उत्तरवेदिः। पृशूनेवावं रुन्धे। अथो यज्ञपुरुषोऽनंन्तरित्यै। पृतद्भौह्मणान्येव पश्चं ह्वीश्षिं। अथैष ऐंन्द्राम्नो भंवति। प्राणापानौ वा एतौ देवानांम्। यदिंन्द्राम्नी। यदैन्द्राम्नो भवंति॥३१॥

प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा पृतौ देवानांम्। यदिन्द्राग्री। यदैन्द्राग्रो भवति। ओजो बलंमेवावं रुन्धे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षां। मेषी चं मेषश्चं भवतः। मिथुना एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। लोमशौ भंवतो मेध्यत्वायं॥३२॥

शुमीपूर्णान्युपं वपति। घासमेवाभ्यामपिं यच्छति। प्रजापितमृत्राद्यं नोपानमत्। स एतेनं श्रतेध्मेन हृविषा-ऽन्नाद्यमवारुन्थ। यत्परः श्रतानिं शमीपूर्णानि भवंन्ति। अन्नाद्यस्यावरुद्धे। सौम्यानि वै क्रीरांणि। सौम्या खलु वा आहुंतिर्दिवो वृष्टिं च्यावयति। यत्क्रीरांणि भवंन्ति। सौम्ययैवाहुंत्या दिवो वृष्टिमवं रुन्थे। काय एकंकपालो भवति। प्रजानां कन्त्वायं। प्रतिपूरुषं करम्भपात्राणि भवन्ति। जाता एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। एक्मितिरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति॥३३॥

निरुप्यन्ते भवतो भवंति मेध्यत्वार्य रुन्धे षद्वं॥————[४]

उत्तरस्यां वेद्यांम्न्यानिं ह्वी १ षिं सादयति। दक्षिंणायां मारुतीम्। अपधुरमेवेनां युनक्ति। अथो ओजं एवासामवं हरति। तस्माद्वह्यंणश्च क्षुत्राच्च विशों उन्यतोऽपऋमिणीः। मारुत्या पूर्वया प्रचरित। अनृतमेवावं यजते। वारुण्योत्तरया। अन्तत एव वर्रणमवं यजते। यदेवाध्वर्युः क्रोति॥३४॥
तत्प्रंतिप्रस्थाता कंरोति। तस्माद्यच्छ्रेयाँन्क्रोतिं।
तत्पापीयान्करोति। पत्नीं वाचयति। मेध्यांमेवैनां करोति।
अथो तपं एवैनामुपं नयति। यज्ञार सन्तन्न प्रंब्रूयात्।
प्रियं ज्ञाति र्रंन्थ्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्।
निर्दिश्येवैनं वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥

प्रघास्यान् हवामह् इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। यत्पत्नी पुरोनुवाक्यांमनुब्रूयात्। निर्वीर्यो यजंमानः स्यात्। यजंमानोऽन्वांह। आत्मन्नेव वीर्यं धत्ते। उभौ याज्यार्थं सवीर्यत्वायं। यद्गामे यदरंण्य इत्यांह। यथोदितमेव वरुणमवं यजते। यजुमानुदेवत्यों वा आंहवनीर्यः॥३६॥

भ्रातृब्यदेवत्यो दक्षिणः। यदांहवनीयं जुहुयात्। यजमानं वरुणपाशेनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। भ्रातृंव्यमेव वरुणपाशेनं ग्राहयति। शूर्पेण जुहोति। अन्यंमेव वरुणमवं यजते। शीर्षत्रंधि निधायं जुहोति। शीर्षत एव वरुणमवं यजते। प्रत्यिङ्गर्षं जुहोति॥३७॥

प्रत्यङ्केव वंरुणपाशान्निर्मुच्यते। अऋन्कर्म कर्म्कृत् इत्याह। देवाऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप प्रेतेति वावैतदाह। वरुणगृहीतं वा पृतद्यज्ञस्यं। यद्यजुंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते। तुषांश्च निष्कासश्चं। तुषेश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति। वर्रणगृहीतेनैव वर्रणमवंयजते। अपों-ऽवभृथमवैति॥३८॥

अपसु वै वर्रुणः। साक्षादेव वर्रुण्मवयजते। प्रति-युतो वर्रुणस्य पाश् इत्याह। वरुण्पाशादेव निर्मुच्यते। अप्रतीक्षमा यन्ति। वर्रुणस्यान्तर्हित्यै। एधौं उस्येधिषीमही-त्याह। समिधैवाग्निं नमस्यन्तं उपायन्ति। तेजोऽसि तेजो मियं धेहीत्याह। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्ते॥३९॥

कुरोतिं ग्राहयत्याहवुनीयुस्तिष्ठं जुहोत्युपोंऽवभृथमवैति धत्ते॥——————[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनीक-वती तुन्। तां प्रीणीत। अथासुरान्भि भविष्यथेति। ते देवा अग्नयेऽनीकवते पुरोडाशम्ष्टाकपालं निरंवपन्। सौंऽग्निरनीकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चतुर्धाऽनीकान्य-जनयत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुराः॥४०॥

यद्ग्रयेऽनींकवते पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपंति। अग्निमेवानींकवन्त्र् स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीणाति। सौंऽग्निरनींकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीतः। चतुर्धाऽनींकानि जनयते। असौ वा आंदित्योंऽग्निरनींकवान्। तस्यं र्श्मयो-ऽनींकानि। साक्र सूर्यणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनींकानि जनयति। तेऽसुंराः परांजिता यन्तः। द्यावांपृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥ ते देवा मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरुं निरंवपन्। तान्द्यावांपृथिवीभ्यांमेवोभ्यतः समंतपन्। यन्मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरुं निर्वपंति। द्यावांपृथिवीभ्यांमेव तदुंभ्यतो यजमानो भ्रातृंव्यान्थ्सन्तंपति। मुध्यन्दिने निर्वपति। तर्हि हि तेक्ष्णिष्ठं तपंति। चुरुर्भवति। सूर्वतं पुवैनान्थ्सन्तंपति। ते देवाः श्वोविज्यिनः सन्तंः। सर्वासां दुग्धे गृहम्धीयं चुरुं निरंवपन्॥४२॥

आशिता एवाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भवितेति। स शृतोंऽभवत्। तस्याहुंतस्य नाश्जन्ं। न हि देवा अहुंतस्याश्जन्तिं। तेंंऽब्रुवन्। कस्मां इम॰ होंष्याम् इतिं। मुरुद्धों गृहमेधिभ्य इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों-ऽजुहवुः॥४३॥

ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषों मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों गृहे जुह्वंति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। यद्वै यज्ञस्यं पाक्तत्रा क्रियतें। पृश्वव्यं तत्। पाक्तत्रा वा पृतिक्रंयते। यन्नेध्माब्रहिर्भवंति। न सांमिधेनीर्न्वाहं॥४४॥

न प्रयाजा इज्यन्तैं। नानूयाजाः। य एवं वेदे। पृशुमान्भवित। आज्यंभागौ यजित। यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरेति। मुरुतों गृहमे्धिनों यजित। भाग्धेयेंनैवैनान्थ्समंधि-यति। अग्निइस्विष्टकृतं यजित प्रतिष्ठित्यै। इडान्तो भवित। प्शवो वा इडाँ। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रति तिष्ठति॥४५॥
अस्रं अश्रयन्गृहमेधीर्यं चुरुं निरंवपन्नजुहवुर्न्वाहेडाँन्तो भवति द्वे चं॥———[६]

यत्पत्नीं गृहमेधीयंस्याश्जीयात्। गृहुमेध्येव स्याँत्। वि त्वंस्य युज्ञ ऋध्येत। यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं युज्ञो व्यृंद्धोत। प्रतिवेशं पचेयुः। तस्याँश्जीयात्। गृहुमेध्येव भेवति। नास्यं युज्ञो व्यृंद्धाते॥४६॥

ते देवा गृहमेधीयेनेष्ट्वा। आशिता अभवन्। आञ्चताभ्येञ्जत। अनुं वृथ्सानवासयन्। तेभ्योऽसुंराः क्षुधं प्राहिण्वन्। सा देवेषुं लोकमवित्वा। असुंरान्पुनंरगच्छत्। गृहमेधीयेनेष्ट्वा। आशिता भवन्ति। आञ्चतेऽभ्यंञ्जते॥४७॥

अनुं वृथ्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायैव तद्यजंमानः क्षुधं प्रिहंणोति। ते देवा गृंहमेधीयेंनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं न्यंदधुः। अस्मानेव श्व इन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तित। गृह्मेधीयेंनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं निदंध्यात्। इन्द्रं एवैनं निहिंतभाग उपावर्तते। गार्हंपत्ये जुहोति॥४८॥

भागधेयेनैवैन् समर्धयित। ऋषभमाह्वयित। वृषद्भार एवास्य सः। अथो इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजमानो भ्रातृव्यंस्य वृङ्के। इन्द्रों वृत्र हत्वा। पर्गं परावतंमगच्छत्। अपाराधमिति मन्यमानः। सौंऽब्रवीत्। क इदं वेदिष्यतीतिं। तेंं ऽब्रुवन्मरुतो वरंं वृणामहै॥४९॥

अर्थ व्यं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रंथम हिविर्निरुप्याता इतिं। त एंनमध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनां क्रीडित्वम्। यन्मुरुद्धाः क्रीडिभ्यः प्रथम हिविर्निरुप्यते विजित्यै। साक सूर्येणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वै लोक इन्द्रों वृत्रमंहुन्थ्समृंद्धौ। एतद्गाह्मणान्येव पश्चं ह्वी १ षि। एतद्गाह्मण ऐन्द्राग्नः। अथैष ऐन्द्रश्चरुर्भवति॥५०॥

उद्धारं वा एतिमन्द्र उदेहरत। वृत्तर हत्वा। अन्यासुं देवतास्विधि। यदेष ऐन्द्रश्चरुर्भवंति। उद्धारमेव तं यजेमान् उद्धरते। अन्यासुं प्रजास्विधि। वैश्वकुर्मण एकंकपालो भवति। विश्वान्येव तेन कर्माण् यजेमानोऽवं रुन्धे॥५१॥

ऋद्ध्वतेऽभ्यंञ्जते जुहोति वृणामहै भवत्यृष्टौ चं॥\_\_\_\_\_\_[9]

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुण-प्रघासैर्वरुणपाशादंमुश्चत्। साक्मेधेः प्रत्यंस्थापयत्। त्र्यंम्बके रुद्रं निरवादयत। पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकमंगमयत्। यद्वैश्वदेवेन यजंते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशान्मंश्चति। साक्मेधेः प्रतिष्ठापयति। त्र्यंम्बके रुद्रं निरवंदयते॥५२॥

पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकं गंमयति। दक्षिणतः प्रांचीनावीती निर्वपति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। अनांदत्य तत्। उत्तर्त एवोप्वीय निर्वपेत्। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तैं। अथो यदेव दक्षिणार्धेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणावृत्। सोमाय पितृमते पुरोडाशु षद्वंपालं निर्वपति। संवथ्सरो वै सोमंः पितृमान्॥५३॥

संवथ्सरमेव प्रीणाति। पितृभ्यों बर्हिषद्भी धानाः। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासानेव प्रीणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुषः प्रमीयंते। सौंऽस्यामुष्मिं छोके भंवति। बहुरूपा धाना भंवन्ति। अहोरात्राणांम्भिजिंत्यै। पितृभ्योंऽग्निष्वात्तेभ्यों मन्थम्। अर्धमासा वै पितरोंऽग्निष्वात्ताः॥५४॥

अर्धमासानेव प्रीणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भंवति। सा हि पितृदेवत्यं दुहे। यत्पूर्णम्। तन्मंनुष्यांणाम्। उपर्यधों देवानांम्। अर्धः पितृणाम्। अर्ध उपमन्थति। अर्धो हि पितृणाम्। एकयोपंमन्थति॥५५॥

एका हि पिंतृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनारभ्योपंमन्थति। तद्धि पितृन्गच्छंति। इमान्दिशं वेदिमुद्धंन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरश्चेज्यन्तैं। चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यनु दिशंः पितरंः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानांम्। मध्यतों ऽग्निराधीयते। अन्ततो हि देवानांमाधीयतें। वर्षीयानिध्म इध्माद्भवित् व्यावृंत्त्यै। परिश्रयति। अन्तर्हितो हि पिंतृलोको मंनुष्यलोकात्। यत्पर्रुषि दिनम्। तद्देवानाम्। यदेन्तरा। तन्मंनुष्याणाम्॥५७॥

यथ्समूंलम्। तत्पिंतृणाम्। समूंलं ब्र्हिभंवति व्यावृंत्त्यै। दक्षिणा स्तृंणाति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। त्रिः पर्येति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रींणाति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। यत्प्रंस्त्रं यजुंषा गृह्णीयात्। प्रमायंको यजमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तूष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायंको भवंति। नानायतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिदध्यात्॥५९॥

मृत्युना यजंमानं परिगृह्णीयात्। यन्न पंरिद्ध्यात्। रक्षां स्मि युज्ञ हंन्युः। द्वौ पंरिधी परिद्धाति। रक्षंसामपंहत्ये। अथो मृत्योरेव यजंमान्मुथ्संजिति। यत्रीणि त्रीणि ह्वी इष्युंदाहरेयुः। त्रयंस्रय एषा साकं प्रमीयेरन्। एकं कमनूचीनां न्युदाहं रिन्तः। एकं क पृवेषां मन्वश्चः प्रमीयते। कृशिपं किशप्यांय। उपबर्हं णमुपबर्हण्यांय। आञ्जनमाञ्चन्यांय। अभ्यञ्जनमभ्यञ्जन्यांय। यथाभागमे-वैनां न्प्रीणाति॥६०॥

निरवंदयते पितृमानंग्निष्वात्ता एक्योपं मन्थृत्यखांता भवति मनुष्यांणां पद्यन्ते परिद्ध्यान्मीयते

पर्श्वं च॥————[८]

अग्नयं देवेभ्यः पितृभ्यः सिम्ध्यमानायानं ब्रूहीत्यांह। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघांरयति। यज्ञपुरुषोरनंन्तरित्ये। नार्षेयं वृणीते। न होतांरम्॥६१॥

यदार्षेयं वृंणीत। यद्धोतारम्। प्रमायंको यजंमानः स्यात्। प्रमायंको होतां। तस्मान्न वृंणीते। यजंमानस्य होतुंर्गोपीथायं। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजति। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजति। आज्यंभागौ यजति॥६२॥

यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजित। पितृदेवत्यां हि। एषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्यंता देवताः। द्वे पुंरोऽनुवाक्ये। याज्यां देवतां वषद्भारः। ता एव प्रीणाति। सन्तंतमवं द्यति॥६३॥

ऋतूना सन्तंत्यै। प्रैवैभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयति द्वितीयंया। गुमयंति याज्यंया। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। अहं एवैनान्पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽत्यानंयति। रात्रिये द्वितीयंया। ऐवैनान् याज्यंया गमयति। दक्षिणतों-ऽवदायं। उदङ्कातं कामति व्यावृत्त्यै॥६४॥

आ स्वधेत्याश्रांवयति। अस्तुं स्वधेतिं प्रत्याश्रांवयति। स्वधा नम् इति वषंद्वरोति। स्वधाकारो हि पिंतृणाम्। सोम्मग्रे यजित। सोमंप्रयाजा हि पितरंः। सोमं पितृमन्तं यजित। संवथ्सरो वै सोमंः पितृमान्। संवथ्सरमेव तद्यंजित। पितृन्बंहिषदो यजित॥६५॥

ये वै यज्वांनः। ते पितरों बर्हिषदंः। तानेव तद्यंजित। पितृनंग्निष्वात्तान् यंजिति। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनंः। ते पितरौंऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजिति। अग्निं कंव्यवाहंनं यजित। य एव पितृणामग्निः। तमेव तद्यंजिति॥६६॥

अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजिति। ताहगेव तत्। एतत्ते तत् ये च त्वामन्वितिं तिसृषुं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुषान्नाम् न गृह्णन्ति। एतावन्तो हीज्यन्तें। अत्रं पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्यांह। ह्लीका हि पितरंः। उदंश्चो निष्क्रांमन्ति। एषा वै मनुष्यांणां दिक्। स्वामेव तिदृशमनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥

आह्वनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्येवास्मै तद्भुवते। यथ्मत्याहवनीयै। अथान्यत्र चरंन्ति। आतिमेतोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृत्रिरवंदयन्ते। अन्तं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतिमेतोरुप तिष्ठंन्ते। सुसन्दर्शं त्वा वयमित्यांह॥६८॥

प्राणो वै सुंसन्दक्। प्राणमेवाऽऽत्मन्दंधते। योजा न्विंन्द्र ते हरी इत्याह। प्राणमेव पुनरयुक्त। अक्षन्नमीमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपंतिष्ठन्ते। अक्षन्नमीमदन्ताथ त्वोपंतिष्ठामह् इति वावैतदांह। अमींमदन्त पितरंः सोम्या इत्यभि प्रपंद्यन्ते। अमींमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह् इति वावैतदांह। अपः परिषिश्चति। मार्जयंत्येवैनान्॥६९॥

अथों तर्पयंत्येव। तृप्यंति प्रजयां पृश्निः। य एवं वेदं। अपं बर्हिषावन्याजौ यंजित। प्रजा वे बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजिति। चतुरंः प्रयाजान् यंजिति। द्वावंन्याजौ। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। न पत्यन्वांस्ते। न संयांजयन्ति। यत्पत्य्यन्वासीत। यथ्संयाजयेयुः। प्रमायंका स्यात्। तस्मान्नान्वांस्ते। न संयांजयन्ति। पत्निये गोपीथायं॥७०॥

प्रतिपूरुषमेकंकपालां निर्वपति। जाता एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकमितंरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकंकपाला भवन्ति। एक्धैव रुद्रं निरवंदयते। नाभिघांरयति। यदंभिघारयेत्। अन्तर्वचारिण र्रं रुद्रं कुर्यात्। एकोल्मुकेनं यन्ति॥७१॥

ति रुद्रस्यं भागधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्रो वा अपशुकांया आहुंत्यै नातिष्ठत। असौ ते पशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमंस्मै पृशुं निर्दिशति। यदि न द्विष्यात्। आखुस्ते पृशुरितिं ब्रूयात्॥७२॥

न ग्राम्यान्पशून् हिनस्ति। नार्ण्यान्। चृतुष्पथे जुंहोति। एष वा अंग्रीनां पङ्घीशो नामं। अग्निवत्येव जुंहोति। मध्यमेनं पूर्णेनं जुहोति। सुग्ध्येषा। अथो खलुं। अन्तमेनैव होत्व्यम्। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥

पृष ते रुद्र भागः सह स्वस्नाऽम्बिक्येत्यांह। श्ररद्वा अस्याम्बिका स्वसा। तया वा पृष हिनस्ति। य हिनस्ति। तयौवन स्वसा। तया वा पृष हिनस्ति। य हिनस्ति। तयौवन स्वसा सह श्रीमयति। भेषजङ्गव इत्यांह। यावन्त पृव ग्राम्याः पृशवंः। तेभ्यो भेषजं केरोति। अवाम्ब रुद्रमंदिमहीत्यांह। आशिषंमेवतामा शास्ते॥७४॥

त्र्यंम्बकं यजामह् इत्यांह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति वावैतदांह। उत्किरन्ति। भगस्य लीफ्सन्ते। मूतंकृत्वा-ऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतंऽवसं करोतिं। तादृगेव तत्। एष तं रुद्र भाग इत्यांह निरवंत्त्ये। अप्रंतीक्षमा यंन्ति। अपः परिषिश्चति। रुद्रस्यान्तर्हित्ये। प्र वा पृतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यंम्बकैश्चरंन्ति। आदित्यं च्रं पुन्रेत्य निर्वपति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥७५॥

युन्ति ब्रूयान्त्रिरवंदयते शास्ते सिश्चित् षद्वं॥————[१०]

अनुंमत्यै वैश्वदेवेन् ताः सृष्टास्त्रिवृत्प्रजापंतिः सिवतोत्तंरस्यान्देवासुराः सौंऽग्निर्यत्पत्नी

षष्ठमः प्रश्नः

वैश्वदेवेन ता वंरुणप्रघासैर्ग्नये देवेभ्यः प्रतिपूरुषं दर्श॥१०॥
अनुमत्ये प्रथम्जो वृथ्सो बंहुरूपा हि प्शवस्तस्मौत्पृथमात्रं यद्ग्नयेऽनीकवत उद्धारं वा
अग्नये देवेभ्यः प्रतिपूरुषं पश्चंसप्ततिः॥७५॥
अनुमत्ये प्रति तिष्ठन्ति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्टः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥सप्तमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

पुराद्वाँह्मणान्येव पश्चं ह्वी १ षिं। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पुराेडाशं द्वादंशकपालं निर्वपिति। संवथ्सरो वा इन्द्राशुनासीरंः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्थे। वायव्यं पयो भवति। वायुर्वे वृष्ट्ये प्रदापियता। स पुवास्मे वृष्टिं प्रदांपयति। साौर्यं एकंकपालो भवति। सूर्येण वा अमुष्में लेके वृष्टिंधृता। स पुवास्मे वृष्टिं निर्यंच्छिति॥१॥

द्वादशगव सीरं दक्षिणा समृद्धै। देवासुराः संयंता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणासुरान्भिभंवामेतिं। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकिरिष्य इतिं। स त्रेधा-ऽऽत्मानं व्यंकुरुत। अग्निं तृतीयम्। रुद्रं तृतीयम्। वर्रणं तृतीयम्॥२॥

सों ऽब्रवीत्। क इदं तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रों-ऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावहा इतिं। तौ समंसृजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयंमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभवत्। तदिन्द्र-तुरीयस्येंन्द्रतुरीयत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्ये॥३॥

वृहिनीं धेनुर्दक्षिणा। यद्घहिनीं। तेनांग्नेयी। यद्गैः। तेनं रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री। यथ्ब्री स्ती दान्ता। तेनं वारुणी

# समृंद्धै। प्रजापंतिर्य्ज्ञमंसृजत॥४॥

त १ सृष्ट १ रक्षा ईस्यजिघा १ सन् एताः प्रजापंतिरात्मनों देवता निरंमिमीत। ताभिवें स दिग्भ्यो रक्षा ईसि प्राणुंदत। यत्पंश्चावृत्तीयं जुहोति। दिग्भ्य एव तद्यजंमानो रक्षा ईसि प्रणुंदते। समूंढ १ रक्षः सन्दंग्ध १ रक्ष इत्यांह। रक्षा ईस्येव सन्दंहित। अग्नयं रक्षोघ्ने स्वाहेत्यांह। देवतांभ्य एव विजिग्यानाभ्यों भाग्धेयं करोति। प्रष्टिवाही रथो दिक्षंणा समृंद्धै॥५॥

इन्द्रों वृत्र १ हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नमुंचिमासुरं नार्लभत। त श्रच्यांऽगृह्णात्। तौ समेलभेताम्। सौंऽस्माद्भिशुंनतरोऽभवत्। सौंऽब्रवीत्। सन्धा श् सन्दंधावहै। अथ् त्वाऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्केण् नार्द्रेणं हनः॥६॥

न दिवा न नक्तमिति। स एतम्पां फेर्नमिसिश्चत्। न वा एष शुष्को नार्द्रो व्युष्टाऽऽसीत्। अनुंदितः सूर्यः। न वा एतद्दिवा न नक्तम्। तस्यैतस्मिं ह्योके। अपां फेर्नेन् शिर् उदंवर्तयत्। तदेन्मन्वंवर्तत। मित्रंद्रुगितिं॥७॥

स एतानेपामार्गानेजनयत्। तानेजुहोत्। तैर्वे स रक्षाड्स्यपाहतः। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपंहत्यै। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्धे रक्षंसां भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रक्षंसां दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षा १सि हन्ति॥८॥

स्वकृंत इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वै रक्षंसामायतनंम्। स्व एवायतंने रक्षा रेसि हन्ति। पूर्णमयेन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्म वे पूर्णः। ब्रह्मणेव रक्षा रेसि हन्ति। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रमुव इत्याह। स्वितृप्रंसूत एव रक्षा रेसि हन्ति। हृत र रक्षो-ऽवंधिष्म रक्ष इत्याह। रक्षंसा स्रुव्तै। यद्वस्ते तद्दक्षिणा निरवंत्ये। अप्रंतीक्षमायंन्ति। रक्षंसाम्नतर्हित्ये॥९॥

युच्छुति वर्रुणं तृतीयं विजित्या असृजत् समृंद्धौ हनो मित्रंद्रुगिति हन्ति स्तृत्यै त्रीणि च॥[१]

धात्रे पुरोडाशं द्वादेशकपालं निर्वपिति। संवथ्सरो वै धाता। संवथ्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्रजनयित। अन्वेवास्मा अनुमितर्मन्यते। राते राका। प्र सिनीवाली जनयित। प्रजास्वेव प्रजातासु कुह्वां वाचं दधाति। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धौ। आग्नावैष्णवमेकांदशकपालं निर्वपिति। ऐन्द्रावैष्णवमेकांदशकपालम्॥१०॥

वैष्णुवं त्रिंकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यमिन्द्रः। वीर्यं विष्णुः। प्रजा एव प्रजाता वीर्यं प्रतिष्ठापयति। तस्मात्प्रजा वीर्यावतीः। वामन ऋष्मो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनांग्रेयः। यद्वभः॥११॥

तेनैन्द्रः। यद्वांमुनः। तेनं वैष्णुवः समृद्धौ। अग्नीषोमीयमेकां-

दशकपालुं निर्वपति। इन्द्रासोमीयमेकांदशकपालम्। सौम्यं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनयिता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं पुवास्मै रेतो दर्धाति॥१२॥

अग्निः प्रजां प्रजनयति। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छति। ब्रुदिक्षिणा समृद्धै। सोमापौष्णं चरुं निर्वपति। ऐन्द्रापौष्णं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पंशूनां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दधांति। पूषा पुशून्प्रजनयति॥१३॥

वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुर्भवति। इयं वै पूषा। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। श्यामो दक्षिणा समृद्धौ। बहु वै पुरुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वान्तरं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वा अग्निर्वैश्वान्रः। संवथ्सरेणैवैन इं स्वदयति। हिरंण्यं दक्षिणा॥१४॥

प्वित्रं वै हिरंण्यम्। पुनात्येवेनम्ं। बहु वै राजन्योऽनृंतं करोति। उपं जाम्ये हरंते। जिनातिं ब्राह्मणम्। वद्त्यनृंतम्। अनृंते खलु वै क्रियमाणे वरुणो गृह्णाति। वारुणं यवमयं चरुं निर्वपति। वरुणपाशादेवेनं मुश्रति। अश्वो दक्षिणा। वारुणो हि देवत्याऽश्वः समृंद्धौ॥१५॥

ऐन्द्रावैष्णुवमेकांदशकपालुं यदंषुभो दर्थाति पूषा पुशून्प्रजनयित हिरंण्युं दक्षिंणा दक्षिणैकं

च॥\_\_\_\_\_\_[ २

र्विनांमेतानिं ह्वी १ षिं भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारेः। एतेंऽपादातारेः। य एव राष्ट्रस्यं प्रदातारेः। येंऽपादातारेः। त एवास्में राष्ट्रं प्रयंच्छन्ति। राष्ट्रमेव भवति। यथ्संमाहृत्यं निर्वपेत्। अरंबिनः स्युः। यथायथं निर्वपति रिवृत्वायं॥१६॥

यथ्सद्यो निर्वपंत्। यावंतीमकंन ह्विषाऽऽशिषंमव रुन्थे। तावंतीमवंरुन्थीत। अन्वहन्निर्वंपति। भूयंसीमेवाशिषमवं रुन्थे। भूयंसो यज्ञऋतूनुपैति। बार्हस्पत्यं च्रं निर्वंपति ब्रह्मणो गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रमन्वारंम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृद्धौ॥१७॥

पुन्द्रमेकांदशकपाल राज्न्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। ऋषुभो दक्षिणा समृद्धे। आदित्यं चुरुं महिष्ये गृहे। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेनुर्दक्षिणा समृद्धे। भगांय चुरुं वावातांये गृहे। भगंमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दक्षिणा समृद्धे॥१८॥

नैर्ऋतं चरुं परिवृत्त्यैं गृहे कृष्णानां व्रीहीणां न्खिनिर्भिन्नम्। पाप्मानमेव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णा कूटा दक्षिणा समृद्धौ। आग्नेयमृष्टाकंपाल समृद्धौ। गृहे। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। हिर्रण्यं दक्षिणा समृद्धौ। वारुणं दश्वंकपाल स्तूतस्यं गृहे। वरुणसवमेवावं रुन्थे। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धौ। मारुत सप्तकंपालं ग्रामण्यों गृहे॥१९॥

अत्रं वै मुरुतः। अन्नमेवावं रुन्धे। पृश्चिदिक्षिणा समृद्धे। सावित्रं द्वादंशकपालं क्षुत्तुर्गृहे प्रसूत्ये। उपध्वस्तो दक्षिणा समृद्धे। आश्विनं द्विकपालः संङ्गृहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं करोति। स्वात्यौ दक्षिणा समृद्धे। पौष्णं चुरुं भागदुघस्यं गृहे॥२०॥

अत्रं वै पूषा। अत्रंमेवावं रुन्धे। श्यामो दक्षिणा समृद्धे। रौद्रं गांवीधुकं चरुमंक्षावापस्यं गृहे। अन्तृत एव रुद्रं निरवंदयते। शबल उद्वांरो दक्षिणा समृद्धे। द्वादंशैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्में राष्ट्रमवं रुन्धे। राष्ट्रमेव भवति॥२१॥

यन्न प्रंति निर्वपैत्। रिवनं आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रतिनिर्वपति। इन्द्रांय सुत्राम्णं पुरोडाश्मेकांदशकपालम्। इन्द्रांया होमुचैं। आशिषं पुवावं रुन्धे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वंध्यादित्यांह। आशिषंमेवेतामा शौस्ते। मैत्राबार्हस्पत्यं भवति। श्वेतायैं श्वेतवंथ्साये दुग्धे॥२२॥

बार्ह्स्पत्ये मैत्रमि दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति। बार्ह्स्पत्येन् पूर्वेण प्रचंरति। मुखत एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रमन्वारंम्भयति। स्वयं कृता वेदिर्भवति। स्वयं दिनं ब्रहिः। स्वयं कृत इध्मः। अनंभिजितस्याभिजित्यै।

तस्माद्राज्ञामरंण्यम्भिजितम्। सैव श्वेता श्वेतवंथ्सा दक्षिणा समृद्धौ॥२३॥

र्िा समृंद्धै पष्टौही दक्षिणा समृंद्धै ग्रामण्यों गृहे भागदुघस्यं गृहे भविति दुग्धेंऽभिर्जित्यै दे चं॥————[3]

देवसुवामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। पृतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त पृवास्मै स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एंन १ सुवन्ते। अग्निरेवैनं गृहपंतीना १ सुवते। सोमो वनस्पतीनाम्। रुद्रः पंशूनाम्। बृह्स्पतिंवीचाम्। इन्द्रौ ज्येष्ठानौम्। मित्रः सत्यानौम्॥ २४॥

वर्रणो धर्मपतीनाम्। एतदेव सर्वं भवति। स्विता त्वाँ प्रस्वानारं सुवतामिति हस्तं गृह्णाति प्रसूँत्यै। ये देवा देवः सुवः स्थेत्याह। यथायजुरेवैतत्। महते क्षत्रायं महत आधिपत्याय महते जानराज्यायेत्याह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानार् राजेत्याह। तस्माथ्सोमराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामं राज्यमंधायीत्यांह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिंदधाति। स्वां तनुवं वर्रणो अशिश्रेदित्याह। वरुणसवमेवावं रुन्धे। शुचैर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्याह। शुचिमेवैनं व्रत्यं करोति। अमन्महि महुत ऋतस्य नामेत्याह। मनुत एवैनम्। सर्वे व्राता वर्रुणस्याभूविन्नित्यांह। सर्वव्रातमेवैनं करोति। वि मित्र एवैररांतिमतारीदित्यांह॥२६॥

अरांतिमैवैनं तारयति। असूंषुदन्त यृज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। व्यं त्रितो जीर्माणं न आन्डित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे। द्विपाद्यजमानः प्रतिष्ठित्ये। अग्नीषोमीयंस्य चैकांदशकपालस्य देवसुवां चे ह्विषांमग्नये स्वष्टकृते समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। विष्णुऋमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भि-जंयति॥२७॥

स्त्यानामधायीत्यांहातारीदित्यांह क्रमत् एकं च॥-----[४]

अर्थेतः स्थेतिं जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथो ह्विष्कृंतानामेवाभिघृंतानां गृह्णाति। वहंन्तीनां गृह्णाति। एता वा अपा॰ राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्में गृह्णाति। अथो श्रियंमेवैनंमभिवंहन्ति। अपां पतिंर्सीत्यांह। मिथुनमेवाकंः। वृषांऽस्यूर्मिरित्यांह॥२८॥

ऊर्मिमन्तंमेवैनं करोति। वृष्सेनोंऽसीत्यांह। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। ब्रजिक्षितः स्थेत्यांह। एता वा अपां विशंः। विशंमेवास्मै पर्यूहति। मुरुतामोजः स्थेत्यांह। अत्रं वै मुरुतंः। अन्नंमेवावं रुन्थे। सूर्यवर्चसः स्थेत्यांह॥२९॥

राष्ट्रमेव वर्चस्व्यंकः। सूर्यत्वचसः स्थेत्याह। स्तयं वा

पुतत्। यद्वर्षिति। अनृतं यदातपिति वर्षिति। सृत्यानृते पुवावे रुन्धे। नैन र् सत्यानृते उदिते हिर्इस्तः। य पुवं वेदे। मान्दाः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥

वाशाः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्याह। पृशवो व शक्वंरीः। पृशूनेवावं रुन्धे। विश्वभृतः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव पंयुस्वयंकः। जनभृतः स्थेत्याह। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्याः स्थेत्याह॥३१॥

राष्ट्रमेव तेंज्स्व्यंकः। अपामोषंधीना् रसः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव मंध्व्यंमकः। सार्स्वतं ग्रहं गृह्णाति। एषा वा अपां पृष्ठम्। यथ्सरंस्वती। पृष्ठमेवैन र् समानानां करोति। षोड्शभिंगृह्णाति। षोडंशकलो वै पुर्रुषः। यावांनेव पुर्रुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। षोड्शभिंर्जुहोतिं षोड्शभिंगृह्णाति। द्वात्रिर्श्यथ्सम्पंद्यन्ते। द्वात्रिर्श्यदक्षरा-ऽनुष्टुक्। वागंनुष्टुफ्सर्वाणि छन्दार्र्स। वाचैवैन्र् सर्वेभिश्छन्दोंभिर्भिषिंश्रति॥३२॥

ऊर्मिरित्यांहु सूर्यंवर्चसः स्थेत्यांह ब्रह्मवर्चस्यंकस्तेज्स्याः स्थेत्यांहैव पुरुषः षट चं॥——[५]

देवीरापः सं मधुंमतीर्मधुंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। ब्रह्मणैवेनाः स॰सृंजति। अनाधृष्टाः सीद्तेत्यांह। ब्रह्मणैवेनाः सादयति। अन्तरा होतुंश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छु॰सिनश्च सादयति। आग्नेयो वे होतां। ऐन्द्रो ब्राह्मणाच्छु॰सी। तेजंसा

चैवेन्द्रियेणं चोभ्यतों राष्ट्रं परिंगृह्णाति। हिरंण्येनोत्पंनाति। आहंत्यै हि पवित्रांभ्यामुत्पुनन्ति व्यावृंत्त्यै॥३३॥

श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। अनिभृष्टम्सीत्यांह। अनिभृष्ट्र् ह्यंतत्। वाचो बन्धुरित्यांह। वाचो ह्यंष बन्धुंः। तृपोजा इत्यांह। तृपोजा ह्यंतत्। सोमंस्य दात्रम्सीत्यांह॥३४॥

सोमंस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुक्रा वंः शुक्रेणोत्पुंनामीत्यांह। शुक्रा ह्यापंः। शुक्र हरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्र हरंण्यम्। अमृतां अमृत्नेनेत्यांह। अमृता ह्यापंः। अमृत्र हिरंण्यम्॥३५॥

स्वाहां राज्सूयायेत्यांह। राज्सूयांय ह्यंना उत्पुनाति।
स्थमादों द्युम्निनीरूर्ज एता इति वारुण्यर्चा गृह्णाति।
वरुणस्वमेवावं रुन्थे। एकया गृह्णाति। एक्थेव यर्जमाने
वीर्यं दधाति। क्षुत्रस्योल्बंमिस क्षुत्रस्य योनिर्सीति ताप्यं
चोष्णीषं च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुञ्जीलैः
पंवयति। शृतायुर्वे पुरुषः शृतवीर्यः। आत्मैकंशृतः॥३६॥

यावांनेव पुरुंषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्थे। उदुम्बरंमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शष्पांण्याशयति। सुरांबिलमेवेनं करोति। आविदं एता भंवन्ति। आविदंमेवेनं गमयन्ति॥३७॥ अग्निरेवेनं गार्हंपत्येनावति। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा पृश्मिः। मित्रावर्रणौ प्राणापानाभ्यांम्। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स दिवंमिलखत्। सौंऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आविंत्रे द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति द्यावांपृथिवी उपांधावत्। स आभ्यामेव प्रसूत् इन्द्रों वृत्राय वज्रं प्राहंरत्। आविंत्रे द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति यदाहं॥३८॥

आभ्यामेव प्रसूतो यजंमानो वज्रं भ्रातृंव्याय प्रहंरति। आविन्ना देव्यदितिर्विश्वरूपीत्याह। इयं वे देव्यदितिर्विश्वरूपी। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। आविन्नोऽयम्सावांमुष्यायणौऽस्यां विश्यंस्मिन्नाष्ट्र इत्यांह। विशेवेन रे राष्ट्रेण् समर्धयति। महते क्षुत्रायं महत आधिपत्याय महते जानराज्यायेत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना राजेत्यांह। तस्माथ्सोमेराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽिस वार्त्रघ्न इति धनुः प्रयंच्छिति विजित्यै। शत्रुवार्धनाः स्थेतीषूनं। शत्रूनेवास्यं बाधन्ते। पात मा प्रत्यश्चं पात मा तिर्यश्चंमन्वश्चं मा पातेत्यांह। तिस्रो व शंर्व्याः। प्रतीची तिरश्चमूचीं। ताभ्यं पुवैनं पान्ति। दिग्भ्यो मा पातेत्यांह। दिग्भ्य पुवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः। पातेत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां

विरोक इति त्रिष्टुमां बाहू उद्गृह्णाति। इन्द्रियं वै वीर्यं त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव वीर्यमुपरिष्टादात्मन्धंत्ते॥४०॥

व्यावृंत्त्यै दात्रमुसीत्यांहामृत्र् हिरंण्यमेकश्वतो गंमयुन्त्याहं ब्राह्मणा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह चुत्वारि

च॥\_\_\_\_\_\_[ 8

दिशो व्यास्थांपयति। दिशाम्भिजिंत्यै। यदंनु प्रक्रामेंत्। अभि दिशों जयेत्। उत्तु माँद्येत्। मन्साऽनु प्रक्रांमित। अभि दिशों जयित। नोन्माँद्यति। स्मिध्मा तिष्ठेत्यांह। तेजं पृवावं रुन्थे॥४१॥

उग्रामा तिष्ठेत्यांह। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। विराजमातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यंमेवावं रुन्धे। उदींचीमा तिष्ठेत्यांह। पृशूनेवावं रुन्धे। ऊर्ध्वामातिष्ठेत्यांह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनून्निंहीते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्री॥४२॥

मारुत एष भेवति। अत्रं वै मुरुतः। अन्नेमेवावं रुन्थे। एकंविश्शतिकपालो भवति प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यों गणः। तं मध्यत उपंदधाति। ग्राम्यैरेव पृश्वभिरारण्यान्पृश्वन्परि गृह्णाति। तस्माँद्भाम्यैः पृश्वभिरारण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिवैन्यः। अभ्यषिच्यत॥४३॥

स राष्ट्रं नाभवत्। स पुतानि पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स राष्ट्रमंभवत्। यत्पार्थानि जुहोतिं। राष्ट्रमेव भवति। बार्हस्पत्यं पूर्वेषामुत्तमं भवति। ऐन्द्रमुत्तंरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मै क्षत्रं च समीची दधाति। अथो ब्रह्मन्नेव क्षत्रं प्रति-ष्ठापयति॥४४॥

षद्गुरस्तांदिभिषेकस्यं जुहोति। षडुपरिष्टात्। द्वादंश् सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरः खलु वै देवानां पूः। देवानांमेव पुरं मध्यतो व्यवंसपिति। तस्य न कृतंश्चनोपांव्याधो भंवति। भूतानामवेष्टीर्जुहोति। अत्रात्र वै मृत्युर्जायते। यत्रंयत्रेव मृत्युर्जायते। ततं एवैन्मवंयजते। तस्माद्राज्सूयेनेजानो नाभिचंरित्वै। प्रत्यगेनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥

रुन्थे समंष्ट्रा असिच्यत स्थापयित जायंते पश्चं च॥—————[  $oldsymbol{9}$  ]

सोमंस्य त्विषिरसि तवेव मे त्विषिर्भयादितिं शार्दूल-चर्मोपंस्तृणाति। यैव सोमे त्विषिः। या शाँदूले। तामेवावं रुन्थे। मृत्योर्वा एष वर्णः। यच्छाँदूलः। अमृत्र हिरंण्यम्। अमृतंमसि मृत्योर्मा पाहीति हिरंण्यमुपाँस्यति। अमृतंमेव मृत्योर्न्तर्थत्ते। शृतमानं भवति॥४६॥

श्वायुः पुरुषः श्वेतिन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दिद्योन्मां पाहीत्युपरिष्टादिष् निद्धाति। उभयतं एवास्मै शर्म दधाति। अवेष्टा दन्दशूका इतिं क्रीब॰ सीसेन विध्यति। दन्दशूकानेवावयजते। तस्मौत्क्रीबं देन्दशूका द॰शुंकाः। निरंस्तं नमुंचेः शिरु इतिं लोहितायसं निरंस्यति। पाप्मानंमेव नमुंचिं निरवंदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वेऽभिषिच्या इत्यांहुः॥४७॥

सोमो राजा वर्रुणः। देवा धर्मसुवंश्च ये। ते ते वाचर् सुवन्तां ते ते प्राणर् सुवन्तामित्यांह। प्राणानेवाऽऽत्मनः पूर्वान्भिषिश्चति। यद्भूयात्। अग्नेस्त्वा तेजंसाऽभिषिश्चामीति। तेज्स्व्येव स्यात्। दुश्चर्मा तु भवत्। सोमंस्य त्वा द्युम्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सौम्यो व देवत्या पुरुषः॥४८॥

स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिश्चति। अग्नेस्तेज्सेत्यांह। तेजं
प्वास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्यांह। वर्च प्वास्मिन्दधाति।
इन्द्रंस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावरुणयोवीर्येणेत्यांह। वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मरुतामोजसेत्यांह॥४९॥

ओजं पुवास्मिन्दधाति। क्षुत्राणां क्षुत्रपंतिर्सीत्यांह। क्षुत्राणांमेवेनं क्षुत्रपंतिं करोति। अति दिवस्पाहीत्यांह। अत्यन्यान्पाहीति वावैतदांह। समावंवृत्रन्नधरागुदींचीरित्यांह। राष्ट्रमेवास्मिन्ध्रुवमंकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो व रुद्रः। भागधेयेंनैव रुद्रं निरवंदयते॥५०॥

उदं द्विरत्याग्नीं द्धे जुहोति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायां मेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्र यत्ते ऋयी परं नामेत्यां ह। यद्वा अस्य ऋयी परं नामं। तेन वा एष हिनस्ति। यश हिनस्ति। तेनैवैन सह शंमयति। तस्मैं हुतमंसि यमेष्टं मुसीत्यां ह।

## यमादेवास्यं मृत्युमवंयजते॥५१॥

प्रजांपते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यै गृहे जुंहुयात्। यां कामयेत राष्ट्रमंस्यै प्रजा स्यादितिं। राष्ट्रमेवास्यै प्रजा भंवति। पूर्णमयेनाध्वर्युर्भिषिश्चिति। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्त्विषं दधाति। औदुंम्बरेण राजन्यः। ऊर्जमेवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। आश्वंत्थेन वैश्यः। विशंमेवास्मिन्पृष्टिं दधाति। नैयंग्रोधेन् जन्यः। मित्राण्येवास्मै कल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्यै॥५२॥

भुवृत्याहुः पुरुष ओज्सेत्यांह निरवंदयते यजते जन्यो द्वे चं॥———[८]

इन्द्रंस्य वज्रोऽिस वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरित विजित्यै। मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषां युन्ज्मीत्यांह। ब्रह्मंणैवैनं देवतांभ्यां युनिक्त। प्रष्टिवाहिनं युनिक्त। प्रष्टिवाही वे देवर्थः। देवर्थमेवास्में युनिक्त। त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। द्वौ संव्येष्ठसार्थी। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५३॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवेनं युनक्ति। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्योकान्भिजंयति। यः क्षित्रियः प्रतिहितः। सौंऽन्वारंभते। राष्ट्रमेव भंवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति॥५४॥

मुरुतां प्रस्वे जेषिमित्यांह। मुरुद्धिरेव प्रसूत उन्नयित। आप्तं मन् इत्यांह। यदेव मन्सैफ्सींत्। तदांपत्। राजन्यं जिनाति। अनांकान्त एवाक्रमते। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यो राजन्यं जिनाति। सम्हिमेन्द्रियेणं वीर्येणेत्यांह॥५५॥

ड्नियमेव वीर्यमात्मन्यंत्ते। पृश्नां मृन्युरंसि तवेंव मे मृन्युर्भूयादिति वाराही उपानहावुपं मुश्रते। पृश्नां वा एष मृन्युः। यद्वंराहः। तेनैव पंश्नां मृन्युमात्मन्यंत्ते। अभि वा इय स्पुषवाणं कामयते। तस्येश्वरेन्द्रियं वीर्यमादातोः। वाराही उपानहावुपंमुश्रते। अस्या एवान्तर्यंत्ते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानांत्ये॥५६॥

नमों मात्रे पृंथिव्या इत्याहाहि ईसायै। इयंद्स्यायुंर्स्यायुंर्मे धेहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। ऊर्ग्स्यूर्जं मे धेहीत्यांह। ऊर्जमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। युङ्कंसि वर्चोऽसि वर्चो मियं धेहीत्यांह। वर्च एवाऽऽत्मन्धंत्ते। एकधा ब्रह्मण उपंहरति। एकधेव यर्जमान आयुरूर्जं वर्चो दधाति। रथविमोचनीयां जुहोति प्रतिष्ठित्ये॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्माँ चतुर्जुहोति। यदुभौ सहावृतिष्ठेताम्। समानं लोकिमियाताम्। सह संङ्ग्रहीत्रा रथवाहंने रथमादंधाति। सुवृगिदेवैनं लोकादन्तर्दधाति। हु सः श्रुंचिषित्यादंधाति। ब्रह्मणैवैनम्पावहरंति। ब्रह्मणा-ऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दसाऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दा वै सर्वाणि

छन्दा श्री। सर्वेभिरेवेनं छन्दोभिरादंधाति। वर्ष्म् वा एषा छन्दंसाम्। यदतिंच्छन्दाः। यदतिंच्छन्दसा दधांति। वर्ष्मैवैन श्रीमानानांं करोति॥५८॥

पद्यन्ते द्धाति वीर्येणेत्याहानांत्यै प्रतिष्ठित्यै ब्रह्मणाऽऽदंधाति सप्त चं॥————[९]

मित्रोंऽसि वर्रणोऽसीत्यांह। मैत्रं वा अहंः। वारुणी रात्रिः। अहोरात्राभ्यामेवैनंमुपावंहरति। मित्रोंऽसि वर्रणोऽसीत्यांह। मैत्रो वे दक्षिणः। वारुणः सव्यः। वैश्वदेव्यांमिक्षां। स्वमेवैनौं भाग्धेयंमुपावंहरति। समृहं विश्वैद्विरित्यांह॥५९॥

वैश्वदेव्यों वे प्रजाः। ता एवाद्याः कुरुते। क्ष्रत्रस्य नाभिरसि क्ष्रत्रस्य योनिर्सीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदेत्यांह। यथायजुरेवेतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिश्सायै। निषंसाद धृतव्रंतो वरुणः पुस्त्यांस्वा साम्राज्याय सुक्रतुरित्यांह। साम्राज्यमेवेनश् सुक्रतुं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वश् रांजन्ब्रह्माऽसिं सविताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। सवितारंमेवेनश् सृत्यसंव करोति॥६०॥

ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोंऽसि सृत्यौजा इत्यांह। इन्द्रंमेवैन १ सृत्यौजंसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्माऽसिं मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। मित्रमेवैन १ सुशेवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्मासि वरुंणोऽसि स्त्यधर्मेत्यांह। वर्रणमेवैन र् स्त्यधर्माणं करोति। स्विताऽसिं स्त्यसंव इत्यांह। गायत्रीमेवैतेनांभि व्याहंरति। इन्द्रोऽसि स्त्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति॥६१॥

मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। जगंतीमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यमेता देवताः। सत्यमेतानि छन्दारंसि। सत्यमेवावं रुन्धे। वर्रुणोऽसि सत्यधर्मेत्यांह। अनुष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यानृते वा अनुष्टुप्। सत्यानृते वर्रुणः। सत्यानृते पुवावं रुन्धे॥६२॥

नैन १ सत्यानृते उंदिते हि १ स्तः। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति स्फां प्रयंच्छति। वज्रो वे स्फाः। वज्रेंणैवास्मां अवरप्र १ रेन्धयति। एव १ हि तच्छ्रेयंः। यदंस्मा एते रध्येयुः। दिशोऽभ्यंय १ राजांऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छति। एते वे सर्वेऽयाः। अपंराजायिनमेवैनं करोति॥६३॥

ओदनमुद्भुंबते। प्रमेष्ठी वा एषः। यदोदनः। प्रमामेवेन्ड् श्रियं गमयति। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)-नित्यांह। आशिषंमेवेतामा शाँस्ते। शौनः शेपमाख्यांपयते। वरुणपाशादेवेनं मुञ्जति। प्रः शतं भंवति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। मारुतस्य चैकंवि॰शतिकपालस्य वैश्वदेव्ये चामिक्षांया अग्नयें स्विष्टकृतें सुमवंद्यति। देवतांभिरेवेनंमुभुयतः परिं गृह्णाति। अपान्नम्ने स्वाहोर्जो नम्ने स्वाहाऽग्नये गृहपंतये स्वाहेतिं तिस्र आहंतीर्जुहोति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वंव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति॥६४॥

देवैरित्यांह स्त्यसंवं करोति त्रिष्टुर्भमेवैतेनांभि व्याहरित सत्यानृते एवावं रुन्धे करोति श्तेन्द्रियः षट् चं॥————[१०]

पृतद्वाँह्मणानि धात्रे रिक्षनाँन्देवसुवामुर्थेतो देवीर्दिशः सोम्स्येन्द्रंस्य मित्रो दर्श॥१०॥ पृतद्वाँह्मणानि वैष्ण्वं त्रिंकपालमत्रुं वै पूषा वाशाः स्थेत्यांह् दिशो व्यास्थांपयृत्युदंङ्वरेत्य ब्रह्मा(३)न्त्व॰ रांज्ञञ्चतुंष्पष्टिः॥६४॥ पृतद्वाँह्मणानि प्रतिं तिष्ठति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥अष्टमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दश्धिन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। तथ्सर्मृद्धिरन् समंसर्पत्। तथ्स्र्म्एपारं सरम्त्वम्। अग्निनां देवेन प्रथमेऽह्न्ननु प्रायुंङ्कः। सरम्बत्या वाचा द्वितीर्यं। स्वित्रा प्रंस्वेनं तृतीर्यं। पूष्णा पृश्भिश्चतुर्थे। बृह्स्पतिना ब्रह्मणा पश्चमे। इन्द्रेण देवेनं षृष्ठे। वर्रुणेन् स्वयां देवत्या सप्तमे॥१॥

सोमेन राज्ञां ऽष्टमे। त्वष्टां रूपेणं नवमे। विष्णुंना यज्ञेनां ऽऽप्रोत्। यथ्स् रस्पां भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यज्ञंमान आप्नोति। पूर्वापूर्वा वेदिर्भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावं रुद्धे। पुरस्तां दुप्सदा र्स्साम्येन प्रचंरति। सोमो व रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। अन्तरा त्वाष्ट्रेणं। रेतं एव हितं त्वष्टां रूपाणि विकंरोति। उपरिष्टाद्वैष्ण्वेनं। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञ एवान्ततः प्रतिं तिष्ठति॥२॥

सुप्तमे देधाति पश्चं च॥——[१]

जामि वा एतत्कुर्वन्ति। यथ्सद्यो दीक्षयंन्ति सद्यः सोमं क्रीणन्ति। पुण्डरिस्रजां प्रयंच्छत्यजांमित्वाय। अङ्गिरसः सुवर्गं लोकं यन्तिः। अपसु दीक्षातपसी प्रावेशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दींक्षात्पसी अवं रुन्धे। दुशभिवंथ्सत्रैः सोमं क्रीणाति। दशांक्षरा विराट्॥३॥

अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। मुष्करा भविन्ति सेन्द्रत्वायं। दृश्पेयों भवित। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शृतं ब्राँह्मणाः पिंबन्ति। शृतायुः पुरुंषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सप्तदशङ् स्तोत्रं भविति। सप्तदशः प्रजापंतिः॥४॥

प्रजापंतेरास्यै। प्राकाशावध्वर्यवे ददाति। प्रकाशमेवैनं गमयति। स्रजंमुद्गात्रे। व्येवास्मै वासयति। रुकाश होत्रै। आदित्यमेवास्मा उन्नयति। अर्थं प्रस्तोतृप्रतिहृर्तृभ्याम्। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतेरास्यै॥५॥

द्वादंश पष्टौहीर्ब्रह्मणें। आयुरेवावं रुन्धे। वृशां में त्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। ऋष्मं ब्राह्मणाच्छु १ सिनें। राष्ट्रमेविन्द्रियाव्यंकः। वासंसी नेष्टापोतृभ्याम्। प्वित्रे प्वास्यैते। स्थूरि यवाचितमंच्छावाकायं। अन्तत एव वर्रणमवं यजते॥६॥

अनुङ्गाहं मुग्नीधं। विह्नुर्वा अनुङ्गान्। विह्नं रुग्नीत्। विह्नं नेव विह्नं यज्ञस्यावं रुन्धे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। भृगुस्तृतीयमभवत्। श्रायन्तीयं तृतीयम्। सरंस्वती तृतीयम्। भार्गवो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। सार्स्वतीर्पो गृह्णाति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुद्धै। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं श्रयति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वारयति॥७॥

विराद्रुजापंतिरश्वः प्रजापंतेराप्त्यै यजते ब्रह्मसामं भवति सप्त चं॥\_\_\_\_\_[२]

र्ड्श्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। दिशामवेष्टयो भवन्ति। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजित। पश्च दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति। हिवषोहिवष इष्ट्वा बांर्हस्पृत्यम्भिघांरयित। यज्ञमानदेवत्यों वै बृह्स्पितिः। यज्ञमानमेव तेजंसा समर्थयित॥८॥

आदित्यां मृल्हां गुर्भिणीमा लंभते। मारुतीं पृश्विं पष्टौहीम्। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरति। मारुत्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्वमनुंबध्नाति। उचैरादित्याया आश्रावयति। उपार्शु मारुत्यै। तस्माँद्राष्ट्रं विशमतिंवदति। गर्भिण्यांदित्या भवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अगर्भा मांक्ती। विश्वे मुरुतः। विश्वमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनौः पूषन्वाचः सृत्यः संन्निधायं। अनृतेनासुरान्भ्यंभवन्। तैऽश्विभ्यां पूष्णे पुरोडाशुं द्वादंशकपालुं निरंवपन्। ततो वै ते वाचः

## सत्यमवांरुन्धत॥१०॥

यदिश्वभ्यां पूष्णे पुरोडाशं द्वादेशकपालं निर्वपिति। अनृंतेनैव भ्रातृंव्यानिभूयं। वाचः सत्यमवं रुन्धे। सरंस्वते सत्यवाचे चरुम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। सिवृत्रे सत्यप्रंसवाय पुरोडाशं द्वादेशकपालं प्रसूत्यै। दूतान्प्रहिणोति। आविदं एता भवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति। अथो दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृधन्वश् शुंष्कदृतिदक्षिंणा समृंद्धौ॥११॥

अर्ध्यति भ्वत्यरुन्धत गुम्यन्ति द्वे चं॥————[३]

आग्नेयम्ष्टाकंपालं निर्वपति। तस्माच्छिशिरे कुरुपश्चालाः प्राश्चो यान्ति। सौम्यं चुरुम्। तस्माद्धस्नतं व्यवसायादयन्ति। सावित्रं द्वादेशकपालम्। तस्मात्पुरस्ताद्यवानाः सवित्रा विरुन्धते। बार्हुस्पत्यं चुरुम्। सवित्रैव विरुध्यं। ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेनं कुर्वते। वैश्वान्तं द्वादंशकपालम्। तस्मां ज्ञचन्यं नैदांघे प्रत्यश्चंः कुरुपश्चाला याँन्ति। सारुस्वतं चरुं निर्वपति। तस्मां त्प्रावृष्टि सर्वा वाचो वदन्ति। पौष्णेन् व्यवस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन् विधृंता आसते। क्षेत्रपत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादंधते॥१३॥

मासिमाँस्येतानिं हुवी १ विं निरुप्याणीत्यांहुः।

तेनैवर्त्नप्रयुंङ्क इति। अथो खल्वांहुः। कः संवथ्सरं जीविष्यतीति। षडेव पूर्वेद्युर्निरुप्यांणि। षडुंत्तरेद्युः। तेनैवर्त्नप्रयुंङ्के। दक्षिणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिणा। उत्तर् उत्तरेषाम्। संवथ्सरस्यैवान्तौ युनक्ति। सुवर्गस्य लोकस्य समष्ट्री॥१४॥

त्वाष्ट्रमुष्टाकंपालं दधते युन्त्तचेकं च॥\_\_\_\_\_\_[४]

इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। स यत्प्रंथमं निरष्ठींवत्। तत्क्वंलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदंरम्। यत्तृतीयम्। तत्कुर्कन्धुं। यन्नुस्तः। स सि्र्हः। यदक्ष्यौः॥१५॥

स शाँदूंलः। यत्कर्णयोः। स वृक्तः। य ऊर्ध्वः। स सोर्मः। याऽवांची। सा सुराँ। त्रयाः सक्तंवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुख्यै। त्रयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावं रुन्धे। त्रयो ग्रहाँः। वीर्यमेवावं रुन्धे। नाम्नां दश्मी। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणा इंन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेवेन्द्रियं वीर्यं यजमान आत्मन्धेत्ते। सीसेन क्रीबाच्छष्पांणि क्रीणाति। न वा एतदयो न हिरंण्यम्॥१७॥

यथ्सीसम्। न स्त्री न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुराँ। यथ्सौत्रामणी समृद्धौ। स्वाद्वीन्त्वा स्वादुनेत्यांह। सोमंमेवैनां करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व सरस्वत्यै पच्यस्वेन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पच्यंते। तिस्रः स १ सृष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रीः क्रीतः सोमो वसंति। पुनातुं ते पिर्स्रुत्मिति यजुंषा पुनाति व्यावृंत्त्यै। प्वित्रेण पुनाति। प्वित्रेण हि सोमं पुनन्ति। वारेण शश्वंता तनेत्यांह। वारेण हि सोमं पुनन्ति। वायुः पूतः प्वित्रेणेति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्यंषा। अतिप्वितस्यैतयां पुनीयात्। कुविद्ङ्गेत्यनिंरुक्तया प्राजापृत्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। आश्विनं धूम्रमालंभते। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं कंरोति। सारुस्वतं मेषम्। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवैनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृष्भ स्मैन्द्रत्वायं॥२०॥

अक्ष्योर्लोमांनि हिरंण्यं वसति गृह्णाति भिषज्यत्येकं च॥————[५]

यित्रषु यूपेष्वालभेत। बिहुर्धाऽस्मादिन्द्रियं वीर्यं दध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एक्यूप आलंभते। एक्षेवास्मिन्निन्द्रियं वीर्यं दधाति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। नेतेषां पशूनां पुरोडाशां भवन्ति। ग्रहंपुरोडाशां ह्येते। युवश् सुरामंमिश्वनेतिं सर्वदेवत्यं याज्यानुवाक्यं भवतः। सर्वां एव देवताः प्रीणाति॥२१॥

ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्। ब्राह्मणो ह्याहुंत्या उच्छेषंणस्य पाता। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। वल्मीक्वपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः। यद्वै सौत्रामण्ये व्यृद्धम्। तदंस्ये समृद्धम्। नानादेवत्याः प्रश्वंश्व पुरोडाशांश्व भवन्ति समृद्धे। ऐन्द्रः पंशूनामृत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशांनां प्रथमः॥२२॥

इन्द्रिये प्वास्मै स्मीची दधाति। पुरस्तांदनूयाजानाँ पुरोडाशैः प्रचरित। पुशवो वै पुरोडाशौः। पुश्नेवावं रुन्धे। ऐन्द्रमेकांदशकपालुं निर्वपिति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। सावित्रं द्वादंशकपालुं प्रसूत्ये। वारुणं दशकपालम्। अन्तृत एव वर्रुणमवं यजते। वर्डबा दक्षिणा॥२३॥

उत वा एषाऽश्वर्थ सूते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत सुराँ। यथ्सौँत्रामणी समृद्धौ। बार्ह्स्पत्यं पृशुं चंतुर्थमंतिपवितस्या लंभते। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैव यज्ञस्य व्यृद्धमपि वपति। पुरोडाशंवानेष पृशुर्भविति। न ह्यंतस्य ग्रहं गृह्णन्ति। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णुतेतिं शतातृण्णायारं समवंनयति॥२४॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दक्षिणेऽग्नौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। हिरंण्यमन्त्रा धारयति। पूतामेवैनां जुहोति। श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। यत्रैव शंतातृण्णां धारयंति॥२५॥

तिन्नदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति। य सोमोऽति पर्वते। पितृणां यौज्यानुवाक्योभिरुपं तिष्ठते। यदेवास्यं पितृनिन्द्रियं वीर्यं गच्छति। तदेवावं रुन्थे। तिस्भिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। अथो त्रीणि वै यज्ञस्यैन्द्रियाणि। अध्वर्युर्होतौ ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते। यान्येव यज्ञस्यैन्द्रियाणि। तैरेवास्में भेषजं करोति॥२६॥

प्रीणाति प्रथमो दक्षिणा समर्वनयति धारयंतीन्द्रियाणि चत्वारि च॥———[६]

अग्निष्टोममग्र आहंरति। यज्ञमुखं वा अंग्निष्टोमः। यज्ञमुखमेवारभ्यं स्वमा क्रंमते। अथैषोऽभिषेचनीयंश्चतु-स्त्रिष्शपंवमानो भवति। त्रयंस्त्रिष्शृद्धे देवताः। ता एवाऽऽप्नोति। प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्शः। तमेवाऽऽप्नोति। स्थार एष स्तोमानामयंथापूर्वम्। यद्विषंमाः स्तोमाः॥२७॥

पुतावान् वै यज्ञः। यावान्पविमानाः। अन्तः श्लेषेणं त्वा अन्यत्। यथ्समाः पर्वमानाः। तेनाऽसर्श्वारः। तेनं यथापूर्वम्। आत्मनैवाग्निष्टोमेनुर्मोतिं। आत्मना पुण्यो भवति। प्रजा वा उक्थानिं। पृशवं उक्थानिं। यदुक्थ्यो भवत्यनु सन्तंत्त्यै॥२८॥

स्तोमाः पृशवं उक्थान्येकं च॥-----[७]

उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भवित। वाग्वै वायुः। वाच एवैषों ऽभिषेकः। सर्वासामेव प्रजाना रं सूयते। सर्वा एनं प्रजा राजेतिं वदन्ति। एतम् त्यन्दश् क्षिप् इत्यांह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये सम्भार्या अक्रन्॥२९॥

यदाह् पर्वस्व वाचो अग्निय इति। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रथमा भवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्ति। वाचोद्यंन्ति। उद्वंतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। आनुष्टुभो राजन्यः॥३०॥

तस्मादुद्वंतीर्भवन्ति। सौर्यनुष्टुगुंत्तमा भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। यो वै स्वादेतिं। नैनर्ं स्व उपनमित। यः सामंभ्य एतिं। पापींयान्थ्सुषुवाणो भंवति। पृतानि खलु वै सामानि। यत्पृष्ठानिं। यत्पृष्ठानि भवन्ति॥३१॥

तैर्व स्वान्नैतिं। यानिं देवराजाना् सामानि। तैर्मुष्मिं ह्लोक ऋंध्रोति। यानिं मनुष्यराजाना् सामानि। तैर्स्मिँ ह्लोक ऋंध्रोति। उभयोर्व लोकयोर् ऋध्रोति। देवलोके चं मनुष्यलोके चं। एकविश्शों ऽभिषेचनीयंस्योत्तमो भवति। एकविश्शः केशवपनीयंस्य प्रथमः। सप्तद्शो दंशपेयः॥३२॥

विड्वा एंकवि १ शः। राष्ट्र १ संप्तद्शः। विशं एवैतन्मध्यतीं-ऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशां प्रियः। विशो हि मध्यतोऽभिषिच्यतें। यद्वा एनमदो दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। तथ्मुंवर्गं लोकम्भ्या रोहिति। यदिमं लोकं न प्रत्यवरोहेंत्। अतिज्ञनं वेयात्। उद्वां माद्येत्। यदेष प्रतीचीनः स्तोमो भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवंरोहित। अथो अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय॥३३॥

अर्क्नत्राजुन्यों भवंन्ति दशुपेयों माद्येत्रीणिं च॥—————[८]

ड्यं वै रंज्ता। असौ हरिणी। यद्रुक्मौ भवंतः। आभ्यामेवैनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। वर्रुणस्य वा अभिष्च्यमांनस्यापंः। इन्द्रियं वीर्यं निरंप्रन्। तथ्सुवर्ण्ष् हिरंण्यमभवत्। यद्रुक्ममंन्तर्दधांति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानिर्धाताय। शतमांनो भवति शतक्षरः। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। आयुर्वे हिरंण्यम्। आयुष्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। तेजो वे हिरंण्यम्। तेज्रस्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। तेज्रस्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। वर्चस्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। वर्चस्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति॥३४॥

श्तक्षंग्रेऽष्टौ चं॥—————[९]

अप्रीतिष्ठितो वा एष इत्यांहुः। यो रांज्यसूयेंन यर्जत् इतिं। यदा वा एष एतेन द्विरात्रेण यर्जते। अर्थ प्रतिष्ठा। अर्थ संवथ्सरमाप्रोति। यावंन्ति संवथ्सरस्यांहोरात्राणि। तावंतीरेतस्यं स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्टोमः पूर्वमहंर्भवति। अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥ नानैवाहों रात्रयोः प्रतिं तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहं भवित। व्यष्टकायामुत्तंरम्। नानैवार्धमासयोः प्रतिं तिष्ठति। अमावास्यायां पूर्वमहं भवित। उद्दृष्ट उत्तंरम्। नानैव मासंयोः प्रतिं तिष्ठति। अथो खलुं। ये एव संमानपृक्षे पुंण्याहे स्याताम्। तयोः कार्यं प्रतिष्ठित्यै॥३६॥

अपुश्व्यो हिरात्र इत्यांहुः। हे ह्येते छन्दंसी।
गायत्रं च त्रेष्टुंभं च। जगंतीम्नत्यंन्ति। न तेन जगंती
कृतत्यांहुः। यदंनान्तृतीयसवने कुर्वन्तीतिं। यदा वा
पृषाऽहीन्स्याहुर्भजंते। साह्रस्यं वा सवनम्। अथैव जगंती
कृता। अथं पश्व्यां। व्यंष्टिर्वा पृष हिरात्रः। य पृवं
विद्वान्द्विरात्रेण यजंते। व्यंवास्मां उच्छति। अथो तमं पृवापं
हते। अग्निष्टोममंन्तृत आ हंरति। अग्निः सर्वा देवताः।
देवतांस्वेव प्रतिं तिष्ठति॥३७॥

उत्तरं प्रतिष्ठित्यै पशुव्यः सप्त चं॥————[१०]

वर्रुणस्य जामि वा ईंश्वर आंग्नेयमिन्द्रंस्य यत्रिष्वंग्निष्टोममुपं त्वेयं वै रंजुताऽप्रंतिष्ठितो दशं॥१०॥

वर्रुणस्य यदिश्वभ्यां यित्रृषु तस्मादुद्वंतीः सप्तित्रिर्श्शत्॥३७॥ वर्रुणस्य प्रतिं तिष्ठति॥

# हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः

अष्टमः प्रश्नः 143

प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ अष्टकम् २॥

#### ॥प्रथमः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृश्तिर्धर्मधुगांसीत्। सर्जीषणांजीवत्। तेंंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंंऽस्या ओषधीर्न जनयांम् इतिं। ते दिवो वृष्टिंमसृजन्त। यावंन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासां ज्रम्था रुप्यन्त्येत्। तें ऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमंक्रितिं। वयं भाग्धेयंमिच्छमाना इति पितरों ऽब्रुवन्। किं वो भाग्धेयमितिं। अग्निहोत्र एव नोऽप्यस्त्वित्यंब्रुवन्। तेभ्यं एतद्भाग्धेयं प्रायंच्छन्। यद्भुत्वा निमार्ष्टिं। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृथ्समुपावांसृजन्। इदं नों हृव्यं प्रदांप्येतिं। सोंऽब्रवीद्वरं वृणे। दशं मा रात्रींर्जातं न दोहन्। आसङ्गवं मात्रा सह चंराणीतिं। तस्मांद्वथ्सं जातं दश रात्रीर्न दुंहन्ति। आसङ्गवं मात्रा सह चंरति। वारेवृत्र् ह्यंस्य। तस्मांद्वथ्स संस्पृष्टध्य रुद्रो घातुंकः। अति हि सन्धान्धयंति॥३॥

अलिम्पन्वेद घातुंक एकं च॥—

प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग उपास्त। सोंऽस्य प्रजाभिरपांक्रामत्। तमंव्रुकंध्समानो-ऽन्वैत्। तमंव्रुधं नाशंक्रोत्। स तपोंऽतप्यत। सोंऽग्निरुपांरम्तातांपि वै स्य प्रजापंतिरितिं। स र्राटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्घृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिणतः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्चेष्ठलक्ष्मी प्रांजापत्येत्यांहुः। यद्र्राटांदुदमृष्ट। तस्मांद्र्राटे केशा न संन्ति। तद्ग्री प्रागृह्णात्। तद्यंचिकिथ्सत्। जुहवानी(३) मा हौषा(३)मितिं। तिद्वंचिकिथ्सायै जन्मं। य एवं विद्वान् विचिकिथ्संति॥५॥

वसीय एव चेतयते। तं वाग्भ्यंवदञ्जुहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वम्सीतिं। स्वैव ते वागित्यंब्रवीत्। सोंऽजुहोथ्स्वाहेतिं। तथ्स्वांहाकारस्य जन्मं। य एवङ्स्वांहाकारस्य जन्म वेदं। क्रोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥

भोगांयैवास्यं हुतं भविति। तस्या आहुंत्यै पुरुषमसृजत। द्वितीयंमजुहोत्। सोऽश्वंमसृजत। तृतीयंमजुहोत्। स गामंसृजत। चृतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंमसृजत। पृश्चममंजुहोत्। सोऽजामंसृजत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहुंतीभिवें मांऽऽप्नोतीतिं। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायुस्वेतिं। सौंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। तुभ्यंमेवेद हूंयाता इत्यंब्रवीत्। स एतद्भांगुधेयंमुभ्यंजायत। यदंग्निहोत्रम्॥८॥

तस्मांदग्निहोत्रमुंच्यते। तद्धूयमांनमादित्यों ऽब्रवीत्। मा हौषीः। उभयोर्वे नांवेतदितिं। सौं ऽग्निरंब्रवीत्। कथं नौं होष्यन्तीतिं। सायमेव तुभ्यंं जुहवन्ं। प्रातर्मह्यमित्यंब्रवीत्। तस्मांदग्नयं साय हूंयते। सूर्याय प्रातः॥९॥

आ्रोयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। यदनुंदिते सूर्ये प्रांतर्जुहुयात्। उभयमेवाग्नेय स्यात्। उदिते सूर्ये प्रांतर्जुहोति। तथाऽग्नये साय हूंयते। सूर्याय प्रांतः। रात्रिं वा अनुं प्रजाः प्र जांयन्ते। अह्य प्रतिं तिष्ठन्ति। यथ्सायं जुहोतिं॥१०॥

प्रैव तेनं जायते। उदिते सूर्ये प्रातर्ज्होति। प्रत्येव तेनं तिष्ठति। प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति। स एतदिग्निहोत्रं मिथुनमंपश्यत्। तदुदिते सूर्येऽजुहोत्। यजुंषाऽन्यत्। तूष्णीम्न्यत्। ततो वै स प्राजायत। यस्यैवं विदुष उदिते सूर्येऽग्निहोत्रं जुह्वंति॥११॥

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेतिं। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वै द्वौ पुण्यौं गृहे वसंतः। यस्तयोंर्न्यश् राधयंत्यन्यं न। उभौ वाव स तावृच्छ्तीतिं। अग्निं वावा-ऽऽदित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांद्ग्निर्द्रान्नक्तंं दहशे। उभे

## हि तेजंसी सम्पद्येते॥१२॥

उद्यन्तं वावाऽऽदित्यम्ग्निरन् समारोहित। तस्माँ द्रूम एवाग्नेर्दिवां दद्दशे। यद्ग्नयं सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृश्चेत। यथ्सूर्याय प्रातर्जुंहुयात्। आऽग्नयं वृश्चेत। देवतांभ्यः समदं दथ्यात्। अग्निज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्येव सायश् होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्योतिरग्निः स्वाहेति प्रातः। तथोभाभ्याः सायश् हूंयते॥१३॥

उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समदं दधाति। अग्निज्यांति-रित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्म् प्र जंनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतो दधाति। ज्योतिंरग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजांता अस्यां प्रतिष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमुत्तंरामाहंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। यद्दिते सूर्ये प्रांतर्जुहुयात्। यथाऽतिथये प्रद्रंताय शून्यायांवस्थायांहार्य हर्रन्ति। ताहगेव तत्। क्वाऽऽह् तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यथ्म न वेदं। यस्मै तद्धर्न्तीति। तस्माद्यदौष्मं जुहोतिं। तदेव संम्प्रति। अथो यथा प्रार्थमौषसं परिवेवेष्टि। ताहगेव तत्॥१५॥

अमृष्ट् विचिकिथ्संति जुह्वंत्युजामंसृजताग्निहोत्र सूर्यांय प्रातर्जुहोति जुह्वंति सम्पद्यंते हूयते

रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। पर्ली स्थाली। यन्मध्ये-ऽग्नेरिधृश्रयेत्। रुद्राय पत्नीमपि दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचोऽङ्गारान्निरूह्याधि श्रयति। पत्निये गोपीथाये। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥

घुर्मो वा एषोऽशाँन्तः। अहंरहुः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिश्चेत्पृशुकांमस्य। शान्तिमिव हि पंश्वय्यम्। न प्रति-षिश्चेद्वह्मवर्च्सकांमस्य। समिद्धमिव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रतिषिश्चति॥१७॥

तत्पंश्व्यम्। यज्जुहोतिं। तद्वंह्मवर्चिस। उभयंमेवाकः। प्रच्युंतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अगंतं देवलोकम्। यच्छृतः ह्विरनंभिघारितम्। अभि द्योतयित। अभ्येवैनंद्घारयित। अथो देवत्रैवैनंद्गमयित॥१८॥

पर्यमि करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्यमि करोति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथौं मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्वासयैत्। यजमान शुचाऽपंयेत्। यद्देक्षिणा। पितृदेवत्य स्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥

पत्नी १ शुचाऽपंयेत्। उदीचीन्मुद्वांसयित। एषा वै देवमनुष्याणा १ शान्ता दिक्। तामेवैन्दनूद्वांसयित शान्त्यैं। वर्त्मं करोति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। निष्टंपित। उपैव तथ्स्तृंणाित। चतुरुन्नंयित। चतुंष्पादः पृशवंः॥२०॥

पृश्नेवावं रुन्धे। सर्वांन्पूर्णानुन्नंयित। सर्वे हि पुण्यां राद्धाः। अनूच उन्नंयित। प्रजायां अनूचीन्त्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजा-ऽर्धुंका भवति। सम्मृंशित् व्यावृंत्त्यै। नाहोंष्यनुपं सादयेत्। यदहोंष्यनुपसादयेंत्। यथाऽन्यस्मां उपनिधायं॥२१॥

अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताहगेव तत्। आऽस्मैं वृश्चेत। यदेव गार्हंपत्येऽधि श्रयंति। तेन गार्हंपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येष्यन्तीतिं। स पृताश् समिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयो-ऽधियन्त॥२२॥

यदेंन १ स्मयंच्छत्। तथ्स्मिधंः सिम्त्वम्। स्मिध्मा दंधाति। समेवेनं यच्छति। आहुंतीनां धृत्यैं। अथों अग्निहोत्रमेवेध्मवंत्करोति। आहुंतीनां प्रतिष्ठित्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका १ स्मिधंमाधाय द्वे आहुंती जुहोतिं। अथ कस्या १ समिधं द्वितीयामाहुंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यद्वे स्मिधांवा द्ध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका र स्मिधंमाधायं। यजुंषाऽन्यामाहुंतिं जुहोति। उभे एव स्मिद्वंती आहुंती जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। आदींप्तायां जुहोति। समिद्धमिव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा पंरि वेवेष्टि। ताहगेव तत्। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। तस्मांद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौं द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयति॥२४॥ भुवृति प्रतिषिञ्चति गमयति प्रत्यक्पृशवं उपनिधायाँप्रियन्तेति तच्चत्वारि च॥———[3]

उत्तरावंतीं वै देवा आहंतिमजुंहवुः। अवांचीमसुंराः। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्थ्स्यादितिं। कनीयस्तस्य पूर्वर्ष हुत्वा। उत्तरं भूयो जुहुयात्। एषा वा उत्तरावृत्याहुंतिः। तान्देवा अजुहवुः। तत्तस्तेऽभवन्॥२५॥

यस्यैवं जुह्वंति। भवंत्येव। यं कामयेत् पापीयान्थस्यादितिं। भूयस्तस्य पूर्व हुत्वा। उत्तरं कनीयो जुहुयात्। एषा वा अवाच्याहुंतिः। तामसुंरा अजुहवुः। तत्तस्ते परांऽभवन्। यस्यैवं जुह्वंति। परै्व भंवति॥२६॥

हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृत्त्यै। गार्हंपत्यं प्रतींक्षते। अनंनुध्यायिनमेवेनं करोति। अग्निहोत्रस्य वै स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुमृच्छेत्। एष वा अग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहुंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥२७॥

यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहुंतिं जुहोति। यज्ञस्थाणुमेव परिं वृणक्ति। अथो भ्रातृंव्यमेवास्वाऽतिं क्रामित। अवाचीन सायमुपंमार्षि। रेतं एव तद्दंधाति। ऊर्ध्वं प्रातः। प्र जनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चतुरुन्नंयति॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथ कं द्वे आहुंती भवत इतिं। अग्नौ वैश्वान्र

इति ब्रूयात्। एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्ग्रौह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमौष्टिं। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। किं देवत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेवमितिं ब्र्यात्। यद्यज्ञंषा जुहोतिं। तदैन्द्राग्नम्। यत्तूष्णीम्। तत्प्रांजापत्यम्॥३०॥

यन्निमार्ष्टि। तदोषंधीनाम्। यद्वितीयम्। तत्पंतृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गर्भाणाम्। तस्माद्गर्भा अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्यांणाम्। उदंङ्घर्यावृत्याचांमति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णनिक्ति शुद्धौं। निष्टंपति स्वगाकृत्यै। उद्दिशति। सप्तर्षीनेव प्रींणाति। दक्षिणा पूर्यावर्तते। स्वमेव वीर्यमनुं पूर्यावर्तते। तस्माद्दक्षिणोऽर्धं आत्मनों वीर्यावत्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृत्मनुं पूर्यावर्तते। हुत्वोप समिन्धे॥३२॥

ब्रह्मवर्चसस्य सिमंद्धै। न ब्र्हिरनु प्र हंरेत्। असईस्थितो वा एष यज्ञः। यदिग्निहोत्रम्। यदेनु प्रहरेत्। यज्ञं विच्छिन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहृत्यम्। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अपो नि नंयति। अवभृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥

अभवन्भवृति जुहुयान्नंयति मार्ष्टि द्विः प्राश्ञांति प्राजापृत्यमाचांमतीन्धेऽकः॥————[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। अग्निहोत्रप्रांयणा यज्ञाः। किं प्रांयणमग्निहोत्रमितिं। वृथ्सो वा अग्निहोत्रस्य प्रायंणम्। अग्निहोत्रं यज्ञानांम्। तस्यं पृथिवी सदंः। अन्तरिक्षमाग्नीं द्धम्। द्यौर्हंविर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षंणयः। ओषंधयो ब्रहः॥३४॥

वन्स्पतंय इध्मः। दिशः परिधयः। आदित्यो यूपः। यजमानः पृशः। समुद्रोऽवभृथः। संवथ्सरः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः सर्वमेव बहिष्यं दत्तं भवति। यथ्मायं जुहोति। रात्रिमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥

अहंरेव तेनं दक्षिण्यं कुरुते। यत्ततो ददांति। सा दक्षिणा। यावंन्तो वै देवा अहंतमादन्। ते परांऽभवन्। त एतदंग्निहोत्र र सर्वस्येव समवदायां जुहवुः। तस्मादाहुः। अग्निहोत्रं वै देवा गृहाणां निष्कृंतिमपश्यन्नितिं। यथ्सायं जुहोतिं। रात्रिया एव तद्धुताद्यांय॥३६॥

यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्प्रातः। अह्नं एव तद्भुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्ततोऽश्ञातिं। हुतमेव तत्। द्वयोः पर्यसा जुहुयात्पृशुकांमस्य। एतद्वा अग्निहोत्रं मिथुनम्। य एवं वेदं। प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जायते॥३७॥

इमामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंरुमा

नंयति। योनांवेव तद्रेतः सिश्चति प्रजनंने। आज्येन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेजस्येव भंवति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वे पंशूनाः रूपम्। रूपेणैवास्मै पश्नवं रुन्धे॥३८॥

पृशुमानेव भंवति। द्वेनिद्यकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधे। इन्द्रियाव्यंव भंवति। यवाग्वां ग्रामंकामस्यौष्धा वै मंनुष्याः। भाग्धेयेनैवास्में सजातानवं रुन्धे। ग्राम्यंव भंवति। अयंज्ञो वा एषः। योऽसामा॥३९॥

चतुरुन्नंयति। चतुंरक्षरः रथन्तरम्। रथन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरति। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्वांक्षरं बृहत्। बृह्त एष वर्णः। अग्निहोत्रमेव तथ्सामन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योंप्सदो वेदं। उपैंनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रीणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तरिक्षमेव प्रीणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रीणाति। एता वा अंग्निहोत्रस्योपसदं:॥४१॥

य एवं वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। यो वा अंग्निहोत्रस्याश्नांवितं प्रत्याश्नांवित् होतांरं ब्रह्माणं वषद्भारं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। प्राणो वा अंग्निहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होताँ। चक्षुंर्ब्रह्मा। निमेषो वंषद्वारः॥४२॥

य एवं वेदं। तस्य त्वंव हुतम्। सायं यावांनश्च वै देवाः प्रांत्यांवांणश्चाग्निहोत्रिणों गृहमागंच्छन्ति। तान् यन्न त्पंयेंत्। प्रजयांऽस्य पृशुभिविं तिष्ठेरन्। यत्त्पंयेंत्। तृप्ता एंनं प्रजयां पृशुभिंस्तपंयेयुः। स्जूर्देवैः सायं यावंभिरितिं साय सम्मृंशति। स्जूर्देवैः प्रातर्यावंभिरितिं प्रातः। ये चैव देवाः सायं यावांनो ये चं प्रातर्यावांणः॥४३॥

तानेवोभयाईस्तर्पयति। त एंनं तृप्ताः प्रजयां पृशुभिस्तर्प-यन्ति। अरुणो हं स्माहौपंवेशिः। अग्निहोत्र एवाहर सायं प्रांत्वं भ्रातृंव्येभ्यः प्र हंरामि। तस्मान्मत्पापीयारसो भ्रातृंव्या इति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। समिथ्संप्तमी। सप्तपंदा शक्वंरी। शाक्वरो वर्ज्ञः। अग्निहोत्र एव तथ्सायं प्रांत्वं यं यंनानो भ्रातृंव्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मना। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति॥४४॥

बुर्हिः प्रातर्हुताद्यांय जायते रुन्धेऽसामा कंरोत्येता वा अंग्निहोत्रस्योंपुसदों वषद्वारश्चं प्रात्यावांणो वञ्चस्नीणिं च॥————[५]

प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मन्वन्में जायेतेतिं। सोंऽजुहोत्। तस्यांऽऽत्मन्वदंजायत। अग्निर्वायुरांदित्यः। तेंऽब्रुवन्। प्रजापंतिरहौषीदात्मन्वन्में जायेतेतिं। तस्यं वयमंजनिष्महि। जायंतान्न आत्मन्वदिति तेंऽजुहवुः। प्राणानांमग्निः। तुनुवैं वायुः॥४५॥

चक्षुंष आदित्यः। तेषा हुतादंजायत् गौरेव। तस्यै पर्यसि व्यायंच्छन्त। ममं हुतादंजिन् ममेतिं। ते प्रजापंतिं प्रश्ञमांयन्। स आंदित्यौंऽग्निमंब्रवीत्। यृत्रो नौ जयात्। तन्नौ सहास्दितिं। कस्यै कोऽहौंषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्यै क इतिं। प्राणानांमहिमत्यग्निः॥४६॥

त्नुवां अहमितिं वायः। चक्षुंषोऽहमित्यांदित्यः। य एव प्राणानामहौषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेर्हुतादंजनीतिं। तदंग्निहोत्रस्यांग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अग्निहोत्रम्। य एवं वेद् गौरंग्निहोत्रमितिं। प्राणापानाभ्यांमेवाग्निः समर्धयति। अव्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य एवं वेदं। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजत्मिति। यदेव गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्यंद्रवान्। तेन त्वां प्रीणानित्यंब्रूताम्। तस्माद्यद्गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयं-म्भ्यंद्रवंति। वायुमेव तेनं प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निमेव देवतानां प्रथममंसृजत। सौंऽन्यदां-लम्भ्यंमवित्वा॥४८॥

प्रजापंतिम्भि पूर्यावंतित। स मृत्योरंबिभेत्। सोऽमुमांदित्यमात्मनो निरंमिमीत। त॰ हुत्वा परांङ्घर्यावंतित। ततो वै स मृत्युमपांजयत्। अपं मृत्युं जंयति। य एवं वेदं। तस्माद्यस्यैवं विदुषंः। उतैकाहमृत द्यहं न जुह्वंति।

# हुतमेवास्यं भवति। असौ ह्यांदित्यों ऽग्निहोत्रम्॥४९॥ वनुवै वायुर्ग्निर्भवत्यवित्वा भवत्यकं च॥

रौद्रं गिवं। वायव्यंमुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। सौम्यं दुग्धम्। वारुणमिधं श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः। पौष्णमुदंन्तम्। सार्स्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्र॰ शरंः। धातुरुद्वांसितम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। स्वितुः प्र क्रौन्तम्। द्यावापृथिव्यः हियमाणम्। ऐन्द्राग्नमुपंसन्नम्। अग्नेः पूर्वा-ऽऽहुंतिः। प्रजापंतेरुत्तंरा। ऐन्द्र॰ हुतम्॥५०॥

दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वर्तयित। देवलोकमेव तेनं जयित। उदींचीमावृत्यं दोग्धि। मनुष्यलोकमेव तेनं जयित। पूर्वो दुह्याङ्येष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्य। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दुह्यात्किनिष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्य। यो वा बुभूषेत्॥५१॥

न सं मृंशति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा पृतदुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। मैत्रं दुग्धम्। अर्यम्ण उद्वास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुंन्नीयमानम्। बृह्स्पतेरुन्नीतम्। स्वितुः प्रक्रान्तम्। द्यावापृथिव्यः हियमाणम्॥५२॥

ऐन्द्राग्नमुपं सादितम्। सर्वांभ्यो वा एष देवतांभ्यो जुहोति। योंऽग्निहोत्रं जुहोतिं। यथा खलु वै धेनुं तीर्थे तुर्पयंति। एवमंग्निहोत्री यजमानं तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। प्र सुंवर्गं लोकं जांनाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्। प्र प्रजयां पृशुभिंमिंथुनैर्जायते। यस्यैवं विदुषौंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥

बुभूषेद्ध्रियमाणआयते द्वे चं॥———[८]

त्रयो वै प्रैयमेधा आंसन्। तेषां त्रिरेकों ऽग्निहोत्रमंजुहोत्। द्विरेकः। स्कृदेकः। तेषां यस्त्रिरजुहोत्। स ऋचाऽजुहोत्। यो द्विः। स यजुषा। यः स्कृत्। स तूष्णीम्॥५४॥

यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। तावुभावाँर्भुताम्। तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वा होत्व्याँ। तूष्णीमृत्तंरा। उभे एवधीं अवं रुन्थे। अग्निज्यींतिज्यींतिरग्निः स्वाहेतिं सायं जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्यींतिः सूर्यः स्वाहेतिं प्रातः। रेतं एव हितं प्र जनयित। रेतो वा एतस्यं हितं न प्र जांयते॥५५॥

यस्यौग्निहोत्रमहुंत्र सूर्योऽभ्युंदेति। यद्यन्ते स्यात्। उन्नीय् प्राङ्क्दाद्रंवेत्। स उपसाद्यातिर्मितोरासीत। स यदा ताम्यौत्। अथ भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापितिर्वे भूतः। तमेवोपांसरत्। स एवेनं तत् उन्नयति। नार्तिमार्च्छिति यजमानः॥५६॥

तूष्णीं जांयते यजमानः॥———[९]

यद्ग्रिमुद्धरंति। वसंवस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। वसुंष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। निहिंतो धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। रुद्रेष्वेवास्यांग्निहोत्र॰ हुतं भवति। प्रथममिध्ममर्चिरा लेभते। आदित्यास्तर्ह्यग्निः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। आदित्येष्वेवास्यांग्निहोत्तरं हुतं भंवति। सर्वं एव संवृंश इध्म आदींग्तो भवति। विश्वं देवास्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। विश्वंष्वेवास्यं देवेष्वंग्निहोत्तरं हुतं भंवति। नित्रामृर्चिरुपावैति लोहिनीकेव भवति। इन्द्रस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। इन्द्रं एवास्यांग्निहोत्तरं हुतं भंवति॥५८॥

अङ्गारा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गारेभ्योऽर्चिरुदेति। प्रजा-पित्स्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। प्रजापंतावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। शरोऽङ्गारा अध्यूहन्ते। ब्रह्म तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। ब्रह्मंन्नेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। वसुंषु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वंषु देवेषुं। इन्द्रें प्रजापंतौ ब्रह्मन्ं। अपंरिवर्गमेवास्यैतासुं देवतांसु हुतं भवति। यस्यैवं विदुषांऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५९॥

आदित्यास्तर्ह्याग्निरिन्द्रं एवास्याँग्निहोत्रश् हुतं भंवित देवेषुं चृत्वारिं च (यद्ग्निन्निहिंतः प्रथमश् सर्वं एव निंतुरामङ्गाराः शरोऽङ्गारा ब्रह्म वसुंष्वृष्टो॥)॥————[१०]

ऋतं त्वां सत्येन परिषिश्चामीतिं सायं परिषिश्चति। सत्यं

त्वर्तेन परिषिश्चामीति प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावादित्यः सत्यम्। अग्निमेव तदांदित्येनं सायं परिषिश्चति। अग्निनां-ऽऽदित्यं प्रातः सः। यावदहोरात्रे भवतः। तावदस्य लोकस्यं। नार्तिनं रिष्टिः। नान्तो न पर्यन्तौऽस्ति। यस्यैवं विदुषौऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उंचैनदेवं वेदं॥६०॥

अस्ति द्वे चं॥———[११]

अङ्गिरसः प्रजापंतिर्ग्निर रुद्र उत्त्रावंतीं ब्रह्मवादिनौंऽग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञाः प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मन्वद्रौद्रङ्गविं दक्षिणतस्त्रयो वे यद्ग्निमृतं त्वां स्त्येनैकांदश॥११॥ अङ्गिरसः प्रैव तेनं पृश्न्वेव यन्निमार्ष्ट् यो वा अग्निहोत्रस्योप्सदो दक्षिणतः षृष्टिः॥६०॥ अङ्गिरसो य उंचैनदेवं वेदं॥

# हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंजेयेति। स एतं दशहोतारम-पश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बेंऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टा अपाँकामन्। ता ग्रहेणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रहुत्वम्। यः कामयेत् प्रजायेयेति। स दशहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बे जुंहुयात्। प्रजापंतिर्वे दशहोता॥१॥

प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। मनंसा जुहोति। मनं इव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यैं। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यैं। न्यूंनया जुहोति। न्यूंनािद्ध प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। प्रजाना ५ सृष्ट्यैं॥२॥

दुर्भस्तम्बे जुंहोति। एतस्माद्वे योनैंः प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यस्मादेव योनैंः प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। तस्मादेव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो दंक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजायते। ग्रहों भवति। प्रजानां सृष्टानां धृत्यैं। यं ब्राह्मणं विद्यां विद्वाः सं यशो नर्च्छेत्॥३॥

सोऽरंण्यं प्रेत्यं। दुर्भस्तम्बमुद्भर्थ्यं। ब्राह्मणं देक्षिणतो निषाद्यं। चतुर्होतृन्व्याचेक्षीत। एतद्वै देवानां पर्मं गुह्यं ब्रह्मं। यचतुर्होतारः। तदेव प्रकाशं गमयति। तदेनं प्रकाशं गतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। दुर्भस्तम्बमुद्गथ्य व्याचेष्टे॥४॥

अग्निवान् वै देर्भस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचेष्टे। ब्राह्मणो देक्षिणत उपाँस्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवैनं यशे ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्यांहुः। यस्यान्ते व्याचष्ट् इतिं। वर्स्तस्मै देयः। यदेवैनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्थे॥५॥

अग्निमादधांनो दर्शहोत्राऽरणिमवं दध्यात्। प्रजातमेवैनमा धंत्ते। तेनैवोद्गुत्यांग्निहोत्रं जुंहुयात्। प्रजातमेवैनंज्ञुहोति। ह्विर्निर्वपस्यं दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजातमेवैनं निर्वपति। सामिधेनीरंनुवक्ष्यं दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। अथो युज्ञो वै दर्शहोता। युज्ञमेव तंनुते॥६॥

अभिचरं दर्शहोतारं जुहुयात्। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिदंशमी। सप्राणमेवैनंमभि चंरति। एतावृद्धे पुरुषस्य स्वम्। यावंत्प्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तद्भि चंरति। स्वकृत् इरिणे जुहोति प्रद्रे वां। एतद्धा अस्यै निर्ऋंतिगृहीतम्। निर्ऋंतिगृहीत एवैनं निर्ऋंत्या ग्राहयति। यद्धाचः कूरम्। तेन वषंद्वरोति। वाच एवैनं कूरेण प्र वृंश्चति। ताजगार्तिमार्च्छंति॥७॥

दर्शहोता सृष्ट्यां ऋच्छेद्धाचेष्टे रुन्ध एव तंनुत् निर्ऋतिगृहीत् पर्श्व च॥———[१]

प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेतिं। स एतं चतुंर्होतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स दंर्शपूर्णमासावंसृजत। तावंस्माथ्सृष्टावपाँ-क्रामताम्। तौ ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्हंस्य ग्रह्त्वम्। दर्शपूर्णमासावालभंमानः। चतुंर्होतारं मनंसाऽनुद्रुत्यां-हवनीयें जुहुयात्। दर्शपूर्णमासावेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते॥८॥

ग्रहों भवति। दुर्शपूर्णमासयोः सृष्टयोर्धृत्यै। सोंऽकामयत चातुर्मास्यानिं सृजेयेतिं। स एतं पश्चंहोतारमपश्यत्। तं मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वे स चांतुर्मास्यान्यंसृजत। तान्यंस्माथ्सृष्टान्यपाँकामन्। तानि ग्रहेणागृह्णात्। तद्वहंस्य ग्रहुत्वम्। चातुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥

पश्चंहोतार् मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयं जुहुयात्। चातुर्मास्यान्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मास्यानार् सृष्टानां धृत्यैं। सोंऽकामयत पशुबन्धर सृंजेयेतिं। स पृतर षड्ढोतारमपश्यत्। तं मनंसा-ऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयंऽजुहोत्। ततो वै स पंशुबन्धमंसृजत। सोंस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्॥१०॥

तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। पृशुब्न्धेनं युक्ष्यमाणः। षङ्कोतार् मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयें जुहुयात्। पृशुब्न्धमेव सृष्ट्वा-ऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। पृशुब्न्धस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। सोऽकामयत सौम्यमध्वर सृजेयेतिं। स एत स्मारहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स सौम्यमध्वरमंसृजत॥११॥

सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपाँकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। दीक्षिष्यमाणः। सप्तहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यां-ऽऽहवनीये जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वर सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्याध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवेभ्यो वै यज्ञो न प्राभंवत्। तमेतावच्छः समंभरन्॥१२॥

यथ्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यों युज्ञः प्राभंवत्। यथ्संम्भारा भवन्ति। युज्ञस्य प्रभूत्ये। आतिथ्यमासाद्य व्याचंष्टे। युज्ञमुखं वा आतिथ्यम्। मुख्त एव युज्ञः सम्भृत्य प्र तंनुते। अयज्ञो वा एषः। योऽप्रक्षीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्नीर्व्याचंष्टे। युज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। उपसथ्सु व्याचंष्टे। एतद्वै पत्नीनामायतंनम्। स्व एवैनां आयत्नेऽवंकल्पयति॥१३॥

त्नुत् आलभंमानोऽगृह्णादसृजताभरञ्जायेर्न्थ्यद्वं॥\_\_\_\_\_\_[२]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेवतिं। स तपोऽतप्यतः। स त्रिवृत् कृ स्तोमंमसृजतः। तं पश्चद्शः स्तोमो मध्यतः उदंतृणत्। तौ पूर्वपक्षश्चापरपक्षश्चाभवताम्। पूर्वपक्षं देवा अन्वसृंज्यन्तः। अपरपक्षमन्वसृंराः। ततो देवा अभवन्। पराऽसृंराः। यं कामयेत वसीयान्थस्यादितिं॥१४॥

तं पूर्वपक्षे यांजयेत्। वसीयानेव भवति। यं कामयेंत्

पापीयान्थस्यादिति। तमंपरपृक्षे यांजयेत्। पापीयानेव भंवति। तस्मौत्पूर्वपृक्षोऽपरपृक्षात्करुण्यंतरः। प्रजापंतिवै दशंहोता। चतुंर्होता पश्चंहोता। षङ्कोता सप्तहोता। ऋतवेः संवथ्सरः॥१५॥

प्रजाः पृशवं इमे लोकाः। य एवं प्रजापंतिं बहोर्भूया रेसं वेदं। बहोरेव भूयाँ-भवति। प्रजापंतिर्देवासुरानं सृजत। स इन्द्रमपि नासृजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येति। सौं ऽब्रवीत्। यथाऽहं युष्मा इस्तप्साऽसृक्षि। एविमन्द्रं जनयध्वमिति॥१६॥

ते तपोंऽतप्यन्त। त आत्मिन्निन्द्रंमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायस्वेतिं। सोंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। ऋतून्थ्यंवथ्यरम्। प्रजाः पृशून्। इमाँ ह्योकानित्यं ब्रुवन्। तं वै माऽऽहुंत्या प्र जनयुतेत्यं ब्रवीत्॥१७॥

तं चतुंर्होत्रा प्राजंनयन्। यः कामर्यंत वीरो म् आजांयेतेति। स चतुंर्होतारं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे चतुंर्होता। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय् स्वाहेति ग्रहेण जुहोति। आऽस्यं वीरो जांयते। वीर॰ हि देवा एतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिंरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। व्यं पूर्वे सुवर्गं लोकिंमियाम व्यं पूर्व इतिं॥१८॥ त आंदित्या एतं पश्चेहोतारमपश्यन्। तं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नीं प्रेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुवृगं लोकमायन्। यः सुवृगंकामः स्यात्। स पश्चेहोतारं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नीं प्रे जुहुयात्। संवृथ्यरो वै पश्चेहोता। संवृथ्यरः सुवृगों लोकः। संवृथ्यर एवर्तुषुं प्रतिष्ठायं। सुवृगं लोकमेति। तें ऽब्रुवृन्निङ्गेरस आदित्यान्॥१९॥

क्वं स्था क्वं वः सुद्धो हुव्यं वंक्ष्याम् इतिं। छुन्दः स्वित्यंब्रुवन्। गायित्रियां त्रिष्टुभि जगंत्यामितिं। तस्माच्छन्दः सु सुद्ध आदित्येभ्यः। आङ्गीर्सीः प्रजा हृव्यं वंहन्ति। वहंन्त्यस्मै प्रजा बिलिम्। ऐनमप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एंकविश्शः। एतस्मिन्वा एष श्रितः। एतस्मिन्प्रतिष्ठितः। य एवमेतः श्रितं प्रतिष्ठितं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥२०॥

स्यादितिं संवथ्सरो जनयध्वमितीत्यंब्रवीत्पूर्व इत्यांदित्यानृतवः षद्वं॥————[३]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेयेतिं। स एतं दर्शहोतारमपश्यत्। तेनं दश्धाऽऽत्मानं विधायं। दर्शहोत्राऽतप्यत। तस्य चित्तिः सुगासीत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव वागासीत्। एतावान्ं यज्ञऋतुः। स चतुंर्होतारमसृजत। सोऽनन्दत्॥२१॥

असृंक्षि वा इमिमितिं। तस्य सोमों ह्विरासींत्। स चतुंर्होत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिंमसृजत। अग्निहोत्रं दंर्शपूर्णमासौ यजूर्ंषि। स द्वितीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥

सौंऽन्तिरेक्षमसृजत। चातुर्मास्यानि सामानि। स तृतीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स सुवृरिति व्याहंरत्। स दिवंमसृजत। अग्निष्टोममुक्थ्यंमितरात्रमृचंः। एता वै व्याहंतय इमे लोकाः। इमान्खलु वै लोकानन् प्रजाः प्शवृश्छन्दार्ससे प्राजांयन्त। य एवमेताः प्रजापंतेः प्रथमा व्याहंतीः प्रजांता वेदं॥२३॥

प्र प्रजयां पृशुभिंमिंथुनैर्जायते। स पश्चंहोतारमसृजत। स ह्विर्नाविंन्दत। तस्मै सोमंस्तुनुवं प्रायंच्छत्। एतत्तें ह्विरितिं। स पश्चंहोत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स प्रत्यङ्कंबाधत। सोऽसुंरानसृजत। तद्स्याप्रिंयमासीत्॥२४॥

तद्दुर्वर्ण् हरंण्यमभवत्। तद्दुर्वर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। स द्वितीयंमतप्यत्। सोऽताम्यत्। स प्राङंबाधतः। स देवानंसृजतः। तदंस्य प्रियमांसीत्। तथ्सुवर्ण् ह हिरंण्यमभवत्। तथ्सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। य एव॰ सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्म वेदं॥२५॥

सुवर्ण आत्मनां भवति। दुर्वर्णोऽस्य भ्रातृंव्यः। तस्मांथ्मुवर्ण् हिरंण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भंवति। ऐनं प्रियं गंच्छति नाप्रियम्। स सप्तहोतारमसृजत। स सप्तहोंत्रैव सुंवर्गं लोकमैंत्। त्रिणवेन स्तोमेंनैभ्यो लोकभ्यो-ऽसुंरान्प्राणुंदत। त्रयस्त्रिष्शेन प्रत्यंतिष्ठत्। एकविष्शेन रुचंमधत्त॥२६॥

स्प्तद्शेन प्राजांयत। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजंते। सप्तहोंत्रैव सुंवर्गं लोकमेंति। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्यो भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। त्रयस्त्रिष्शेन प्रति तिष्ठति। एकविष्शेन रुचं धत्ते। स्प्तद्शेन प्र जांयते। तस्मांध्सप्तद्शः स्तोमो न निर्हृत्यः। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतिमेव मध्यतो धत्ते प्रजांत्यै॥२७॥

अनुन्द्द्भुव इति व्याहंर्द्वेदांसीद्वेदांधत्त प्रजांत्यै॥——

[8]

देवा वै वर्रुणमयाजयन्। स यस्यैयस्यै देवतांयै दक्षिणामनंयत्। तामंब्रीनात्। तेंंऽब्रुवन्। व्यावृत्य प्रतिंगृह्णम। तथां नो दक्षिणा न ब्लेंष्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यंगृह्णन्। ततो वै तान्दक्षिणा नाब्लीनात्। य एवं विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। नैनं दक्षिणा ब्लीनाति॥२८॥

राजां त्वा वर्रणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिरंण्यमित्यांह। आग्नेयं वै हिरंण्यम्। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिगृह्णाति। सोमाय वास् इत्यांह। सौम्यं वै वासंः। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिगृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वै गौः। स्वयैवैनां देवतंया प्रतिंगृह्णाति। गृह्णाति। वर्रणायाश्वमित्यांह॥२९॥

वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिंगृह्णाति।

प्रजापंतये पुरुषिमत्यांह। प्राजापत्यो वै पुरुषः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। मनवे तल्पमित्यांह। मानवो वै तल्पंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। उत्तानायाँङ्गीरसायान् इत्यांह। इयं वा उत्तान आँङ्गीरसः॥३०॥

अन्यैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्यर्चा रथं प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्रो वे देवतंया रथंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। तेनांमृत्त्वमंश्यामित्यांह। अमृतंमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। वयो दात्र इत्यांह। वयं एवैनं कृत्वा। सुवर्गं लोकं गंमयति। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्यांह॥३१॥

यद्वै शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं पृवैषा परींत्तिः। क इदं कस्मां अदादित्यांह। प्रजापंतिर्वे कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेन् हि ददांति। कामेन प्रतिगृह्णातिं। कामो दाता कामः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कामंः प्रतिग्रहीता। कामरे समुद्रमाविशे-त्यांह। समुद्र इंव हि कामंः। नेव हि कामस्यान्तोऽस्तिं। न संमुद्रस्यं। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामीत्यांह। येन कामेन प्रतिगृह्णातिं। स एवैनममुष्मिं श्लोके काम आगंच्छति। कामैतत्तं एषा ते काम दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानो-ऽमुष्मिं श्लोके दक्षिणामिच्छति। न प्रतिग्रहीतिरं। य एवं विद्वान्दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। अनुणामेवैनां प्रति गृह्णाति॥३३॥ ब्रीनात्यश्वमित्यांहाङ्गीर्सः प्रंतिग्रहीत्र इत्यांह प्रतिग्रहीतेत्यांह दक्षिणेत्यांह चुत्वारिं च॥—[५]

अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। दृश्मे-ऽहंन्थ्सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्ति। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। अन्नाद्यमवं रुन्धते। तिसृभिः स्तुवन्ति। त्रयं ड्रमे लोकाः। एभ्य एव लोकभ्योऽन्नाद्यमवं रुन्धते। पृश्चिवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्चि॥३४॥

अन्नमेवावं रुन्थते। मनंसा प्रस्तौति। मन्सोद्गायित। मनंसा प्रतिं हरति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरात्यै। देवा वै सूर्पाः। तेषांमिय राज्ञी। यथ्संपराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्तिं। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुंरहोतृन् होता व्याचेष्टे। स्तुतमनुंशश्सित् शान्त्यैं। अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। एतत्खलु वै देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंरहोतारः। दश्मेऽह्ध्श्चतुंर्होतृन्व्याचेष्टे। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। प्रमं देवानां गृह्यं ब्रह्मावं रुन्थे। तदेव प्रंकाशं गंमयति॥३६॥

तर्देनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। वाचं यच्छति। यज्ञस्य धृत्यै। यज्ञमानदेवत्यं वा अहंः। भ्रातृव्यदेवत्यां रात्रिः। अहा रात्रिं ध्यायेत्। भ्रातृंव्यस्यैव तल्लोकं वृंङ्के। यद्दिवा वाचं विसृजेत्। अहुर्भातृंव्यायोच्छि १षेत्। यन्नक्तं विसृजेत्। रात्रिं भ्रातृंव्यायोच्छि १ षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वाचं विसृंजति। एतावंन्तमेवास्मैं लोकमुच्छि १ षति। यावंदादित्यौं-ऽस्तमेतिं॥ ३७॥

पृश्ञिं तिष्ठन्ति गमयति शि॰षेृत्पश्चं च॥————[६]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समंश्लिष्यन्। ता रूपेणानुप्राविंशत्। तस्मांदाहुः। रूपं वे प्रजापंतिरितिं। ता नाम्नाऽनु प्राविंशत्। तस्मांदाहुः। नाम् वे प्रजापंतिरितिं। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयेते॥३८॥

मित्रमेव भंवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमि नासृंजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येतिं। स आत्मित्रन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजत। तं त्रिष्टुग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्शो हस्त आपंद्यत। तेनोदय्यासुंरान्भ्यंभवत्॥३९॥

य एवं वेदं। अभि भ्रातृंच्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्यं। सुव्गं लोकमायन्। तेंऽमुष्मिं ह्योके व्यक्षध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमृतंः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोंतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेतिं॥४०॥

तस्य वा इयं क्रृप्तिः। यदिदं किं चे। य एवं वेदे। कल्पेतेऽस्मै। स वा अयं मेनुष्येषु युज्ञः सप्तहोता। अमुत्रे स्द्र्यो देवेभ्यों ह्व्यं वहिति। य एवं वेदे। उपैनं युज्ञो नेमिति। सोऽमन्यत। अभि वा इमें ऽस्माल्लोकादमुं लोकं किमिष्यन्त इति। स वार्चस्पते हृदिति व्याहरत्। तस्मात्पुत्रो हृदेयम्। तस्मादस्माल्लोकादमुं लोकं नाभि कामयन्ते। पुत्रो हि हृदेयम्॥४१॥

ह्रयेते अभवत्कल्प्येतीति चृत्वारि च॥\_\_\_\_\_\_[9]

देवा वै चतुंर्होतृभिर्य्ज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना भातृंव्येणाजंयन्त। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। य एवं विद्वाः श्र्यतुंर्होतृभिर्य्ज्ञं तंनुते। वि पाप्मना भातृंव्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। षड्ढोंत्रा प्रायणीयमा सांदयति। अमुष्मै वे लोकाय षड्ढोंता। घ्रन्ति खलु वा एतथ्सोमम्। यदंभिषुण्वन्ति॥४२॥

ऋजुधेवैनंमुमुं लोकं गंमयित। चतुंरहोत्राऽऽतिथ्यम्। यशो वे चतुंरहोता। यशं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पशुमुपंसादयित। सुव्ग्यों वे पश्चंहोता। यजंमानः पृशुः। यजंमानमेव सुंवृगं लोकं गंमयित। ग्रहांन्गृहीत्वा सप्तहोतारं जुहोति। इन्द्रियं वे सप्तहोता॥४३॥

इन्द्रियमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यो वै चतुंर्होतॄननुसव्नं तूर्पयंति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन॰ सोमपीथो नमिति। बहिष्पुवृमाने दशहोतारं व्याचंक्षीत। माध्यं दिने पर्वमाने चतुर्होतारम्। आर्भवे पर्वमाने पश्चहोतारम्। पितृयज्ञे षङ्कोतारम्। यज्ञायज्ञियस्य स्तोत्रे सप्तहोतारम्। अनुसुवनमेवेना इस्तर्पयति॥४४॥

तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। उपैन सोमपीथो नमिति। देवा वै चतुरहोतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्धिपरिमितं यशंस्कामाः। तें ऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषात्रस्तथ्सहास्दितिं। सोमश्चतुरहोत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा। धाता षड्ढोंत्रा॥४५॥

इन्द्रेः सप्तहौत्रा। प्रजापंतिर्दर्शहोत्रा। तेषाक् सोम्क् राजांनं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापांकामत्। तेनं प्रलायंमचरत्। तं देवाः प्रैषेः प्रैषंमैच्छन्। तत्प्रैषाणां प्रैषत्वम्। निविद्धिर्न्यवेदयन्। तन्निविद्वित्त्वम्॥४६॥

आप्रीभिराप्नुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्नन्। तस्य यशो व्यंगृह्णतः। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृंहीताः। तेंऽब्रुवन्। यो वै नः श्रेष्ठो-ऽभूत्॥४७॥

तमंबिधष्म। पुनिर्मि सुंवामहा इतिं। तं छन्दोभिरसुवन्त। तच्छन्दंसां छन्द्स्त्वम्। साम्ना समानयन्। तथ्साम्नेः सामृत्वम्। उक्थैरुदंस्थापयन्। तदुक्थानांमुक्थृत्वम्। य पृवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥ सर्वमायुरिति। सोमो वै यशंः। य एवं विद्वान्थ्सोमंमागच्छंति। यशं एवैनंमृच्छति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद यश्च न। तावुभौ सोम्मागंच्छतः। सोमो हि यशंः। तं त्वाऽव यशं ऋच्छुतीत्यांहुः। यः सोमे सोमं प्राहेतिं। तस्माथ्सोमे सोमः प्रोच्यः। यशं एवैनंमृच्छति॥४९॥

अभिषुण्वन्तिं सप्तहोता तर्पयति पङ्कौत्रा निवित्त्वमभूँतिष्ठति प्राहेति द्वे चं॥———[८]

ड्डदं वा अग्रे नैव किं च नाऽऽसींत्। न द्यौरांसीत्। न पृंथिवी। नान्तरिक्षम्। तदसदेव सन्मनोऽकुरुत् स्यामिति। तदंतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्धूमोऽजायत। तद्भ्योऽतप्यत। तस्मांत्तेपानादग्निरंजायत। तद्भ्योऽतप्यत॥५०॥

तस्मौत्तेपानाञ्चोतिरजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपाना-दर्चिरंजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानान्मरीचयो-ऽजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुंदारा अंजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तद्भूमिव समहन्यत। तद्वस्तिमंभिनत्॥५१॥

स संमुद्रोऽभवत्। तस्माँथ्समुद्रस्य न पिंबन्ति। प्रजननिम् हि मन्यन्ते। तस्माँत्पृशोर्जायमानादापेः पुरस्ताँद्यन्ति। तद्दशंहोताऽन्वंसृज्यत। प्रजापंतिवैं दशंहोता। य एवं तपंसो वीर्यं विद्वाङ्स्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापेः सिल्लमांसीत्। सोंऽरोदीत्प्रजापंतिः॥५२॥

स कस्मां अज्ञि। यद्यस्या अप्रतिष्ठाया इति। यद्पस्ववापंद्यता सा पृथिव्यंभवत्। यद्यमृष्टा तद्नतिरक्षम- भवत्। यदूर्ध्वमुदमृष्टा सा द्यौरंभवत्। यदरोदीत्। तद्नयो रोद्स्त्वम्॥५३॥

य एवं वेदं। नास्यं गृहे रुंदन्ति। एतद्वा एषां लोकानां जन्मं। य एवमेषां लोकानां जन्म वेदं। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छंति। स इमां प्रंतिष्ठामंविन्दत। स इमां प्रंतिष्ठां वित्वाऽकांमयत् प्रजायेयेति। स तपोंऽतप्यत। सौंऽन्तर्वानभवत्। स जघनादसुंरानसृजत॥५४॥

तेभ्यों मृन्मये पात्रेऽत्रंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपाहत। सा तिमस्राऽभवत्। सोऽकामयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। सोन्तर्वानभवत्। स प्रजननादेव प्रजा अंसृजत। तस्मादिमा भूयिष्ठाः। प्रजननाद्धोना असृंजत॥५५॥

ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोंऽदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपाहत। सा जोथ्स्नांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स उंपपृक्षाभ्यांमेवर्तूनंसृजत। तेभ्यों रज्ते पात्रें घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्॥५६॥

तामपांहत। सोंऽहोरात्रयोः सन्धिरंभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँद्देवानंसृजत। तेभ्यो हरिंते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासीत्। तामपाहत। तदहंरभवत्॥५७॥

पृते वै प्रजापंतेर्दोहाँः। य पृवं वेदं। दुह पृव प्रजाः। दिवा वै नोऽभूदिति। तद्देवानाँ देवत्वम्। य पृवं देवानाँ देवत्वं वेदं। देववानेव भवति। पृतद्वा अहोरात्राणां जन्मं। य पृवमहोरात्राणां जन्म वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति॥५८॥

अस्तोऽिष् मनोंऽसृज्यत। मनंः प्रजापंतिमसृजत। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तद्वा इदं मनंस्येव पंर्मं प्रतिष्ठितम्। यदिदं किं चं। तदेतच्छ्वांवस्यसन्नाम् ब्रह्मं। व्युच्छन्तीं व्युच्छन्त्यस्मै वस्यंसीवस्यसी व्यंच्छति। प्रजायते प्रजयां प्रशुभिः। प्र पंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्नोति। य एवं वेदं॥५९॥

अग्निरंजायत् तद्भूयोंऽतप्यताभिनदरोदीत्प्रजापंतीरोद्स्त्वमंसृज्तासृंजत घृतमंदुह्द्याऽस्य सा तृनूरासीदहंरभवदच्छित् वेदं (इदं धूमौंऽग्निज्योंतिर्चिर्मरीचय उदारास्तद्भ्भः स जघनाथ्सा तिमंस्रा स प्रजनंनाथ्सा जोथ्स्रा स उपपक्षाभ्याः सोऽहोरात्रयौः सन्धः स मुखात्तदहंर्देववौन्मुन्मये दारुमये रज्तते हरिते तेभ्यस्ताभ्यो द्वे तेऽत्रं पर्यो घृतः सोमम्॥॥————[९]

प्रजापंतिरिन्द्रंमसृजतानुजाव्रं देवानांम्। तं प्राहिणोत्। परेहि। एतेषां देवानामधिपतिरेधीतिं। तं देवा अंब्रुवन्। कस्त्वमिसं। व्यं वे त्वच्छ्रेया रेसः स्मृ इतिं। सोंऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं व्यं वे त्वच्छ्रेया रेसः स्मृ इतिं मा देवा अंवोच्नितिं। अथ् वा इदं तर्हिं प्रजापंतौ हरं आसीत्॥६०॥ यदस्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। एतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषां देवानामधिपतिभीविष्यामीति। कोऽह इस्यामित्यं ब्रवीत्। एतत्प्रदायेति। एतथ्स्या इत्यं ब्रवीत्। यदेतद्ववीषीति। को ह वै नामं प्रजापितः। य एवं वेदं॥ ६१॥

विदुरेंनं नाम्नां। तदंस्मै रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्चत्। ततो वा इन्द्रों देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदं। अधिपतिरेव संमानानां भवति। सोऽमन्यत। किं किं वा अंकर्मितिं। स चन्द्रं म् आह्रेति प्रालंपत्। तच्चन्द्रमंसश्चन्द्रम्स्त्वम्। य एवं वेदं॥६२॥

चन्द्रवानेव भेवति। तं देवा अंब्रुवन्। सुवीयों मर्या यथां गोपायत् इति। तथ्सूर्यस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदे। नैनं दभ्नोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमिन्द्रियं प्रत्यंस्थादिति। तदिन्द्रंस्येन्द्रत्वम्। य एवं वेदे। इन्द्रियाव्येव भेवति॥६३॥

अयं वा इदं पंरमों ऽभूदितिं। तत्पंरमेष्ठिनः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदं। प्रमामेव काष्ठां गच्छति। तं देवाः संमन्तं पर्यविशन्। वसेवः पुरस्तांत्। रुद्रा देक्षिणतः। आदित्याः पश्चात्। विश्वे देवा उत्तर्तः। अङ्गिरसः प्रत्यश्चम्॥६४॥

साध्याः परांश्चम्। य एवं वेदं। उपैनः समानाः संविंशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता अंस्मै नातिंष्ठन्तान्नाद्यांय। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। दक्षिणतः पर्यायन्। स दक्षिणतः पर्यवर्तयत। ता मुखंं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखंं दक्षिणतः॥६५॥

पृश्चात्पर्यायन्। स पृश्चात्पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्। उत्तर्तः पर्यायन्। स उत्तर्तः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तरतः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्त्रंवर्तयत। ताः सर्वतांमुखो भूत्वाऽऽवंयत्। ततो वै तस्मैं प्रजा अतिष्ठन्तान्नाद्यांय। य एवं विद्वान्परि च वर्तयंते नि चं। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अति। तिष्ठंन्तेऽस्मै प्रजा अन्नाद्यांय। अन्नाद एव भंवति॥६७॥

आसीद्वेदं चन्द्रम्स्त्वं य एवं वेदैन्द्रियाव्येव भविति प्रत्यश्चं मुर्खं दक्षिणतो मुर्खं पृक्षान्नवं

च∥-----[१०]

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स एतं दशंहोतारमपश्यत्। तं प्रायुंङ्का तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स दशंहोतारं प्रयुंजीत। बहोरेव भूयाँन्भवति। सोऽकामयत वीरो म् आजांयेतेतिं। स दशंहोतुश्चतुंरहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्का ६८॥

तस्य प्रयुक्तीन्द्रोऽजायत। यः कामयेत वीरो म् आजायेतेति। स चतुरहोतारं प्रयुंश्चीत। आऽस्यं वीरो जांयते। सोंऽकामयत पशुमान्थस्यामितिं। स चतुंर्होतुः पश्चंहोतार्ं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति पशुमानंभवत्। यः कामयेत पशुमान्थस्यामितिं। स पश्चंहोतारं प्रयुंक्षीत॥६९॥

पृशुमानेव भंवति। सोंऽकामयत्तिवों मे कल्पेर्न्नितिं। स पश्चंहोतुः षड्ढोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंत्त्व्यृतवौं-ऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेत्तिवों मे कल्पेर्न्नितिं। स षड्ढोतारं प्रयुंश्चीत। कल्पन्तेऽस्मा ऋतवंः। सोंऽकामयत सोम्पः सोंमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोंमयाजी जांयेतेतिं॥७०॥

स षड्ढोतुः स्प्तहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति सोम्पः सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोम्पः सोमयाज्यंजायत। यः कामयेत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेतिं। स स्प्तहोतारं प्रयुंश्चीत। सोम्प एव सोमयाजी भंवति। आऽस्यं सोम्पः सोमयाजी जांयते। स वा एष पशुः पंश्चधा प्रतिं तिष्ठति॥७१॥

पद्भिमुंखेन। ते देवाः प्रशून् वित्वा। सुवर्गं लोकमांयन्। तेंऽमुष्मिं लोके व्यक्षध्यन्। तेंंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेति। ते सप्तहोंतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेति। तस्य वा इयं कृप्तिः॥७२॥ यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मे। स वा अयं मंनुष्यंषु यज्ञः सप्तहांता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यां ह्व्यं वंहति। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नमिति। यो वै चतुंरहोतृणां निदानं वेदं। निदानंवान्भवति। अग्निहोत्रं वै दर्शहोतुर्निदानम्। दर्शपूर्णमासौ चतुंरहोतुः। चातुर्मास्यानि पर्श्वहोतुः। पृशुबन्धः षङ्कोतुः। सौम्यौऽध्वरः सप्तहोतुः। एतद्वै चतुंरहोतृणां निदानम्। य एवं वेदं। निदानंवान्भवति॥७३॥ अमिमीत तं प्रायंङ्क पश्चहोतारं प्र यंश्रीत जायेतितं तिष्ठति क्रिप्तिर्दर्शहोतुर्निदानरं स्व चं॥——[११]

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंजेयेति प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेति प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति स तपः स त्रिवृतं प्रजापंतिरकामयत् दर्शहोतारं तेनं दश्या- ऽऽत्मानं देवा वै वर्रुणमन्तो वै प्रजापंतिस्ताः सृष्टाः समिश्चिष्यं देवा वै चतुंरहोतृभिरिदं वा अग्रें प्रजापंतिरिन्द्रं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयानेकांदश॥११॥ प्रजापंतिस्तद्वहंस्य प्रजापंतिरकामयतानयैवैनृत्तस्य वा इयं क्रृष्तिस्तस्मौत्तेपानाञ्च्योतिर्-यदस्मिन्नांदित्ये स षङ्कांतुः सप्तहोतारं त्रिसंप्तितः॥७३॥ प्रजापंतिरकामयत निदानंवान्भवति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

# ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वमितिं। यदेवैषु चतुर्धा होतांरः। तेन चतुंर्होतारः। तस्माचतुंर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्रहोतृणां चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुंर्होता। अग्निः पश्चंहोता। धाता षड्ढोता। इन्द्रंः सप्तहोता॥१॥

प्रजापंतिर्दर्शहोता। य एवं चतुंरहोतृणामृद्धिं वेदे। ऋभ्रोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदे। बन्धुंमान्भवति। य एषामेवं कृप्तिं वेदे। कल्पंतेऽस्मै। य एषामेवमायतेनं वेदे। आयतेनवान्भवति। य एषामेवं प्रतिष्ठां वेदे॥२॥

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। दर्शहोता चतुंरहोता। पश्चंहोता षड्ढांता सप्तहोता। अथ कस्माचतुंरहोतार उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुंरहोता। इन्द्रः खलु वै श्रेष्ठों देवतानामुप्-देशनात्। य एविमन्द्रङ् श्रेष्ठं देवतानामुप्देशनाद्वेदं। विसेष्ठः समानानां भवति। तस्माच्छ्रेष्ठमायन्तं प्रथमेनैवानं बुध्यन्ते। अयमागन्। अयमवांसादितिं। कीर्तिरंस्य पूर्वाऽऽगंच्छिति जनतांमायतः। अथों एनं प्रथमेनैवानं बुध्यन्ते। अयमागन्। अयमवांसादितिं॥ ३॥

स्प्तहोंता प्रतिष्ठां वेदं बुध्यन्ते षट्वं॥=

8]

सिनिन्धे। तेर्जसे वीर्याय। अथौं प्रजापंतिरेवैनौं भूत्वा प्रितंगृह्णाति। आत्मनोऽनौत्यै। यद्येनमार्त्विज्याद्वृत सन्तें निर्हरेरन्। आग्नीधे जुहुयाद्दशंहोतारम्। चतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पुरस्तौत्प्रत्यिङ्गष्ठन्ं। प्रितिलोमं विग्राहम्॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयति। यद्येनं पुनंरुप् शिक्षेयुः। आग्नींप्र एव जुंहयाद्दशंहोतारम्। चतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पृश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममविग्राहम्। प्राणानेवास्में कल्पयति। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृंतुमुखऋंतुमुखे जुहोति। ऋतूनेवास्में कल्पयति। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः॥५॥

कुप्ता अस्मा ऋतव आयंन्ति। षड्ढांता वै भूत्वा प्रजापंतिरिदश् सर्वमसृजत। स मनोंऽसृजत। मन्सोऽधिं गायत्रीमंसृजत। तद्गांयत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभत। गायत्रिया अधि छन्दाईस्यसृजत। छन्दोभ्योऽधि सामं। तथ्साम यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥

साम्रोऽधि यजू ईष्यसृजत। यजुभ्योऽधि विष्णुम्। तिद्वष्णुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभता विष्णोरध्योषंधीरसृजत। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तथ्सोमं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। सोमादिधं पृशूनंसृजत। पृशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥

तदिन्द्रं यशं आर्च्छत्। तदेनुन्नाति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव यशुस्वी भवति। य एवं वेदं। नैनं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वम्तान प्वाऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमुत्तानस्त्वाँऽऽङ्गीर्सः प्रतिगृह्णात्वित्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान
आङ्गीर्सः। अनयेवैन्त्प्रतिगृह्णाति। नैन १ हिनस्ति। बर्हिषा
प्रतीयाद्गां वाऽश्वं वा। पृतद्वे पंशूनां प्रियं धामं। प्रियेणैवैनं
धाम्ना प्रत्येति॥८॥

विग्राहंमृतवस्तदाऽलंभृतेन्द्रं गृह्णीयाथ्यद्वं॥——————[२]

यो वा अविद्वान्निवर्तयंते। विशीर्षा सपौप्माऽमुिष्में हो के भेवति। अथ यो विद्वान्निवर्तयंते। सशीर्षा विपौप्मा- ऽमुिष्में हो के भेवति। देवता वै सप्त पृष्टिकामा न्यंवर्तयन्त। अग्निश्चे पृथिवी चं। वायुश्चान्तरिक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चे चन्द्रमाः। अग्निर्यंवर्तयत। स साहस्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिवंनस्पतिंभिरपुष्यत्। वायुर्न्यवर्तयत। स मरींचीभिरपुष्यत्। अन्तरिंक्ष्रं न्यंवर्तयत। तद्वयोभिरपुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स रिष्टमिभिरपुष्यत्। द्यौर्न्यवर्तयत। सा नक्षंत्रैरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत। सोऽहोरात्रैर्र्धमासैर्मासैर्त्र्युत्तिः संवथ्सरेणांपुष्यत्। तान्योषांनपुष्यति। याइस्तेऽपुष्यन्। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च॥१०॥

तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यं प्रतिजग्रहुषंः। अर्धिमेन्द्रियस्यापाँऋामत्। तद्तेनेव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वे सौंऽर्धिमेन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। अर्धिमेन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं
विद्वान् हिरंण्यं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं।
अर्धमंस्येन्द्रियस्यापंऋामति। तस्य वे सोमंस्य वासंः
प्रतिजग्रहुषंः। तृतींयमिन्द्रियस्यापाँऋामत्॥११॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स तृतींयिमिन्द्रिय-स्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। तृतींयिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविंद्वान्प्रति-गृह्णातिं। तृतींयमस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रतिजग्रहुषंः। चतुर्थिमिन्द्रियस्यापाँक्रामत्। तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स चतुर्थिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त॥१२॥

चतुर्थमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान्गां प्रितगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। चतुर्थमस्येन्द्रिय-स्यापंक्रामित। तस्य वै वर्रुणस्यार्श्वं प्रतिजग्रहुषंः। पश्चमिन्द्रियस्यापाकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स पश्चमिनद्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्थत्त। पश्चमिनद्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपार्थत्त। पश्चमिनद्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपार्थत्त। पश्चमिनद्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपार्थत्त। य एवं विद्वानश्वं प्रतिगृह्णाति॥१३॥

अथ् योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पृश्चममंस्येन्द्रियस्यापं-क्रामित। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रहुषंः। षृष्ठमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स षृष्ठमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। षृष्ठमिन्द्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णाति। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णाति। षृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंत्रामति॥१४॥

तस्य वै मनोस्तर्ल्पं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिन्द्रिय-स्यापानामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स संप्तमिनिद्र्यस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। सप्तमिनिद्र्यस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वाङ्स्तर्ल्पं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। सप्तममंस्येन्द्र्यस्यापंकामित। तस्य वा उत्तानस्याऽऽङ्गीर्सस्याप्राणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टमिनिद्र्यस्यापानामत्॥१५॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै सौंऽष्ट्रमिनिद्र्यस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्त। अष्ट्रमिनिद्र्यस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वानप्राणत्प्रतिगृह्णाति। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णाति। अष्ट्रम-मंस्येन्द्र्यस्यापंत्रामित। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमृत्तान एवाऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमृत्तानस्त्वाऽऽङ्गीर्सः प्रतिगृह्णात्वित्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्सः। अनयैवनत्प्रतिगृह्णाति। नैन र् हिनस्ति॥१६॥

तृतींयमिन्द्रियस्यापाँकामचतुर्थिमिन्द्रियस्यात्मत्रुपाधत्तार्श्वं प्रतिगृह्णाति षृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंकामत्यष्ट्मिमिन्द्रियस्यापाँकामत्प्रतिगृह्णीयाचृत्वारिं च (तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यू सोमंस्य वास्पतदेतेनं रुद्रस्य गान्तामेतेन् वरुणस्यार्श्वं प्रजापेतेः पुरुषं मनोस्तत्युन्तमेतेनौत्तानस्य तदेतेनाप्रांणुद्यद्वै। अर्थं

तृतीयमष्टमं तच्चंतुर्थं तां पंश्चम॰ षष्ठ॰ संप्तमन्तम्। तद्तेन् द्वे तामेतेनैकं तमेतेन् त्रीणि तदेतेनैकम्॥॥———[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यद्दशंहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनं प्रजा अंसृज्नन्तेतिं। प्रजापंतिना वे ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनं प्रजा अंसृजन्त। यचतुंर्होतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनौषंधीरसृज्नन्तेतिं। सोमेन् वे ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१७॥

तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। केनैषां पृशूनंवृञ्जतेतिं। अग्निना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पृशूनंवृञ्जत। यथ्यङ्कांतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१८॥

केन्तूनंकल्पयन्तेति। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्भुवन्। तेन्तूनंकल्पयन्त। यथ्सप्तहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्भुवन्। केन् सुवंरायन्। केन्माँ श्लोकान्थ्समं-तन्वित्रिति। अर्यम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्भुवन्। तेन् सुवंरायन्। तेन्माँ श्लोकान्थ्समंतन्वित्रिति॥१९॥

पुते वै देवा गृहपंतयः। तान् य पुवं विद्वान्। अप्यन्यस्यं गार्हपते दीक्षंते। अवान्तरमेव सत्रिणांमृभ्नोति। यो वा अर्यमणं वेदं। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। यज्ञो वा अर्यमा। आर्यावसतिरिति वै तमांहुर्यं प्रशर्सन्ति। आर्यावसृतिर्भवति। य एवं वेदं॥२०॥

यद्वा इदं किं चे। तथ्सर्वं चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽिधं यज्ञो निर्मितः। स य एवं विद्वान् विवदेत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंर्होतृन् वेदेतिं। स ह्येव भूयो वेदे। यश्चतुंर्होतृन् वेदे। यो वै चतुंर्होतृणा ५ होतृन् वेदे। सर्वांसु प्रजास्वन्नंमत्ति॥२१॥

सर्वा दिशोऽभि जंयति। प्रजापंतिर्वे दशंहोतृणा् होतां। सोम्श्रतुंरहोतृणा् होतां। अग्निः पश्चंहोतृणा् होतां। धाता षड्ढांतृणा् होतां। अर्यमा सप्तहांतृणा् होतां। पृते व चतुंरहोतृणा् होतां। होतां। तान् य एवं वेदं। सर्वासु प्रजास्वन्नंमत्ति। सर्वा दिशोऽभि जंयति॥२२॥

आर्धुवृत्रार्धुवृत्रित्येवं वेदाँत्ति सर्वा दिशोऽभि जंयति (वै तेनं सृत्रङ्कर्नः॥)॥————[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्रश्सत। स हृदंयं भूतों-ऽशयत्। आत्मन् हा (३) इत्यह्वंयत्। आपः प्रत्यंश्व्यवन्। ता अग्निहोत्रेणैव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावंतन्त। ताः कुसिन्धमुपौहन्। तस्मादग्निहोत्रस्यं यज्ञकृतोः। एकं ऋत्विक्। चृतुष्कृत्वो-ऽह्वंयत्। अग्निर्वायुरादित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥

ते प्रत्यंश्वन्। ते दंर्शपूर्णमासाभ्यांमेव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावंतन्त। त उपौंह इश्चत्वार्यङ्गांनि। तस्माँदर्शपूर्ण-मासयौर्यज्ञकृतोः। चृत्वारं ऋत्विजः। पृश्चकृत्वोऽह्वंयत्। पृशवः प्रत्यंश्वन्। ते चांतुर्मास्यैरेव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावंर्तन्त। त उपौहुं लोमं छुवीं माुर्समस्थि मुज्जानम्। तस्माचातुर्मास्यानां यज्ञकृतोः॥२४॥

पश्चर्तिजंः। षट्कृत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंशृण्वन्। ते पंशुबन्धेनैव यंज्ञऋतुनोपंपूर्यावंर्तन्त। त उपौहुन्थ्स्तनांवाण्डो शिश्ञमवाश्चं प्राणम्। तस्मात्पशुबन्धस्यं यज्ञऋतोः। षड्विजंः। स्प्तकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंशृण्वन्। ताः सौम्येनैवाध्वरेणं यज्ञऋतुनोपंपर्यावंर्तन्त॥२५॥

ता उपौहन्थ्सप्त शीर्षण्यांन्प्राणान्। तस्मांथ्यौम्यस्यांध्वरस्यं यज्ञकृतोः। सप्त होत्राः प्राचीविषंद्भुविन्ति। दृश्कृत्वोऽह्वंयत्। तपः प्रत्यंश्वणोत्। तत्कर्मणैव संवथ्सरेण् सर्वैर्यज्ञकृतिभ्रूपं पूर्यावर्ततः। तथ्सर्वमात्मान्मपंरिवर्गमुपौहत्। तस्मांथ्संवथ्सरे सर्वे यज्ञकृतवोऽवरुध्यन्ते। तस्माद्दशंहोता चतुर्होता। पश्चेहोता षङ्कोता सप्तहोता। एकहोत्रे बुलि॰ हंरन्ति। हर्रन्त्यस्मै प्रजा बुलिम्। ऐन्मप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं॥२६॥

चन्द्रमाश्चातुर्मास्यानां यज्ञकृतोरंध्वरेणं यज्ञकृतुनोपं पुर्यावर्तन्त सप्तहोता चत्वारिं च॥——[६]

प्रजापंतिः पुरुषमसृजत। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममायमन्नं-मस्त्वितं। सोऽबिभेत्। सर्वं वै माऽयं प्र धंक्ष्यतीतिं। स एता ॥ श्वतुंर्होतॄनात्मस्परंणानपश्यत्। तानं जुहोत्। तैर्वे स आत्मानं मस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोतिं। एकंहोतारमेव

### तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोत्यग्निहोत्रम्॥२७॥

कुसिन्धं चाऽऽत्मनः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। चतुर्होतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति दर्शपूर्णमासौ। चत्वारि चाऽऽत्मनोऽङ्गांनि स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। समित्पंश्चमी। पश्चहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति चातुर्मास्यानिं। लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्ञानम्॥२८॥

तानिं चाऽऽत्मनः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। षड्ढोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति पशुबन्धम्। स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाँश्चं प्राणम्। तानिं चाऽऽत्मनः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति॥२९॥

स्मिथ्संप्तमी। स्प्तहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति सौम्यमध्वरम्। सप्त चाऽऽत्मनः शीर्षण्यांन्प्राणान्थस्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। द्विर्निमाँष्टि। द्विः प्राश्ञांति। दशहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्नोति संवथ्मरम्। सर्वं चाऽऽत्मान्मपंरिवर्गः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति॥३०॥

प्रजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत।

सौंऽन्तर्वानभवत्। सहिर्रतः श्यावोऽभवत्। तस्माथ्स्र्यन्तर्वन्नी। हिरिणी सती श्यावा भवति। सिवजार्यमानो गर्भेणाताम्यत्। सितान्तः कृष्णः श्यावोऽभवत्। तस्मौत्तान्तः कृष्णः श्यावो भवति। तस्यासुरेवाजीवत्॥३१॥

तेनासुनाऽसुंरानसृजत। तदसुंराणामसुर्त्वम्। य प्वमसुंराणामसुर्त्वं वेदं। असुंमानेव भेवति। नैन्मसुंर्जहाति। सोऽसुंरान्थ्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदनुं पितृनंसृजत। तत्पितृणां पितृत्वम्। य पृवं पितृणां पितृत्वं वेदं। पितेवैव स्वानां भवति॥३२॥

यन्त्यंस्य पितरो हवम्ँ। स पितृन्थ्मृष्ट्वाऽऽमंनस्यत्। तदनं मनुष्यांनसृजत। तन्मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य एवं मनुष्यांणां मनुष्यत्वं वेदं। मनुस्त्येव भंवति। नैनं मनुंर्जहाति। तस्मै मनुष्यांन्थ्ससृजानायं। दिवां देवत्रा-ऽभंवत्। तदनुं देवानंसृजत। तद्देवानां देवत्वम्। य एवं देवानां देवत्वं वेदं। दिवां हैवास्यं देवत्रा भंवति। तानि वा पृतानिं चत्वार्यम्भा स्सि। देवा मनुष्याः पितरोऽसुंराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भवति। य एवं वेदं॥३३॥

अजीवथ्स्वानां भवति देवानंसृजत सप्त चं॥\_\_\_\_\_[८]

ब्रह्मवादिनो वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुंरियात्। न पुरा- ऽऽयुंषः प्र मीयेत। पृशुमान्थ्स्यांत्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा इमं वेदं॥३४॥

यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुरिति। न पुराऽऽयुषः प्र मीयते। पृशुमान्भविति। विन्दते प्रजाम्। अन्द्रः पंवते। अपोऽभि पंवते। अपोऽभि सम्पंवते॥३५॥

अस्याः पंवते। इमाम्भि पंवते। इमाम्भि सम्पंवते। अग्नेः पंवते। अग्निम्भि पंवते। अग्निम्भि सम्पंवते। अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सम्पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥

आदित्यम्भि पंवते। आदित्यम्भि सम्पंवते। द्योः पंवते। दिवंम्भि पंवते। दिवंम्भि सम्पंवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पंवते। स यत्पुरस्ताद्वातिं। प्राण एव भूत्वा पुरस्तौद्वाति॥३७॥

तस्मौत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वाः प्रजाः प्रति नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानाम्। प्राण इव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ् यद्देक्षिणतो वाति। मात्रिश्वेव भूत्वा देक्षिणतो वाति। तस्मौद्दक्षिणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश आ वाति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीतिं।

स वा एष मांतिरिश्वैव। अथु यत्पश्चाद्वाति। पर्वमान एव भूत्वा पश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥

अथ यद्तरतो वाति। स्वितेव भूत्वोत्तरतो वाति। स्वितेव स्वानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष संवितेव। ते य एनं पुरस्तादायन्तंमुप्वदंन्ति। य एवास्यं पुरस्तात्पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति। पुरस्तादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ य एनं दक्षिणत आयन्तंमुप्वदंन्ति॥४०॥

य पुवास्यं दक्षिणतः पाप्मानः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति। दक्षिणत इतंरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ् य एनं पृश्चादायन्तंमुप् वदंन्ति। य पुवास्यं पृश्चात्पाप्मानः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति। पृश्चादितंरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ् य एनमुत्तर्त आयन्तंमुप् वदंन्ति। य पुवास्यौत्तर्तः पाप्मानः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति॥४१॥

उत्तरत इतंरान्याप्मनंः सचन्ते। तस्मदिवं विद्वान्। वीवं नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्येवाक्ष्यौ भाषता मृण्टयेदिव। क्राथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत में पाप्मान्मपं हन्युरितिं। स यान्दिशं स्निमेष्यन्थ्स्यात्। यदा तान्दिशं वातों वायात्। अथु प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। स्मातमेव रिदेतं व्यूढं गुन्धम्भि प्रच्यंवते। आऽस्य तं जनपदं पूर्वा कीर्तिर्गच्छिति। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। य एवं वेदं॥४२॥

वेद सम्पंवत आदित्यात्पंवते वात्या वाँत्येष पर्वमान एव दक्षिणत आयन्तंमुप वर्दन्त्युत्तरतः पाप्मान्स्ताः स्तेपं घ्रन्तीत्यृष्टौ चं॥————[९]

प्रजापंतिः सोम् राजानमसृजत। तं त्रयो वेदा अन्वसृज्यन्त। तान् हस्तेंऽकुरुत। अथ् ह सीतां सावित्री। सोम् राजांनं चकमे। श्रृद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरंं प्रजापंतिमुपंससार। त॰ होवाच। नमंस्ते अस्तु भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्रत्वां पद्ये। सोमं वै राजांनं कामये। श्रद्धामु स कांमयत् इति। तस्यां उ ह स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दशहोतारं पुरस्तांद्याख्यायं। चतुंरहोतारं दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पश्चात्। षड्ढोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारैश्च पिनिभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं॥४४॥

आऽस्यार्धं वंब्राज। ता होदीक्ष्योंवाच। उप मा वंर्तस्वेतिं। त होवाच। भोगं तु मृ आचंक्ष्व। एतन्मृ आचंक्ष्व। यत्तें पाणावितिं। तस्यां उह त्रीन् वेदान्प्रदंदौ। तस्मादुहु स्त्रियो भोगुमैव हांरयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामिति॥४५॥

यं वां कामयेत प्रियः स्यादितिं। तस्मां एतः स्थाग्रमेलङ्कारं केल्पयित्वा। दशहोतारं पुरस्ताँ द्याख्यायं। चतुरहोतारं दक्षिणतः। पश्चहोतारं पृश्चात्। षह्वोतारमुत्तरः। स्प्तहोतारमुपरिष्टात्। स्म्भारश्च पिन्निभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं। आस्यार्धं व्रंजेत्। प्रियो हैव भवति॥४६॥

अयान्यलङ्कर्त्यं स्यामितिं भवति॥

-[8o]

ब्रह्मौत्मन्वदंसृजत। तदंकामयत। समात्मनां पद्येयेति। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै दश्म १ हूतः प्रत्यंशृणोत्। स दशंहूतोऽभवत्। दशंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं दशंहूत १ सन्तम्। दशंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥४७॥

आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्में सप्तमः हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स स्प्तहूंतोऽभवत्। स्प्तहूंतो हु वै नामैषः। तं वा पृतः स्प्तहूंतः सन्तम्। स्प्तहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्में षष्ठः हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स षड्ढंतोऽभवत्॥४८॥

षड्ढंतो हु वै नामैषः। तं वा एतः षड्ढंतः सन्तम्। षड्ढोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै पञ्चमः हूतः प्रत्यंशृणोत्। स पञ्चंहूतोऽभवत्। पञ्चंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं पञ्चंहूतः सन्तम्। पञ्चंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण॥४९॥

प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्में चतुर्थ हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स चतुंर्हूतोऽभवत्। चतुंर्हूतो ह् वै नामैषः। तं वा एतं चतुंर्हूतः सन्तम्। चतुंर्हूतित्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः।

तमंब्रवीत्। त्वं वै में नेदिंष्ठः हूतः प्रत्यंश्रौषीः। त्वयैनानाख्यातार् इतिं। तस्मान्नु हैनाः श्रुतंर्होतार् इत्याचंक्षते। तस्मांच्छुश्रूषुः पुत्राणाः हृद्यंतमः। नेदिंष्ठो हृद्यंतमः। नेदिंष्ठो हृद्यंतमः। नेदिंष्ठो व्रह्मंणो भवति। य एवं वेदं॥५०॥

देवाः षड्ढ्रंतोऽभवृत्पश्चंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंणाश्रौषीः षद्वं॥————[११]

ब्रह्मवादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्वान्तस्य वे ब्रह्मवादिनो यद्दर्शहोतारः प्रजापंतिर्व्यक्षं प्रजापंतिः पुरुषं प्रजापंतिरकामयत् स तपः सौंऽन्तर्वांन्ब्रह्मवादिनो यो वा इमं विद्यात्प्रजापंतिः सोम् र राजांनं ब्रह्मांत्मन्वदेकांदश॥११॥ ब्रह्मांत्मन्वदेकांदश॥११॥ ब्रह्मांत्मन्वदेकांदश॥११॥ ब्रह्मांत्मन्वदेकांदश॥११॥ प्रजापंतिरकामयत् य एवास्यं दक्षिणतः पंश्चाशत्॥५०॥ ब्रह्मवादिनो य एवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

# ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दर्मूना अतिंथिर्दुरोणे। इमं नों यज्ञमुपं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। शृत्रूयतामा भेरा भोजंनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जांस्पृत्य सुयम्मा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महा स्सि। अग्ने यो नोऽभितो जनः। वृको वारो जिद्या स्मित॥१॥

ताइस्त्वं वृत्रहं जिहि। वस्वस्मभ्यमा भेर। अग्ने यो नी-ऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ठाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। त्विमेन्द्राभिभूरंसि। देवो विज्ञांतवीर्यः। वृत्रहा पुंरुचेतंनः। अप प्राचं इन्द्र विश्वारं अमित्रान्॥२॥

अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराध्रा चं ऊरौ। यथा तव शर्मन्मदेम। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तंवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। युजे रथं ग्वेषंण् हरिभ्याम्। उप ब्रह्मांणि जुजुषाणमंस्थुः। विबाधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥

ह्व्यवाहंमिभमातिषाहम्ँ। रक्षोहणं पृतंनासु जिष्णुम्। ज्योतिष्मन्तं दीद्यंतं पुरंन्धिम्। अग्निः स्विष्टकृतमा हुवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृंणाहि। विश्वां देव पृतंना अभि ष्य।

उरुं नः पन्थां प्रदिशन्विभाहि। ज्योतिष्मद्धेह्यजरं न आयुंः। त्वामंग्ने ह्विष्मंन्तः। देवं मर्तास ईडते॥४॥

मन्ये त्वा जातवेदसम्। स ह्व्या वंक्ष्यानुषक्। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुं न नावा दुरिताऽतिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पूषा गा अन्वेतु नः। पूषा रक्षित्वर्वतः। पूषा वाजर्ं सनोतु नः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः॥५॥

सो अस्मार अभैयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अघृंणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एंतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सप्रथां असि। जुष्टो होता वरेंण्यः। त्वयां यज्ञं वितंन्वते। अग्नी रक्षार्रसि सेधति। शुक्रशोंचिरमंत्र्यः। शुचिः पावक ईड्यः। अग्ने रक्षां णो अर्हंसः॥६॥

प्रति ष्म देव रीषंतः। तिपष्ठिर्जरो दह। अग्ने हश्स् न्यंत्रिणम्। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षये श्चिव्रत। आ वांत वाहि भेषजम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वश् हि विश्वभेषजः। देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौ वातः॥७॥

आ सिन्धोरा पंरावतः। दक्षं मे अन्य आवातुं। परान्यो वांतु यद्रपः। यद्दो वांत ते गृहे। अमृतंस्य निधिर्हितः। ततो नो देहि जीवसें। ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह। वात् आवांतु भेषुजम्। शुम्भूर्मयोुभूर्नो हृदे॥८॥

प्रण् आयूर्षि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा हितः। अया सन् ह्व्यमूंहिषे। अया नो धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहृंतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वगा देवेभ्यं इदं नमः। कामों भूतस्य भव्यंस्य। सम्राडेको विरांजति॥९॥

स इदं प्रति पप्रथे। ऋतूनुथ्मृंजते वृशी। काम्स्तदग्रे समंवर्ततािधं। मनंसो रेतंः प्रथमं यदासीत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथंमारुजन्तः। हर्षंमाणासो धृषता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा स्रशिशांनाः। उप प्रयंन्ति नरों अग्निरूपाः॥१०॥

मृन्युर्भगों मृन्युरेवासं देवः। मृन्युर्होता वर्रुणो विश्ववेदाः। मृन्युं विशं ईडते देवयन्तीः। पाहि नो मन्यो तपंसा श्रमेण। त्वमंग्ने व्रत्मृच्छुचिः। देवा असादया इह। अग्ने ह्व्याय् वोढंवे। व्रतानुबिश्नंद्वतपा अदाभ्यः। यजां नो देवा अजरंः सुवीरंः। दध्द्रत्नांनि सुविदानो अग्ने। गोपाय नो जीवसं जातवेदः॥११॥

जिघारं सत्यमित्रां अघुन्वानीं डते सर्वा अरहंसो वातो हृदे राजत्यग्निरूपाः सुविदानो अंग्रु एकं

च∥\_\_\_\_\_

चक्षुंषो हेते मनंसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मांऽघायुरंभिदासंति। तमंग्ने मेन्या मेनिं कृण्। यो मा चक्षुंषा यो मनंसा। यो वाचा ब्रह्मणाऽघायुरंभिदासंति। तयाँऽग्रे त्वं मेन्या। अमुमंमेनिं कृणु। यत्किश्चासौ मनंसा यचं वाचा। यज्ञैर्जुहोति यजुंषा हिविभिंः॥१२॥

तन्मृत्युर्निर्ऋंत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना निर्ऋंतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृंतेन स्त्यम्। इन्द्रेषिता आज्यंमस्य मथ्नन्तु। मा तथ्समृंद्धि यद्सौ क्रोतिं। हन्मिं तेऽहं कृत १ ह्विः। यो में घोरमचींकृतः। अपाँश्चौ त उभौ बाहू। अपंनह्याम्यास्यम्॥१३॥

अपं नह्यामि ते बाहू। अपं नह्याम्यास्यम्। अग्नेर्देवस्य ब्रह्मणा। सर्वं तेऽविधेषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्कारात्। यज्ञं देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टम्स्माकं भूयात्। माऽस्मान्प्रापन्न-रातयः। अन्तिं दूरे स्तो अंग्ने। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥

वृषद्भारेण वर्न्नेण। कृत्या १ हंन्मि कृतामहम्। यो मा नक्तं दिवां सायम्। प्रातश्चाह्नां निपीयंति। अद्या तिमंन्द्र वर्न्नेण। भातृंव्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तन्त्वां। प्रपंद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडें अग्निं विपश्चितम्॥१५॥

गिरा यज्ञस्य सार्धनम्। श्रुष्टीवानंन्धितावांनम्। अग्नें श्केमं ते वयम्। यमं देवस्यं वाजिनंः। अति द्वेषार्रसे तरेम। अवंतं मा समंनसौ समोकसौ। सचेतसौ सरेतसौ। उभौ मामंवतञ्जातवेदसौ। शिवौ भंवतमुद्य नंः। स्वयं कृंण्वानः

## सुगमप्रंयावम्॥१६॥

तिग्मशृंङ्गो वृष्भः शोशृंचानः। प्रत्नः स्थस्थमनु पश्यंमानः। आ तन्तुंमग्निर्दिव्यं तंतान। त्वन्नस्तन्तुंरुत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भवसि देव्यानः। त्वयांऽग्ने पृष्ठं व्यमारुहेम। अथां देवैः संधुमादं मदेम। उद्त्वमं मुंमुग्धि नः। वि पाशंं मध्यमश्चृंत। अवांधमानिं जीवसं॥१७॥

वय सोम व्रते तर्व। मनस्तन्यु बिभ्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमिह। इन्द्राणी देवी सुभगां सुपत्नीं। उद शोन पित्विद्यें जिगाय। त्रि श्रिवंस्या ज्यनं योजंनानि। उपस्थ इन्द्र श्र् स्थिवंरं बिभिति। सेनां हु नामं पृथिवी धंन अया। विश्वयंचा अदिंतिः सूर्यंत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा ददांना॥१८॥

सा नों देवी सुहवा शर्म यच्छत्। आत्वांऽहार्षम्नतरंभूः। ध्रुवस्तिष्ठाविंचाचिलः। विशंस्त्वा सर्वां वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधिं भ्रशत्। ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृंथिवी। ध्रुवं विश्वंमिदं जगंत्। ध्रुवा हु पर्वता इमे। ध्रुवो राजां विशाम्यम्। इहैवैधि मा व्यंथिष्ठाः॥१९॥

पर्वत इवाविंचाचिलः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रम् धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्राणि सञ्जयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवं ध्रुवेणं हृविषां। तस्मैं देवा अधिब्रवन्। अयं च्

#### ब्रह्मणस्पतिः॥२०॥

ह्विर्भिरास्यमिभ् दासंतो विपश्चित्मप्रयावञ्चीवसे दर्दाना व्यथिष्ठा ब्रव्नेत्रे च॥———[२]

जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितृणाम्। अक्षेमव्ययं न किलारिषाथ। यच्छक्षरीषु बृह्ता रवेण। इन्द्रे शुष्ममदंधाथा विसष्ठाः। पावका नः सरस्वती। वाजेभिर्वाजिनीवती। युज्ञं विष्ठु धिया विसुः। सरस्वत्यभिनो नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न आधंक्। जुषस्व नः सुख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्र्हिर्ग्नौ। अयांमि स्रुग्धृतवंती सुवृक्तिः। अम्यक्षि सद्म सदेने पृथिव्याः। अश्रांयि यज्ञः सूर्ये न चक्षुः। इहार्वाञ्चमितं ह्वये। इन्द्रं जैत्रांय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अर्वाञ्चमिन्द्रंम्मुतों हवामहे। यो गोजिद्धंनजिदंश्वजिद्यः॥२२॥

ड्मं नो युज्ञं विंहुवे जुंषस्व। अस्य कुंमीं हरिवो मेदिनं त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिः। मृन्द्रः कृविरुदंतिष्ठो विवस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्ते केतुरंभविद्द्वि श्रितः। अग्निरग्रै प्रथमो देवतांनाम्। संयातानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यजमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद १ हविरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं महः। दीक्षापालेभ्योऽवनंत्र् हि शंक्रा। विश्वेंद्विर्यज्ञियैः संविदानौ। दीक्षामस्मै यजंमानाय धत्तम्। प्र तद्विष्णुंः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंचरो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमणेषु। अधिं क्षियन्ति भुवंनानि विश्वाः। नूमर्तो दयते सनिष्यन् यः। विष्णंव उरुगायाय दार्शत्॥२४॥

प्रयः स्त्राचा मनंसा यजांतै। पृतावंन्तन्नर्यंमा विवांसात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष पृताम्। क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य कीरयो जनांसः। उरुक्षिति स्पुजिनमा चकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष पृताम्। विचंक्रमे शृतर्चंसं महित्वा। प्र विष्णुंरस्तु त्वस्स्तवीयान्। त्वेष इस्य स्थविंरस्य नामं॥२५॥

होतांरं चित्ररंथमध्वरस्यं। यज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्। प्रत्यंधिं देवस्यंदेवस्य मृह्णा श्रिया त्वंग्निमितिंथिं जनांनाम्। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरींवृज्यस्थविरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधद्वृषंण् शृष्मंमिन्द्र। इन्द्रंः सुवर्षा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भः पृतंना अभि श्रीः॥२६॥

प्रारोचयन्मनंवे केतुमहाँम्। अविन्दुज्योतिर्वृह्ते रणांय। अश्विनाववसे निह्वये वाम्। आ नूनं यात १ सुकृतायं विप्रा। प्रात्युक्तिनं सुवृता रथेन। उपागंच्छत्मवसागंतन्नः। अविष्टं धीष्वश्विना न आसु। प्रजावद्रेतो अह्नयं नो अस्तु। आवाँ तोके तनये तूर्तुजानाः। सुरत्नांसो देववीतिं गमेम॥२७॥ त्व सोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभूः। त्वं दक्षैः सुदक्षो विश्ववंदाः। त्वं वृषां वृष्त्वेभिर्मिहृत्वा। द्युम्नेभिर्द्युम्प्रंभवो नृचक्षाः। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षामप्स्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा र सुंक्षिति र सुश्रवंसम्। जयंन्तं त्वामनुं मदेम सोम। भवां मित्रो न शेव्यो घृतासुंतिः। विभूतद्युम्न एव या उं सप्रथाः॥२८॥

अर्था ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमों युज्ञस्य राध्यों ह्विष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवीयसे। सुमज्ञानये विष्णंवे ददांशति। यो जातमस्य महतो महि ब्रवात। सेदु श्रवीभिर्युज्यं चिद्दभ्यंसत्। तम् स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भ हिवषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्तं विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥

ड्मा धाना घृंतस्रुवंः। हरीं इहोपंवक्षतः। इन्द्र रं सुखतंमे रथें। एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदथें शर्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्ं। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिंभिश्चारु सेचंते। श्रुतो गुण आ त्वां विशन्तु॥३०॥

हरिवर्पसङ्गिरं। आचर्षणिप्रा वृष्भो जनानाम्। राजां कृष्टीनां पुरुहूत इन्द्रं। स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपमद्रिक्। युक्ता हरी वृष्णायाँ ह्यर्वाङ्। प्र यथ्सिन्धंवः प्रस्वं यदायन्। आपंः समुद्र रथ्येव जग्मः। अतंश्चिदिन्द्रः सदंसो वरीयान्। यदी र सोमः पृणतिं दुग्धो अर्शः। ह्वयांमसि त्वेन्द्रं याह्यंर्वाङ्॥३१॥

अरंन्ते सोमंस्त्नुवे भवाति। शतंक्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मा अव पृतंनासु प्रयुथ्स। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो विदांनाः। ऋभुर्येभिर्वृषंपर्वा विहांयाः। प्रयम्यमाणान्प्रति षू गृंभाय। इन्द्र पिब वृषंधूतस्य वृष्णंः। अहेडमान उपंयाहि यज्ञम्। तुभ्यं पवन्त इन्दंवः सुतासंः। गावो न वंज्रिन्थ्स्वमोको अच्छं॥३२॥

इन्द्रा गंहि प्रथमो युज्ञियांनाम्। या ते काकुथ्सुकृता या वरिष्ठा। यया शश्वत्यिवसि मध्वं ऊर्मिम्। तयां पाहि प्र तें अध्वर्युरंस्थात्। सन्ते वज्रो वर्ततामिन्द्र गृव्युः। प्रात्युंजा वि बोधय। अश्विनावेह गंच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतयें। प्रात्यावांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृध्रादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्रहि यज्ञमश्विना दधांते। प्रश्रेसन्ति क्वयः पूर्वभाजः। प्रात्यंजध्वमश्विनां हिनोत। न सायमंस्ति देवया अजुंष्टम्। उतान्यो अस्मद्यंजते विचायः। पूर्वः पूर्वो यजंमानो वनीयान्॥३३॥

नृक्तं जाताऽस्योषधे। रामे कृष्णे असिंक्रि च। इद॰ रंजिन रजय। किलासं पिलतं च यत्। किलासं च पिलतं चं। निरितो नांशया पृषंत्। आ नः स्वो अंश्जुतां वर्णः। पर्गं श्वेतानिं पातय। असिंतं ते निलयंनम्। आस्थानमसिंतं

### तवं॥ ३४॥

असिंक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तुनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मंणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सर्रूपा नामं ते माता। सर्रूपो नामं ते पिता। सर्रूपाऽस्योषधे सा। सर्रूपमिदं कृधि॥३५॥

शुन १ हुंवेम मघवांन् मिन्द्रम्ं। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजंसातौ। शृण्वन्तं मुग्रमूतये स्मध्सं। घ्रन्तं वृत्राणि स्ञितं धनांनाम्। धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वसं। नि वो वनां जिहते यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृंश्विमातरः। युधे यदंग्राः पृषंतीरयंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविश्वन्ति वनस्पतीनं॥३६॥

प्रोवारत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि सद्दृङ्गि। विशो विश्वा अनुं प्रभु। समध्सुं त्वा हवामहे। समध्स्विग्निमवंसे। वाज्यन्तों हवामहे। वाजेषु चित्रराधसम्। सङ्गेच्छध्व संवद्ध्वम्। सं वो मना स्मि जानताम्॥३७॥

देवा भागं यथा पूर्वे। सञ्जानाना उपासंत। समानो मन्नः समितिः समानी। समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं केतों अभि स॰ रंभध्वम्। संज्ञानेन वो ह्विषां यजामः। समानी व आकूंतिः। समाना हृदंयानि वः। समानमंस्तु वो मनः। यथां वः सुसहासंति॥३८॥ संज्ञानं नः स्वैः। संज्ञान्मरंणैः। संज्ञानंमिश्विना युवम्। इहास्मासु नियंच्छतम्। संज्ञानं मे बृह्स्पितिः। संज्ञानरं सिवता करत्। संज्ञानंमिश्विना युवम्। इह मह्यं नि यंच्छतम्। उपं च्छायामिव घृणैः। अगन्म शर्म ते व्यम्॥३९॥

अग्ने हिरंण्यसन्दशः। अदंब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वम्। शिवेभिर्द्य परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्नः सुविताय् नव्यंसे। रक्षा मार्किर्नो अघशर्रस ईशत। मदेमदे हि नो ददुः। यूथा गर्वामृजुकर्तुः। सङ्गृंभाय पुरूशता। उभया हस्त्या वस्नं। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिंन्वाजानां पते। शचींवस्तवं द्र्सनां। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभुषुं। सहस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा यूयम्। ऋतस्युर्तेनं मुञ्चत। ऋतस्युर्तेनांऽऽदित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। यज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेंकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्रुचाऽऽज्येन जुह्वंतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥

द्रुपदादिव मुश्चतु। द्रुपदादिवेन्म्ममुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलादिव। पूतं पवित्रेणेवाऽऽज्यम्। विश्वे मुश्चन्तु मैनसः। उद्वयं तमसस्परि। पश्यन्तो ज्योति्रुत्तरम्। देवं देवत्रा

## सूर्यम्। अगन्म ज्योतिंरुत्तमम्॥४३॥

तवं कृषि वनस्पतीं आनतामसंति वयं भंरादित्याश्च नवं च॥————[४]

वृषासो अर्शः पंवते ह्विष्मान्थ्सोमः। इन्द्रंस्य भाग ऋत्यः शतायः। स मा वृषाणं वृष्मं कृणोत्। प्रियं विशा सर्ववीर स्वीरम्। कस्य वृषां सुते सचा। नियुत्वानवृष्मो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। यस्ते शङ्ग वृषोनपात्। प्रणंपात्कुण्डपाय्यः। न्यंस्मिन्दप्र आ मनः॥४४॥

तर स्प्रीचींकृतयो वृष्णियानि। पौइस्यांनि नियुतः सश्चिरिन्द्रम्। समुद्रं न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उरुव्यचंसङ्गिर् आ विंशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिंशितसर्गाः। अपः प्रैरंयन्थ्सगंरस्य बुप्नात्। यो अक्षेणेव चिक्रया शचींभिः। विष्वंक्तस्तम्मं पृथिवीमुत द्याम्। अक्षोदयच्छवंसा क्षामंबुप्नम्। वार्णवांतस्तिविषीभिरिन्द्रंः॥४५॥

दृढान्यौँघ्रादुशमांन् ओजंः। अवांभिनत्कुकुभः पर्वतानाम्। आ नो अग्ने सुकेतुनाँ। र्यिं विश्वायुंपोषसम्। मार्डीकं धेहि जीवसैं। त्व॰ सोम महे भगमैं। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षं दधासि जीवसैं। रथं युअते मुरुतंः शुभे सुगम्। सूरो न मित्रावरुणा गविंष्टिषु॥४६॥

रजा १सि चित्रा विचंरन्ति तुन्यवंः। दिवः संम्राजा पर्यसा न उक्षतम्। वाचु सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पूर्जन्यंश्चित्रां वंदित् त्विषींमतीम्। अभ्रा वंसत मरुतः सुमाययाँ। द्यां वंर्षयतमरुणामंरेपसम्। अयुंक्त सप्त शुन्ध्युवंः। सूरो रथंस्य निष्ठियंः। ताभियाति स्वयुंक्तिभिः। विहेष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥

अवव्ययन्नसितं देव वस्वंः। दिविध्वतो र्ष्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावाधुस्तमो अपस्वंन्तः। पूर्जन्याय प्र गांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नो यवसंमिच्छतु। अच्छां वद त्वसंं गीर्भिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यं नमुसाऽऽविंवास। कनिंऋदद्वृष्भो जीरदांनुः। रेतो दधात्वोषधीषु गर्भम्॥४८॥

यो गर्भमोषंधीनाम्। गवाँ कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणाँम्। तस्मा इदास्ये हृविः। जुहोता मध्मत्तमम्। इडाँ नः स्यतं करत्। तिस्रो यदंग्ने श्ररद्स्त्वामित्। शुचिं घृतेन शुचयः सप्यन्। नामांनि चिद्दिधरे युज्ञियांनि। असूदयन्त तुनुवः सुजांताः॥४९॥

इन्द्रंश्च नः शुनासीरौ। इमं युज्ञं मिंमिक्षतम्। गर्भं धत्त इस्वस्तयें। ययोरिदं विश्वं भुवनमा विवेशं। ययोरानुन्दो निहिंतो महंश्च। शुनांसीरावृतुभिः संविदानौ। इन्द्रंवन्तौ ह्विरिदं जुंषेथाम्। आघाये अग्निमिन्धते। स्तृणन्तिं बर्हिरांनुषक्। येषामिन्द्रो युवा सर्खां। अग्न इन्द्रंश्च मेदिनां। हृथो वृत्राण्यंप्रति। युव हि वृत्रहन्तंमा। याभ्या ह

सुवरजंयन्नग्रं एव। यावांतस्थतुर्भुवंनस्य मध्यें। प्रचंर्षणी वृषणा वज्रंबाहू। अग्नी इन्द्रांवृत्रहणां हुवे वाम्॥५०॥

मन् इन्द्रो गविंष्टिषु तन्तुं गर्भ्ष् सुजांताः सखां सुप्त चं॥————[५]

उत नंः प्रिया प्रियासुं। सप्तस्वसा सुजुंष्टा। सरंस्वती स्तोम्यांऽभूत्। इमा जुह्वांनायुष्मदा नमोंभिः। प्रति स्तोम रं सरस्वति जुषस्व। तव शर्मन्प्रियतंमे दर्धांनाः। उपंस्थेयाम शर्णं न वृक्षम्। त्रीणि पदा विचंक्रमे। विष्णुंर्गोपा अदाँभ्यः। ततो धर्माणि धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथों अश्याम्। नरो यत्रं देवयवो मदंन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धुंरित्था। विष्णौः पदे पर्मे मध्व उथ्सः। कृत्वादा अंस्थु श्रेष्ठः। अद्य त्वां वन्वन्थ्सुरेक्णौः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्। इमा ब्रह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ ब्रह्मः सींद। वीहि सूर पुरोडाशम्॥५२॥

उपं नः सूनवो गिरंः। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भंवन्तु नः। अद्या नो देव सवितः। प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्निय स्व। विश्वांनि देव सवितः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुव। शुचिंमकैर्बृहस्पतिम्॥५३॥

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज् आ चंके। या धारयंन्त देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमंहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानीं। तस्मै विशंः स्वयमेवानंमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एतिं। सकूंतिमिन्द्र सच्युंतिम्। सच्युंतिं ज्ञघनंच्युतिम्॥५४॥

कुनात्काभात्र आ भेर। प्रयपस्यित्रिव स्वथ्यौं। वि नं इन्द्र मृधों जिह। किनींखुनिदव सापयन्। अभि नः सृष्टुंतिं नय। प्रजापंतिः स्त्रियां यशः। मुष्कयोरदधाथ्सपम्। कामस्य तृप्तिमानन्दम्। तस्यौग्ने भाजयेह मां। मोदः प्रमोद आनन्दः॥५५॥

मुष्कयोर्निहिंतः सपंः। सृत्वेव कामंस्य तृप्याणि। दक्षिणानां प्रतिग्रहे। मनसश्चित्तमाकूंतिम्। वाचः स्त्यमंशीमहि। पृश्नाः रूपमन्नस्य। यशः श्रीः श्रयतां मियं। यथाऽहम्स्या अतृंपः स्त्रियै पुमान्ं। यथा स्री तृप्यंति पुःसि प्रिये प्रिया। पृवं भगंस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यः प्रियः। ददामीत्यग्निर्वदित। तथेति वायुराह् तत्। हन्तेति स्त्यं चन्द्रमाः। आदित्यः सत्यमोमिति। आप्स्तथ्सत्यमा भेरन्। यशो यज्ञस्य दक्षिणाम्। असो मे कामः समृद्धताम्। न हि स्पश्मविदन्नन्यम्स्मात्। वैश्वानुरात्पुरपुतारम्ग्रेः॥५७॥

अर्थममन्थन्नमृत्ममूराः। वैश्वान्रं क्षेत्रजित्यांय देवाः। येषांमिमे पूर्वे अर्मास् आसन्। अयूपाः सद्म विभृता पुरूणि। वैश्वानर् त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीमन्याम्भितंस्थुर्जनांसः। पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रुवे। बृह्तीमूतये दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥

अन्तिरिक्षं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृह्ती पर्यः। न ता नंशन्ति न दंभाति तस्करः। नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षति। देवाङ्श्च याभिर्यजते ददांति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अर्वा रेणुकंकाटो अश्जते। न सङ्स्कृतत्रमुपं यन्ति ता अभि। उरुगायमभेयं तस्य ता अनुं। गावो मर्त्यस्य वि चंरन्ति यज्वनः॥५९॥

रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षभिः। विश्वा अधि श्रियोऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दुंहितर्दिवः। रात्री स्तोमं न जिग्युषीं। देवीं वाचंमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पृशवों वदन्ति। सा नों मृन्द्रेष्मूर्जुं दुहांना। धेनुर्वागुस्मानुष सुष्टुतैतुं॥६०॥

यद्वाग्वदंन्त्यविचेत्नानिं। राष्ट्रीं देवानांं निष्सादं मृन्द्रा। चतंस्र ऊर्जं दुदुहे पयार्श्सा। क्षं स्विदस्याः पर्मं जंगाम। गौरी मिंमाय सिल्लानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्यार्श्व समुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिशश्चतंस्रः॥६१॥

ततः क्षरत्यक्षरम्। तद्विश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां

जनयंन्विश्वकंमा। म्रुत्वारं अस्तु गुणवान्थ्सजातवान्। अस्य स्रुषा श्वशुंरस्य प्रशिष्टिम्। सपत्ना वाचं मनंसा उपांसताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजारंसि। स्रुषा सपत्ना श्वशुंरोऽयमंस्तु। अयर शत्रूं अयतु जर्हंषाणः। अयं वाजं जयतु वाजंसातो। अग्निः क्षंत्रभृदिनंभृष्टमोजः। स्ह्सियों दीप्यतामप्रयुच्छन्। विभ्राजंमानः सिमधा न उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहदगुन्द्याम्॥६२॥

धारयंन्पुरोडाश्ं बृह्स्पितं ज्ञधनंच्युतिमान्नदो भगस्य तृप्याण्यग्नेः पृथिवी यज्वंन एत् प्रदिश्श्चतंस्रो वाजंसातौ चुत्वारिं च॥————[६]

वृषाँ ऽस्य १ शुर्वृष्मायं गृह्यसे। वृषा ऽयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कंर्मृण्यो हितो बृहन्नामं। वृष्मस्य या क्कृत्। विष्वान् विष्णो भवत्। अयं यो मामको वृषाँ। अथो इन्द्रं इव देवेभ्यः। वि ब्रंवीतु जनेभ्यः। आयुष्मन्तं वर्चस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥

अस्याः पृथिव्या अध्यक्षम्। इमिनन्द्र वृष्भं कृणु। यः सृश्कः सुवृष्भः। कृत्याणो द्रोण आहितः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृष्भेणं यजामहे। वृष्भेण यजमानाः। अकूरेणेव सूर्पिषां। मृद्धेश्च सर्वा इन्द्रेण। पृतनाश्च जयामसि॥६४॥

यस्यायमृष्भो ह्विः। इन्द्रांय परिणीयतें। जयांति शत्रुंमायन्तम्। अथो हन्ति पृतन्यतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं उद्भिन्दतामंसत्। इन्द्र शुष्मं तुनुवा मेर्रयस्व। नीचा विश्वां अभितिष्ठाभिमातीः। नि शृणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उरुं नो लोकं कृणुहि जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मिभ प्रेहि प्र भंग सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जनेषु। उदींडितो वृंषभ तिष्ठ शुष्मैंः। इन्द्र शत्रूंन्पुरो अस्माकं युध्य। अग्ने जेता त्वं जंय। शत्रूंन्थ्सहस् ओजंसा। वि शत्रून् विमुधों नुद। एतं ते स्तोमं तुविजात विप्रः। रथं न धीरः स्वपां अतक्षम्। यदीदंग्ने प्रतित्वं देव हर्याः॥६६॥

सुवंवतीर्प एंना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्रांय जित्रेषे। स नः सङ्कांसु पारय। पृत्नासाह्यंषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तिरिक्ष्ट्रं सुवंर्म्हत्। वृत्रहा पुंरुचेतंनः। इन्द्रों जिगाय सहंसा सहार्रस। इन्द्रों जिगाय पृतंनानि विश्वां॥६७॥

इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नंः पर्स्पा वरिंवः कृणोत्। अयं कृत्ररगृंभीतः। विश्वजिदुद्धिदिथ्सोमंः। ऋषिविंप्रः काव्येन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा यज्ञम्। शिवो नियुद्धिः शिवाभिः। वायो शुक्रो अंयामि ते। मध्वो अग्रं दिविंष्टिषु॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वारुहो देव नियुत्वंता। इमिनंद्र वर्धय क्षत्रियांणाम्। अयं विशां विश्पतिंरस्तु राजां। अस्मा इंन्द्र मिं वर्चा १सि धेहि। अवर्चसं कणुिह शत्रुं मस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निर्मुं भंज योऽिमत्रों अस्य। वर्ष्मन् क्षुत्रस्यं कुकुिभं श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूंनि॥६९॥

अस्मे द्यांवापृथिवी भूरि वामम्। सन्दुंहाथां घर्मदुघेंव धेनुः। अय॰ राजाँ प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनज्मिं त उत्तरावंन्तमिन्द्रम्। येन् जयांसि न परा जयांसे। स त्वांऽकरेकवृष्भ इस्वानांम्। अथो राजन्नुत्तमं मान्वानांम्। उत्तंरुस्त्वमधरे ते सप्रत्नाः। एकंवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥

विश्वा आशाः पृतंनाः स्ञ्जयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्रूयतः संहस्व। तुभ्यं भरन्ति क्षितयो यविष्ठ। बृितमंग्ने अन्तित् ओत दूरात्। आ भन्दिष्ठस्य सुमृतिं चिकिद्धि। बृहत्ते अग्ने मिह् शर्म भूद्रम्। यो देह्यो अनमयद्वध्स्तैः। यो अर्यपत्नीरुषसंश्वकारं। स निरुध्या नहुंषो यह्वो अग्निः। विशंश्वके बलिहृतः सहोभिः॥७१॥

प्र सद्यो अंग्रे अत्यैष्यन्यान्। आविर्यस्मै चार्रतरो ब्भूथं। ईडेन्यों वपुष्यों विभावाँ। प्रियो विशामितिथिमिनिषीणाम्। ब्रह्मंज्येष्ठा वीर्या सम्भृतानि। ब्रह्माग्रे ज्येष्ठं दिवमा तंतान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जंज्ञे। तेनार्हित ब्रह्मणा स्पर्धितुङ्कः। ब्रह्म सुचों घृतवंतीः। ब्रह्मणा स्वरंवो मिताः॥७२॥ ब्रह्मं युज्ञस्य तन्तंवः। ऋत्विजो ये हंविष्कृतंः। शृङ्गांणीवेच्छुङ्गिणा समन्दंदिश्रिरे। च्षालंवन्तः स्वरंवः पृथिव्याम्। ते देवासः स्वरंवस्तस्थिवा संः। नमः सर्खिभ्यः सृज्ञान्माऽवंगात। अभिभूरग्निरंतर्द्रजा स्मि। स्पृधों विहत्य पृतंना अभिश्रीः। जुषाणो म् आहुंतिं मामिहष्ट। हत्वा सपत्नान् वरिवस्करन्नः। ईशानं त्वा भुवंनानामिभिश्रयम्। स्तौम्यंग्न उरुकृत सुवीरम्। ह्विर्जुषाणः सपत्ना अभिभूरंसि। ज्विह शत्रू रप् मृधों नुदस्व॥७३॥

विशां जंयामसि जीरदानो हर्या विश्वा दिविष्टिषु वसूनि जिगीवान्थ्सहोंभिर्मिता नंश्चत्वारिं

च॥₌

[0]

स प्रत्वन्नवीयसा। अग्नै द्युम्नेन स्यता। बृहत्तंतन्थ भानुना। नवं नु स्तोमंम्ग्नये। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसोः कुविद्वनाति नः। स्वारुहा यस्य श्रियो दृशे। र्यिर्वीरवंतो यथा। अग्ने युज्ञस्य चेतंतः। अदाभ्यः पुरएता॥७४॥

अग्निर्विशां मानुंषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवंः। नव्रक्ष् सोमाय वाजिनें। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्टक्ष श्रुचितम् वसुं। नवर्ष सोम जुषस्व नः। पीयूषंस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता व्यम्। नवंस्य सोम ते व्यम्। आ सुंमृतिं वृंणीमहे॥७५॥

स नो रास्व सहस्रिणः। नव हिवर्जुषस्व नः। ऋतुिनः सोम् भूतंमम्। तदुङ्ग प्रतिहर्य नः। राजन्थ्सोम स्वस्तयै। नव्र्स्तोम्त्रवर् ह्विः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तज्ज्षेषतार् सर्चेतसा। शुचिं नु स्तोमं नवंजातम्द्य। इन्द्रांग्नी वृत्रहणा जुषेथांम्॥७६॥

उभा हि वार् सुहवा जोहंवीमि। ता वाजरं सद्य उंशते धेष्ठां। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवो संहुस्निणौं। युज्ञं न आ हि गच्छंताम्। वसुंमन्तर सुवुर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाइस्तंप्यत॥७७॥

ह्विषोऽस्य नवंस्य नः। सुव्विदो हि जंजिरे। एदं बर्हिः सुष्टरीमा नवंन। अयं यज्ञो यजमानस्य भागः। अयं बंभूव भुवंनस्य गर्भः। विश्वं देवा इदम्द्यागंमिष्ठाः। इमे नु द्यावापृथिवी समीचीं। तन्वाने यज्ञं पुरुपेशंसन्धिया। आऽस्मे पृणीतां भुवंनानि विश्वां। प्रजां पुष्टिम्मृतं नवंन॥७८॥

ड्मे धेनू अमृतं ये दुहातैं। पर्यस्वत्युत्त्रामेतु पृष्टिः। ड्मं यज्ञं जुषमाणे नवेन। समीची द्यावापृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहंनः। चित्रभानुर्घृतासुंतिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्ने तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्ने देवताभ्यः। भागे देव न मीयसे॥७९॥

स एना विद्वान् यंक्ष्यसि। नवुङ् स्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रथमः प्राश्ञांतु। स हि वेद यथां हुविः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोत् विश्वचंर्षणिः। भ्रात्रः श्रेयः समंनेष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन् समंशीमित त्वा। स नों मयोभूः पितो आ विशस्व। शं तोकायं तनुवें स्योनः। पृतमु त्यं मधुना संयुतं यवम्। सरस्वत्या अधिमनावंचकृषुः। इन्द्रं आसीथ्सीरंपितः श्रातऋतुः। कीनाशां आसन्मरुतः सुदानंवः॥८०॥

पुर्षुता वृंणीमहे जुषेथाँन्तर्पयतामृत्त्रवेंन मीयसे स्योनश्चत्वारिं च॥————[८]

जुष्टश्चक्षंपो जुष्टींनरो नक्तञ्चाता वृषास उत नो वृषांऽस्य १ शः सप्रंत्ववद्ष्टौ॥८॥ जुष्टो मृन्युर्भगो जुष्टी नरो हरिंवर्पसङ्गिरः शिप्रिंन्वाजानामुत नेः प्रिया यद्वाग्वदंन्ती विश्वा आशा अशीतिः॥८०॥ जुष्टेः सुदानंवः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रंक्षति विश्वमेजंत्। इर्यो भूत्वा बंहुधा बहूनि। स इथ्सर्वं व्यानशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियंध्वगद्वृषां। तिमत्प्राणं मन्सोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्तु नो ह्विः। मनंसृश्चित्तेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धे देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिम हवम्। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् यूज्ञपंतिं दर्धत्। जुषतां मे वागिद श् ह्विः। विराङ्देवी पुरोहिता। ह्व्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणि बहुधा वदंन्ति। पेशा श्रेसि देवाः पंरमे ज्नित्रें। सा नों विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी जुंषतामिद १ ह्विः। चक्षुंर्देवानां ज्योतिर्मृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानाय बहुधा निधीयते। तस्य सुम्नमंशीमिह। मा नो हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतीयताम्। अनंन्धाश्चक्षुंषा वयम्। जीवा ज्योतिरशीमिह। सुवर्ज्योतिरुतामृतम्। श्रोत्रेण भद्रमुत शृंण्वन्ति सत्यम्। श्रोत्रेण वाचं बहुधोद्यमानाम्। श्रोत्रेण मोदश्च महंश्च श्रूयते। श्रोत्रेण सर्वा दिश् आ शृंणोिम। येन प्राच्यां उत देक्षिणा। प्रतीच्यै दिशः शृण्वन्त्युंत्रात्। तदिच्छ्रोत्रं बहुधोद्यमानम्।

अरान्न नेमिः परि सर्वं बभूव॥३॥

अग्रियमनंपस्फुरन्ती स्त्यः सप्त चं॥-----[१]

उदेहिं वाजिन्यो अस्यपस्वन्तः। इदः राष्ट्रमा विंश सूनृतांवत्। यो रोहितो विश्वमिदं जजानं। स नो राष्ट्रेषु सुधितान्दधातु। रोहं रेरोह्र रोहित आर्रुरोह। प्रजािमवृद्धिं जनुषांमुपस्थम्। तािभः सःरंब्धो अविद्थ्यडुर्वीः। गातुं प्रपश्यंत्रिह राष्ट्रमाऽहाः। आऽहांर्षाद्राष्ट्रमिह रोहितः। मृधो व्यास्थदभयं नो अस्तु॥४॥

अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्वं रीभिः। राष्ट्रं दुंहाथामिह रेवतीभिः। विमंमर्श रोहिंतो विश्वरूपः। समाचुऋाणः प्ररुहो रुहंश्च। दिवं गृत्वायं महृता मंहिम्ना। वि नो राष्ट्रमुनत्तु पर्यसा स्वेनं। यास्ते विश्वस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वृथ्समनु तास्त आऽगुः। तास्त्वा विशन्तु महंसा स्वेनं। सं मांता पुत्रो अभ्येतु रोहितः॥५॥

यूयमुंग्रा मरुतः पृश्ञिमातरः। इन्द्रेण स्युजा प्रमृंणीथ् शत्रून्। आ वो रोहिंतो अशृणोदिभिद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहिंतो द्यावांपृथिवी जंजान। तस्मिड्स्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिञ्छिश्रिये अज एकंपात्। अदर्हद्यावांपृथिवी बलेन। रोहिंतो द्यावांपृथिवी अंदर्हत्। तेन सुवंः स्तिभृतन्तेन नाकंः॥६॥ सो अन्तिरिक्षे रजंसो विमानंः। तेनं देवाः सुव्रन्वंविन्दन्। सुशेवं त्वा भानवो दीदिवा स्मम्। समग्रासो जुह्वो जातवेदः। उक्षन्तिं त्वा वाजिनमा घृतेनं। सरसंमग्ने युवसे भोजंनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जास्पत्यर सुयम्मा कृंणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिंष्ठा महार्रस्ति॥७॥

पुनर्न् इन्द्रों मुघवां ददातु। धनांनि श्रुक्तो धन्यः सुराधाः। अर्वाचीनं कृणुतां याचितो मनः। श्रुष्टी नो अस्य ह्विषों जुषाणः। यानि नोऽजिनं धनांनि। जहर्थं शूर मृन्युनां। इन्द्रानुंविन्द नुस्तानि। अनेनं ह्विषा पुनः। इन्द्र आशांभ्यः परि। सर्वाभ्योऽभंयं करत्॥८॥

जेता शत्रून् विचंर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा समृधे त्वा। पुरो दंधे अमृत्त्वायं जीवसे आकूंतिमस्यावंसे। कामंमस्य समृद्धौ। इन्द्रंस्य युअते धियः। आकूंतिं देवीं मनंसः पुरो दंधे। युज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनंसा सकांमः। विदेयंमेनद्धृदंये निविष्टम्॥९॥

सेद्ग्निर्ग्नी १ रत्ये त्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपाणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेति। आशानां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुभ्यों अमृतेभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं ह्विषां वयम्। विश्वा आशा मधुना स॰ सृजामि। अनुमीवा आप ओषंधयो भवन्तु। अयं यजमानो मृधो व्यस्यताम्॥१०॥

अगृंभीताः पृशवंः सन्तु सर्वें। अग्निः सोमो वर्रणो मित्र इन्द्रंः। बृह्स्पतिः सिवता यः संहस्री। पूषा नो गोभि्रवंसा सरंस्वती। त्वष्टां रूपाणि समनत्तु युज्ञैः। त्वष्टां रूपाणि दर्धती सरंस्वती। पूषा भगर्ं सिवता नो ददातु। बृह्स्पतिद्दिदिन्द्रंः सहस्रम्ं। मित्रो दाता वर्रणः सोमो अग्निः॥११॥

क्रिविष्टिमस्यतान्नवं च॥

[3]

आ नों भर् भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि तें देष्णस्यं धीमहि प्ररेके। उर्व इंव पप्रथे कामों अस्मे। तमापृंणा वसुपते वसूंनाम्। इमं कामंं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा प्रथंश्व। सुवर्यवों मृतिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहंः कृशिकासों अऋन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्। यानिं चकारं प्रथमानिं वज्री॥१२॥

अह्न्नहिमन्वपस्तंतर्द। प्रवृक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अह्न्निहुं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टांऽस्मे वन्नई स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा इव धेनवः स्यन्दंमानाः। अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणोऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्विपबथ्सुतस्यं। आ सायंकं मुघवां दत्त् वन्नम्। अहंन्नेनं प्रथमुजा महीनाम्॥१३॥ यदिन्द्राहंन्प्रथम्जा महीनाम्। आन्मायिनामिनाः प्रोत मायाः। अथ्सूर्यं जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्रा शत्रून्न किलांविविथ्से। अहंन्वृत्रं वृत्रतरं व्यश्सम्। इन्द्रो वर्ज्रण मह्ता व्धेनं। स्कन्धारंसीव कुलिशेनाविवृक्णा। अहिंः शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्ने। महावीरं तुंविबाधमृंजीषम्॥१४॥

नातांरीरस्य समृंतिं वधानांम्। स॰ रुजानाः पिपिष् इन्द्रंशत्रुः। विश्वो विहाया अर्तिः। वसुंदंधे हस्ते दक्षिणे। तरणिर्न शिश्रथत्। श्रवस्यया न शिश्रथत्। विश्वंस्मा इदिंषुध्यसे। देवत्रा ह्व्यमूहिंषे। विश्वंस्मा इथ्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृण्वति॥१५॥

उदुजिहांनो अभि कामंमीरयन्। प्रपृश्चन्विश्वा भुवंनानि पूर्वथां। आ केतुना सुषंमिद्धो यिजिष्ठः। कामं नो अग्ने अभिहंयं दिग्भ्यः। जुषाणो ह्व्यम्मृतेषु दूढ्यः। आ नो र्यिं बंहुलां गोमंतीमिषम्। नि धेहि यक्षंदमृतेषु भूषन्। अश्विना यज्ञमागंतम्। दाशुषः पुरुंद ससा। पूषा रक्षतु नो रियम्॥१६॥

ड्मं यज्ञमिश्वनां वर्धयंन्ता। इमो र्यिं यजंमानाय धत्तम्। इमो पृश्नत्रंक्षतां विश्वतों नः। पूषा नः पातु सद्मप्रंयच्छन्। प्रते महे संरस्वति। सुभंगे वाजिनीवति। सत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं ते हृव्यं घृतवंध्सरस्वति। सृत्यवाचे प्रभरेमा ह्वी १ षिं। इमानिं ते दुरिता सौभंगानि। तेभिंर्वय १ सुभगांसः स्याम॥१७॥

वुज्यहींनामृजीषं व्यृंण्वति रक्षतु नो र्यि॰ सौभंगान्येकं च॥-----[४]

युज्ञो रायो युज्ञ ईशे वसूनाम्। युज्ञः सस्यानांमुत सुंक्षितीनाम्। युज्ञ इष्टः पूर्विचेत्तिं दधातु। युज्ञो ब्रेह्मण्वा अप्येतु देवान्। अयं युज्ञो वर्धतां गोभिरश्वैः। इयं वेदिः स्वपत्या सुवीरां। इदं बर्हिरिते बर्ही इष्यन्या। इमं युज्ञं विश्वे अवन्तु देवाः। भगं एव भगंवा अस्तु देवाः। तेनं वयं भगंवन्तः स्याम॥१८॥

तं त्वां भग् सर्व इज्ञोहवीमि। स नों भग पुरएता भंवेह। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भगेमां धियमुदंव ददंन्नः। भग् प्र णों जनय् गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिनृवन्तः स्याम। शश्वतीः समा उपयन्ति लोकाः। शश्वतीः समा उपयन्त्यापः। इष्टं पूर्त शश्वतीना समाना शश्वतेनं। ह्विषेष्वाऽनन्तं लोकं परमा रुरोह॥१९॥

ड्यमेव सा या प्रंथमा व्यौच्छंत्। सा रूपाणि कुरुते पश्चं देवी। द्वे स्वसारौ वयत्स्तन्नंमेतत्। सनातनं वितंत्र् षण्मंयूखम्। अवान्याङ्स्तन्त्रंन्किरतो धृत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गंमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो अद्या वृष्टिं ये विश्वं मुरुतो जुनन्ति। अयं यो अग्निर्मरुतः सिमंद्धः। पृतं जुंषध्वं कवयो युवानः॥२०॥

धारावरा मुरुतो धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तंविषेभि-रूर्मिभिः। अग्नयो न शुंशुचाना ऋजीषिणः। भ्रुमिन्धमन्त उप गा अवृण्वत। वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधसं नीलंपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पिति सदेने सादयध्वम्। सादद्योनिं दम् आ दीदिवा सम्। हिरंण्यवर्णमरुष सपेम। स हि शुचिः शृतपंत्रः स शुन्ध्यूः॥२१॥

हिरंण्यवाशीरिष्ट्रिः सुंवर्षाः। बृह्स्पतिः स स्वविश ऋष्वाः। पूरू सर्खिभ्य आसुतिं करिष्ठः। पूष्ड् स्तवं व्रते व्यम्। नरिष्येम कृदाचन। स्तोतारंस्त इह स्मंसि। यास्ते पूषन्ना वो अन्तः समुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तरिक्षे चरंन्ति। याभिर्यासि दृत्या स्पर्यस्य। कामेन कृतश्रवं इच्छमानः॥२२॥

अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं न पृंच्छसि। न त्वाभीरिंव विन्दती (३)। वृषार्वाय वदंते। यदुपावंति चिच्चिकः। आघाटीभिरिव धावयन्। अर्ण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेव दृश्यते॥२३॥

उतो अंरण्यानिः सायम्। शक्टीरिव सर्जिति। गामुङ्गेषु आ ह्वंयति। दार्वङ्गेषु उपावधीत्। वसंन्नरण्यान्याः सायम्। अर्नुक्षदितिं मन्यते। न वा अंरण्यानिर्हंन्ति। अन्यश्चेन्नाभिगच्छंति। स्वादोः फलंस्य जग्ध्वा। यत्र कामं नि पंद्यते। आञ्चनगन्धी १ सुर्भीम्। बृह्वन्नामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणां मातरम्। अर्ण्यानीमंश १ सिषम्॥ २४॥ स्याम् रुरोह् युवानः शुन्यूरिच्छमांनो दृश्यते निपंद्यते चुत्वारि च॥———[५]

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्यांय च। इन्द्र त्वा वर्तयामिस। सुब्रह्मांणं वीरवंन्तं बृहन्तम्। उरुं गंभीरं पृथुबंध्नमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र र्यिं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्चामि वर्रुणस्य पाशांत्। अनागसं ब्रह्मंणे त्वा करोमि॥२५॥

शिव ते द्यावांपृथिवी उमे इमे। शं ते अग्निः सहाद्भिरंस्तु। शं द्यावांपृथिवी सहौषंधीभिः। शम्नतरिक्षः सह वातेन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशों भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशंः। वातंपत्नीर्भि सूर्यों विच्छे। तासां त्वा जरस् आ दंधामि। प्र यक्ष्मं एतु निर्ऋतिं पराचैः। अमोंचि यक्ष्मांद्द्रितादवंत्र्ये॥२६॥

द्रुहः पाशान्तिर्ऋंत्यै चोदंमोचि। अहा अवंर्तिमविंदथ्स्योनम्। अप्यंभूद्भद्रे सुंकृतस्यं लोके। सूर्यमृतं तमंसो ग्राह्या यत्। देवा अमुंश्रृन्नस्यंनसः। एवम्हिम्मं क्षेन्त्रियाञ्जामिशृ स्सात्। द्रुहो मुंश्रामि वर्रुणस्य पाशात्। बृहंस्पते युविमन्द्रेश्च वस्वः। दिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य। धृत्तर रिये स्तुंवते कीरयंचित्॥२७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधिमन्द्रमा जोहुंवानाः। विश्वावृधंमभि ये रक्षंमाणाः। येनं हृता दीर्घमध्वांनमायन्। अनुन्तमर्थमिनंवर्थ्स्यमानाः। यत्तं सुजाते हिमवंथ्सु भेषजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोसिं। ततों नो देहि सीबले। अदो गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावसि। स्थाभंमाना कन्यंव शुभ्रे॥२८॥

तां त्वा मुद्गेला ह्विषां वर्धयन्ति। सा नः सीबले र्यिमा भाजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मंभिः। जन्मान्यवंरैः पराणि। वेदांनि देवा अयम्स्मीति माम्। अह॰ हित्वा शरीरं जर्मः प्रस्तात। प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रम्। वाचं मनंसि सम्भृताम्। हित्वा शरीरं ज्रसः प्रस्तात्। आभूतिं भूतिं व्यमंश्वामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रथमा व्यौच्छन्। ता देव्यः कुर्वते पश्चेरूपा। शश्वंतीर्नावंपृज्यन्ति। न गंमन्त्यन्तम्॥२९॥

क्रोम्यवंत्र्ये चिच्छुभ्रेऽश्ञवामहै चृत्वारिं च॥------[६]

वसूनां त्वाऽधीतेन। रुद्राणांमूर्म्या। आदित्यानां तेजंसा। विश्वेषां देवानां ऋतुंना। मुरुतामेम्नां जुहोमि स्वाहाँ। अभिभूतिरहमागंमम्। इन्द्रंसखा स्वायुधंः। आस्वाशांसु दुष्यहंः। इदं वर्चो अग्निनां दत्तमागांत्। यशो भर्गः सह ओजो बर्लं च॥३०॥ दीर्घायुत्वायं श्तर्शारदाय। प्रतिंगृभ्णामि मह्ते वीर्याय। आयुरिस विश्वायुरिस। सर्वायुरिस सर्वमायुरिस। सर्वं म् आयुर्भूयात्। सर्वमायुर्गेषम्। भूर्भुवः सुर्वः। अग्निर्धर्मेणान्नादः। मृत्युर्धर्मेणान्नपितः। ब्रह्मं क्षुत्रक्ष स्वाहां॥३१॥

प्रजापंतिः प्रणेता। बृह्स्पतिः पुरण्ता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहां। अग्निरंन्नादोऽन्नंपितः। अन्नाद्यंमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां। सोमो राजा राजंपितः। राज्यमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां। वर्रणः सम्माद्थ्सम्मादंतिः। साम्रांज्यमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां॥ वर्रणः सम्माद्थ्सम्मादंतिः। साम्रांज्यमस्मिन् यज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां॥ ३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपितः। बलंमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। बृह्स्पितृर्ब्रह्म ब्रह्मंपितिः। ब्रह्मास्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। स्विता राष्ट्रभ राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विद्वंतिः। विश्नमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। सरंस्वती पृष्टिः पृष्टिंपत्नी। पृष्टिंमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। स्वष्टां पशूनां मिथुनाना रूप्कृद्रूपपंतिः। रुपेणास्मिन् युज्ञे यजमानाय पृशून्दंदातु स्वाहाँ॥३३॥

च स्वाहा साम्रांज्यम्स्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहा विशंम्स्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां चुत्वारिं च (अग्निः सोमो वर्रुणो मित्र इन्द्रो बृहस्पतिः सिवता पूषा सर्रस्वती त्वष्टा दर्श॥॥————[७]

स ईं पाहि य ऋंजीषी तरुंत्रः। यः शिप्रंवान्वृष्भो यो मंतीनाम्। यो गौंत्रभिद्वंज्रभृद्यो हंरिष्ठाः। स इंन्द्र चित्राश् अभि तृंन्धि वाजान्। आ ते शुष्मो वृष्भ एत पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तात्। आ विश्वतो अभिसमैत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्नश् सुर्वर्वद्धेह्यस्मे। प्रोष्वंस्मै पुरोर्थम्। इन्द्रांय शूषमंर्चत॥३४॥

अभीके चिद् लोककृत्। सङ्गे समथ्सुं वृत्रहा। अस्माकं बोधि चोदिता। नर्भन्तामन्यकेषाम्। ज्याका अधि धन्वंसु। इन्द्रं वय श्रांनासीरम्। अस्मिन् यज्ञे हंवामहे। आ वाजैरुपं नो गमत्। इन्द्रांय शुनासीरांय। स्रुचा जुंहुत नो हुविः॥३५॥

जुषतां प्रति मेधिरः। प्र ह्व्यानि घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता स्जोषाः। इन्द्रर्तुभिर्ब्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी ह्विरिदं जुंषस्व। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रम्। प्रियमेधा ऋषयो नाधंमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुः। मुमुग्ध्यंस्मान्निधयंऽव बृद्धान्। बृहदिन्द्रांय गायत॥३६॥

मर्रुतो वृत्रहन्तंमम्। येन् ज्योतिरजंनयन्नृतावृधः। देवं देवाय जागृंवि। कामिहैकाः क इमे पंतुङ्गाः। मान्थालाः कुलिपरिमापतन्ति। अनावृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंर्णं चक्षुंस्तुनुवां विदेय। एवा वन्दस्व वरुणं बृहन्तम्। न्मस्याधीरंम्मृतंस्य गोपाम्। स नः शर्म त्रिवरूथं वियर्सत्॥३७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। नार्के सुपूर्णमुप् यत्पतंन्तम्। हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वर्रुणस्य दूतम्। यमस्य योनौं शकुनं भुंरुण्युम्। शं नों देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीत्रयें। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अपो यांचामि भेषजम्। अपसु मे सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषजा। अग्निं चं विश्वशंम्भुवम्। आपश्च विश्वभेषजीः। यद्पसु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मधुं। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमङ्गि सरस्वति। या सरंस्वती वैशम्भल्या॥३९॥

तस्यां मे रास्व। तस्यांस्ते भक्षीय। तस्यांस्ते भूयिष्ठभाजों भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोकुकुज्ञांतवेदः। इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥

ज्योतिषा त्वा वैश्वान्रेणोपंतिष्ठे। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया र्यिम्। या ते अग्ने यज्ञियां तुनूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्॥ अच्छा वसूंनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणि। युज्ञो भूत्वा युज्ञमा सींद् स्वां योनिम्। जातंवेदो भुव आ जायंमानः सक्षंय एहि। उपावंरोह जातवेदः पुनस्त्वम्॥४१॥

देवेभ्यों ह्व्यं वंह नः प्रजानन्। आर्युः प्रजार र्यिम्स्मास्ं धेहि। अजंस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि म्घवानमुग्रम्। स्त्रा दर्धान्मप्रंतिष्कुत्र शवार्रस। मर्रहिष्ठो गीर्भिरा चं यज्ञियोऽव्वर्तत्। राये नो विश्वां सुपर्थां कृणोतु वृज्ञी। त्रिकंद्रकेषु महिषो यवांशिरं तुविशुष्मंस्तृपत्। सोमंमिपबिद्विष्णुंना सुतं यथाऽवंशत्। स ईं ममाद मिह् कर्म कर्तवे महामुरुम्॥४२॥

सैन र सश्चद्वेवं देवः स्त्यिमिन्दु र स्त्य इन्द्रेः। विदय्वतीं स्रमां रुग्णमद्रैः। मिह् पार्थः पूर्व्य समिद्ध्यंकः। अग्रं नयथ्सुपद्यक्षंराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जांन्तीगौत्। विदद्गव्य र स्रमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुषी भोजते विट्। आ ये विश्वौः स्वप्त्यानि चुकुः। कृण्वानासो अमृत्त्वायं गातुम्। त्वं नृभिनृपते देवहृतौ॥४३॥

भूरीणि वृत्वा हंर्यश्व हर्सा। त्वन्निदंस्युश्चमंरिम्। धुनिं चास्वांपयो द्भीतंये सुहन्तुं। एवा पाहि प्रत्नथा मन्दंतु त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्भिः। आविः सूर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रूरं रुभि गा इन्द्र तृन्धि। अग्ने बार्यस्व वि मृधो नुदस्व। अपामीवा अप रक्षा १सि सेध। अस्मार्थ्समुद्राह्धंहुतो दिवो नं:॥४४॥

अपां भूमान्मुपं नः सृजेह। यज्ञ प्रतिं तिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ त्वां। वसूंनि पुरुधा विंशन्तु। दीर्घमायुर्यजंमानाय कृण्वन्। अथामृतेन जित्तारंमिङ्गः। इन्द्रः शुनावृद्धितंनोति सीरम्। संवथ्सरस्यं प्रतिमाणंमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तिदित्तंस ज्येष्ठम्। संवथ्सर शुनवथ्सीरंमेतत्। इन्द्रंस्य राधः प्रयंतं पुरु त्मना। तदंर्करूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रतिं तिष्ठतीद्वृषां। अश्वायन्तों ग्व्यन्तों वाज्यंन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उं। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिन्द्र त्वा शुन १ हुंवेम॥४५॥

अर्चत ह्विर्गायत यश्सचर्षणीनां वैशम्भुल्या हांसीत्त्वमुरुं देवहूंतौ नुस्त्मना पद्वं॥——[८]

प्राण उदेहि पुन्रा नो भर यज्ञो रायो वार्त्रहत्याय वसूना स है पाह्यष्टौ॥८॥ प्राणो रेक्षुत्यगृंभीता धाराव्रा मुरुतों दीर्घायुत्वाय ज्योतिषा त्वा पश्चंचत्वारि श्वत्॥४५॥ प्राणः शुन सहेवेम॥

# हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयबाह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वौ स्वादुनौ। तीव्रां तीव्रेणी। अमृतीम्मृतीन। मधुमतीं मधुमता। सृजामि स॰ सोमीन। सोमौऽस्यिश्यौं पच्यस्व। सर्रस्वत्यै पच्यस्व। इन्द्रीय सुत्राम्णे पच्यस्व। परीतो षिश्चता सुतम्। सोमो य उत्तम॰ हविः॥१॥

द्धन्वा यो नर्यो अपस्वंन्तरा। सुषाव सोम्मिद्रिभिः। पुनातुं ते परिस्रुतम्। सोम् सूर्यस्य दुहिता। वारेण शश्वंता तनां। वायुः पूतः पवित्रेण। प्राङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सखां। वायुः पूतः पवित्रेण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः॥२॥

इन्द्रंस्य युज्यः सखाँ। ब्रह्मं क्षत्रं पंवते तेजं इन्द्रियम्। सुरंया सोमंः सुत आसृंतो मदांय। शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनात्रं यजंमानाय धेहि। कुविद्ङ्ग यवंमन्तो यवंश्चित्। यथा दान्त्यंनुपूर्वं विययं। इहेहैंषां कृणुत भोजंनानि। ये बर्हिषो नमोवृक्तिं न ज्ग्मः। उपयामगृंहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा जुष्टं गृह्णामि॥३॥

सरंस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णैं। एष ते योनिस्तेजंसे त्वा। वीर्याय त्वा बलाय त्वा। तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। वीर्यमिस वीर्यं मियं धेहि। बलंमिस बलं मियं धेहि। नाना हि वाँ देवहिंत्र सदेः कृतम्। मा सरसृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हिरसीः स्वां योनिमाविशन्॥४॥

उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेर्जः। सार्स्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्। एष ते योनिर्मोदाय त्वा। आनन्दायं त्वा महंसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मन्युरंसि मन्युं मियं धेहि। महोऽसि महो मियं धेहि। सहोऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूंचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंतित्रण्रं सिर्हम्। सेमं पात्वर्रंसः। सम्पृचंः स्थ सं मां भद्रेणं पृङ्का विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्का। ५॥

ह्विः प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतो गृह्णाम्याविशन्विपूंचिका पश्चं च॥————[१]

सोमो राजाऽमृत र सुतः। ऋजीषेणांजहान्मृत्युम्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। विपान र शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं। सोममुद्धो व्यंपिबत्। छन्दंसा हुर्सः शुंचिषत्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। अद्धः क्षीरं व्यंपिबत्॥६॥ कुङ्गांङ्गिरसो धिया। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। अन्नौत्पिर्सुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यंपिबत् क्षुत्रम्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। रेतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशिदिन्द्रियम्। गर्भो जरायुणाऽऽवृंतः। उल्बं जहाति जन्मना। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्॥७॥

वेदेन रूपे व्यंकरोत्। स्तासती प्रजापंतिः। ऋतेनं

स्त्यमिन्द्रियम्। सोमेन सोमौ व्यंपिबत्। सुतासुतौ प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्। सत्यानृते प्रजापंतिः। अश्रंद्धामनृतेऽदंधात्। श्रद्धाः सत्ये प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा परिस्रुतो रसम्। श्रुक्रेणं शुक्रं व्यंपिबत्। पयः सोमं प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं॥८॥

अद्भाः क्षीरं व्यंपिबुज्जन्मंनुर्तेनं सुत्यमिन्द्रियः श्रृद्धाः सृत्ये प्रजापंतिरृष्टौ चं॥———[२]

सुरांवन्तं बर्ह्षिद र् सुवीरम्ं। यज्ञ हिन्वन्ति मिह्षा नमोभिः। दर्धानाः सोमं दिवि देवतांसु। मदेमेन्द्रं यजमानाः स्वर्काः। यस्ते रसः सम्भृत ओषंधीषु। सोमंस्य शुष्मः सुरया सुतस्यं। तेनं जिन्व यजमानं मदेन। सर्रस्वतीमिश्वनाविन्द्रंमिग्निम्। यमश्विना नमुंचेरासुरादिधं। सर्रस्वत्यसंनोदिन्द्रियायं॥९॥

ड्मन्तर शुक्रं मधुमन्त्मिन्दुम्ं। सोम्र् राजांनिम्ह्
भंक्षयामि। यदत्रं रिप्तर रिसनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो
अपिंबच्छचींभिः। अहं तदंस्य मनसा शिवेनं। सोम्र्
राजांनिम्ह भंक्षयामि। पितृभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः।
पितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रिपेतामहेभ्यः
स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। अक्षंन्पितरः॥१०॥

अमीमदन्त पितरंः। अतींतृपन्त पितरंः। अमीमृजन्त

पितरंः। पितंरः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरंः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। पवित्रेण श्वायुंषा। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥

प्वित्रेण श्तायुंषा। विश्वमायुर्व्यश्ववे। अग्न आयूर्षिष पवसेऽग्ने पर्वस्व। पर्वमानः सुवर्जनः पुनन्तुं मा देवजनाः। जातंवेदः प्वित्रंवद्यते प्वित्रंमिर्चिषि। उभाभ्यां देव सवितर्वेश्वदेवी पुनती। ये संमानाः समनसः। पितरो यम्राज्ये। तेषां लोकः स्वधा नमः। यज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समंनसः। जीवा जीवेषुं मामुकाः। तेषा्ड्रं श्रीमीयं कल्पताम्। अस्मिँ होके शत्र समाँः। द्वे स्रुती अंश्रणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यानाम्। याभ्यांमिदं विश्वमेज्ञथ्समेति। यदंन्तरा पितरं मातरं च। इद हिवः प्रजनंनं मे अस्तु। दर्शवीर स्वर्गण्ड् स्वस्तयें। आत्मसिनं प्रजासिनं। पृशुसन्यंभयसिनं लोक्सिनं। अग्निः प्रजां बंहुलां में करोतु। अन्नं पयो रेतों अस्मासुं धत्त। रायस्पोषमिषमूर्जमस्मासुं दीधर्थस्वाहाँ॥१३॥

इन्द्रियायं पितरंः शतायुंषा पुनन्तुं मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः कल्पताः स्वस्तये पश्चं

सीसेन तन्नं मनसा मनीषिणंः। ऊर्णासूत्रेणं कवयों

[3]

वयन्ति। अश्विनां युज्ञश् संविता सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपं वरुणो भिष्ठयन्। तदंस्य रूपमृमृत्श् शचींभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवताः सश्रगणाः। लोमांनि शष्पैंर्बहुधा न तोक्मंभिः। त्वगंस्य माश्समंभवन्न लाजाः। तद्श्विनां भिषजां रुद्रवंर्तनी। सरंस्वती वयति पेशो अन्तरः॥१४॥

अस्थिं मुज्ञानं मासंरैः। कारोत्रेण दर्धतो गर्वां त्वचि। सरंस्वती मनंसा पेश्लं वसुं। नासंत्याभ्यां वयति दर्शतं वपुः। रसं परिस्रुता न रोहितम्। नुग्रहुर्धीर्स्तसंर्न्न वेमं। पर्यसा शुक्रम्मृतंं जनित्रम्ं। सुरया मूत्रांजनयन्ति रेतः। अपामंतिं दुर्मतिं बार्धमानाः। ऊर्वध्यं वातरं सबुवन्तदारात्॥१५॥

इन्द्रेः सुत्रामा हृदेयेन स्त्यम्। पुरोडाशेन सिवृता जंजान। यकृत्क्रोमानं वरुणो भिष्ज्यन्। मतंस्ने वायव्यैर्न मिनाति पित्तम्। आत्राणि स्थाली मधु पिन्वंमाना। गुदा पात्राणि सुद्धा न धेनुः। श्येनस्य पत्रं न प्रीहा शवींभिः। आसन्दी नाभिरुदरं न माता। कुम्भो विनिष्ठुर्जनिता शवींभिः। यस्मित्रग्रे योन्यां गर्भो अन्तः॥१६॥

प्राशीर्व्यक्तः शतधार उथ्संः। दुहे न कुम्भी इस्वधां पितृभ्यंः। मुख् सदंस्य शिर् इथ्सदेन। जिह्वा पवित्रंमिश्वना स सरंस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालः। वस्तिनं शेपो हरंसा तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुंर्मृतं ग्रहाँभ्याम्। छार्गेन् तेजों ह्विषां शृतेनं। पक्ष्माणि गोधूमैः क्रेलेरुतानिं। पेशो न शुक्लमसितं वसाते॥१७॥

अविर्न मेषो निस वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सरंस्वृत्युप्वाकैंर्व्यानम्। नस्यांनि बर्हिर्बदंरैर्जजान। इन्द्रंस्य रूपमृष्भो बलाय। कर्णांभ्याड्ड् श्रोत्रंममृतं ग्रहाँभ्याम्। यवा न ब्र्हिर्भुवि केसंराणि। कर्कन्धुं जज्ञे मधुं सार्घं मुखाँत्। आत्मन्नुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रूणि न व्यांघ्रलोमम्॥१८॥

केशा न शीर्षन् यशंसे श्रियै शिखाँ। सि॰्हस्य लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मिन्धिजा तद्धिनाँ। आत्मान्मङ्गः समधाथ्सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूप॰ श्तमान्मायुंः। चन्द्रेण् ज्योतिर्मृतं दर्धाना। सरंस्वती योन्यां गर्भम्नतः। अधिभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति। अपा॰ रसेन् वरुणो न साम्नां। इन्द्रः श्रिये जनयंत्रपस् राजां। तेजः पशूना॰ ह्विरिन्द्रियावंत्। परिस्रुता पर्यसा सार्घं मधुं। अधिभ्यां दुग्धं भिषजा सरंस्वत्या सुतासुताभ्यांम्। अमृतः सोम् इन्दुः॥१९॥

अन्तरं आरादुन्तर्वसाते व्याघ्रलोमः राजां चृत्वारिं च॥—————[४]

मित्रों ऽसि वर्रणो ऽसि। समहं विश्वैर्देवैः। क्षुत्रस्य

नाभिरसि। क्षत्रस्य योनिरसि। स्योनामा सींद। सुषदामा सींद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद धृतव्रंतो वरुणः। पुस्त्यांस्वा॥२०॥

साम्राज्याय सुक्रतुंः। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्भेषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। सर्रस्वत्ये भैषंज्येन॥२१॥

वीर्यायात्राद्यायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सवितुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। इन्द्रंस्येन्द्रियेणं। श्रियै यशंसे बलायाभिषिश्चामि। कोऽसि कत्मोऽसि। कस्मैं त्वा कार्यं त्वा। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)न्। शिरो मे श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्ँ। त्विषिः केशाँश्च श्मश्रूंणि। राजां मे प्राणीं-ऽमृतम्ँ। सम्राद्वक्षुंः। विराद्धोत्रम्ँ। जिह्वा में भुद्रम्। वाङ्गहंः। मनों मृन्युः। स्वराङ्कामंः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गांनि॥२३॥

चित्तं मे सहंः। बाहू मे बलंमिन्द्रियम्। हस्तौं मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो ममं। पृष्टीर्मे राष्ट्रमुदर्म १ सौं। ग्रीवाश्च श्रोण्यौं। ऊरू अंरुब्री जानुंनी। विशो मेऽङ्गांनि सुर्वतः। नाभिर्मे चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मे ५ पंचितिर्भसत्॥ २४॥ आनन्दनन्दावाण्डौ में। भगः सौभाँग्यं पसंः। जङ्घाँभ्यां पद्मां धर्मों ऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रतिं क्षत्रे प्रतिं तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्चेषु प्रतिं तिष्ठामि गोषुं। प्रत्यङ्गेषु प्रतिं तिष्ठामि गोषुं। प्रत्यङ्गेषु प्रतिं तिष्ठाम्यात्मन्। प्रतिं प्राणेषु प्रतिं तिष्ठामि पुष्टे। प्रति द्यावांपृथिव्योः। प्रतिं तिष्ठामि यज्ञे॥२५॥

त्रया देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृह्स्पतिंपुरो-हिताः। देवस्यं सिवृतुः स्वे। देवा देवैरंवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैः। द्वितीयास्तृतीयैः। तृतीयाः सत्येनं। सत्यं यज्ञेनं। यज्ञो यजुर्भिः॥२६॥

यजूर्षेषि सामंभिः। सामाँन्यृग्भिः। ऋचों याज्यांभिः। याज्यां वषद्वारेः। वृषद्वारा आहुंतिभिः। आहुंतयो मे कामान्थ्समंधयन्तु। भूः स्वाहाँ। लोमांनि प्रयंतिमंमं। त्वङ्म आनंतिरागंतिः। मार्ष्सं म् उपनितिः। वस्वस्थि। मुज्जा म् आनंतिः॥२७॥

पुस्त्यांस्वा सरंस्वत्ये भैषंज्येन श्रीरङ्गांनि भुसद्यज्ञे यज्ञो यजुंर्भि्रुपंनितिर्द्वे चं॥ $lue{lue}$ 

यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि दिवा यदि नक्तम्। एना १ सि चकृमा व्यम्। वायुर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि जाग्रद्यदि स्वप्नें। एना १ सि चकृमा व्यम्॥ व्यम्॥ २८॥

सूर्यो मा तस्मादेनंसः। विश्वान्मुश्चत्व १ हंसः। यद्ग्रामे

यदरंण्ये। यथ्मभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्र्यें। एनश्चकृमा वयम्। यदेकस्याधि धर्मणि। तस्यांवयजंनमसि। यदापो अप्निया वरुणेति शपांमहे। ततो वरुण नो मुश्च॥२९॥

अवंभृथ निचङ्कुण निचेरुरंसि निचङ्कुण। अवं देवैर्देवकृंतमेनोंऽयाट्। अव मर्त्यूर्मर्त्यंकृतम्। उरोरा नो देव रिषस्पांहि। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्में भूयासुः। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। द्रुपदाद्विन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलांदिव॥३०॥

पूतं प्वित्रेणेवाज्यम्। आपः शुन्धन्तु मैनंसः। उद्घयं तमंस्स्परि। पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अगंन्म ज्योतिरुत्तमम्। प्रतियुतो वर्रणस्य पाशः। प्रत्यंस्तो वर्रणस्य पाशः। प्रश्यं प्रशं प्रस्योधिषीमहि। सुमिदंसि॥३१॥

तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। अपो अन्वंचारिषम्। रसेन् समंसृक्ष्मिह। पर्यस्वाः अग्न आगंमम्। तं मा सःसृंज् वर्चसा। प्रजयां च धनेन च। समावंवित पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वंमिदं जगंत्। वैश्वान्रज्योतिर्भूयासम्। विभुं कामं व्यंश्ववै। भूः स्वाहां॥३२॥

स्वप्न एनार्रसि चकृमा वयं मुंश्च मलांदिव समिदंसि जगुत्रीणि च॥————[६]

होतां यक्षथ्समिधेन्द्रंमिडस्पदे। नाभां पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्मान्थ्समिध्यते। ओजिष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्तन्नूनपांतम्। ऊतिभि्जेतांर्मपंराजितम्। इन्द्रं देव र सुंव्विदम्। पृथिभिर्मधुंमत्तमैः। नराश रसेंन् तेजंसा॥ ३३॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्विडांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वांनुममंत्र्यम्। देवो देवैः सवींर्यः। वज्रंहस्तः पुरन्दरः। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतांयक्षद्वर्हिषीन्द्रंन्निषद्वरम्। वृष्मं नर्यापसम्। वस्ंभीरुद्रैरांदित्यैः। स्युग्भिंर्बर्हिरा-संदत्॥३४॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रदोजो न वीर्यम्ं। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रंयन्तामृतावृधंः। द्वार् इन्द्रांय मीदुषें। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेनू। सुदुघे मातरौं मही। सवातरौ न तेजंसी। वथ्समिन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रद्देव्या होतांरा। भिषजा सर्खाया। ह्विषेन्द्रंं भिषज्यतः। क्वी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयंस्त्रिधातंवोपसंः। इडा सरंस्वती भारती॥३६॥

महीन्द्रंपत्नीर्ह्विष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांर्मिन्द्रं देवम्। भिषज्ञं सुयजं घृतिश्रयम्। पुरुरूपं सुरेतंसं मुघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वन्स्पतिम्। शृमितार १ शृतऋंतुम्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥

मध्वां सम्अन्पथिभिः सुगेभिः। स्वदांति ह्वयं मधुंना घृतेनं। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षदिन्द्र स्वाहा-ऽऽज्यंस्य। स्वाहा मेदंसः। स्वाहां स्तोकानांम्। स्वाहां स्वाहांकृतीनाम्। स्वाहां ह्व्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्। स्वाहेन्द्र होत्राञ्जंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होतर्यजं॥३८॥

तेजंसाऽऽसददवर्धतां भारंतीन्द्रियं जुंषाणा द्वे चं (स्मिधेन्द्रन्तनूनपांतिमडांभिर्बुर्हिष्योजं उषे दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरुं वनस्पतिमिन्द्रम्॥ स्मिधेन्द्रं चृतुर्वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेकों वियन्तु होत्यर्यजं॥)॥————[७]

सिमिंद्ध इन्द्रं उषसामनीके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रिष्शता वर्ज्ञंबाहुः। ज्ञ्चानं वृत्रं वि दुरों ववार। नराशरसः प्रतिशूरो मिमानः। तनूनपात्प्रति यज्ञस्य धामं। गोभिर्वृपावान्मध्ना सम्अन्। हिरंण्येश्चन्द्री यजिति प्रचेताः। ईडितो देवैर्हिरंवार अभिष्टिः। आजुह्वांनो ह्विषा शर्धमानः॥३९॥

पुरन्दरो मघवान् वर्ज्ञबाहुः। आयांतु यज्ञमुपंनो जुषाणः। जुषाणो बर्हिर्हरिवान्न इन्द्रेः। प्राचीन सीदत्प्रदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथंमान स्योनम्। आदित्यैर्क्तं वसुंभिः सजोषाः। इन्द्रं दुरंः कवृष्यों धावंमानाः। वृषाणं यन्तु जनंयः सुपर्लीः। द्वारों देवीर्भितो विश्रंयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथंमाना महोभिः॥४०॥

उषासानक्तां बृह्ती बृहन्तम्। पर्यस्वती सुदुघे शूरिमन्द्रम्। पेशंस्वती तन्तुंना संव्ययंन्ती। देवानां देवं यंजतः सुरुको। देव्या मिमाना मनसा पुरुत्रा। होतांराविन्द्रं प्रथमा सुवाचां। मूर्धन् यज्ञस्य मधुंना दर्धाना। प्राचीनं ज्योतिंह्विषां वृधातः। तिस्रो देवीर्ह्विषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषंणं न पत्नीः॥४१॥

अच्छिन्नं तन्तुं पर्यसा सरेस्वती। इडां देवी भारती विश्वतूँर्तिः। त्वष्टा दध्दिन्द्रांय शुष्मम्। अपाकोचिष्टुर्यशसे पुरूणि। वृषा यज्नन्वृषणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्त देवान्। वनस्पतिरवंसृष्टो न पाशैः। त्मन्यां सम्अञ्छंिमता न देवः। इन्द्रंस्य ह्व्यैर्ज्ठरं पृणानः। स्वदांति ह्व्यं मध्ना घृतेनं। स्तोकानामिन्दुं प्रति शूर इन्द्रंः। वृषायमाणो वृष्भस्तुंराषाट्। घृतप्रषा मध्ना ह्व्यमुन्दन्। मूर्धन् यज्ञस्यं जुषता इ स्वाहाँ॥४२॥

शर्धमानो महोंभिः पत्नींधृतेनं चत्वारिं च॥-----[८]

आचंर्षणिप्रा विवेष यन्मां। त॰ स्प्रीचींः। सृत्यमित्तन्न त्वावा॰ अन्यो अस्ति। इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अहुन्निहं परि्शयान्मर्णः। अवांसृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रूनं। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह गृतिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूनि। पितः सिन्धूनामिस रेवतीनाम्। स शेवृंधमिधं धाद्युम्नम्स्मे। मिहं क्षत्रं जनाषािडंन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो मुघोनः पाहि सूरीन्। राये च नः स्वपृत्या इषे धाः॥४३॥

रेवतीनां चुत्वारि च॥

[6]

देवं ब्रहिरिन्द्र र सुदेवं देवैः। वीरवंध्स्तीणं वेद्यांमवर्धयत्। वस्तौर्वृतं प्राक्तौर्भृतम्। राया ब्रहिष्मृतोऽत्यंगात्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वार् इन्द्र र सङ्घाते। विङ्वीर्यामंन्नवर्धयन्। आ वृथ्सेन् तरुणेन कुमारेणं चमीविता अपार्वाणम्। रेणुकंकाटं नुदन्ताम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥४४॥

देवी उषासानक्तां। इन्ह्रं युज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीविंशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रीते सुधिते अभूताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री वसुंधिती। देविमन्द्रंमवर्धताम्। अयांव्यन्याघा द्वेषा रसि। आन्यावांक्षीद्वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजी। देवी ऊर्जाहंती दुघें सुदुघें। पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इष्मूर्जम्नयाऽवांक्षीत्। सन्धिः सपीतिमन्या। नवेन पूर्वं दयंमाने। पुराणेन नवम्। अधांतामूर्जमूर्जाहुंती वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥

देवा दैव्या होतांरा। देविमन्द्रंमवर्धताम्। हृताघंश र सावा-भाष्टां वसुवार्याणि। यजंमानाय शिक्षितौ। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। अस्पृक्षद्भारती दिवम्। रुद्रेर्यज्ञ र सरंस्वती। इडा वसुंमती गृहान्॥४७॥

वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशर्सः। त्रिव्रूथिस्निवन्धुरः। देविमन्द्रमवर्धयत्। शृतेनं शिति-पृष्ठानामाहितः। सहस्रेण प्रवर्तते। मित्रावरुणेदेस्य होत्रमर्हतः। बृह्स्पितिः स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वर्यवम्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४८॥

देव इन्द्रो वन्स्पतिः। हिरंण्यपर्णो मधुंशाखः सुपिप्पलः। देविमन्द्रंमवर्धयत्। दिव्मग्रंणाप्रात्। आऽन्तिरक्षं पृथिवीमंद्दश्हीत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनाम्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्वासस्थिमन्द्रेणा-संन्नम्। अन्या बर्ही इष्यभ्यंभूत्। वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्वन्थ्रित्वंष्टकृत्। स्विष्टम्द्यं करोतु नः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४९॥

वियन्तु यर्ज शिक्षिते शिक्षिते वंसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज गृहान् वेतु यर्जामॄथ्यद्वं (देवं ब्रुहिर्देवीर्द्वारी देवी उपासानक्तां देवी जोष्ट्री देवी ऊर्जाहुंती देवा दैव्या होतांरा शिक्षितौ देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्देव इन्द्रो नराशश्सों देव इन्द्रो वनस्पतिंदेंवं बर्हिर्वारितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवम्। वेतु वियन्तु चतुर्वीतामेको वियन्तु चतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयन्त्रिरंवर्धतामेकोऽ वर्धयश्चतुरंवर्धयत्। वस्तोरा वथ्सेन् दैवीरयावीपर्श्हताऽस्पृक्षच्छतेन् दिवई स्वासस्थश् स्विष्टश् शिक्षिते शिक्षिते शिक्षिते शिक्षिते॥॥॥———[१०]

होतां यक्षथ्समिधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्रभ् सर्रस्वतीम्। अजो धूम्रो न गोधूमैः क्वंत्रेभेषजम्। मधु शष्पैर्न तेजं इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्तत्तनूनपाथ्सरंस्वती। अविमेषो न भेषजम्। पथा मधुंमताभंरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥

बदंरैरुप्वाकांभिर्भेषुजं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षं नराशक्सं न नग्नहुम्। पतिक स्रांये भेषजम्। मेषः सरंस्वती भिषक्। रथो न चन्द्रांश्विनौर्वपा इन्द्रंस्य वीर्यम्। बदंरैरुप्वाकांभिर्भेषुजं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं॥५१॥

होतां यक्षिद्विडेडित आजुह्वांनः सरंस्वतीम्। इन्द्रं बर्लन वर्धयन्। ऋष्भेण गवेन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैः कर्कन्धुंभिः। मधुं लाजैर्न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षद्धर्हिः सुष्टरीमोर्णमदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥

भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनुः सरंस्वती। भिषग्दुह इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्दुरो दिशः। कृव्ष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशः। इन्द्रो न रोदंसी दुघैं। दुहे कामान्थ्सरंस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्रांय भेषजम्। शुक्रं न ज्योतिरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुपेशंसोषे नक्तं दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेषजम्। श्येनो न रजंसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥

वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्दैव्या होतांरा भिषजाऽश्विनां। इन्द्रं न जागृंवी दिवा नक्तं न भेषजेः। शूष्ट्रं सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीर्न भेषजम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपिनन्द्रं हिरण्ययम्॥५५॥

अश्विनेडा न भारती। वाचा सरस्वती। मह् इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांरमिन्द्रमश्विनां। भिषजुं न सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिंन्द्रियम्। वृको न रंभुसो भिषक्। यशः सुरंया भेषजम्॥५६॥

श्रिया न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मध्ं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शमितार श्रे शतक्रेतुम्। भीमं न मृन्यु राजांनं व्याघ्रं नमंसाऽश्विना भामम्। सरंस्वती भिषक्। इन्द्रांय दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मध्ं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५७॥

होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहां मेदंसां पृथंक्। स्वाहा छागंमिश्वभ्यांम्। स्वाहां मेषः सरंस्वत्ये। स्वाहंर्ष्भिमिन्द्रांय सिःश्हाय सहंसेन्द्रियम्। स्वाहाऽग्निं न भेषजम्। स्वाहा सोमंमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्रः सुत्रामाणः सिवतारं वरुणं भिषजां पितम्। स्वाहा वनस्पितं प्रियं पाथो न भेषजम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्॥५८॥

स्वाह् । प्रिम्नु हो त्राञ्जंषाणो अग्निर्भेष जम्। पयः सोमः पिर्म्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षदिश्वना सरंस्वतीमिन्द्रः सुत्रामाणम्। इमे सोमाः सुरामाणः। छागैर्न मेषेर्ऋष्भः सुताः। शष्पैर्न तोकांभिः। लाजैर्महंस्वन्तः। मदा मासंरेण परिष्कृताः। शुक्राः पर्यस्वन्तोऽमृताः। प्रस्थिता वो मधुश्चृतः। तानिश्वना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। जुषन्ताः सौम्यं मधुं। पिबन्तु मदंन्तु वियन्तु सोमम्ं। होत्र्यंजं॥५९॥

वीर्यं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यज्ञ नासंत्या सरंस्वती मधुं हिर्ण्ययं भेषुजं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजांजयपानमृताः पश्चं च (स्मिधाऽग्निश् षट्। तनूनपांथ्सप्ताः नराशश्समृषिः। इडेडितो यवैर्ष्टो। बर्हिः सप्ताः दरोऽश्विना नवं। सुपेश्रसर्षिः। दैव्या होतांरा सीसेन रसंः। तिस्रस्त्वष्टांरमृष्टावंष्टो। वनस्पतिमृषिः। अग्नित्रयोदशः। अश्विना द्वादंश त्रयोदशः। स्मिधाऽग्निं बदंरै्वंदंरै्यंवैर्श्विना त्विषिमृश्विना न भेष्जश् रूपमृश्विनां भीमं भामम्॥॥———[११]

सिंद्धो अग्निरंश्विना। तृप्तो घर्मो विराद्थ्सुतः। दुहे धेनुः सरंस्वती। सोमर् शुक्रमिहेन्द्रियम्। तृनूपा भिषजां सुते। अश्विनोभा सरंस्वती। मध्वा रजारसीन्द्रियम्। इन्द्रांय पृथिभिर्वहान्। इन्द्रायेन्दुर् सरंस्वती। नराशरसेन नुग्नहुं:॥६०॥

अधांताम्श्विना मधुं। भेषजं भिषजां सुते। आजुह्वांना सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणि वीर्यम्। इडांभिरश्विनाविषम्। समूर्ज्र स॰ र्यिं दंधुः। अश्विना नमुंचेः सुतम्। सोम॰ शुक्रं पंरिस्रुतां। सरंस्वती तमाभरत्। बर्हिषेन्द्रांय पातंवे॥६१॥

क्वष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः। इन्द्रो न रोदंसी दुधं। दुहे कामान्थ्सरंस्वती। उषासा नक्तंमश्विना। दिवेन्द्र सायमिन्द्रियेः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरंस्वत्या। पातं नो अश्विना दिवां। पाहि नक्त सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातमिन्द्र सर्चां सुते। तिस्रस्रेधा

सरंस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं परिस्रुता सोमम्ँ। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्ँ। अश्विना भेषजं मधुं। भेषजं नः सरंस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्ँ। रूप र रूपमधुः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शशमानः परिस्रुतां। कीलालंमश्विभ्यां मधुं। दुहे धेनुः सरंस्वती। गोभिनं सोमंमश्विना। मासंरेण परिष्कृतां। समंधाता र सरंस्वत्या। स्वाहेन्द्रे सुतं मधुं॥६३॥

नुम्रहुः पातंवे सरस्वत्यधुः सुतेंऽष्टौ चं॥———[१२]

अश्विनां ह्विरिन्द्रियम्। नमुंचेर्धिया सरंस्वती। आ शुक्रमांसुराद्वसु। मुघमिन्द्रांय जिभ्रेरे। यमश्विना सरंस्वती। ह्विषेन्द्रमवर्धयन्। स बिंभेद वृतं मुघम्। नमुंचावासुरे सर्चां। तिमन्द्रं पृशवः सर्चां। अश्विनोभा सरंस्वती॥६४॥

दधांना अभ्यंनूषत। हृविषां यज्ञिमिन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियं द्धुः। सृविता वर्रुणो भगः। स सुत्रामां हृविष्यंतिः। यजमानाय सश्चत। सृविता वर्रुणोऽदधंत्। यजमानाय दाशुषें। आदंत्त नमुंचेर्वसुं। सुत्रामा बलंगिन्द्रियम्॥६५॥

वर्रणः क्षुत्रमिन्द्रियम्। भगेन सिवता श्रियम्। सुत्रामा यशंसा बलम्। दधांना यज्ञमांशत। अश्विना गोभिरिन्द्रियम्। अश्वेभिर्वीर्यं बलम्। हिवेषेन्द्र सरंस्वती। यजंमानमवर्धयन्। ता नासंत्या सुपेशंसा। हिरंण्यवर्तनी नरां। सरंस्वती हिविष्मंती। इन्द्र कर्मसु नोऽवत। ता भिषजां

सुकर्मणा। सा सुदुघा सरंस्वती। स वृत्रहा श्वतक्रंतुः। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्॥६६॥

उभा सरस्वती बलमिन्द्रियन्नरा षद्वं॥———[१३]

देवं ब्र्हिः सरंस्वती। सुदेविमन्द्रं अश्विनाः तेजो न चक्षुंरक्ष्योः। ब्र्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवीर्द्वारों अश्विनाः। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। प्राणं न वीर्यन्तिसा द्वारों दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६७॥

देवी उषासांविश्वनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। बलं न वार्चमास्यें। उषाभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेर्यस्य वियन्तु यजं। देवी जोष्ट्री अश्विनां। सुत्रामेन्द्रे सरस्वती। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशंः। जोष्ट्रीभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेर्यस्य वियन्तु यजं॥६८॥

देवी ऊर्जाहुंती दुघे सुदुघें। पयसेन्द्र सरंस्वत्यश्विनां भिषजांवत। शुक्रं न ज्योतिः स्तनंयोराहुंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवा देवानां भिषजां। होतांराविन्द्रंमश्विनां। वषद्भारेः सरंस्वती। त्विष्ं न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सरंस्वत्यश्विना भारतीडाँ।

शूष्त्र मध्ये नाभ्यांम्। इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशश्संः। त्रिवरूथः सरंस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथंः। रेतो न रूपम्मृतंं जनित्रम्ं। इन्द्रांय त्वष्टा दधंदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७०॥

देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिरंण्यपर्णो अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः सुपिप्पृलः। इन्द्रांय पच्यते मधुं। ओजो न जूतिमृंषुभो न भामम्। वनस्पतिनीं दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजे। देवं बर्हिर्वारितीनाम्। अध्वरे स्तीर्णमृश्विभ्यांम्। ऊर्णम्रदाः सरंस्वत्याः॥७१॥

स्योनिमंन्द्र ते सर्दः। ईशायै मृन्यु राजांनं बर्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देवान् यक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रंमिश्वनां। वाचा वाच् सरंस्वतीम्। अग्नि सोम इं स्विष्टकृत्। स्विष्ट इन्द्रः सुत्रामां सिवृता वर्रुणो भिषक्। इष्टो देवो वनस्पतिः। स्विष्टा देवा आंज्यपाः। इष्टो अग्निरिग्निनां। होतां होत्रे स्विष्टकृत्। यशो न दर्धदिन्द्रियम्। ऊर्ज्मपंचिति इं स्वधाम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७२॥

द्वारों दध्रिरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् जोष्ट्रींभ्यां दध्रिरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होर्तृभ्यां दध्रिरिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजैन्द्रियाणिं वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् सर्रस्वत्या वनस्पतिः षद्वं (देवं ब्र्हिर्देवीद्वारीं देवी उषासांवृश्विनां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहुंती देवा देवानां भिषजां वषद्वारेर्देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्देव इन्द्रो नराशश्सो देव इन्द्रो वनस्पतिर्देवं बर्हिवीरितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवान्। समिधाऽग्निं देवं बर्हिः सरंस्वत्यश्विना सर्व वियन्तु। द्वारंस्तिसः सर्ववियन्तु। अज इन्द्रमोजोऽग्निं परः सरंस्वतीम्। नक्तं पूर्वः सरंस्वति। अन्यत्र सरंस्वती। भिषक्पूर्वं दह इन्द्रियम्। अन्यत्रं दधुरिन्द्रियम्। सौत्रामण्याश् संतासुती। अञ्चन्त्ययं यर्जमानः॥)॥——[१४]

अग्निम् होतांरमवृणीत। अय स्रंतासुती यर्जमानः। पर्चन्प्तीः। पर्चन्पुरोडाशान्। गृह्णन्ग्रहान्। ब्रध्ननिधिभ्यां छागु सरंस्वत्या इन्द्रांय। ब्रध्नन्थ्यरंस्वत्ये मेषिनन्द्रांयािश्व-भ्याम्। ब्रधनिन्द्रांयर्षभम्श्विभ्या सरंस्वत्ये। सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवत्। अश्विभ्यां छागेन सरंस्वत्या इन्द्रांय॥७३॥

सरंस्वत्यै मेषेणेन्द्रांयाश्विभ्यांम्। इन्द्रांयर्षभेणाश्विभ्याः सरंस्वत्यै। अक्षः स्तान्मेद्स्तः प्रतिपचताग्रंभीषुः। अवीवृधन्त ग्रहैंः। अपातामृश्विना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। सोमान्थ्युराम्णाः। उपो उक्थामदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवीवृधन्ताङ्गूषेः। त्वामुद्यर्षं आर्षेयर्षीणान्नपादवृणीत। अयः सुतासुती यजमानः। बहुभ्य आ सङ्गतेभ्यः। एष मे देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति। ता या देवा देवदानान्यदुः। तान्यस्मा आ च शास्वं। आ च गुरस्व। इषितश्चं होत्रसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहि॥७४॥

इन्द्रांयु यजमानः सप्त चं॥\_\_\_\_\_[१५]

उशन्तंस्त्वा हवामह् आ नों अग्ने सुकेतुनाँ। त्वर सोंम महे भगं त्वर सोंम् प्रचिंकितो मनीषा। त्वया हि नेः पितरं सोम् पूर्वे त्वर सोंम पितृभिः संविदानः। बर्हिषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपंहूताः पितरोऽग्निष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे। नराशरसे सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां भवन्तु। शं नों भवन्तु द्विपदे शं चतुंष्पदे। ये अंग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥

अर्होमुर्चः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवंरेऽमृतांसो भवंन्तः। अधि ब्रुवन्तु ते अवन्त्वस्मान्। वान्याये दुग्धे जुषमाणाः कर्म्भम्। उदीरांणा अवंरे परं च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो ह्विरिदं जुषन्ताम्। यदंग्ने कव्यवाहन् त्वमंग्न ईडितो जांतवेदः। मातंली कव्यैः। ये तांतृपुर्दंवृत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्कैः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेभिर्वाङ्। स्त्यैः कव्यैः पितृभिर्घम्सिद्धः। ह्व्यवाहंम् जरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं ह्विषां सप्यन्। उपांसदं कव्यवाहं पितृणाम्। स नः प्रजां वीरवंती स् समृण्वत्॥ ७६॥

अनंग्निष्वात्ता जेहंमानाः सुप्त चं॥

-[१६]

होतां यक्षदिडस्पदे। समिधानं महद्यशंः। सुषीमद्धं वरैण्यम्। अग्निमिन्द्रं वयोधसम्। गायत्रीं छन्दे इन्द्रियम्। त्र्यविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्चळुचिंव्रतम्। तनूनपांतमुद्भिदम्। यं गर्भमदितिर्दधे॥७७॥

शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिह्ं छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाह्ं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्रर्यज्ञं। होतां यक्षदीडेन्यम्। ईडितं वृत्रहन्तंमम्। इडाभिरीड्यक् सहंः। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुभं छन्दं इन्द्रियम्। त्रिव्थसं गां वयो दर्धत्॥७८॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षथ्सुबर्हिषदम्ं। पूषण्वन्तममंत्र्यम्। सीदंन्तं बर्हिषं प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृह्तीं छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं। होतांयक्ष्रद्यचंस्वतीः। सुप्रायणा ऋतावृधंः॥७९॥

द्वारों देवीर्हिर्ण्ययीः। ब्रह्माण् इन्ह्रं वयोधसम्। पृङ्किं छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्यज्ञं। होतां यक्षथ्सुपेशंसे। सुशित्ये बृह्ती उभे। नक्तोषासा न दंर्शते। विश्वमिन्द्रं वयोधसम्। त्रिष्टुमं छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥

पृष्ठवाहुं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होतुर्यजी। होता यक्षुत्प्रचेतसा। देवानांमुत्तमं यर्शः। होतांरा दैव्यां क्वी। स्युजेन्द्रं वयोधसम्। जर्गतीं छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्गाहुं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होतुर्यजी होतां यक्षत्पेशस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीरहिंरुण्ययीः। भारंतीर्बृह्तीर्म्हीः। पितृमिन्द्रं वयोधसम्। विराजं छन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पृष्टिवर्धनम्। रूपाणि विभ्रंतं पृथंक्। पृष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदं छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छ्तकंतुम्। हिरंण्य-पर्णमुक्थिनम्। रशनां बिभ्रंतं वृशिम्। भगमिन्द्रं वयोधसम्। क्कुमं छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्यस्वाहांकृतीः। अग्निं गृहपंतिं पृथंक्। वर्रुणं भेषुजं कृविम्। क्षुत्रमिन्द्रं वयोधसम्। अतिंच्छन्दसं छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंषमं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥८३॥

द्धे दर्धरतावृधं इन्द्रियं पेशंस्वतीर्वयोधसं वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं सप्त चं (इडस्प्दें-ऽग्निङ्गांयुत्रीत्र्यविम्ं। शुचिंवृत् शुचिंमृष्णिहंन्दित्युवाहम्ं। ईडेन्यु सोमंमनुष्टुमं त्रिवृथ्सम्। सुब्रुह्षिदंममृतेन्द्रं बृह्तीं पञ्चांविम्। व्यचंस्वतीः सुप्रायुणा द्वारौ बृह्माणः पृङ्किमिह तुंर्यवाहम्ं। सुपेशंसे विश्वमिन्द्रं त्रिष्टुभं पष्टवाहम्ं। प्रचेतसा स्युजेन्द्रं जगंतीमिहानुङ्वाहम्ं। पेशंस्वतीस्तिस्रः पतिं विराजंमिह धेनुत्र। सुरेतंस-त्वष्टांरं पृष्टिमिन्द्रं द्विपदंमिहोक्षाणृत्र। शृतकंतुं भगमिन्द्रं

कुकुर्भमिह वृशान्न। स्वाहांकृतीः क्षुत्रमितंच्छन्दसं बृहदंषुभं गां वयो दर्धदिन्द्रियमृषि वसु नवं दृशहेंन्द्रियमष्टं नव दश् गां न वयो दर्धदिङस्पदे सर्वं वेतु॥)॥————[१७]

सिमंद्धो अग्निः सिमधां। सुषंमिद्धो वरेंण्यः। गायत्री छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविर्गोर्वयो दधुः। तनूनपाच्छुचित्रतः। तनूपाच् सरंस्वती। उष्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गोर्वयो दधुः। इडांभिरुग्निरीड्यः। सोमो देवो अमर्त्यः॥८४॥

अनुष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिव्थ्सो गौर्वयो दधुः। सुब्रहिर्ग्निः पूष्णवान्। स्तीर्णबहिरमंत्र्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविर्गीर्वयो दधुः। दुरो देवीर्दिशो महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिः। पङ्किश्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाङ्गौर्वयो दधुः॥८५॥

उषे यह्वी सुपेशंसा। विश्वे देवा अमंर्त्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गौर्वयो दधुः। दैव्यां होतारा भिषजा। इन्द्रेण स्युजां युजा। जगंती छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्वान्गौर्वयो दधुः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारंती मुरुतो विशः॥८६॥

विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गौर्न वयो दधः। त्वष्टां तुरीपो अद्भंतः। इन्द्राग्नी पृष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षा गौर्न वयो दधः। शमिता नो वनस्पतिः। स्विता प्रस्वन्भगम्। क्षुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधः। स्वाहां यृज्ञं वर्रुणः। सुक्षत्रो भेषुजं करत्। अतिच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंष्भो गौर्वयो दधः॥८७॥

अमर्त्यस्तुर्यवाङ्गोर्वयो दधुर्विशो वृशा वेहद्गौर्न वयो दधुश्चृत्वारि च॥———[१८]

वसन्तेन्त्नी देवाः। वसंविश्चिवृतौ स्तुतम्। रथन्तरेण् तेजंसा। हृविरिन्द्रे वयो दधुः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनौ। रुद्राः पंश्चदशे स्तुतम्। बृहुता यशंसा बलम्। हृविरिन्द्रे वयो दधुः। वर्षाभिर्ऋतुनांऽऽदित्याः। स्तोमे सप्तदशे स्तुतम्॥८८॥

वैरूपेणं विशोजंसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधः। शार्देन्र्तनां देवाः। एकविर्श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेनं श्रिया श्रियम्ं। ह्विरिन्द्रे वयों दधः। हेमन्तेन्र्त्नां देवाः। मरुतंस्त्रिण्वे स्तुतम्। बलेन् शक्वंरीः सहंः। ह्विरिन्द्रे वयों दधः। शैशिरेण्र्त्नां देवाः। त्रयस्त्रिर्शेऽमृतः स्तुतम्। स्त्येनं रेवतीः क्षुत्रम्। ह्विरिन्द्रे वयों दधः॥८९॥

स्तोमें सप्तद्शे स्तुतः सहीं ह्विरिन्द्रे वयीं दधुश्चत्वारिं च (वस्नतेनं ग्रीप्मेणं वर्षाभिः शार्देनं हेम्नतेनं शैशिरेण षद॥)॥———[१९]

देवं बर्हिरिन्ह्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। गायत्रिया छन्दंसेन्द्रियम्। तेज् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्देवमंवर्धयन्। उण्णिह्य छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥९०॥

देवी देवं वंयोधसम्। उषे इन्द्रंमवर्धताम्। अनुष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाचमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्जा। देवी जोष्ट्रीं देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमवर्धताम्। बृह्त्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज॥९१॥

देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पृङ्ग्या छन्दंसेन्द्रियम्। शुक्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधर्यस्य वीतां यजं। देवा दैव्या होतांरा देविमन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधर्यस्य वीतां यजं॥९२॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्वयोधसम्। पितृमिन्द्रंमवर्धयन्। जगत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बलुमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्सो देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधयंस्य वेतु यजं॥९३॥

देवो वनस्पतिर्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनां देविमन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। क्कुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृद्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिंच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षुत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं अतिंच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षुत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं

# वसुधेयंस्य वेतु यर्जं॥९४॥

वियन्तु यर्ज वीतां यर्ज वीतां यर्ज वेतु यर्ज वेतु यर्ज पश्च च (देवं ब्र्र्हिर्गायित्रिया तेर्जः। देवीर्द्वारं उण्णिहाँ प्राणम्। देवी देवमुषे अनुष्टभा वाचमं। देवी जोष्ट्री बृहत्या श्रोत्रमं। देवी ऊर्जाहंती पृङ्क्या श्रुक्रम्। देवा दैव्या होतांरा त्रिष्टभा त्विषिमं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः पितं जगंत्या बलमं। देवो नराशश्सो विराजा रेतः। देवो वनस्पितिर्द्विपदा भगमं। देवं ब्र्रिह्विर्गिरेतीनां क्कुभा यर्शः। देवो अग्निः स्विष्टकृदितिंच्छन्दसा क्षुत्रम्। वेतु वियन्तु चृतुर्वीत्वर्धयदवर्धयश्च्युत्रंवर्धतामेकोऽवर्धयश्च्युत्रंवर्धयत्॥॥——[२०]

स्वाद्वीं त्वा सोमः सुरांवन्तर् सीसेन मित्रोंऽसि यद्देवा होतां यक्षथ्समिधेन्द्रर् सिमंद्ध इन्द्र आचंर्षणिप्रा देवं बर्हिर्होतां यक्षथ्समिधाऽग्निर सिमंद्धो अग्निरंश्विना-ऽश्विनां हिविरिन्द्रियं देवं बर्हिः सरंस्वत्यग्निमद्योशन्तो होतां यक्षदिडस्पदे सिमंद्धो अग्निः सिमधां वसन्तेन्त्तेनां देवं बर्हिरिन्द्रं वयोधसं विरश्तिः॥२०॥ स्वाद्वीं त्वाऽमीमदन्त पितरः साम्रांज्याय पूतं प्वित्रंणोषासानक्ता बदंरैरधांतां देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्ठवाहृङ्गां देवी देवं वयोधसं चतुंर्नवितः॥९४॥ स्वाद्वीं त्वां वेतु यजं॥

## हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥सप्तमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृथ्स्तोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। अग्निष्टोमः सोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। रथन्तर साम भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रथन्तरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। परिस्रुजी होतां भवति॥१॥

अरुणो मिर्मिरस्त्रिशुं ऋ। एतद्वै ब्रह्मवर्चसस्यं रूपम्। रूपेणेव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्थे। बृह्स्पतिरकामयत देवानां पुरोधां गंच्छेयमिति। स एतं बृहस्पतिस्वमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृहस्पतिस्वनं यजेत॥२॥

पुरोधामेव गंच्छति। तस्यं प्रातः सवने सन्नेषुं नाराश्र्यसेषुं। एकांदश् दक्षिंणा नीयन्ते। एकांदश् माध्यं दिने सवने सन्नेषुं नाराश्र्यसेषुं। एकांदश तृतीयसवने सन्नेषुं नाराश्र्यसेषुं। एकांदश तृतीयसवने सन्नेषुं नाराश्र्यसेषुं। त्रयंस्त्रिश्श्र्थसम्पंद्यन्ते। त्रयंस्त्रिश्श्र्द्दे देवताः। देवतां एवावं रुन्धे। अश्वंश्रतुस्त्रिश्रः। प्राजापत्यो वा अश्वः॥३॥

प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्शो देवतांनाम्। यावंतीरेव देवताः। ता एवावं रुन्धे। कृष्णाजिनेऽभिषिश्चिति। ब्रह्मणो वा एतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसेनैवैनुष् समर्थयति। आज्येनाभिषिश्चति। तेजो वा आज्यम्। तेजं एवास्मिन्दधाति॥४॥

होतां भवति यजेत् वा अश्वों दधाति॥———[१]

यदाँग्नेयो भवंति। अग्निमुंखा ह्यृद्धिः। अथ् यत्पौष्णः। पृष्टिर्वे पूषा। पृष्टिर्वेश्यस्य। पृष्टिमेवावं रुन्धे। प्रस्वायं सावित्रः। अथ् यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणि विक्रोतिं। निर्वरुणत्वायं वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्थ्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यद्वैंश्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मांरुतः। मा्रुतो हि वेश्यः। स्प्तैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। स्प्तगंणा वै म्रुतः। पृश्जिः पृष्ठोही मांरुत्या लेभ्यते। विश्वे म्रुतः। विश्वं पृवैतन्मध्यतोऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा पृष विशः प्रियः। विश्वो हि मध्यतोऽभिषिच्यते। ऋष्मचर्मेऽध्यभिषिश्चिति। स हि प्रंजनियता। दुप्ताऽभिषिश्चिति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जवैनेमन्नाद्येन समर्धयति॥६॥

बारुणो विद्वै मुरुतोऽष्टौ चं॥———[२]

यदाँग्नेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। अथ् यथ्सौम्यः। सौम्यो हि ब्राँह्मणः। प्रस्वायैव सांवित्रः। अथ् यद्धार्हस्पत्यः। एतद्वै ब्राँह्मणस्यं वाक्पतीयम्। अथ् यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथु यथ्सारस्वतः। एति इ

प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वृरुणत्वायैव वांरुणः। अथो य एव कश्च सन्थ्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यद्यांवापृथिव्यः। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावांपृथिवी नान्वंमन्येताम्। तमेतेनैव भांगुधेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वर्ज्रस्य वा एषोऽनुमानायं। अनुंमतवज्ञः सूयाता इति। अष्टावेतानिं ह्वी १ षिं भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्री ब्रंह्मवर्च्सम्। गायत्रियेव बंह्मवर्च्समवं रुन्धे। हिरंण्येन घृतमृत्पंनाति। तेजंस एव रुचे। कृष्णाजिनेऽभिषिंश्वति। ब्रह्मंणो वा एतदंख्सामयों रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मंत्रेवेनंमृख्सामयोरध्यभिषिंश्वति। घृतेनाभिषिंश्वति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

न वै सोमेन सोमंस्य स्वौंऽस्ति। ह्तो ह्येषः। अभिषुंतो ह्येषः। न हि हृतः सूयतें। सौमी स्तृतवंशामा लेभते। सोमो वै रेतोधाः। रेतं पृव तद्दंधाति। सौम्यर्चाऽभिषिश्चिति। रेतोधा ह्येषा। रेतः सोमः। रेतं पृवास्मिन्दधाति। यत्किं चं राजसूयंमृते सोमम्। तथ्सर्वं भवति। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षामुपस्वां वृजनंस्य गोपाम्। भूरेषुजा संक्षिति सुश्रवंसम्। जयंन्तं त्वामनं मदेम सोम॥१०॥

रेतुः सोर्मः सप्त चं॥\_\_\_\_\_\_[`

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृशुनां सूयतें। स देवस्वः। य इष्टां सूयतें। स मनुष्यस्वः। एतं वै पृथंये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांरण्यानां पशूनामंसूयत। यावंतीः कियंतीश्च प्रजा वाचं वदंन्ति। तासार् सर्वांसार सूयते॥११॥

य एतेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्स्यर्चाऽभिषिश्चिति। मृनुष्यां वै नराश्रस्यः। निह्नुत्य वावैतत्।
अथाभिषिश्चिति। यित्कं चं राज्यसूर्यमनुत्तरवेदीकम्। तथ्सर्वं
भवति। ये में पश्चाशतंं दुदुः। अश्वांना स्थस्तुंतिः। द्युमदंग्रे
मिह् श्रवंः। बृहर्त्कृधि मुघोनाम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥

सूयते स्थस्तंतिस्रीणि च॥-----

पुष गोंस्वः। षुद्भिष्श उक्थ्यों बृहथ्सांमा। पर्वमाने कण्वरथन्त्रं भंवति। यो वै वांजुपेयः। स संम्राट्थ्स्वः। यो रांजुसूयः। स वंरुणस्वः। प्रजापंतिः स्वारांज्यं परमेष्ठी। स्वारांज्यं गौरेव। गौरिव भवति॥१३॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। उभे बृहद्रथन्त्रे भंवतः। तिद्धे स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिंणाः। तिद्धे स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिंणाः। तिद्धे स्वारांज्यम्। प्रतिधुषाऽभिषिश्चिति। तिद्धे स्वारांज्यम्। अनुद्धते वेद्यै दक्षिणत आहवनीयंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिश्चिति। इयं वाव रंथन्त्रम्॥१४॥

असौ बृहत्। अनयोर्वेन्मनंन्तर्हितम्भिषिंश्चिति।
पृशुस्तोमो वा एषः। तेनं गोस्वः। षृद्विर्शः सर्वः। रेवज्ञातः
सर्हसा वृद्धः। क्षुत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे
तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः
स्वारांज्येनाभिषिंश्चामीत्यांह। स्वारांज्यमेवैनं गमयति॥१५॥

इव भूवति र्थन्तरमाहेकं चा

सि १ हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिरुग्नौ ब्राँह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या रांजन्ये दुन्दुभावायंतायाम्। अश्वंस्य ऋन्द्ये पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या हुस्तिनि द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विष्रिश्वंषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। रथे अक्षेषुं वृष्भस्य वाजें। वाते पूर्जन्ये वर्रणस्य शुष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। राडंसि विराडंसि। सुम्राडंसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेजंस्वते तेजंस्वन्त श्रीणामि। इन्द्रांय त्वौजंस्वत ओजंस्वन्त श्रीणामि॥१७॥

इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वाऽऽयुंष्मत् आयुंष्मन्तः श्रीणामि। तेजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजंस्वदस्तु मे मुखम्ं। तेजंस्वच्छिरों अस्तु मे। तेजंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। तेजंसा सम्पिपृग्धि मा। ओजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥

ओर्जस्वदस्तु में मुखम्ं। ओर्जस्वच्छिरों अस्तु मे। ओर्जस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। ओर्जसा सं पिंपृग्धि मा। पयोऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। पयंस्वदस्तु में मुखम्ं। पयंस्वच्छिरों अस्तु मे। पयंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। पयंसा सं पिंपृग्धि मा॥१९॥

आयुंरिस। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्ँ। आयुंष्मच्छिरों अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्र आयुंषे वर्चसे कृधि। प्रिय॰ रेतों वरुण सोम राजन्। मातेवाँस्मा अदिते शर्म यच्छ। विश्वें देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्॥२०॥

आयुंरिस विश्वायुंरिस। सर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरेन्ति सिन्धंवः। तासाँ त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। समुद्र इंवािस गृह्मनाँ। सोमं इवास्यदाँभ्यः। अग्निरिंव विश्वतः प्रत्यङ्ग। सूर्यं इव ज्योतिषा विभूः॥२१॥

अपां यो द्रवंणे रसंः। तम्हम्स्मा आमुष्यायणायं। तेर्जसे ब्रह्मवर्चसायं गृह्णामि। अपां य ऊमीं रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। ओजंसे वीर्याय गृह्णामि। अपां यो मध्यतो रसंः। तमहम्स्मा आंमुष्यायणायं। पृष्ठ्यै प्रजनंनाय गृह्णामि। अपां यो यज्ञियो रसंः। तमहम्स्मा आंमुष्यायणायं। आयुंषे दीर्घायुत्वायं गृह्णामि॥२२॥

गोष्वोर्जस्वन्तः श्रीणाम्योजोऽसि तत्ते प्रयंच्छामि पयंसा सम्पिपृग्धि माऽसंद्विभूर्यज्ञियो रसो द्वे

चं॥——[७]

अभिप्रेहिं वी्रयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपब्रहा। आतिष्ठ मित्रवर्धनः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभित् आतिष्ठ वृत्रहृत्रथम्। आतिष्ठंन्तं पिर् विश्वं अभूषन्। श्रियं वसानश्चरित् स्वरोचाः। महत्तदस्यासुरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतांनि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनु बृहस्पितः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिंक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुंणाविहावंतम्। अनु द्यावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहोंभिरनुं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षंत्रेरनुं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमों अग्निः। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्॥२४॥

बृह्स्पितः सोमी अग्निरेकं च॥\_\_\_\_\_[८]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्।

स एतं प्रजापंतिरोद्नमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोंऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमविंत्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावंतिन्त। अन्नंमेवेनं भूतं पश्यंन्तीः प्रजा उपावंतिन्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सर्वाण्यन्नानि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वांण्येवान्नान्यवं रुन्धे। सर्वान्पुरुषान्। राडंसि विराड्सीत्यांह। स्वारांज्यमेवेनं गमयति। यद्धिरंण्यं ददांति। तेज्रस्तेनावं रुन्धे। यत्तिंसृधन्वम्। वीर्यं तेनं। यदष्ट्रांम्॥२६॥

पुष्टिं तेनं। यत्कंमण्डलुम्ं। आयुष्टेनं। यद्धिरंण्यमा बुध्नातिं। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वै हिरंण्यम्। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। यदोद्नं प्राश्ञातिं। एतदेव सर्वमवरुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्यां कार्यः। यद्वाँह्मण एव रोहिणी। तस्मांदेव। अथो वर्ष्मैवैन र्समानानां करोति। उद्यता सूर्येण कार्यः। उद्यन्तं वा एतर सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिदृक्षेण्यो दर्श्नोयो भवति। य एवं वेदं। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥२८॥

अवेत्योऽवभृथा (३) ना (३) इति। यद्दर्भपुञ्जीलैः प्वयंति। तथ्स्वंदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभिः पंवयति। त्रयं इमे लोकाः। पुभिरेवैनं लोकैः पंवयति। अथो अपां वा पृतत्तेजो वर्चः। यद्दर्भाः। यद्दर्भपुञ्जीलैः प्वयंति। अपामेवैनं तेजंसा वर्चसा-ऽभिषिञ्चति॥२९॥

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स एतं पंश्वशार्दीयंमपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजता ततो वै स बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयांन्थ्स्यामितिं। स पंश्वशार्दीयंन यजेत। बहोरे्व भूयांन्भवति। मुरुथ्स्तोमो वा एषः। मुरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

बहुर्भविति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। पश्चशारदीयो भवित। पश्च वा ऋतवंः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिं तिष्ठति। अथो पश्चौक्षरा पङ्किः। पाङ्को यज्ञः। यज्ञमेवावं रुन्थे। सप्तदशः स्तोमा नातिं यन्ति। सप्तदशः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै॥३१॥

भूयिष्ठा यन्ति द्वे चं॥————[१०

अगस्त्यो मुरुद्धी उक्ष्णः प्रौक्षंत्। तानिन्द्र आदंत्त। त एंनं वर्ज्रमुद्यत्याभ्यायन्त। तानगस्त्यंश्चैवेन्द्रंश्च कयाशुभीयंनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपाँह्वयत। यत्कंयाशुभीयं भवंति शान्त्यै। तस्मांदेत ऐन्द्रामारुता उक्षाणंः सवनीयां भवन्ति। त्रयंः प्रथमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। एवं द्वितीयें। एवं तृतीयें॥३२॥

पुवं चंतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव् ह्येतदहंः। वर्षिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। स्वारांज्यं वा एष युज्ञः। एतेन् वा एक्या वां कान्द्मः स्वारांज्यमगच्छत्। स्वारांज्यं गच्छति। य एतेन् यजंते॥३३॥

य उं चैनमेवं वेदं। मारुतो वा एषः स्तोमंः। एतेन् वै मुरुतो देवानां भूयिष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवित। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। पृश्चशार्दीयो वा एष यज्ञः। आ पश्चमात्पुरुषादन्नमित्त। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। समुद्रशः प्रजापंतिः। पृजापंतरेव नैतिं॥३४॥

तृतीर्ये गच्छति य एतेन् यजंतेऽति य एतेन् यजंते य उं चैनमेवं वेद त्रीणिं च (अगस्त्यः स्वारांज्यं मारुतः पश्चशार्दीयो वा एष यज्ञः संप्तद्शं प्रजापंतेरेव नैति॥॥———[११]

अस्या जरांसो दमा मृरित्राः। अर्चर्द्धमासो अग्नयः पावकाः। श्विचीचयः श्वात्रासो भुरण्यवः। वनर्षदो वायवो न सोमाः। यजां नो मित्रावरुणा। यजां देवा र ऋतं बृहत्। अग्ने यक्षि स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत र सुतम्। दीद्यंग्नी शुचिव्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्थै। अन्याऽन्यां वृथ्समुपं धापयेते। हरिंरुन्यस्यां भवंति स्वधावान्। शुक्रो अन्यस्यां ददशे सुवर्चाः। पूर्वाप्रं चंरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदर्धज्ञायते पुनः। त्रीणि शृता त्रीष्हस्राण्यग्निम्। त्रिष्शचं देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षं घृतेरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिद्धोतांरं न्यंषादयन्त। अग्निनाऽग्निः समिध्यते। कविर्गृहपंतिर्युवां। हृव्यवाङ्गुह्वांऽऽस्यः। अग्निर्देवानां जठरम्। पूतदंक्षः कविक्रंतुः। देवो देवेभिरा गंमत्। अग्निश्रियों मुरुतों विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे वयम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षिनिणिजः। सिर्हा न हेषक्रंतवः सुदानंवः। यदुंत्तमे मंरुतो मध्यमे वाँ। यद्वांऽवमे सुंभगासो दिवि ष्ठ। ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजांमः। ईडे अग्निः स्ववंसन्नमोंभिः। इह प्रसप्तो वि चं यत्कृतं नः। रथैरिव प्रभेरे वाज्यद्भिः। प्रदक्षिणिन्म्रुताः स्तोमंमृद्धाम्॥३८॥

श्रुधि श्रुंत्कर्ण् वहिंभिः। देवैरंग्ने स्यावंभिः। आसींदन्तु बर्हिषिं। मित्रो वर्रुणो अर्यमा। प्रात्यावांणो अध्वरम्। विश्वेषामदिंतिर्यज्ञियांनाम्। विश्वेषामितिंथिर्मानुंषाणाम्। अग्निर्देवानामवं आवृणानः। सुमृडीको भेवतु विश्ववेदाः। त्वे अग्ने सुमितिं भिक्षंमाणाः॥३९॥ दिवि श्रवों दिधरे युज्ञियांसः। नक्तां च चुकुरुषसा विरूपे। कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः। त्वामंग्न आदित्यासं आस्यम्। त्वां जिह्वा १ शुचंयश्चकिरे कवे। त्वा १ रांतिषाचों अध्वरेषुं सिश्चरे। त्वे देवा ह्विरंदन्त्याहुंतम्। नि त्वां युज्ञस्य सार्धनम्। अग्ने होतांरमृत्विजम्। वनुष्वद्देव धीमिह् प्रचेतसम्। जीरं दूतममंर्त्यम्॥४०॥

य्ज्ञवाह्सास्पूर्यन्वयमृद्धां भिक्षंमाणाः प्रचेतस्मेकं च॥———[१२]

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमांना याहि। वायुर्न नियुतों नो अच्छं। पिबास्यन्थों अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिमा ते मदाय। कस्य वृषां सुते सचां। नियुत्वांन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं वयं महाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे। युजं वृत्रेषुं विज्ञिणम्॥४१॥

द्विता यो वृंत्रहन्तंमः। विद इन्द्रः श्तकंतुः। उपं नो हिरिभः सुतम्। स सूर् आजनयं ज्योतिरिन्द्रम्ं। अया धिया तरिणरिद्रंबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्यंस्रिधों अस्रो अद्रिर्विभेद। उत्तत्यदाश्वश्वियम्। यदिन्द्र नाहुंषी्ष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्विन्द्र र्रं सुहवर्रं हवामहे। अर्होमुचर्रं सुकृतं दैव्यं जनम्। अग्निं मित्रं वर्रणर सातये भगम्। द्यावापृथिवी मुरुतः स्वस्तये। मुहि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदिथ्सर्खिभ्यश्चरथु समैरत्। इन्द्रो नृभिरजन्दीद्यांनः साकम्। सूर्यमुषसं गातुमग्निम्। उरुं नो लोकमनुं नेषि विद्वान्। सुर्वर्वञ्चोतिरभय स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्रं स्थविरस्य बाहू। उपस्थेयाम शर्णा बृहन्तां। आ नो विश्वांभिरूतिभिः सजोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हर्यश्व याहि। वरीवृज्धस्थविरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृद्वृषंणु शृष्मंमिन्द्र। इन्द्रांय गावं आशिरम्ं। दुदुहे वृज्जिणे मधुं। यथ्सींमुपह्हरे विदत्। तास्ते विज्ञन्धेनवो जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियतो विश्ववाराः। अहंरहुर्भूय इञ्जोगुंवानाः। पूर्णा इंन्द्र क्षुमतो भोजनस्य। इमां ते धियं प्र भेरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आन्जे। तमुंथ्सवे चं प्रस्वे चं सासहिम्। इन्द्रं देवासः शवंसा मदं ननुं॥४५॥

वृज्ञिणंमयथ्स्वस्ति जोजयुर्नः सप्त चं॥\_\_\_\_\_[१३]

प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। तैंऽस्माथ्सृष्टाः परौं च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाऽऽप्नौत्। तानुक्थ्येन् नाऽऽप्नौत्। तान्थ्योंड्शिना् नाऽऽप्नौत्। तान्नात्रिया् नाऽऽप्नौत्। तान्थ्यन्धिना् नाऽऽप्नौत्। सौंऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानृग्निस्त्रिवृता् स्तोमेन् नाऽऽप्नौत्॥४६॥

स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानिन्द्रंः पश्चद्शेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नौत्। स विश्वान्देवानंब्रवीत्। इमान्मं

ईफ्सतेतिं। तान् विश्वेंदेवाः संप्तद्शेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नुंवन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तान् विष्णुंरेकविर्शेन् स्तोमेनाऽऽप्नोत्। वार्वन्तीयेनावारयत॥४७॥

ड्दं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्मौत्पृशवः प्रप्रेव् भ्रश्शेरन्। स एतेनं यजेत। यदाप्नौत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्याम्-त्वम्। एतेन् वै देवा जैत्वांनि जित्वा। यं काम्मकांमयन्त् तमौऽऽप्रुवन्। यं कामंं कामयंते। तमेतेनौऽऽप्नोति॥४८॥

स्तोमेंन् नाऽऽप्नोंदवारयत् नवं च॥-----[१४]

व्याघ्रोंऽयम्ग्रौ चंरित प्रविष्टः। ऋषींणां पुत्रो अंभिशस्तिपा अयम्। नमस्कारेण नमंसा ते जुहोमि। मा देवानां मिथुयाकंर्म भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे। वर्ष्माणंमस्मै विर्माणंमस्मै। अथास्मभ्य सिवतः सर्वतांता। दिवेदिंव आ सुंवा भूरि पृश्वः। भूतो भूतेषुं चरित प्रविष्टः। स भूतानामधिपतिर्बभूव॥४९॥

तस्यं मृत्यौ चंरित राज्ञसूयम्ं। स राजां राज्यमनुं मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद्दर्हत्। येभिर्द्याम्भ्यिपर्श्वात्प्रजापंतिः। येभिर्वाचं विश्वरूपार समव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिद्धिः। येभिरादित्यस्तपंति प्र केतुभिः। येभिः सूर्यो दृदृशे चित्रभानुः। येभिर्वाचं पुष्कुलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिद्धिः॥५०॥

आऽयं भांतु शर्वसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भंवतु प्रजावान्। अस्मा अस्तु पुष्कृतं चित्रभांनु। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कृतं चित्रभांनु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्। तस्मिन्नाजांनमधि विश्रंयेमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽधि॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमिधं भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यंसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासां त्वा सर्वासा॰ रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचं दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥

तथाँ त्वा सिवता कंरत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचसङ्गिरंः। रथीतंमः रथीनाम्। वाजांनाः सत्पंतिं पितम्। वसंवस्त्वा पुरस्तांद्रिभिषिश्चन्तु गायत्रेण् छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिण्तोऽभिषिश्चन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। आदित्यास्त्वां पश्चाद्रिभिषश्चन्तु जागंतेन् छन्दंसा। विश्वें त्वा देवा उत्तर्तोऽभिषिश्चं त्वाऽनुंष्टुभेन् छन्दंसा। बृहस्पतिंस्त्वोपरिष्टाद्भिषिश्चतु पाङ्केन् छन्दंसा॥५३॥

अ्रुणं त्वा वृकंमुग्रङ्कंजङ्करम्। रोचंमानं म्रुतामग्रें अर्चिषंः। सूर्यवन्तं मुघवानं विषास्हिम्। इन्द्रंमुक्थेषुं नाम्हूर्तम १ हुवेम। प्र बाहवां सिसृतं जीवसें नः। आ नो गर्व्यातिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जनें श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हुवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्युकृतंः। बाहू उपावं हरामि॥ ५४॥

बुभूबाव्ययत्तेनेममंग्न इह वर्चसा समिक्षु वैयाघ्रेऽधि राष्ट्रवर्धनः पाङ्केन छन्दंसोपावंहरामि॥ [१५]

अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपल्रहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तमः। तुभ्यंं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभितो रथं यौ। ध्वान्तं वांताग्रमनुं स्श्चरंन्तौ। दूरेहेतिरिन्द्रियावाँन्पत्त्री। ते नोऽग्नयः पप्रयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथायै त्वा स्वधायै त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभित्स्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रेह्मन्तवेदेस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वज्रंहस्तः। आ र्श्मीन्देव युवसे स्वर्श्वः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परिं। अनु त्वेन्द्रो मद्त्वनुं त्वा मित्रावरुंणौ। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमो अग्निः। अनुं त्वाऽवतु सविता सवेनं॥५६॥

इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचस्ङ्गिरंः। र्थीतंमश् रथीनाम्। वाजांनाश् सत्पंतिं पतिम्। परिमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृप्नवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। मां गोपंतिम्भि संविशन्तु। तन्मेऽनुंमित्रिरनुं मन्यताम्। तन्माता पृंथिवी तत्पिता द्यौः॥५७॥ तद्भावांणः सोम्सुतां मयो्भुवंः। तदंश्विना शृणुतः सौभगा युवम्। अवं ते हेड् उद्तुंत्तमम्। एना व्याघ्रं परिषस्वजानाः। सि॰्हः हिन्वन्ति महते सौभंगाय। समुद्रं न सुहुवंन्तस्थिवाः सम्। मुमृज्यन्ते द्वीपिनंमुफ्स्वंन्तः। उदसावंतु सूर्यः। उदिदं मांमुकं वचंः। उदिहि देव सूर्य। सह वृगुना ममं। अहं वाचो विवाचंनम्। मिथ्र वागंस्तु धर्णसिः। यन्तुं नृदयो वर्षंन्तु पूर्जन्याः। सुपिप्पुला ओषंधयो भवन्तु। अन्नंवतामोद्नवंतामामिक्षंवताम्। एषाः राजां भूयासम्॥५८॥

स्वधार्यै त्वा स्वेन् द्यौः सूँर्य सुप्त चं॥ $lue{}$  [१६]

ये केशिनंः प्रथमाः स्त्रमासंत। येभिरार्भृतं यदिदं विरोचंते। तेभ्यों जुहोमि बहुधा घृतेनं। रायस्पोषेणेमं वर्चसा स॰ सृंजाथ। नर्ते ब्रह्मणस्तपंसो विमोकः। द्विनाम्नीं दीक्षा विशिनी ह्यंग्रा। प्र केशाः सुवतं काण्डिनों भवन्ति। तेषां ब्रह्मेदीशे वपंनस्य नान्यः। आ रोह प्रोष्ठं विषंहस्व शत्रून्ं। अवासाग्दीक्षा विशिनी ह्यंग्रा॥५९॥

देहि दक्षिणां प्रतिर्स्वायुः। अथांमुच्यस्व वर्रणस्य पाशांत्। येनावंपथ्सिवता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वर्रणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदम्स्योर्जेमम्। र्य्या वर्चसा स॰ सृजाथ। मा ते केशाननुं गाद्वर्चं एतत्। तथां धाता करोतु ते। तुभ्यमिन्द्रो बृहस्पतिः। सुविता वर्च आदंधात्॥६०॥

तेभ्यों निधानं बहुधा व्यैच्छन्। अन्तरा द्यावांपृथिवी अपः सुवंः। दुर्भस्तम्बे वीर्यंकृते निधायं। पौइस्येनेमं वर्चसा सरम्जाथ। बलं ते बाहुवोः संविता दंधातु। सोमंस्त्वाऽनक्तु पर्यसा घृतेनं। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमं वर्चसा सरम्जाथ। यथ्सीमन्तङ्कङ्कंतस्ते लिलेखं। यद्वां क्षुरः पंरिववर्ज् वपईस्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमर सर्मजाथो वीर्येण॥६१॥

अवाँस्राग्दीक्षा वृशिनी ह्युंग्राऽदंधाद्ववर्ज् वपई स्ते द्वे चं॥————[१७]

इन्द्रं वै स्वाविशों मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान एतं विघनमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजता तेनैवासान्तर सई स्तम्भं व्यंहन्। यद्यहन्ं। तिद्विघनस्यं विघनत्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृंव्यर हते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

य राजांनं विशो नाप्चायंयुः। यो वाँ ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृंतः स्यात्। स एतेनं यजेत। विघनेनैवैनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य द्वे द्वांदशे स्तोत्रे भवंतः। द्वे चंतुर्विष्शे। औद्विंद्यमेव तत्। एतद्वै क्षुत्रस्यौद्विंद्यम्। यदंस्मै स्वाविशों बलि हर्रन्ति॥६३॥

हरंन्त्यस्मै विशों बुलिम्। ऐनुमप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं

वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रें क्षत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रेः क्षत्राण्यादेत्त। न वा इमानि क्षत्राण्यंभूवित्रिति। तन्नक्षेत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृंव्यस्य तेजं इन्द्रियं देत्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां हु वै संचिक्तिणौ कप्लंकावुपावंहितौ स्यातांम्। प्वमेतौ युग्मन्तौ स्तोमौं। अयुक्षु स्तोमेषु क्रियेते। पाप्मनो-ऽपंहत्यै। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य हते। य पृतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां हु वै सूंतग्रामण्यंः। पृवं छन्दा सि। तेष्वसावांदित्यो बृंहतीर्भ्यूंढः॥६५॥

स्तोबृंहतीषु स्तुवते स्तो बृंहन्। प्रजयां पृशुभिंरसानीत्येव। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तं व क्षत्रं विशा। विशेवैनं क्षत्रेण व्यतिषज्ञति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो व ग्रांमणीः संजातैः। स्जातैरेवैनं व्यतिषज्जित। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो व पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिषक्ताभिरेवास्यं पाप्मनों नुदते॥६६॥

वेद हर्रन्त्येनमेवं वेदाभ्यूंढः पाप्मभिरेकं च॥-----[१८]

त्रिवृद्यदाँग्रेयौँऽग्निमुंखा ह्यब्धिर्यदाँग्रेय आँग्रेयो न वै सोमेंन् यो वै सोमेंने्ष गोंस्वः सिर्इहेंऽभि प्रेहिं मित्रवर्धनः प्रजापंतिस्ता ओंदनं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयांनगस्त्योस्या जरांसस्तिष्ठा हरीं प्रजापंतिः पृश्चन्व्याघ्रोंऽयम्भिप्रेहिं वृत्रहन्तंमो ये के्शिन् इन्द्रं वा अष्टादंश॥१८॥

त्रिवृद्यो वै सोमेनायुरिस बुहुर्भवित् तिष्ठा हरीरथ आयं भांतु तेभ्यो निधान् षट्थ्यंष्टिः॥६६॥

त्रिवृत्पाप्मनों नुदते॥

## हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥अष्टमः प्रश्नः॥

#### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौँन्ना रियृवधंः सुम्धाः। श्वेतः सिंपक्ति नियुतां-मिभूशीः। ते वायवे समनसो वितंस्थः। विश्वेन्नरंः स्वपत्यानिं चक्रः। रायेऽन् यञ्जजतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अधां वायुं नियुतंः सश्चत् स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितिन्निरेके। आ वायो प्र याभिः। प्र वायुमच्छां बृह्ती मंनीषा॥१॥

बृहद्रंयिं विश्ववाराः रथप्राम्। द्युतद्यांमा नियुतः पत्यंमानः। कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो। आ नो नियुद्धिः श्तिनीभिरध्वरम्। सहस्रिणीभिरुपं याहि यज्ञम्। वायो अस्मिन् ह्विषिं मादयस्व। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तं नो अस्तु॥२॥

वय स्याम् पत्यो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्तं बृहन्तम्। अस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ। प्रजापतिं प्रथमजामृतस्य। यजाम देवमिधं नो ब्रवीत्। प्रजापते त्वित्रिधिपाः पुराणः। देवानां पिता जनिता प्रजानाम्। पतिर्विश्वस्य जगेतः परस्पाः। हिवर्नो देव विह्वे जुंषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिश्रश्च॥३॥

प्रावतों निवतं उद्वतंश्च। प्रजांपते विश्वसृज्जीवधंन्य इदं नों देव। प्रतिहर्य ह्व्यम्। प्रजापितं प्रथमं यज्ञियांनाम्। देवानामग्रें यज्ञतं यंजध्वम्। स नों ददातु द्रविण १ सुवीर्यम्। रायस्पोषं वि ष्यंतु नाभिमस्मे। यो राय ईशें शतदाय उक्थ्यः। यः पंशूना १ रिक्षेता विष्ठितानाम्। प्रजापितः प्रथम्जा ऋतस्यं॥४॥

स्हस्रंधामा जुषता हिवर्नः। सोमांपूषणेमौ देवौ। सोमांपूषणा रजंसो विमानम्। सप्तचंक्र रथमविश्वमिन्वम्। विष्वृतं मनंसा युज्यमानम्। तं जिन्वथो वृषणा पश्चरिष्टमम्। दिव्यंन्यः सदंनं चक्र उच्चा। पृथिव्यामन्यो अध्यन्तरिक्षे। तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं विष्यंतान्नाभिमस्मे॥५॥

धियं पूषा जिंन्वतु विश्वमिन्वः। र्यिश् सोमों रियपितिर्दधातु। अवंतु देव्यदितिरन्वां। बृहद्वेदेम विदथे सुवीराः। विश्वांन्यन्यो भुवंना जजानं। विश्वंमन्यो अभिचक्षांण एति। सोमांपूषणाववंतं धियं मे। युवभ्यां विश्वाः पृतंना जयेम। उद्तुं मं वंश्रणास्तं भाद्याम्। यत्किं चेदं किंत्वासः। अवं ते हेड्स्तत्त्वां यामि। आदित्यानामवंसा न दक्षिणा। धारयंन्त आदित्यासंस्तिस्रो भूमीर्धारयन्। यज्ञो देवानाः शुचिरपः॥६॥

मनीषाऽस्तुं चर्तस्यास्मे किंतवासंश्चत्वारिं च॥

ते शुक्रासः शुचंयो रिश्मवन्तः। सीदंन्नादित्या अधिं बर्हिषिं प्रिये। कामेन देवाः स्रथं दिवो नः। आ यान्तु यज्ञमुपं नो जुषाणाः। ते सूनवो अदितः पीवसामिषम्। घृतं पिन्वत्प्रतिहर्यन्नृतेजाः। प्र यज्ञिया यज्ञमानाय येमुरे। आदित्याः कामं पितुमन्तंमस्मे। आ नः पुत्रा अदितेर्यान्तु यज्ञम्। आदित्यासंः पृथिभिर्देवयानैः॥७॥

अस्मे कामं दाशुषे सन्नमंन्तः। पुरोडाशं घृतवंन्तं जुषन्ताम्। स्कुभायत् निर्ऋति सेधृतामंतिम्। प्र रिष्मिभिर्यतंमाना अमृधाः। आदित्याः काम् प्रयंतां वर्षद्कृतिम्। जुषध्वं नो ह्व्यदांतिं यजत्राः। आदित्यान्काम्मवंसे हुवेम। ये भूतानिं जनयंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्। स्तीणं बर्हिरहंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीर्णं बर्हिः सींदता यज्ञे अस्मिन्। ध्राजाः सेधंन्तो अमंतिं दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यर्सत। आदित्याः कामं ह्विषो जुषाणाः। अग्रे नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहुराणमेनः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवे भरध्वम्। हृव्यं मृतिं चाग्नये सुपूतम्॥९॥

यो दैव्यांनि मानुंषा जनूर्षं। अन्तर्विश्वांनि विद्याना जिगांति। अच्छा गिरों मृतयों देवयन्तीः। अग्निं यंन्ति द्रविणं भिक्षंमाणाः। सुसन्दशर् सुप्रतीक्ष् स्वश्रम्॥ ह्व्यवाहंमर्ति मानुंषाणाम्। अग्रे त्वम्समद्यंयोध्यमीवाः। अनंग्रित्रा अभ्यंमन्त कृष्टीः। पुनंर्स्मभ्यरं सुवितायं देव। क्षां विश्वंभिरजरंभिर्यजत्र॥१०॥

अग्ने त्वं पारया नव्यों अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूश्चं पृथ्वी बंहुला नं उवीं। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मन्ना वच्यमानाः। देवद्रीचीं नयथ देवयन्तः। दक्षिणावाङ्वाजिनी प्राच्येति। ह्विभरंन्त्यग्रये घृताचीं। इन्द्रं नरों युजे रथम्ं। जुगुभ्णाते दक्षिणिमन्द्र हस्तम्॥११॥

वसूयवो वसुपते वसूनाम्। विद्या हि त्वा गोपंति शूर् गोनाम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण श्रियन्दाः। तवेदं विश्वंमभितः पश्व्यम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यस्य। गवांमसि गोपंतिरेकं इन्द्र। भक्षीमिहं ते प्रयंतस्य वस्वंः। सिमन्द्र णो मनंसा नेषि गोभिः। सश्सूरिभिर्मघवन्थ्स इस्वस्त्या। सं ब्रह्मंणा देवकृतं यदस्ति॥१२॥

सं देवाना र् सुमृत्या युज्ञियांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बंः पुरुहूत् तेनं। अस्मे धेहि यवंमुद्गोमंदिन्द्र। कृधीधियं जरित्रे वाजंरत्नाम्। आ वेधस्र स हि शुचिंः। बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। महो ज्योतिषः पर्मे व्योमन्। सुप्तास्यंस्तुविजातो रवेण। वि

### सप्तरंश्मिरधमत्तमा ५ सि॥१३॥

बृह्स्पतिः समंजयद्वसूनि। महो व्रजान्गोमंतो देव एषः। अपः सिषांस्न्थ्सुव्रप्रतित्तः। बृह्स्पतिर्हन्त्यमित्रंमकैः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे। आ नों दिवः पावीरवी। इमा जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरंस्वत्यभि नों नेषि। इय॰ शुष्मंभिर्विस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणान्तंविषेभिरूर्मिभिः। पारावद्ग्रीमवंसे सुवृक्तिभिः। सरंस्वतीमा विवासेम धीतिभिः॥१४॥

देवयानैंदिंवाः सुपूर्तं यजत्र हस्तमस्ति तमाईस्यूर्मिभिद्धे चं॥————[२]

सोमों धेनु सोमों अर्वन्तमाशुम्। सोमों वीरं कर्मण्यं ददातु। सादन्यं विद्थ्य समेयम्। पितुः श्रवंणं यो ददांशदस्मे। अषांढं युथ्सु त्व सोम ऋतुंभिः। या ते धामांनि ह्विषा यर्जन्ति। त्विममा ओषंधीः सोम विश्वाः। त्वमपो अंजनयस्त्वङ्गाः। त्वमातंतन्थोर्वन्तिरक्षम्। त्वं ज्योतिंषा वि तमो ववर्थ॥१५॥

या ते धामांनि दिवि या पृथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषंधीष्वपस्। तिर्भिर्नो विश्वैः सुमना अहेडन्। राजैन्थ्सोम् प्रतिं ह्व्या गृंभाय। विष्णोर्नुकं तदस्य प्रियम्। प्र तिद्वष्णुः। प्रो मात्रया त्नुवां वृधान। न ते महित्वमन्वंश्जुवन्ति। उभे ते विद्य रजंसी पृथिव्या विष्णों देव त्वम्। प्रमस्यं विथ्से॥१६॥

विचंक्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि गोत्राणि। अभिः स्पृधी मिथतीररिषण्यन्। अमित्रंस्य व्यथया मृन्युमिन्द्र। आभिर्विश्वी अभियुजो विषूंचीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासीः। अय शृंण्वे अध् जयंत्रुत घ्रन्। अयमुत प्र कृंणुते युधा गाः। यदा सृत्यं कृंणुते मन्युमिन्द्रः॥१७॥

विश्वं दृढं भंयत् एजंदस्मात्। अनुं स्वधामंक्षर्त्रापों अस्य। अवर्धत् मध्य आ नाव्यांनाम्। सुधीचीनेन मनसा तिमेन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मनाहन्नभिद्यून्। मुरुत्वंन्तं वृष्भं वांवृधानम्। अकंवारिं दिव्य शासिमन्द्रम्। विश्वासाहमवसे नूतनाय। उग्र सहोदामिह त हेवेम। जिनेष्ठा उग्रः सहंसे तुरायं॥१८॥

मन्द्र ओजिष्ठो बहुलाभिमानः। अवधिन्निन्द्रं म्रुतिश्चिदत्री।
माता यद्वीरं द्धनृद्धिनिष्ठा। क्वंस्यावो मरुतः स्वधाऽऽसीत्।
यन्मामेक समर्धत्ताहिहत्यै। अह इ ह्यंग्रस्तिविषस्तुविष्मान्।
विश्वंस्य शत्रोरनंमं वध्सैः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषंमाणाः।
विश्वं देवा अंजहुर्ये सखायः। म्रुद्धिरिन्द्र सुख्यं ते
अस्तु॥१९॥

अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधीं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं। स्वेन भामेन तिवृषो बंभूवान्। अहमेता मनवे विश्वश्चन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वर्ज्ञंबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समीकाः। महो दिवः पृथिव्याश्चं सम्राट्। सतीनसंत्वा हव्यो भरेषु। मुरुत्वां नो भवत्विन्द्रं ऊती। इन्द्रों वृत्रमंतरद्वृतूर्ये॥२०॥

अनाधृष्यो मघवा शूर इन्द्रंः। अन्वेनं विशो अमदन्त पूर्वीः। अय राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः स उ वीर्यावान्। स एकराजो जगंतः पर्स्पाः। यदा वृत्रमतंरच्छूर इन्द्रंः। अथाभवदमिताभिक्रंतूनाम्। इन्द्रो यज्ञं वर्धयंन्विश्ववेदाः। पुरोडाशंस्य जुषता हिवर्नः। वृत्रं तीर्त्वा दान्वं वर्ष्रंबाहुः॥२१॥

दिशोऽह ५ हृ ६ हृता ह ५ हंणेन। इमं युज्ञं वर्धयंन्विश्व-वंदाः। पुरोडाशां प्रतिं गृभ्णात्विन्द्रः। यदा वृत्रमतंरच्छूर् इन्द्रः। अथैकराजो अभवज्ञनानाम्। इन्द्रो देवाञ्छंम्बर्हत्यं आवत्। इन्द्रो देवानांमभवत्पुरोगाः। इन्द्रो युज्ञे हृविषां वावृधानः। वृत्रतूर्नो अभय १ शर्म य १ सत्। यः सप्त सिन्धू १ रदंधात्पृथिव्याम्। यः सप्त लोकानकृणोद्दिशंश्व। इन्द्रो हृविष्मान्थ्सगंणो मुरुद्धिः। वृत्रतूर्नो युज्ञमिहोपं यासत्॥२२॥ ववर्ष विष्म इन्द्रंस्तुरायांस्त वृत्रतूर्ये वर्षवाहः पृथिव्यात्रीणं च॥————[३]

इन्द्रस्तरंस्वानभिमातिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिषिरः सुंवर्षाः। तस्यं वय १ सुंमृतौ यज्ञियंस्य। अपि भृद्रे सौंमन्से स्याम। हिरंण्यवर्णो अभयं कृणोतु। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्म त्रिवरूथं वि यर्सत्। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्रईं स्तुहि वृज्जिण्ड् स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषतार हुविर्नः॥२३॥

ह्त्वाभिमांतीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभंयं कृणुहि विश्वतों नः। स्तुहि शूरं वृज्जिणमप्रंतीत्तम्। अभिमाृतिहनं पुरुहूतमिन्द्रम्। य एक इच्छुतपंतिर्जनंषु। तस्मा इन्द्रांय ह्विरा जुंहोत। इन्द्रों देवानांमिध्पाः पुरोहितः। दिशां पतिरभवद्वाजिनीवान्। अभिमाृतिहा तिवृषस्तुविष्मान्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र र्यिन्दांत्॥२४॥

य इमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाह रहिदिभमातिहेन्द्रंः। स नों हुविः प्रतिं गृभ्णातु रातयें। देवानां देवो निंधिपा नों अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तें। इन्द्रंस्य नु वीर्याण्यहुन्नहिम्। इन्द्रों यातोऽवंसितस्य राजां। शमस्य च शृङ्गिणो वर्ज्ञंबाहुः। सेदु राजां क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥

अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्। वितिग्मेनं वृष्भेणा पुरोभेत्। सं वर्ज्जेणासृजद्वृत्रमिन्द्रंः। प्र स्वां मृतिमंतिरुच्छाशंदानः। विष्णुं देवं वर्रुणमूतये भगम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। ता नो यज्ञमागंतं विश्वधंना। प्रजावंदस्मे द्रविणेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्।

विष्णुं च देवं वर्रुणं च रातिम्॥२६॥

ता नो अमीवा अप बार्धमानौ। इमं युज्ञं जुषमांणावुपेतम्ं। विष्णूंवरुणा युवमंध्वरायं नः। विशे जनांय मिह शर्मं यच्छतम्। दीर्घप्रंयज्ञ्यू ह्विषां वृधाना। ज्योतिषा- ऽरांतीर्दहत्नतमा रसि। ययोरोजंसा स्किभता रजारसि। वीर्यंभिर्वीरतंमा शिवंष्ठा। याऽपत्यं ते अप्रंतीत्ता सहोंभिः। विष्णूं अगुन्वरुणा पूर्वहूंतौ॥२७॥

विष्णूंवरुणाविभशस्तिपावाँम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं। अपामीवा स्पेधत र रक्षसंश्च। अथाधत्तं यजंमानाय शं योः। अर्होमुचां वृष्मा सुप्रतूंर्ती। देवानां देवतंमा शचिष्ठा। विष्णूंवरुणा प्रतिहर्यतन्नः। इदं नरा प्रयंतमूतये ह्विः। मही नु द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठें। रुचा भवता र शुचयंद्भिर्केः॥२८॥

यथ्सीं वरिष्ठे बृह्ती विमिन्वन्। नृवद्योक्षा पंप्रथानेभिरेवैंः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृंणुध्व सदेने ऋतस्यं। आ नौ द्यावापृथिवी दैव्यंन। जनेन यातं मिहं वां वरूथम्। स इथ्स्वपा भुवंनेष्वास। य इमे द्यावापृथिवी ज्जानं। उवीं गंभीरे रजंसी सुमेकें। अव स्थे धीरः शच्या समैरत्॥२९॥

भूरिं द्वे अचंरन्ती चरंन्तम्। पृद्धन्तं गर्भम्पदींदधाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थैं। तं पिपृत रोदसी सत्यवाचम्। इदं द्यांवापृथिवी स्त्यमंस्तु। पितुर्मातुर्यदिहोपं ब्रुवे वाम्। भूतं देवानांमवमे अवोभिः। विद्यामेषं वृजनंं जीरदांनुम्। उर्वी पृथ्वी बंहुले दूरे अन्ते। उपं ब्रुवे नमंसा यज्ञे अस्मिन्। दर्धाते ये सुभगं सुप्रतूर्ती। द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात्। या जाता ओषंधयोऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः सोमंराज्ञीरश्वावती सोमवतीम्। ओषंधीरितिं मातरोऽन्या वो अन्यामंवतु॥३०॥

हुविर्नो दाद्भभूव रातिं पूर्वहूंतावुर्केरैरदुस्मिन्पर्श्च च॥—————[ $oldsymbol{\delta}$ ]

शुचिं नु स्तोम् श्रव्यद्धृत्रम्। उभा वांमिन्द्राग्नी प्र चर्षणिभ्यः। आ वृत्रहणा गीर्भिर्विप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता। सूक्तस्यं बोधि तनयं च जिन्व। विश्वं तद्भद्रं यद्वन्तिं देवाः। बृहद्वंदेम विदथे सुवीराः। स ईर् स्त्येभिः सर्विभिः शुचद्भिः। गोधायसं विधनसैरतर्दत्। ब्रह्मणस्पतिर्वृषंभिर्वराहैः॥३१॥

घर्मस्वेदेभिद्रविणं व्यानट्। ब्रह्मण्स्पतेरभवद्यथाव्शम्। सत्यो मन्युर्मिह् कर्मा करिष्यतः। यो गा उदाज्ञथ्स दिवे वि चाभजत्। महीवं रीतिः शवंसा सर्त्पृथंक्। इन्धानो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रह्मा शूश्वद्रातहंव्य इत्। जातेनं जातमित्सुत्प्र सृर्सते। यं यं युजं कृणुते ब्रह्मण्स्पतिः। ब्रह्मणस्पते सुयमस्य विश्वहाँ॥३२॥

रायः स्याम रथ्यो विवस्वतः। वीरेषुं वीरा उपंपृिङ्ग

न्स्त्वम्। यदीशांनो ब्रह्मणा वेषि मे हवम्। स इञ्जनेन स विशा स जन्मना। स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः। देवानां यः पितरमा विवासित। श्रद्धामना ह्विषा ब्रह्मणस्पतिम्। यास्ते पूषन्नावो अन्तः। शुक्रं ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे प्थामंजनिष्ट पूषा॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उमे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरित प्रजानन्। पूषा सुबन्धंदिव आ पृथिव्याः। इडस्पितंम्घवां दस्मवंद्याः। तं देवासो अदंदुः सूर्यायैं। कामेन कृतं त्वस्कृ स्वश्रम्ं। अजाऽश्वः पशुपा वाजंबस्त्यः। धियं जिन्वो विश्वे भुवंने अपितः। अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्धरीवृजत्॥३४॥

स्श्रक्षाणो भुवंना देव ईयते। शुची वो ह्व्या मंरुतः शुचीनाम्। शुचिरं हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं सत्यमृतसापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचयः पावकाः। प्रचित्रमुकं गृंणते तुरायं। मारुताय स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहारंसि सहंसा सहंन्ते। रेजंते अग्ने पृथिवी मुखेभ्यंः। अरुसेष्वा मंरुतः खादयों वः॥३५॥

वक्षः सुरुका उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभीं रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्म शशमानाय सन्ति। त्रिधातूंनि दाशुषं यच्छुताधि। अस्मभ्यं तानिं मरुतो वियंन्त। र्यिं नों धत्त वृषणः सुवीरम्ं। इमे तुरं मुरुतों रामयन्ति। इमे सहः सहंस् आ नमन्ति। इमे शर्संवनुष्यतो नि पान्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अरंरुषे दधन्ति। अरा इवेदचंरमा अहंव। प्रप्रं जायन्ते अकंवा महोभिः। पृश्ञेः पुत्रा उपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मृत्या मुरुतः सं मिमिक्षुः। अनुं ते दायि मृह इंन्द्रियायं। स्त्रा ते विश्वमनुं वृत्रहत्यें। अनुं क्षुत्रमनु सहो यजत्र। इन्द्रं देवेभिरनुं ते नृषह्यें। य इन्द्र शुष्मो मघवन्ते अस्तिं॥३७॥

शिक्षा सर्खिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः। त्व हि दृढा मंघवन्विचेताः। अपांवृधि परिवृतिं न राधः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विषुंरूपं यदस्ति। ततो ददातु दाशुषे वसूनि। चोद्द्राध उपंस्तुतश्चिद्वांक्। तमुंष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। वन्वन्नवांतः पुरुहूत इन्द्रः। अषांढमुग्र हि सहंमानमाभिः॥३८॥

गीर्भिर्वर्ध वृष्मं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृंह्तो य ईशैं। तम् ष्टवाम विदथेष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीष्। प्र धृंष्णुया नंयति वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मो वृष्म एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तौत्। आ विश्वतो अभिसमैत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्न सुवंवद्धेह्यस्मे॥३९॥

व्राहैंर्विश्वहां ऽजिनष्ट पूषोद्वरीवृज्जत्खादयों वः पान्त्यस्त्याभिर्नवं च॥————[ $ec{arphi}$ ]

आ देवो यांतु सिवता सुरत्नः। अन्तिरिक्षप्रा वहंमानो अश्वैः। हस्ते दर्धानो नर्या पुरूणि। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृंतं कृशंनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्ततो बृहन्तम्। आस्थाद्रथर् सिवता चित्रभानः। कृष्णा रजार्सि तिविधीं दर्धानः। सर्घा नो देवः सिवता स्वायं। आ साविषद्वसुंपतिर्वसूनि॥४०॥

विश्रयंमाणो अमंतिमुरूचीम्। मूर्तभोजंनमधंरासतेन। विजनां ज्छ्यावाः शिंतिपादो अख्यन्। रथ् हेरंण्यप्रउगं वहंन्तः। शश्वद्दिशंः सवितुर्दैव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवंनानि तस्थः। वि सुंपूर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यत्। गुभीरवेपा असुंरः सुनीथः। क्वेदानी सूर्यः कश्चिकेत। कृतमान्द्या स्रिभर्स्या तंतान॥४१॥

भगं धियं वाजयंन्तः पुरंन्धिम्। नराशश्सो ग्नास्पतिनीं अव्यात्। आ ये वामस्यं सङ्ग्थे रंयीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतुः स्यांम। आ नो विश्वे अस्क्रांगमन्तु देवाः। मित्रो अर्यमा वर्रणः सजोषाः। भुवन् यथां नो विश्वे वृधासः। कर्रन्थ्मुषाहां विथुरं न शवंः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। शश् सरंस्वती सह धीभिरंस्तु॥४२॥

शर्मिषाचः शर्मु रातिषाचः। शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितः सत्यसंवस्य विश्वे। मित्रस्यं व्रते वरुणस्य देवाः। ते सौभंगं वी्रवद्गोमदप्रः। दर्धातन् द्रविणं चित्रम्स्मे। अग्नें याहि दूत्यंं वारिषेण्यः। देवा र अच्छां ब्रह्मकृतां गुणेने। सरस्वतीं मुरुतों अश्विनापः। युक्षि देवान्नंब्रधेयांय विश्वान्॥४३॥

द्यौः पिंतुः पृथिवि मात्रधूंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां नः। विश्वं आदित्या अदिते सृजोषाः। अस्मभ्युः शर्म बहुलं वि यंन्त। विश्वं देवाः शृणुतेमः हवं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ। ये अग्निजिह्वा उत वा यजंत्राः। आसद्यास्मिन्बर्हिषं मादयध्वम्। आ वां मित्रावरुणा हृव्यजुंष्टिम्। नमंसा देवाववंसाऽऽववृत्याम्॥४४॥

अस्माकं ब्रह्म पृतंनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्दिव्या सुंपारा। युवं वस्त्राणि पीवसा वंसाथे। युवोरिच्छंद्रा मन्तंवो हु सर्गाः। अवांतिरत्मनृंतानि विश्वाः। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तथ्सु वां मित्रावरुणा महित्वम्। ई्रमा तस्थुषीरहंभिर्दुदुह्ने। विश्वाः पिन्वथ् स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः प्विरा वंवर्ति॥४५॥

यद्वरहिष्टन्नाति विदे सुदान्। अच्छिद्रर् शर्म भुवंनस्य गोपा। ततों नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जीगिवारसं स्याम। आ नो मित्रावरुणा ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूंतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रतिं वामत्र वर्मा जनांय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौः। प्र बाहवां सिसृतं जीवसे नः।

## आ नो गर्व्यूतिमुक्षतं घृतेनं॥४६॥

आ नो जनें श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरं। क्षिप्रेषंवे देवायं स्वधाम्नें। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें। तिग्मायंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी रुद्र शन्तंमेभिः। श्रतर हिमां अशीय भेषजेभिः। व्यंस्मद्वेषों वित्रं व्यर्हः। व्यमींवाइश्चातयस्वा विषूंचीः॥४७॥

अर्हंन्बिभर्षि मा नंस्तोके। आ ते पितर्मरुता समुमेंतु। मा नः सूर्यस्य सन्दशों युयोथाः। अभि नों वीरो अर्वति क्षमेत। प्र जांयेमिह रुद्र प्रजाभिः। प्रवा बंभ्रो वृषभ चेकितान। यथां देव न हंणीषे न हश्सिं। हावनश्रूनों रुद्रेह बोंधि। बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः। पिरं णो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्टमार्हंन्बिभर्षि। त्वमंग्ने रुद्र आ वो राजांनम्॥४८॥ वर्मित ततानास्तु विश्वानं ववृत्यां वविर्त धृतेन विष्चाः श्रुतन्द्वे चं॥——[६]

सूर्यो देवीमुषस् रोचंमानामर्यः। न योषांमभ्येति पृश्चात्। यत्रा नरो देवयन्तो युगानि। वितन्वते प्रति भुद्रायं भुद्रम्। भुद्रा अश्वां हुरितः सूर्यंस्य। चित्रा एदंग्वा अनुमाद्यांसः। नुमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमंस्थुः। परि द्यावांपृथिवी यन्ति सद्यः। तथ्सूर्यस्य देवत्वं तन्मंहित्वम्। मुध्या कर्तोविंतंतुः सञ्जेभार॥४९॥ यदेदयंक्त हिरतंः सधस्थांत्। आद्रात्री वासंस्तनुते सिमस्मैं। तिन्मित्रस्य वर्णप्याभिचक्षें। सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थें। अनुन्तमृन्यद्रुशंदस्य पाजः। कृष्णमृन्यद्धरितः सं भेरन्ति। अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निर॰हंसः पिपृतान्निरंवद्यात्। तन्नो मित्रो वर्रुणो मामहन्ताम्। अदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्योः॥५०॥

दिवो रुका उरुचक्षा उदेति। दूरे अर्थस्तरणिश्राजिमानः।
नूनं जनाः सूर्येण प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्शसे। शं
नो भव चक्षेसा शं नो अहाँ। शं भानुना शर हिमा शं घृणेने।
यथा शम्स्मै शमसंदुरोणे। तथ्सूर्य द्रविणं धेहि चित्रम्। चित्रं
देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः॥५१॥

आप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्यं आत्मा जगतस्त्रस्थुषेश्च। त्वष्टा दध्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पिशङ्गंरूपः। दश्मनत्वष्टंर्जनयन्त् गर्भम्। अतंन्द्रासो युवतयो बिभंत्रम्। तिग्मानींक्र् स्वयंशस्ं जनेषु। विरोचंमानं परिषीन्नयन्ति। आविष्ट्यों वर्धते चारुंरासु। जिह्मानांमूर्ध्वस्वयंशा उपस्थै॥५२॥

उभे त्वष्टुंर्बिभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीचीं सि॰्हं प्रतिं-जोषयेते। मित्रो जनान्त्र स मित्र। अयं मित्रो नंमस्यंः सुशेवंः। राजां सुक्षत्रो अंजनिष्ट वेधाः। तस्यं वयः सुमतौ यज्ञियंस्य। अपि भद्रे सौमन्से स्याम। अनुमीवास् इडंया मदंन्तः। मितज्मेवो वरिमन्ना पृथिव्याः। आदित्यस्यं वृतमुपक्ष्यन्तः॥५३॥

व्यं मित्रस्यं सुमृतौ स्यांम। मित्रं न ई शिम्या गोषुं गृव्यवंत्। स्वाधियों विदर्थं अपस्वजींजनन्। अरेजयता र् रोदंसी पाजंसा गिरा। प्रति प्रियं यंजतं जनुषामवंः। महा र आंदित्यो नमंसोप्सद्यंः। यात्यज्ञंनो गृणते सुशेवंः। तस्मां पृतत्पन्यंतमाय जुष्टम्ं। अग्नौ मित्रायं ह्विरा जुंहोत। आवार् रथो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥

हिर्ण्ययो वृषंभिर्यात्वश्वैः। घृतवंतिनः प्विभीरुचानः। इषां वोढा नृपतिर्वाजिनीवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमं। त्रिवन्धुरो मन्सायात् युक्तः। विशो येन गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्याममिश्विना दर्धाना। स्वश्वां यशसाऽऽयातम्वाक्। दस्रां निधिं मध्मन्तं पिबाथः। वि वार् रथों वध्वां यादमानः॥५५॥

अन्तौं दिवो बांधते वर्तिनिभ्यौम्। युवोः श्रियं परि योषांवृणीत। सूरों दुहिता परितिक्तियायाम्। यद्देवयन्तमवंधः शचींभिः। परिघ्रष्ट्र सवां मनांवां वयोगाम्। यो हस्यवार्ष्ट्र रिथरावस्तं उस्राः। रथो युजानः परियाति वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्युष्टौ। न्यंश्विना वहतं युज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्धर् समुद्रे॥५६॥ उदूंहथुरणंसो अस्रिधानैः। प्तित्रिभिरश्रमैरंव्यथिभिः। दुर्सनांभिरिश्वना पारयंन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाँम्। इदं वचंः सप्यितिं। तस्मै धत्तर सुवीर्यम्। गवां पोषुड् स्विश्वयम्। यो अग्नीषोमां हिविषां सप्यात्। देवद्रीचा मनसा यो घृतेनं। तस्यं व्रतर रक्षतं पातमरहंसः॥५७॥

विशे जनांय मिह् शर्म यच्छतम्। अग्नीषोमा य आहुंतिम्। यो वां दाशाँख्विष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्ं। विश्वमायुर्व्यश्ववत्। अग्नीषोमा चेति तद्वीर्यं वाम्। यदमुंष्णीतमवसं पणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषंः। अविंन्दतं ज्योतिरेकं बहुभ्यंः। अग्नीषोमाविम स् मेऽग्नीषोमा हुविषः प्रस्थितस्य॥५८॥

जुभार् द्यौरुग्नेरुपस्थं उपुक्ष्यन्तों बद्धधानो वुध्वां यादंमानः समुद्रेऽ॰हंसुः प्रस्थितस्य॥—[७]

अहमंस्मि प्रथम्जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यों अमृतंस्य नाभिः। यो मा ददांति स इदेव माऽऽवाः। अहमन्नमन्नं-मदन्तंमिद्मा। पूर्वमग्नेरिपं दहृत्यन्नम्। यृत्तौ हांसाते अहमुत्तरेषुं। व्यात्तंमस्य पृश्वंः सुजम्भम्। पश्यंन्ति धीराः प्रचंरन्ति पाकाः। जहांम्यन्यन्न जंहाम्यन्यम्। अहमन्नं वश्मिचंरामि॥५९॥

समानमर्थं पर्येमि भुञ्जत्। को मामन्नं मनुष्यों दयेत। परांके अन्नं निहितं लोक एतत्। विश्वैर्देवैः पितृभिर्गुप्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्पंरोप्यतें। शृतत्मी सा त्नूमें बभूव। महान्तौं चरू संकृद्दुग्धेनं पप्रौ। दिवंं च पृश्ञिं पृथिवीं चं साकम्। तथ्सम्पिबंन्तो न मिनन्ति वेधसंः। नैतद्भयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अन्नं प्राणमन्नंमपानमांहः। अन्नं मृत्युं तम्ं जीवातुंमाहः। अन्नं ब्रह्माणों जरसं वदन्ति। अन्नंमाहः प्रजनंनं प्रजानांम्। मोघमन्नं विन्दते अप्रंचेताः। सृत्यं ब्रंवीमि वृध इथ्स तस्यं। नार्यमणुं पुर्ष्यति नो सर्खायम्। केवंलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्तुनयुन्वर्षन्नस्मि। मामंदन्त्यहमंद्रयुन्यान्॥६१॥

अह सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वार्चमजनयन्त् यद्वाग्वदंन्ती। अनुन्तामन्तादधि निर्मितां महीम्। यस्यां देवा अंदधुर्भीजंनानि। एकांक्षरां द्विपदा पदंदां च। वार्चं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं विश्वा भ्वंनान्यपिता॥६२॥

सा नो हवं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागुक्षरं प्रथमजा ऋतस्यं। वेदानां माताऽमृतंस्य नाभिः। सा नो जुषाणोपं यज्ञमागौत्। अवन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषंयो मन्नुकृतों मनीषिणः। अन्वैच्छं देवास्तपंसा श्रमेण। तान्देवीं वाच र ह्विषां यजामहे। सा नों दधातु सुकृतस्यं लोके। चृत्वारि वाक्परिमिता पदानिं॥६३॥

तानि विदुर्बाह्मणा ये मेनीषिणः। गृहा त्रीणि निहिता नेङ्गंयन्ति। तुरीयं वाचो मेनुष्यां वदन्ति। श्रुद्धयाऽग्निः समिध्यते। श्रुद्धयां विन्दते ह्विः। श्रुद्धां भगस्य मूर्धनि। वचसा वेदयामसि। प्रियक् श्रुद्धे ददेतः। प्रियक् श्रुद्धे दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥

इदं मं उदितं कृषि। यथां देवा असुरेषु। श्रद्धामुग्रेषुं चिक्तरे। एवं भोजेषु यज्वंसु। अस्माकंमुदितं कृषि। श्रद्धां देवा यजमानाः। वायुगोपा उपांसते। श्रद्धाः हृंदय्यंया-ऽऽकूत्या। श्रद्धयां हूयते हुविः। श्रद्धां प्रातर्ह्वामहे॥६५॥

श्रुद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रुद्धाः सूर्यस्य निम्नुचि। श्रद्धे श्रद्धांपयेह माँ। श्रुद्धा देवानिधं वस्ते। श्रुद्धा विश्वमिदं जर्गत्। श्रुद्धां कामस्य मातरम्। हृविषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्। वि सीमृतः सुरुचो वेन आवः। स बुिध्रयां उप मा अस्य विष्ठाः॥६६॥

स्तश्च योनिमसंतश्च विवंः। पिता विराजांमृष्भो रंयीणाम्। अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तमकैर्भ्यंचन्ति वथ्सम्। ब्रह्म सन्तं ब्रह्मणा वर्धयन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वंमिदं जगत्। ब्रह्मणः क्षत्रं निर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मनाः।

## अन्तरंस्मिन्निमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वंमिदं जगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्। तेन कोऽर्हित स्पर्धितुम्। ब्रह्मेन्देवास्त्रयंस्त्रिश्शत्। ब्रह्मेन्निन्द्रप्रजापती। ब्रह्मेन् ह् विश्वां भूतानि। नावीवान्तः समाहिता। चतस्त्र आशाः प्रचरन्त्वग्नयः। इमं नो यज्ञं नयतु प्रजानन्। घृतं पिन्वंन्नजर्शं सुवीरम्॥६८॥

ब्रह्मं स्मिद्धंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मत्रुत भ्द्रमंक्रन्। सीदंन्तु गोष्ठे रणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्रांय पूर्वीरुषसो दुहानाः। इन्द्रो यज्वंने पृण्ते चं शिक्षति। उपेद्दंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोभूयो र्यिमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देवयुम्। न ता नंशन्ति न ता अर्वा॥६९॥

गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्यं भृक्षः। इमा या गावः सर्जनास् इन्द्रंः। इच्छामीद्धृदा मनसा चिदिन्द्रम्। यूयं गांवो मेदयथा कृशं चित्। अश्लीलं चित्कृणुथा सुप्रतींकम्। भृद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचः। बृहद्वो वयं उच्यते सभासुं। प्रजावंतीः सूयवंस रिशन्तीः। शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबंन्तीः। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघशर्सः। परि वो हेती रुद्रस्यं वृञ्चात्। उपेदमुंपपर्चनम्। आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्षभस्य रेतंसि। उपेन्द्र तवं वीर्ये॥७०॥

ता सूँर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा महत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामात्माना चरतः सामचारिणां। ययोंर्वृतं न मुमे जातुं देवयोंः। उभावन्तौ परि यात् अर्म्यां। दिवो न र्ष्मी इस्तंनुतो व्यंर्ण्वे। उभा भुवन्ती भुवना क्विकंत्। सूर्या न चन्द्रा चंरतो हुतामंती। पतीं द्युमिद्वंश्विवदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षणा॥७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरेण्या। ता नोऽवतं मित्मन्ता मिहिन्नता। विश्ववपेरी प्रतरेणा तर्न्ता। सुवर्विदां दृशये भूरिरश्मी। सूर्या हि चन्द्रा वसुं त्वेषदर्शता। मनस्विनोभानुंचरतोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवो नद्यः सप्त विश्वति। द्यावा क्षामां पृथिवी दंरश्तं वपुः। अस्म सूर्याचन्द्रमसांऽभिचक्षे। श्रद्धेकिमेन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥

पूर्वाप्रं चंरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवनाऽभि चष्टें। ऋतूनन्यो विदधंज्ञायते पुनः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासा र राजां। यासां देवाः शिवनं मा चक्षुंषा पश्यत। आपो भूद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीको सदांसीत्तदानींम्। नासीद्रजो नो व्योमा परो यत्। किमावंरीवः कुह कस्य शर्मन्ं॥७३॥

अम्भः किमांसीद्गहंनं गभीरम्। न मृत्युर्मृतं तर्हि

न। रात्रिया अहं आसीत्प्रकेतः। आनीदवात स्वधया तदेकम्। तस्माँ द्धान्यं न प्रः किश्चनासं। तमं आसीत्तमंसा गूढमग्रे प्रकेतम्। सृ्तिल सर्वमा इदम्। तुच्छेना्भविपिहितं यदासीत्। तमंस्रस्तन्महिना जांयतैकम्। कामस्तदग्रे समंवर्ततािधं॥ ७४॥

मनंसो रेतंः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। तिरश्चीनो वितंतो रिश्मरेषाम्। अधः स्विदासी(३)दुपरि स्विदासी(३)त्। रेतोधा आंसन्महिमानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः प्रस्तांत्। को अद्धा वेद क इह प्र वोचत्। कृत आजांता कृतं इयं विसृष्टिः। अविग्देवा अस्य विसर्जनाय॥७५॥

अथा को वेद यतं आब्भूवं। इयं विसृष्टिर्यतं आब्भूवं। यदि वा द्धे यदि वा न। यो अस्याध्यक्षः पर्मे व्योमन्। सो अङ्ग वेद यदि वा न वेदं। किङ्स्विद्वनङ्क उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनीषिणो मनसा पृच्छतेदुतत्। यद्ध्यतिष्टद्भुवंनानि धारयन्। ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥ ७६॥

यतो द्यावांपृथिवी निष्ठतक्षुः। मनींषिणो मनसा विब्रंवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भवनानि धारयन्। प्रातर्ग्नि प्रातरिन्द्र र हवामहे। प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरिश्वनां। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोममुत रुद्र हुवेम। प्रातर्जितं भगमुग्र॰ हुवेम। व्यं पुत्रमिदंतेयों विधृर्ता। आध्रिश्चद्यं मन्यंमानस्तुरिश्चेत्॥७७॥

राजां चिद्यं भगं भृक्षीत्याहं। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भगेमां धियमुदंव ददंत्रः। भग् प्रणो जनय गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। उतेदानीं भगवन्तः स्याम। उत प्रपित्व उत मध्ये अह्राम्। उतोदिता मघवन्थ्सूर्यस्य। व्यं देवाना र सुमृतौ स्याम। भगं एव भगंवार अस्तु देवाः॥७८॥

तेनं वयं भगंवन्तः स्याम। तं त्वां भग् सर्व् इञ्जोहवीमि। स नों भग पुर एता भंवेह। समध्वरायोषसों नमन्त। द्धिकावेव शुचंये पदायं। अर्वाचीनं वसुविदं भगं नः। रथंमिवाश्वां वाजिन आवंहन्तु। अश्वांवतीर्गोमतीर्न उषासंः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भृद्राः। घृतं दहांना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥७९॥

विचक्षणा विंचर्तुर॰ शर्मृत्रधिं विसर्जनाय ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्तुरश्चिंदेवाः प्रपीना एकं च॥—[९] पीवोंन्नान्ते शुक्रासः सोमों धेनुमिन्द्रस्तरंस्वाञ्छुचिमा देवो यांतु सूर्यो देवीमुहमंस्मि ता सूर्याचन्द्रमसा नवं॥९॥

पीवोँ त्रामग्ने त्वं पारयानाधृष्यः शुचिं नु विश्रयंमाणो दिवो रुक्मोऽत्रं प्राणमन्नन्ता सूर्याचन्द्रमसा नवंसप्ततिः॥७९॥

पीवौन्नां यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥ अष्टकम् ३॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिकाः। नक्षेत्रं देविमिन्द्रियम्। इदमांसां विचक्षणम्। ह्विरासं जुंहोतन। यस्य भान्तिं रूष्मयो यस्यं केतवः। यस्येमा विश्वा भुवनानि सर्वां। स कृत्तिकाभिर्मिसंवसानः। अग्निर्नो देवः सुंविते दंधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नीं। विश्वरूपा बृह्ती चित्रभानः॥१॥

सा नों यज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेंम श्ररदः सवींराः। रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां रूपाणिं प्रतिमोदंमाना। प्रजापंति १ ह्विषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्। सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षेत्रं प्रियमंस्य धामं। आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजंमाने दधातु॥२॥

यत्ते नक्षेत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रिय राजन् प्रियतंमं प्रियाणांम्। तस्मैं ते सोम ह्विषां विधेम। शं नं एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। आईयां रुद्रः प्रथंमा न एति। श्रेष्ठों देवानां पतिरिष्ट्रियानांम्। नक्षेत्रमस्य ह्विषां विधेम। मा नंः प्रजा रिरिष्ट्रमोत वीरान्। हेती रुद्रस्य परिं णो वृणक्तु। आईरा नक्षेत्रं जुषता हिवर्नः॥३॥

प्रमुश्रमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघश र सन्नुदतामरांतिम्। पुनंनी देव्यदितिः स्पृणोतु। पुनंवीसू नः पुनरेतां यज्ञम्। पुनंनी देवा अभियंन्तु सर्वे। पुनंः पुनर्वी ह्विषां यजामः। एवा न देव्यदितिरन्वी। विश्वस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। पुनंवीसू हविषां वर्धयंन्ती। प्रियं देवानामप्येतु पार्थः॥४॥

बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। तिष्यं नक्षंत्रम्भि सम्बंभूव। श्रेष्ठां देवानां पृतंनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तांदुत मध्यतो नः। बृह्स्पतिर्नः परि पातु पश्चात्। बाधेतां द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्यः स्याम। इद सर्पेभ्यो ह्विरंस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति चेतः॥५॥

ये अन्तरिक्षं पृथिवीं क्षियन्तिं। ते नेः सूर्पासो हवमागिमिष्ठाः। ये रोचने सूर्यस्यापिं सूर्पाः। ये दिवं देवीमनुं स्थरन्ति। येषांमाश्रेषा अनुयन्ति कामम्। तेभ्यः सूर्पभ्यो मधुमञ्जहोमि। उपहूताः पितरो ये मुघासुं। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते नो नक्षेत्रे हवमागिमिष्ठाः। स्वधाभिर्य्ज्ञं प्रयंतं जुषन्ताम्॥६॥

ये अग्निद्ग्धा येऽनंग्निदग्धाः। येऽमुं लोकं पितर्रः क्षियन्ति। याङ्श्चं विद्म या॰ उं च न प्रविद्म। मुघासुं यज्ञ॰ सुकृतं जुषन्ताम्। गवां पितः फल्गुंनीनामसि त्वम्। तदंर्यमन्वरुणमित्र चारुं। तं त्वां वयः संनितारः सनीनाम्। जीवा जीवन्तमुप संविशेम। येनेमा विश्वा भुवनानि सञ्जिता। यस्यं देवा अनु सं यन्ति चेतः॥७॥

अर्यमा राजाऽजर्स्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्भो रोरवीति। श्रेष्ठों देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः फल्गुंनीस्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षत्रमृजर्रं सुवीर्यम्। गोमदश्वंवदुप सन्नुंदेह। भगों ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगों देवीः फल्गुंनीरा विवेश। भगस्येत्तं प्रंस्वं गंमेम। यत्रं देवैः संधमादं मदेम॥८॥

आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययंन सुवृता रथेन। वहुन् हस्तर् सुभगं विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपंरिं पुण्यमच्छं। हस्तः प्रयंच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन् प्रति-गृभ्णीम एनत्। दातारंम् संविता विदेय। यो नो हस्तांय प्रसुवातिं यज्ञम्। त्वष्टा नक्षंत्रम्भ्येति चित्राम्। सुभ संसं युवति रोचंमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या १ श्री रूपाणि पि १ शन् भवंनानि विश्वा। तत्रस्त्वष्टा तदं चित्रा विचंष्टाम्। तत्रक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तत्रः प्रजां वीरवंती १ सनोतु। गोभिनी अश्वैः समनक्तु यज्ञम्। वायुर्नक्षंत्रमभ्येति निष्ट्याम्। तिग्मश्रं शो वृष्मो रोरुवाणः। समीरयन् भवंना मात्रिश्वा। अप द्वेषा १ सि नुदतामरांतीः॥१०॥

तन्नों वायुस्तदु निष्टमां शृणोतु। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तन्नों देवासो अनुंजानन्तु कामम्। यथा तरेम दुरितानि विश्वां। दूरम्समच्छत्रंवो यन्तु भीताः। तदिन्द्राग्नी कृणतां तद्विशांखे। तन्नों देवा अनुंमदन्तु यज्ञम्। पृश्चात् पुरस्तादभंयं नो अस्तु। नक्षंत्राणामिधंपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राग्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विषूंचः शत्रूंनप् बाधंमानौ। अप् क्षुधं नुदतामरांतिम्। पूर्णा पृश्चादुत पूर्णा पुरस्तांत्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यां देवा अधि संवसंन्तः। उत्तमे नाकं इह मांदयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युवृतिः स्जोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययंन्ती दुरितानि विश्वां। उरुं दुहां यजंमानाय युज्ञम्॥१२॥

चित्रभांनुर्यजंमाने दधातु हुविर्नुः पाथुश्चेतों जुषन्ताञ्चेतों मदेम् रोचंमानामरांतीर्गोपौ युज्ञम्॥[१]

ऋखास्मं ह्व्यैर्नमंसोप्सद्यं। मित्रं देवं मित्र्धेयं नो अस्तु। अनूराधान् ह्विषां वर्धयन्तः। शतं जीवेम श्ररदः सवीराः। चित्रं नक्षेत्रमुदंगात्पुरस्तात्। अनूराधास् इति यद्वदेन्ति। तिम्त्र एति पृथिभिदेवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतर्न्तरिक्षे। इन्द्रौ ज्येष्ठामन् नक्षेत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृत्रतूर्ये ततार्गा१३॥

तस्मिन्वयम्मृतं दुहानाः। क्षुधं तरेम् दुरितिं दुरिष्टिम्। पुरन्दरायं वृष्भायं धृष्णवें। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें।

इन्द्रांय ज्येष्ठा मधुंमृद्दुहांना। उरुं कृंणोतु यजंमानाय लोकम्। मूलंं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराँच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिर्नक्षंत्रं पृशुभिः समंक्तम्। अहंर्भूयाद्यजंमानाय् मह्मम्॥१४॥

अहंनी अद्य संवित दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति। परांचीं वाचा निर्ऋतिं नुदािम। शिवं प्रजाये शिवमंस्तु मह्मम्। या दिव्या आपः पर्यंसा सम्बभूवः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासांमषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शङ् स्योना भवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वेशन्तीरुत प्रांस्चीर्याः॥१५॥

यासांमषाढा मधुं भृक्षयंन्ति। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तदंषाढा अभिसंयंन्तु यज्ञम्। तन्नक्षंत्रं प्रथतां पृशुभ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यजंमानाय कल्पताम्। शुभ्राः कृन्यां युवृतयः सुपेशंसः। कृर्मकृतः सुकृतों वीर्यावतीः। विश्वान् देवान् ह्विषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः काम्मुपं यान्तु युज्ञम्॥१६॥

यस्मिन् ब्रह्माऽभ्यजंयथ्सवंमेतत्। अमुं चं लोकमिदमूं च सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्धिजित्यं। श्रियं दधात्वहंणीय-मानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मंणा सञ्जितेमौ। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्धिचंष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतंनाः सञ्जयेम। तन्नो देवासो अनुंजानन्तु कामम्। शृण्वन्ति श्रोणाम्मृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या उपश्रणोमि वाचम्॥१७॥

महीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचींमेनाः ह्विषां यजामः। त्रेधा विष्णुंरुरुगायो विचंक्रमे। महीं दिवं पृथिवीम्न्तिरक्षम्। तच्छ्रोणैतिश्रवं इच्छमाना। पुण्यः श्लोकं यजमानाय कृण्वती। अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासंः। चतंस्रो देवीर्जराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पान्तु रजसः प्रस्तात्। संवथ्सरीणममृतः स्वस्ति॥१८॥

यज्ञं नंः पान्तु वसंवः पुरस्तांत्। दक्षिणतोंऽभियंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षंत्रम्भि संविशाम। मा
नो अरातिरघश्र्यसाऽगन्। क्षृत्रस्य राजा वर्रुणोऽधिराजः।
नक्षंत्राणा श्रातिभेष्वविसेष्ठः। तौ देवेभ्यंः कृणुतो दीर्घमायुः।
श्रात सहस्रां भेष्जानि धत्तः। यज्ञं नो राजा वर्रुण
उपयातु। तन्नो विश्वं अभि संयंन्तु देवाः॥१९॥

तन्नो नक्षंत्र श्वतिभिषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रति-रद्भेषजानि। अज एकंपादुदंगात्पुरस्तांत्। विश्वा भूतानिं प्रति मोदंमानः। तस्यं देवाः प्रंस्वं यंन्ति सर्वे। प्रोष्ठपदासो अमृतंस्य गोपाः। विभाजंमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहृदगुन्द्याम्। त स्पूर्यं देवम्जमेकंपादम्। प्रोष्ठपदासो अनुंयन्ति सर्वे॥२०॥ अहिं बुंध्रियः प्रथंमान एति। श्रेष्ठों देवानांमुत मानुंषाणाम्। तं ब्राँह्मणाः सोंम्पाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासों अभि रंक्षन्ति सर्वे। चत्वार् एकंम्भि कर्म देवाः। प्रोष्ठपदास् इति यान् वदंन्ति। ते बुंध्रियं परिषद्य एकंम्भि कर्मवन्तः। अहि रक्षन्ति नमंसोपसद्यं। पूषा रेवत्यन्वेति पन्थांम्। पुष्टिपतीं पशुपा वाजंबस्त्यौ॥२१॥

ड्मानिं ह्व्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपंयातां यज्ञम्। क्षुद्रान् पृशून् रंक्षतु रेवतीं नः। गावों नो अश्वाः अन्वेतु पूषा। अन्नः रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजः सन्तां यजंमानाय यज्ञम्। तद्श्विनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभुङ्गिष्ठौ सुयमेंभिरश्वैः। स्वं नक्षंत्रः ह्विषा यजंन्तौ। मध्वा सम्पृंक्तौ यजुंषा समंक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजौ हव्यवाहौ। विश्वंस्य दूताव्मृतंस्य गोपौ। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणुमोऽश्वयुग्भ्याम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगंवान् विचंष्टाम्। लोकस्य राजां महतो महान् हि। सुगं नः पन्थामभंयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजां। यस्मिन्नेनम्भ्यषिश्चन्त देवाः। तदंस्य चित्र॰ ह्विषां यजाम। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। निवेशंनी यत्तं देवा अदंधुः॥२३॥ तृतार् मह्यं प्रास्चीर्या याँन्तु युज्ञं वाचई स्वृस्ति देवा अनुयन्ति सर्वे वाजंबस्त्यौ समंक्तौ देवास्त्रीणि च॥———[२]

नवीनवो भवति जायंमानो यमांदित्या अष्शुमाँप्याययंन्ति। ये विरूपे समनसा संव्ययंन्ती। समानं तन्तुं परितात्ना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतों हुवे। ते नो नक्षेत्रे हवमागंमेतम्। वयं देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिं दर्धानाः। अहोरात्रे ह्विषां वर्धयंन्तः। अतिं पाप्मान्मतिं मुत्त्वा गमेम। प्रत्युवदृश्यायती॥२४॥

व्युच्छन्तीं दुहिता दिवः। अपो मही वृंणुते चक्षुंषा। तमो ज्योतिंष्कृणोति सूनरीं। उदुस्त्रियाः सचते सूर्यः। सचा उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यस्य च। सं भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षंत्रमर्चिमत्। भानुमक्तेजं उचरंत्। उपयुज्ञमिहागंमत्॥२५॥

प्र नक्षंत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु र हवामहे। स नंः सिवता संवथ्मिनम्। पृष्टिदां वीरवंत्तमम्। उदुत्यं चित्रम्। अदितिर्न उरुष्यतु महीमू षु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुवः। अनुनोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। हव्यवाह् स्वष्टम्॥२६॥

आ्युत्यंगम्थ्यिवंष्टम्॥———[3]

अग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवाना ईस्यामिति। स एतम्ग्रये कृतिकाभ्यः पुरोडाशम्ष्टाकपालं निरंवपत्। ततो वै सोंऽन्नादो देवानांमभवत्। अग्निर्वे देवानांमन्नादः। यथां ह् वा अग्निर्देवानांमन्नादः। एव १ ह् वा एष मंनुष्यांणां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृत्तिंकाभ्यः स्वाहां। अम्बाये स्वाहां दुलाये स्वाहां। नित्त्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्ये स्वाहां। मेघयंन्त्ये स्वाहां वर्षयंन्त्ये स्वाहां। चुपुणीकांये स्वाहेतिं॥२७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। तासा रे रोहिणीम्भ्यंध्यायत्। सोंऽकामयत। उप मा वंर्तेत। समेंनया गच्छेयेतिं। स एतं प्रजापंतये रोहिण्ये च्रं निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावंर्तत। समेंनयागच्छत। उप ह वा एनं प्रियमावंर्तते। सं प्रियेणं गच्छते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां रोहिण्ये स्वाहां। रोचंमानाये स्वाहां प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥

सोमो वा अंकामयत। ओषंधीना र राज्यम्भिजंयेयमिति। स एत र सोमांय मृगशीर्षायं श्यामाकं च्रं पर्यस् निरंवपत्। ततो वै स ओषंधीना र राज्यम्भ्यंजयत्। समानाना र हु वै राज्यम्भिजंयित। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमांय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहौषंधीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥२९॥

रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामितिं। स एत १

रुद्रायाऽऽद्रिये प्रैय्यंङ्गवं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽऽद्रिये स्वाहां। पिन्वंमानाये स्वाहां पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३०॥

ऋक्षा वा इयमेलोमकोऽऽसीत्। साऽकोमयत। ओषधीभिर्वनस्पतिभिः प्रजायेयेति। सैतमदित्यै पुनेर्वसुभ्यां चरुं निर्गवपत्। ततो वा इयमोषधीभिर्वनस्पतिभिः प्राजायत। प्रजायते हु वै प्रजयां पृशुभिः। य पृतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदित्यै स्वाहा पुनेर्वसुभ्याम्। स्वाहा भूँत्यै स्वाहा प्रजाँत्यै स्वाहेति॥३१॥

बृह्स्पतिर्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्चसी स्यामितिं। स एतं बृह्स्पतंये तिष्यांय नैवारं चरुं पर्यासे निरंवपत्। ततो वै स ब्रह्मवर्चस्यंभवत्। ब्रह्मवर्चसी हु वै भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्यांय स्वाहां। ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥३२॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवाः सूर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्यं कर्म्भं निरंवपन्। तानेताभिरेव देवतांभिरुपांनयन्। एताभिर्ह् वे देवतांभिर्द्धिषन्तं भ्रातृंव्यमुपंनयित। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्पेभ्यः स्वाहांऽऽश्रेषाभ्यः स्वाहां। दन्दशूकेंभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥ पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋंध्रुयामेतिं। त एतं पितृभ्यो मघाभ्यः पुरोडाशृ षद्वीपालं निरंवपन्। ततो वै ते पितृलोक आँध्रुंबन्। पितृलोके ह् वा ऋंध्रोति। य एतेनं ह्विषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां मघाभ्यः। स्वाहांऽन्घाभ्यः स्वाहांऽग्दाभ्यः। स्वाहांऽरम्धतीभ्यः स्वाहेतिं॥३४॥

अर्यमा वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामितिं। स एतमेर्यम्णे फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भविति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्यम्णे स्वाहा फल्गुंनीभ्या इं स्वाहाँ। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३५॥

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवाना इस्यामिति। स एतं भगाय फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स भगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगाय स्वाहा फल्गुंनीभ्या इस्वाहां। श्रेष्ठांय स्वाहेतिं॥३६॥

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधीरन्। स्विता स्यामिति। स एत र संवित्रे हस्ताय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निरंवपदाशूनां व्रीहीणाम्। ततो वै तस्मै श्रद्देवा अदंधत। स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अंस्मै मनुष्यां दधते। स्विता संमानानां भवति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं

वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सृवित्रे स्वाहा हस्तांय। स्वाहां दद्ते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छंते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहेतिं॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विन्देयेति। स एतं त्वष्ट्रं चित्रायें पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दत। चित्र ह वै प्रजां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्रे स्वाहां चित्राये स्वाहां। चैत्राय स्वाहां प्रजाये स्वाहितं॥३८॥

वायुर्वा अंकामयत। कामचारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमिति। स एतद्वायवे निष्ट्रांये गृष्टमे दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स कामचारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। कामचार ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्ट्रांये स्वाहाँ। कामचारांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥३९॥

इन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रेष्ठमं देवानांम्भिजंयेवेतिं। तावेतिमंन्द्राग्निभ्यां विशाखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वै तौ श्रेष्ठमं देवानांम्भ्यंजयताम्। श्रेष्ठमं हु वै संमानानांम्भि जंयति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याङ् स्वाहा विशांखाभ्याङ् स्वाहां। श्रेष्ठमांय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४०॥ अथैतत्पौर्णमास्या आज्यं निर्वपति। कामो वै पौर्णमासी। काम आज्यम्। कामेनेव काम् समर्थयति। क्षिप्रमेन् स् सकाम उपनमति। येन कामेन यजंते। सोऽत्रं जुहोति। पौर्णमास्ये स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगंत्ये स्वाहेति॥४१॥ अग्निः पश्चंदश प्रजापंतिः पोडंश सोम एकांदश रुद्रो दश्क्षेंकांदश् बृह्स्पित्रदर्श देवासुरा नवं

पितर् एकांदशार्यमा भगो दशं दश सिवता चतुंर्दश् त्वष्टां वायुरिंन्द्राग्नी दशं दशार्थेतत्पौर्णमास्या

अृष्टौ पश्चंदश॥\_\_\_\_\_

**-**[8]

मित्रो वा अंकामयत। मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतं मित्रायांनूराधेभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। मित्रधेय हे वा एषु लोकेष्वभिजंयित। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहांऽनूराधेभ्यः स्वाहां। मित्रधेयांय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४२॥

इन्द्रो वा अंकामयत। ज्येष्ठमं देवानांम्भिजंयेय्मिति। स एतिमन्द्रांय ज्येष्ठायं पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपन्महाव्रीहीणाम्। ततो वे स ज्येष्ठमं देवानांम्भ्यंजयत्। ज्येष्ठमं हु वे संमानानांम्भिजंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहां ज्येष्ठाये स्वाहां। ज्येष्ठमांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४३॥

प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूलं प्रजां विंन्देयेतिं। स पुतं प्रजापंतये मूलांय चुरुं निरंवपत्। ततो वै स मूलं प्रजामंविन्दत। मूल १ हु वै प्रजां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलांयु स्वाहां। प्रजायै स्वाहेति॥४४॥

आपो वा अंकामयन्त। समुद्रं कामंम्भिजंयेमेति। ता पृतम्द्र्योऽषाढाभ्यंश्चरं निरंवपन्। ततो वै ताः संमुद्रं कामंमभ्यंजयन्। समुद्र ह वै कामंम्भिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अद्भः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। समुद्राय स्वाहा कामांय स्वाहां। अभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४५॥

विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपुज्य्यं जंयेमेति। त पृतं विश्वेंभ्यो देवेभ्योऽषाढाभ्यंश्वरं निरंवपन्। ततो वै तें-ऽनपज्य्यमंजयन्। अनुपुज्य्यः हु वै जंयित। य पृतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुपुज्य्याय स्वाहा जित्ये स्वाहेतिं॥४६॥

ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकम्भिजंयेयमितिं। तदेतं ब्रह्मणेऽभिजितें च्रुं निरंवपत्। ततो वै तद्भेह्मलोकम्भ्यंजयत्। ब्रह्मलोक ह वा अभिजंयित। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहां। ब्रह्मलोकाय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४७॥ विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्युङ् श्लोक शृणवीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदिति। स एतं विष्णंवे श्लोणायै पुरोडाशं त्रिकपालं निरंवपत्। ततो वे स पुण्युङ् श्लोकंमशृणुत। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्य ह वे श्लोक शृणुते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहाँ श्लोणायै स्वाहाँ। श्लोकांय स्वाहाँ श्लाय स्वाहेति॥४८॥

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतांनां परीयामेतिं। त एतं वसुभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपन्। ततो वै तेऽग्रं देवतांनां पर्यायन्। अग्रं ह् वै संमानानां पर्येति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वसुभ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहां। अग्रांय स्वाहा परींत्यै स्वाहेतिं॥४९॥

इन्द्रो वा अंकामयत। दृढोऽशिंथिलः स्यामितिं। स एतं वर्रणाय श्वतिभेषजे भेषजेभ्यः पुरोडाशं दशंकपालं निरंवपत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो वे स दृढोऽशिंथिलो-ऽभवत्। दृढो हु वा अशिंथिलो भवति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वर्रणाय स्वाहां श्वतिभेषजे स्वाहां। भेषजेभ्यः स्वाहेतिं॥५०॥

अजो वा एकंपादकामयत। तेजस्वी ब्रंह्मवर्चसी

स्यामितिं। स पृतम्जायैकंपदे प्रोष्ठप्देभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स तेंज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चस्यंभवत्। तेज्ञस्वी हृ वै ब्रंह्मवर्चसी भंवति। य पृतेनं हृविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहाँ प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहाँ। तेजंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥५१॥

अहिर्वे बुध्नियोंऽकामयत। इमां प्रतिष्ठां विन्देयेति। स एतमहंये बुध्नियांय प्रोष्ठपदेभ्यः पुरोडाशः भूमिकपालं निरंवपत्। ततो वे स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। इमा॰ ह वे प्रतिष्ठां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुध्नियांय स्वाहां प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥५२॥

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामिति। स एतं पूष्णे रेवत्यै चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह् वै भंवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्यै स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेति॥५३॥

अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेतिं। तावेतमश्विभ्यांमश्वयुग्न्यां पुरोडाशं द्विकपालं निरंवपताम्। ततो वे तौ श्रोत्रस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी ह वा अबंधिरो भवति। य पुतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याङ् स्वाहांऽश्वयुग्न्याङ् स्वाहां। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्ये स्वाहेतिं॥५४॥ यमो वा अंकामयत। पितृणाः राज्यम्भिजंयेयमिति। स एतं यमायांपभरंणीभ्यश्चरुं निरंपवत्। ततो वै स पिंतृणाः राज्यम्भ्यंजयत्। समानानाः ह वै राज्यम्भि जंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहांऽपभरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥५५॥

अथैतदंमावास्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा अमावास्यां। काम् आज्यम्। कामेनैव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेन् सकाम् उपनमति। येन् कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। अमावास्यांयै स्वाहा कामांय स्वाहाऽऽगंत्यै स्वाहेतिं॥५६॥

मित्र इन्द्रंः प्रजापंतिर्दशं दशाप् एकांदश् विश्वे ब्रह्म दशंदश् विष्णुस्रयोदश् वसंव इन्द्रोऽजोऽहिर्वे बुध्नियंः पूषाऽश्विनौं युमो दशं दुशाथैतदंमावास्यांया अष्टौ पश्चंदश॥——[५]

चन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानंधमासान्मासानृतून्थ्सं-वथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य स् सलोकतांमाप्नुयामिति। स एतं चन्द्रमंसे प्रतीदृष्ट्याये पुरोडाशं पश्चंदशकपालं निरंवपत्। ततो वै सोंऽहोरात्रानंधमासान्मासानृतून्थ्यंवथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोत्। अहोरात्रान् ह् वा अर्धमासान्मासानृतून्थ्यंवथ्यरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोत्। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य पतेनं हिविषा यज्ञते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहां प्रतीदृष्ट्यांयै

स्वाहाँ। अहोरात्रेभ्यः स्वाहाँऽर्धमासेभ्यः स्वाहाँ। मासेँभ्यः स्वाहर्तुभ्यः स्वाहाँ। सुंवृथ्सराय स्वाहेतिं॥५७॥

अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येविह।
न नांवहोरात्रे आंप्रुयातामिति। ते एतमहोरात्राभ्यां च्रं
निरंवपताम्। द्वयानां व्रीहीणाम्। शुक्कानां च कृष्णानां च।
स्वात्योर्दुग्धे। श्वेतायं च कृष्णायं च। ततो व ते अत्यंहोरात्रे
अमुच्येते। नैनं अहोरात्रे आंप्रुताम्। अति ह् वा अंहोरात्रे
मुंच्यते। नैनंमहोरात्रे आंप्रुतः। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं
चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अह्रे स्वाहा रात्रिये स्वाहां।
अतिमुक्त्ये स्वाहेतिं॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामितिं। सैतमुषसं चुरुं निरंवपत्। ततो वे सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगांऽभवत्। प्रियो हु वे संमानाना र् सुभगों भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्रो स्वाहां। व्यूषुष्ये स्वाहां व्युच्छन्त्ये स्वाहां। व्यंष्टाये स्वाहेतिं॥५९॥

अथैतस्मै नक्षंत्राय चुरुं निर्वपिति। यथा त्वं देवानामिसी। एवमहं मनुष्याणां भूयासमिति। यथां हु वा एतद्देवानाम। एव॰ हु वा एष मनुष्याणां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षंत्राय स्वाहोदेष्यते स्वाहां। उद्यते स्वाहोदिताय स्वाहां। हरसे स्वाहा भरसे स्वाहाँ। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहाँ। तपंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामिति। स एत॰ सूर्याय नक्षंत्रेभ्यश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स नक्षंत्राणां प्रतिष्ठाऽभंवत्। प्रतिष्ठा हु वै संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षंत्रेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥६१॥

अथैतमदिंत्यै चुरुं निर्वपति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। अदिंत्यै स्वाहाँ प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६२॥

अथैतं विष्णंवे चुरुं निर्वपति। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ एवान्तृतः प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां युज्ञाय स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६३॥

चन्द्रमाः पश्चंदशाहोरात्रे सप्तदंशोषा एकांदृशाथैतस्मै नक्षंत्राय त्रयोदश् सूर्यो दशाथैतमदित्यै पश्चाथैतं विष्णंवे षद्थ्सप्त (स्विताऽऽशूनां व्रीहीणामिन्द्रो महाव्रीहीणामिन्द्रेः कृष्णानां व्रीहीणामंहोरात्रे द्वयानां व्रीहीणाम्। पितरः षद्वंपालर सविता द्वादंशकपालमिन्द्राग्नी एकांदशकपालमिन्द्र एकांदशकपालमिन्द्रो दशंकपालं विष्णंश्चिकपालमिहुर्भूमिकपालम्थिनौं द्विकपालं चन्द्रमाः पश्चंदशकपालमृत्रिस्त्वष्टा वसंवोऽष्टाकंपालम्न्यत्रं चुरुम्। रुद्रौंऽर्यमा पूषा पंशुमान्थ्य्यार् सोमों रुद्रो बृह्स्पितः पर्यंसि वायः पयः सोमों वायुरिन्द्राग्नी मित्र इन्द्र आपो ब्रह्मं युमोंऽभिजित्यै त्वष्टां प्रजापंतिः प्रजायं पौर्णमास्या अमावास्याया अगंत्ये विश्वे जित्यां अश्विनौ श्रुत्यैं। ब्रह्म तदेतं विष्णुः स एतं

वायुः स एतदाप्स्ताः। पितरो विश्वे वसंवोऽकामयन्त् मेति त एतन्निरंवपन्। आपोऽकामयन्त् मेति ता एतन्निरंवपन्। इन्द्राग्नी अश्विनांवकामयेतां वेति तावेतन्निरंवपताम्। अहोरात्रे वा अंकामयेतांमिति ते एतन्निरंवपताम्। अन्यत्रांकामयतेति स एतन्निरंवपत्। इन्द्राग्नी श्रैष्ट्रामिन्द्रो उपैष्ट्रामिन्द्रो हृढः। अहिः सूर्योऽदिंत्यै विष्णंवे प्रतिष्ठायैं। सोमो यमः संमानानांम्। अग्निनीं रीरिषद्न्यत्रं रीरिषः॥)॥———[६]

अग्निर्न ऋध्यास्म नवोनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाः षट्॥ ॥
अग्निर्न्सतन्नों वायुरिहें बुंभ्रियं ऋक्षा वा इयमथैतत्पौं र्णमास्या अजो वा
एकंपाथ्सूर्यस्त्रिषंष्टिः॥६३॥
अग्निर्नः पातु प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥ द्वितीयः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयबाह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्या-ऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पर्णत्वम्। ब्रह्म वै पूर्णः। यत्पंणशाख्यां वृथ्सानंपाक्रोति। ब्रह्मणैवैनांनपाकरोति। गायत्रो वै पूर्णः। गायत्राः पृशवः॥१॥

तस्मात्रीणित्रीणि पूर्णस्यं पलाशानि। त्रिपदां गायत्री। यत्पंर्णशाखया गाः प्राप्यंति। स्वयैवेनां देवतंया प्राप्यंति। यं कामयेतापृशः स्यादितिं। अपूर्णान्तस्मै शुष्काप्रामाहंरेत्। अपृशुरेव भविति। यं कामयेत पशुमान्थ्रस्यादितिं। बहुपूर्णान्तस्मै बहुशाखामाहंरेत्। पृशुमन्तंमेवेनंं करोति॥२॥

यत्प्राचीमा हरैंत्। देवलोकम्भि जंयेत्। यद्दीचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदीचीमा हंरति। उभयौर्लोकयोर्भि-जित्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्याह। इषमेवोर्जं यजमाने दधाति। वायवः स्थेत्याह। वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्यक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्याः खलु व पृशवः॥३॥

वायवं एवैनान्परिं ददाति। प्र वा एंनानेतदा कंरोति। यदाहं। वायवः स्थेत्युंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव पृशूनुपं ह्वयते। देवो वंः सविता प्रापंयत्वित्यांह प्रसूँत्यै। श्रेष्ठंतमाय कर्मण इत्यांह। यज्ञो हि श्रेष्ठंतमं कर्म। तस्मांदेवमांह।

### आप्यांयध्वमघ्निया देवभागमित्यांह॥४॥

वृथ्सेभ्यंश्च वा एताः पुरा मंनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं एवेना इन्द्रायाप्यांययित। ऊर्जस्वतीः पर्यस्वतीरित्यांह। ऊर्ज् हि पर्यः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अयक्षमा इत्यांह प्रजांत्ये। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघश्चं इत्यांह गृत्यैं। रुद्रस्यं हेतिः परिं वो वृण्क्वित्यांह। रुद्रादेवेनांस्नायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतौ स्यात बृह्वीरित्यांह। ध्रुवा एवास्मिन्बृह्वीः करोति॥५॥

यजंमानस्य पृशून्पाहीत्यांह। पृशूनां गोंपीथायं। तस्मांथ्सायं पृशव उपसमावंतन्ते। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री॥६॥

पुशर्वः करोति पुशर्वो देवभागमित्यांह करोति नवं च॥————[१]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यंश्वप्र्शुमादंते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांहु यत्यै। यो वा ओषंधीः पर्वशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिर्वा ओषंधीः पर्वशो वेद। स एना न हिनस्ति। अश्वपृश्वा बर्हरच्छैति। प्राजापत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं॥७॥

ओषंधीनामहिर्सायै। यज्ञस्यं घोषद्सीत्यांह। यजंमान एव र्यिं दंधाति। प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। प्रेयमंगाद्धिषणां ब्र्हिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवैनदच्छेंति। मनुना कृता स्वधया वित्रष्टेत्यांह। मानुवी हि पर्शुं स्वधाकृता॥८॥

त आवंहिन्ति क्वयंः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवा स्मो वै क्वयंः। यज्ञः पुरस्तांत्। मुख्त एव यज्ञमा रंभते। अथो यदेतदुक्ता यतः कृतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भंवति। देवेभ्यो जुष्टंमिह ब्र्हिरासद इत्यांह। ब्र्हिषः समृंद्धौ। कर्मणोऽनंपराधाय। देवानां परिषूतम्सीत्यांह॥९॥

यद्वा इदं किं चं। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा वस्यंसे प्रतिप्रोच्याहेदं करिष्यामीति। एवमेव तदंध्वर्युर्देवेभ्यः प्रतिप्रोच्यं बर्हिर्दाति। आत्मनोऽहिर्ंसायै। यावंतः स्तम्बान्पंरिदिशेत्। यत्तेषांमुच्छिड्ष्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एकई स्तम्बं परिदिशेत्। तर सर्वं दायात्॥१०॥

युज्ञस्यानंतिरेकाय। वर्षवृंद्धम्सीत्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। देवंबर्हिरित्यांह। देवेभ्यं एवैनंत्करोति। मा त्वा-ऽन्वङ्गा तिर्यगित्याहाहि रंसायै। पर्व ते राध्यासमित्याहध्यैं। आच्छेत्ता ते मा रिषमित्यांह। नास्याऽऽत्मनो मीयते। य एवं वेदं॥११॥ देवंबर्हिः शृतवंल्श्ं विरोहेत्यांह। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजानां प्रजनंनाय। सहस्रंवल्शा वि वय र रुहेमेत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। पृथिव्याः सम्पृचंः पाहीत्यांह प्रतिष्ठित्ये। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टीं लुंनोति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्ये। सुसम्भृतां त्वा सम्भंरामीत्यांह। ब्रह्मंणैवैन्थ्सम्भंरति॥१२॥

अदित्यै रास्नाऽसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैन्द्रास्नां करोति। इन्द्राण्ये सन्नहंनुमित्यांह। इन्द्राणी वा अग्ने देवतांना समंनह्यत। साऽऽभ्नीत्। ऋख्ये सन्नह्यति। प्रजा व बर्हिः। प्रजानामपंरावापाय। तस्माथ्स्नावंसन्तताः प्रजा जांयन्ते॥१३॥

पूषा तें ग्रन्थं ग्रंशात्वत्यांह। पृष्टिमेव यजंमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि रंसायै। पृश्चात्प्राश्चमुपंगूहित। पृश्चाद्वै प्राचीन् रेतों धीयते। पृश्चादेवास्में प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छ् इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृह्स्पतेंर्मूर्भा हंग्मीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृहस्पतिं:॥१४॥

ब्रह्मणैवैनंद्धरति। उर्वन्तिरिक्षमिन्विहीत्यांह् गत्यै। देवङ्गमम्सीत्यांह। देवानेवैनंद्रमयति। अनेधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव नि दंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं

# लोकस्य समंष्ट्री॥१५॥

स्योनित्वार्यं स्वधाकृंताऽसीत्यांह दायाद्वेदं भरति जायन्ते बृह्स्पतिः सम्ध्रे॥———[२]

पूर्वेद्युरिध्माब्र्हिः करोति। यज्ञमेवारभ्यं गृहीत्वोपंवसति। प्रजापंतिर्य्ज्ञमंसृजत। तस्योखे अंस्रश्सेताम्। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यथ्मांन्नाय्योखे भवंतः। यज्ञस्यैव तदुखे उपंदधात्यप्रंस्रश्साय। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। मात्रिश्वंनो घुर्मोऽसीत्यांह॥१६॥

अन्तरिक्षं वै मांत्रिश्वंनो घर्मः। एषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्येषा पृथिव्याश्च सम्भृंता। यदुखा। तस्मादेवमांह। विश्वधाया असि पर्मेण धाम्नेत्यांह। वृष्टिर्वे विश्वधायाः। वृष्टिमेवावं रुन्धे। दण्हंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यै॥१७॥

वसूनां प्वित्रम्सीत्याह। प्राणा वै वस्वः। तेषां वा एतद्भाग्धेयम्। यत्प्वित्रम्। तेभ्यं प्वैनंत्करोति। शृतधार सहस्रधार्मित्याह। प्राणेष्वेवायुर्दधाति सर्वत्वायं। त्रिवृत्पंलाशशाखायां दर्भमयं भवति। त्रिवृद्वै प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मध्यतो यजमाने दधाति॥१८॥

सौम्यः पूर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्पवित्रं दुर्भाः। प्राख्सायमधिनि दंधाति। तत्प्रांणापानयों रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यङ् ह्येतदहंः। अत्रुं वै चुन्द्रमाः। अत्रं प्राणाः। उभयमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥

तस्मांद्य सर्वतंः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रफ्स इत्यांह् प्रतिष्ठित्ये। ह्विषोऽस्कन्दाय। न हि हुत स्वाहांकृत स्कन्दित। दिवि नाको नामाग्निः। तस्य विप्रुषो भागधेयम्। अग्नये बृह्ते नाकायेत्यांह। नाकंमेवाग्निं भागधेयम्। समर्धयति। स्वाहा द्यावांपृथिवीभ्यामित्यांह। द्यावांपृथिव्योरेवैन्त्प्रतिष्ठापयति॥२०॥

प्वित्रंवत्यानंयित। अपां चैवौषंधीनां च रस् क्ष् स॰ सृंजिति। अथो ओषंधीष्वेव पृश्न्म्प्रतिष्ठापयित। अन्वारभ्य वाचं यच्छिति। यज्ञस्य धृत्यै। धारयंन्नास्ते। धारयंन्त इव हि दुहन्तिं। कामधुक्ष इत्याहातृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकान् यजमानो दुहे॥२१॥

अमूमिति नामं गृह्णाति। भुद्रमेवासां कर्मा विष्कंरोति। सा विश्वायुः सा विश्वव्यंचाः सा विश्वकर्मेत्यांह। इयं वे विश्वायुंः। अन्तरिक्षं विश्वव्यंचाः। असौ विश्वकर्मा। इमानेवैताभिलींकान् यंथापूर्वं दुंहे। अथो यथां प्रदात्रे पुण्यंमाशास्ते। एवमेवेनां एतदुपंस्तौति। तस्मात्प्रादादित्युन्नीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तंः पृशून्दुं-हन्ति॥२२॥ बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यों ह्विरिति वाचं विसृंजते। यथादेवतमेव प्रसौंति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृंत्यै। त्रिराह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वार्भ्योत्तराः। अपंरिमितमेवावं रुन्थे। न दांरुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवद्वै दांरुपात्रम्। यद्दांरुपात्रेणं दुह्यात्॥२३॥

यातयाँम्ना ह्विषां यजेत। अथो खल्वांहुः। पुरोडाशंमुखानि वे ह्वी १ षिं। नेत इंतः पुरोडाश १ ह्विषो यामोऽस्तीतिं। कामंमेव दांरुपात्रेणं दुह्यात्। शूद्र एव न दुंह्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहुः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥ २४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। तद्धि नोत्पुनन्तिं। यदा खलु वै प्वित्रंमत्येतिं। अथ् तद्धविरितिं। सम्पृच्यध्वमृतावरीरित्याह। अपां चैवौषंधीनां च रस्र् सर् सृंजति। तस्माद्पां चौषंधीनां च रस्मुपंजीवामः। मृन्द्रा धनस्य सात्य इत्याह। पृष्टिंमेव यजमाने दधाति। सोमेन् त्वातंनच्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥

सोमंमेवैनंत्करोति। यो वै सोमं भक्षयित्वा। संवथ्सरश् सोमं न पिबंति। पुनुर्भक्ष्यौऽस्य सोमपीथो भंवति। सोमः खलु वै सान्नाय्यम्। य एवं विद्वान्थ्सान्नाय्यं पिबंति। अपुनुर्भक्ष्यौऽस्य सोमपीथो भंवति। न मृन्मयेनापि दध्यात्। यन्मृन्मयेनापिद्ध्यात्। पितृदेवत्य इंस्यात्॥२६॥ अयस्पात्रेणं वा दारुपात्रेण वाऽपिं दधाति। तिष्क सदेवम्। उद्दन्वद्भवति। आपो वै रक्षोघ्नीः। रक्षंसामपंहत्ये। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वेत्यांह। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञायैवैन्ददंस्तं करोति। विष्णो ह्व्य १ रक्षस्वेत्यांह् गृष्ट्यै। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्ये॥२७॥

असीत्यांह धृत्ये यजंमाने दधात्यजांमित्वाय स्थापयति दुहे दुहन्ति दुह्याद्दोग्धीति दधीत्यांह स्याथ्सादयति पश्चं च॥————[3]

कर्मणे वां देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शक्त्यैं। युज्ञस्य वै सन्तंतिमन् प्रजाः पृशवो यजंमानस्य सन्तांयन्ते। युज्ञस्य विच्छिंत्तिमन् प्रजाः पृशवो यजंमानस्य विच्छिंद्यन्ते। युज्ञस्य सन्तंतिरिस युज्ञस्यं त्वा सन्तंत्ये स्तृणामि सन्तंत्ये त्वा युज्ञस्येत्याहंवनीयाथ्सन्तंनोति। यजंमानस्य प्रजाये पश्नाः सन्तंत्ये। अपः प्रणंयति। श्रद्धा वा आपः। श्रद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। युज्ञो वा आपः॥२८॥

युज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणंयित। वज्रो वा आपः। वज्रमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणंयित। आपो वै रंक्षोघ्नीः। रक्षंसामपहत्यै। अपः प्रणंयित। आपो वै देवानां प्रियं धामं। देवानांमेव प्रियं धामं प्रणीय प्रचंरित॥२९॥ अपः प्रणंयति। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां एवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। वेषांय त्वेत्यांह। वेषांय ह्यंनदादत्ते। प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्ये। धूरसीत्यांह। एष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपस्पृश्यातीयात्॥३०॥

अध्वर्यं च यजंमानं च प्रदेहेत्। उपस्पृश्यात्येति। अध्वर्योश्च यजंमानस्य चाप्रदाहाय। धूर्व तं यौस्मान्धूर्वित् तं धूर्व यं व्यं धूर्वाम् इत्याह। द्वौ वाव पुरुषौ। यं चैव धूर्वित। यश्चेनं धूर्वित। तावुभौ शुचाऽपंयति। त्वं देवानांमिस् सित्रंतमं पप्रितमं जुष्टंतमं विह्नंतमं देवहूतंम्मित्याह। यथायुजुरेवैतत्॥३१॥

अहुंतमिस हिव्धानिमित्याहानाँत्यै। द १ हेस्व मा ह्यारित्यांह धृत्यैं। मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेक्ष इत्यांह मित्रत्वायं। मा भेमां संविंक्था मा त्वां हि १ सिष्मित्याहाहि १ सायै। यद्वै किं च वातो नाभि वाति। तथ्सर्वं वरुणदेवत्यम्। उरु वातायेत्यांह। अवांरुणमेवेनंत्करोति। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रमुव इत्यांह प्रसूत्ये। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह॥३२॥

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यैं। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यांह। अग्नयं एवेनां जुष्टं निर्वपति। त्रिर्यज्ञंषा। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यैं। तूष्णीं चंतुर्थम्। अपंरिमितमेवावं रुन्थे।

# स एवमेवानुंपूर्व ह्वी १षि निर्वपति॥३३॥

इदं देवानांमिदमुं नः सहत्यांह् व्यावृत्यै। स्फात्ये त्वा नारांत्या इत्यांह् गृह्यै। तमसीव वा एषों उन्तर्श्वरित। यः परीणिहि। सुवरिभ वि ख्येषं वैश्वान्रं ज्योतिरित्यांह। सुवरेवाभि वि पंश्यित वैश्वान्रं ज्योतिः। द्यावांपृथिवी हिविषं गृहीत उदंवेपेताम्। दश्हेन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह। गृहाणां द्यावांपृथिव्योर्धृत्यै। उर्वन्तरिक्षमिन्वहीत्यांह् गत्यै। अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवेनंदुपस्थे सादयति। अग्ने ह्व्यश् रक्षस्वत्यांह् गृह्यै॥३४॥ यक्षो वा आपे धार्म प्रणीय प्रवंत्यतीयादेतहाहुन्यामित्यांह ह्वीशि निवंपित गत्यै च्त्वारि

व॥\_\_\_\_\_[४]

इन्द्रों वृत्रमंहन्। सोंऽपः। अभ्यंम्रियत। तासां यन्मेध्यं यिज्ञयु सदेवमासीत्। तदपोदंक्रामत्। ते दुर्भा अभवन्। यद्दर्भरूप उंत्पुनाति। या एव मेध्यां यिज्ञयाः सदेवा आपः। ताभिरेवैना उत्पुनाति। द्वाभ्यामृत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सवितोत्पुनात्वित्यांह। स्वितृप्रंसूत एवैना उत्पुनाति। अच्छिंद्रेण प्वित्रेणेत्यांह। असौ वा आंदित्योऽच्छिंद्रं प्वित्रम्। तेनैवैना उत्पुनाति। वसोः सूर्यस्य र्शिमभिरित्यांह। प्राणा वा आपंः। प्राणा वर्सवः। प्राणा रश्मयंः॥३६॥ प्राणैरेव प्राणान्थ्सं पृंणिक्ति। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदिति। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयित्रया त्रिष्यमृद्धत्वायं। आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्याह। रूपमेवासामेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्॥३७॥

युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रंमवृणीध्वं वृत्रतूर्य् इत्यांह। वृत्र हं हिन्ष्यिन्निन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विवरे। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह। तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्नये वो जुष्टं प्रोक्षांम्यग्नीषोमांभ्यामित्यांह। यथादेवतमेवैनान्प्रोक्षंति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः॥३८॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवेनांनि शुन्धित। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अर्रातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वगुसीत्यांह। इयं वा अदिंतिः॥३९॥

अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह् प्रतिष्ठित्ये। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेधुमुपंतिष्ठन्ते। तस्मौत्प्रजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंध्यवहन्ति। युज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। हविषोऽस्कन्दाय॥४०॥

अधिषवंणमिस वानस्पत्यमित्यांह। अधिषवंण-मेवैनंत्करोति। प्रति त्वाऽदिंत्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्तुनूरसीत्यांह। अग्नेवां एषा तुनूः। यदोषंधयः। वाचो विसर्जन्मित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनामुश्वन्तिं। अथ वाचं विसृंजन्ते। देववींतये त्वा गृह्णामीत्यांह॥४१॥

देवतांभिरेवैन्थ्समंध्यति। अद्विरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावाणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों हृव्य स्पुशिमं शिम्ष्वेत्यांह् शान्त्यैं। हविष्कृदेहीत्यांह। य एव देवाना रे हिव्ष्कृतंः। तान् ह्वंयति। त्रिह्वंयति। त्रिषंत्या हि देवाः। इषमावदोर्जमावदेत्यांह॥४२॥

इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। द्युमद्वंदत व्यश् संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्ये। मनौः श्रद्धादेवस्य यजंमानस्या-सुर्घ्नी वाक्। यज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुर्ग् यावंन्तो यज्ञायुधानांमुद्वदंतामुपाश्चेण्वन्। ते परांभवन्। तस्माध्स्वानां मध्येऽव्सायं यजेत। यावंन्तोऽस्य भ्रातृंव्या यज्ञायुधानां-मुद्धदंतामुपश्चण्वन्ति। ते परां भवन्ति। उच्चेः समाहंन्त् वा आंह विजिंत्ये॥४३॥

वृङ्क एषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर्षवृद्धमिस् प्रति त्वा वर्षवृद्धं वेत्वित्याह। वर्षवृद्धा वा ओषंधयः। वर्षवृद्धा इषीकाः समृद्धौ। यज्ञ रक्षाङ्स्यनु प्राविंशन्। तान्यस्रा पशुभ्यों निरवांदयन्त। तुषैरोषंधीभ्यः। परांपूत्र रक्षः परांपूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥४४॥

रक्षंसां भागोंऽसीत्यांह। तुषैरेव रक्षा रसि निरवंदयते। अप उपंस्पृशति मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविन्कित्यांह। पवित्रं वै वायुः। पुनात्येवैनान्। अन्तरिक्षादिव वा एते प्रस्केन्दन्ति। ये शूर्पात्। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह् प्रतिष्ठित्ये। हिवषोऽस्केन्दाय। त्रिष्फलीकेर्त्वा आह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो मेध्यत्वायं॥४५॥

अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वग्सीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वत्यांह प्रतिष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीव्मृत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्प्रजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत॥४६॥

कृष्णो रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंधिपिनष्टिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। ह्विषोऽस्कन्दाय। द्यावांपृथिवी सहास्ताम्। ते शंम्यामात्रमेकमहर्व्वेता श्रम्यामात्रमेकमहंः। दिवः स्कम्भिनिरंसि प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योवीत्यै। धिषणांऽसि पर्वत्या प्रति त्वा दिवः स्कम्भिनिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योविधृत्यै॥४७॥

धिषणांऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्यांह् प्रसूत्ये। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्त्यैं। अधिवपामीत्यांह। यथादेवतमेवनानिधं वपति। धान्यमिस धिनुहि देवानित्यांह। पृतस्य यजुंषो वीर्येण॥४८॥

यावदेकां देवतां कामयंते यावदेकां। तावदाहुंतिः प्रथते। न हि तदस्तिं। यत्तावंदेव स्यात्। यावंज्जुहोतिं। प्राणायं त्वाऽपानाय त्वेत्यांह। प्राणानेव यजंमाने दधाति। दीर्घामनु प्रसितिमायुंषे धामित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। अन्तरिक्षादिव वा एतानि प्रस्केन्दन्ति। यानि दृषदंः। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह प्रतिंष्ठित्यै। हिवषोऽस्केन्दाय। असंवपन्ती पिश्षाणूनि कुरुतादित्यांह मध्यत्वायं॥४९॥

निलांयत् विधृंत्यै वी्र्येण स्कन्दन्ति चुत्वारिं च॥ $lue{}$ 

धृष्टिरिस् ब्रह्मं युच्छेत्यांहु धृत्यैं। अपाँग्नेऽग्निमामादं जिह्

निष्क्रव्याद रे सेधा देवयजं वहेत्यांह। य एवामात्क्रव्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्नौ कृपाल्मुपंदधाति। निर्दंग्धर् रक्षो निर्दंग्धा अरांतय इत्यांह। रक्षा र्रस्येव निर्दंहति। अग्निवत्युपंदधाति। अस्मिन्नेव लोके ज्योतिर्धत्ते। अङ्गार्मिधं वर्तयति॥५०॥

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्ते। आदित्यमेवाम् ि हेशे के ज्योतिर्धत्ते। ज्योतिष्मन्तोऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदं। ध्रुवमंसि पृथिवीं दृश्हेत्यांह। पृथिवीमेवैतेनं दृश्हित। धर्त्रमंस्यन्तरिक्षं दृश्हेत्यांह। अन्तरिक्षमेवैतेनं दृश्हित। धरुणंमसि दिवं दृश्हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं दृश्हित॥५१॥

धर्मासि दिशों हु हेत्याह। दिशं एवैतेनं हु हित। इमाने वैते लों कान्ह ईहित। हु हैन्ते उस्मा इमे लोकाः प्रजयां पश्मिः। य एवं वेदं। त्रीण्यग्रं कपालान्यपंदधाति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। एकमग्रं कपालमुपं दधाति। एकं वा अग्रं कपालं पुरुषस्य सम्भवति॥५२॥

अथ् द्वे। अथ् त्रीणिं। अथं चृत्वारिं। अथाष्टौ। तस्मादृष्टाकंपालुं पुरुषस्य शिरंः। यदेवं कृपालाँन्युपृद्धांति। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंतिक् सङ्स्करोति। आत्मानमेव तथ्सङ्स्करोति। तर सङ्स्कृतमात्मानम्॥५३॥

अमुष्मिँ ह्योकेऽनु परैति। यद्ष्टावुंप्दधांति। गायत्रिया

तथ्सम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दर्शः। विराजा तत्। यदेकांदशः। त्रिष्टुभा तत्। यद्वादंश॥५४॥

जगंत्या तत्। छन्दंः सम्मितानि स उपदर्धत्कपालांनि। इमाँ ह्यो कानंनुपूर्वं दिशो विधृत्ये द १ हित। अथा ऽऽयुंः प्राणान्य्रजां पृशून् यजंमाने दधाति। सजातानंस्मा अभितों बहुलान्कंरोति। चितः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। भृगूंणामङ्गिरसां तपंसा तप्यध्वमित्यांह। देवतांनामेवैनांनि तपंसा तपति। तानि ततः स इस्थिते। यानि घर्मे कपालांन्युपचिन्वन्तिं वेधस् इति चतुंष्पदय्चां वि मुंश्रति। चतुंष्पादः पश्चंः। पशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥५५॥

वृर्त्यृति दिवंमेवैतेनं दृ रहित सम्भवंति तर सङ्स्कृतमात्मानं द्वादंश सङ्स्थिते त्रीणि

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इत्यांह् प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह् यत्यै। सं वेपामीत्यांह। यथादेवतमेवेनांनि संवेपित। समापो अद्भिरंग्मत समोषंधयो रसेनेत्यांह। आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिन्वन्ति। अन्या वा एतासांमन्या जिन्वन्ति॥५६॥

तस्मांदेवमांह। स॰ रेवतीर्जगंतीभिर्मधुंमतीर्मधुंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। आपो वै रेवतीः। पृशवो जगंतीः। ओषंधयो मधुंमतीः। आप ओषंधीः पृशून्। तानेवास्मां एक्धा स्र्नुज्यं। मध्मतः करोति। अद्भः परि प्रजांताः स्थ समुद्धिः पृच्यध्वमितिं पूर्याप्नांवयति। यथा सुवृष्ट इमामनुविसृत्यं॥५७॥

आप् ओषंधीर्महयंन्ति। ताहगेव तत्। जनंयत्ये त्वा संयौमीत्यांह। प्रजा एवैतेनं दाधार। अग्नयें त्वाऽग्नीषोमांभ्यामित्यांह् व्यावृत्त्ये। मुखस्य शिरो-ऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुंरोडाशंः। तस्मादेवमांह॥५८॥

घुर्मोऽसि विश्वायुरित्यांह। विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। उरु प्रथस्वोरु ते युज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजंमानमेव प्रजयां पृश्वाभिः प्रथयति। त्वचं गृह्णीष्वेत्यांह। सर्वमेवैन्र् सर्तनुं करोति। अथाऽऽप आनीय परिमार्ष्टि। मार्स एव तत्त्वचं दधाति। तस्मात्त्वचा मार्सं छुन्नम्। घुर्मो वा एषो-ऽशान्तः॥५९॥

अर्धमासें ऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पृंरोडाशंः। स ईश्वरो यजंमान श्रुचा प्रदहंः। पर्यग्नि करोति। पृशुमेवैनंमकः। शान्त्या अप्रदाहाय। त्रिः पर्यग्नि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो रक्षंसामपहत्यै। अन्तरित् रक्षोऽन्तरिता अरातय इत्याह॥६०॥

रक्षंसाम्नतर्हित्यै। पुरोडाशं वा अधिश्रित्र रक्षा ईस्य-

जिघा १ सन्। दिवि नाको नामाग्री रेक्षोहा। स एवास्माद्रक्षा १ स्यपंहन्। देवस्त्वां सिवता श्रंपयत्वित्यांह। सिवतृ प्रमूत एवैन १ श्रपयित। वर्षिष्ठे अधि नाक् इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्निस्तें तनुवं माऽतिंधागित्याहा-ऽनंतिदाहाय। अग्नें हव्य १ रेक्षस्वेत्यांह गुप्त्यै॥६१॥

अविंदहन्तः श्रपयतित् वाचं विसृंजते। यज्ञमेव ह्वी इष्यंभिव्याहृत्य प्रतन्ते। पुरोरुचमविंदाहाय शृत्यें करोति। मस्तिष्को वै पुरोडाशः। तं यन्नाभिं वासर्येत्। आविर्मस्तिष्केः स्यात्। अभिवांसयति। तस्माद्गृहां मस्तिष्केः। भरमनाऽभिवांसयति। तस्मान्मा इसेनास्थिं छन्नम्॥६२॥

वेदेनाभिवांसयति। तस्मात्केशैः शिरंश्छुन्नम्। अर्खलितभावुको भवति। य एवं वेदं। पृशोर्वे प्रतिमा पुरोडार्शः। स नायुजुष्कंमिभवास्यः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यर्जमानस्य पृशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मंणा पृच्युस्वेत्यांह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥

प्राणाः प्रावंः। प्राणेरेव प्राच्याम्पृणिक्ति। न प्रमायंका भवन्ति। यजंमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा प्रावः पुरीषम्। यदेवमंभिवासयंति। यजंमानमेव प्रजयां प्राभिः समर्धयति। देवा वै ह्विर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रंक्ष्यामह् इति। सौऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥ मियं तुनूः सं निधंध्वम्। अहं वस्तं जंनियष्यामि। यस्मिन्म्रक्ष्यध्व इतिं। ते देवा अग्नौ तुनूः सन्न्यंदधत। तस्मादाहुः। अग्निः सर्वा देवता इतिं। सोऽङ्गारेणाऽऽपः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोऽजायत। स द्वितीयंमभ्यं-पातयत्॥६५॥

ततौं द्वितोंऽजायत। स तृतीयंम्भ्यंपातयत्। ततिस्तृतों-ऽजायत। यद्द्योऽजांयन्त। तदाप्यानांमाप्यत्वम्। यदात्मभ्योऽजांयन्त। तदात्म्यानांमात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वंमृजत। आप्या अंमृजत् सूर्यांभ्युदिते। सूर्यांभ्युदितः सूर्यांभिनिमुक्ते॥६६॥

सूर्याभिनिमुक्तः कुन्खिनि। कुन्खी श्यावदंति। श्यावदंत्रग्रदिधिषौ। अग्रदिधिषुः परिवित्ते। परिवित्तो वीर्हणि। वीर्हा ब्रह्महणि। तद्बंह्महणुं नात्यंच्यवत। अन्तर्वेदि निनंयत्यवंरुद्धौ। उल्मुंकेनाभि गृह्णाति शृत्त्वायं। शृतकांमा इव हि देवाः॥६७॥

अन्या जिन्वन्त्यन् विसृत्यैवमाहाशाँन्त आह् गुर्स्ये छुन्नं ब्रह्माँब्रवीद्वितीयंमुभ्यंपातयथ्सूर्याभिनिम्रुक्ते

देवाः॥\_\_\_\_\_\_[८]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इति स्प्यमादंते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्ताम्। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यांहु यत्यै। आदंद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। स्हस्रंभृष्टिः श्वतंजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। वायुरंसि तिग्मतंजा इत्यांह। तेजो वै वायुः॥६८॥

तेजं पुवास्मिन्दधाति। विषाद्वै नामांसुर आंसीत्। सोऽबिभेत्। यज्ञेनं मा देवा अभिभंविष्यन्तीतिं। स पृंथिवीमभ्यंवमीत्। सा मेध्याऽभंवत्। अथो यदिन्द्रों वृत्रमहन्। तस्य लोहितं पृथिवीमनु व्यंधावत्। सा मेध्याऽभंवत्। पृथिवि देवयज्नीत्यांह॥६९॥

मेध्यांमेवेनां देवयजंनीं करोति। ओषंध्यास्ते मूलं मा हिर्श्सिष्मित्यांह। ओषंधीनामहिर्श्सायै। ब्रजं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दार्श्सि वे ब्रजो गोस्थानंः। छन्दार्श्स्येवास्मैं ब्रजं गोस्थानं करोति। वर्षंतु ते द्यौरित्यांह। वृष्टिर्वे द्यौः। वृष्टिमेवावं रुन्धे। ब्रधान देव सवितः पर्मस्यां परावतीत्यांह॥७०॥

द्वौ वाव पुरुषो। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुभो बंध्नाति पर्मस्यां परावतिं श्तेन पाशैंः। योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिं मुत्त्ये। अररुर्वे नामांसुर आंसीत्। स पृथिव्यामुपं मुप्तोऽशयत्। तं देवा अपंहतो-ऽररुंः पृथिव्या इति पृथिव्या अपां मन्। भ्रातृं व्यो वा अररुंः। अपंहतोऽरुंः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥

भ्रातृंव्यमेव पृंथिव्या अपंहन्ति। तेंऽमन्यन्त। दिवं वा

अयमितः पंतिष्यतीति। तम्ररुंस्ते दिवं माऽस्कानिति दिवः पर्यवाधन्त। भ्रातृंब्यो वा अरुंः। अरुंस्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृंब्यमेव दिवः परिवाधते। स्तम्बयुजुर्हरित। पृथिव्या एव भ्रातृंब्यमपहन्ति। द्वितीय हरित॥७२॥

अन्तिरिक्षादेवैन्मपंहिन्ति। तृतीयर् हरित। दिव पृवैन्मपंहिन्ति। तृष्णीं चंतुर्थर हरिति। अपंरिमितादेवैन्मपं-हिन्ति। असुराणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासीनः परापश्यंति। तावंद्देवानाम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नोऽस्यामपीति॥७३॥

क्यंत्रो दास्यथेतिं। यावंथ्स्वयं पंरिगृह्णीथेतिं। ते वसंवस्त्वेतिं दक्षिणतः पर्यगृह्णन्। रुद्रास्त्वेतिं पश्चात्। आदित्यास्त्वेत्यंत्तर्तः। तेंऽग्निना प्राश्चोऽजयन्। वसुंभिदिक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यश्चंः। आदित्येरुदंश्चः। यस्यैवं विदुषो वेदिं परिगृह्णन्ति॥७४॥

भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंत्यो भवति। देवस्यं सिवृतुः स्व इत्यांह् प्रसूत्ये। कर्म कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषितः हि कर्म क्रियतें। पृथित्ये मेध्यं चामेध्यं च व्युदंक्रामताम्। प्राचीनंमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदीचीं प्रवृणां करोति। मेध्यांमेवैनां देव्यजंनीं करोति॥७५॥ प्राश्चौ वेद्यश्सावुन्नयित। आह्वनीयंस्य परिगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणीं। गार्हपत्यस्य परिगृहीत्यै। अथो मिथुन्त्वायं। उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। उद्धंन्ति। तस्मादोषंधयः परांभवन्ति॥७६॥

मूलं छिनत्ति। भ्रातृंव्यस्यैव मूलं छिनत्ति। मूलं वा अंतितिष्टद्रक्षा्र्स्यनूत्पिपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुन्खिनीः प्रजाः स्युः। स्फोनं छिनत्ति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षा्र्स्यपंहन्ति। पितृदेवृत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनति॥७७॥

प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां चंतुरङ्गुलेऽन्वंविन्दन्। तस्माँचतुरङ्गुलं खेयाँ। चतुरङ्गुलं खंनति। चतुरङ्गुले ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रंतिष्ठायै खनति। यजमानमेव प्रंतिष्ठां गंमयति। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। देवयर्जनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

पुरीषवतीं करोति। प्रजा वै पृशवः पुरीषम्। प्रजयैवैनं पृशिमः पुरीषवन्तं करोति। उत्तरं पिरग्राहं पिरगृह्णाति। पृताविती वै पृथिवी। याविती वेदिः। तस्यां पृतावित एव भ्रातृंव्यं निर्भज्यं। आत्मन् उत्तरं पिरग्राहं पिरगृह्णाति। ऋतमंस्यृतसदेनमस्यृतश्रीरसीत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥७९॥

क्रूरमिंव वा पुतत्कंरोति। यद्वेदिं क्रोतिं। धा अंसि

स्वधा असीतिं योयप्यते शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्यांह। उर्वीमेवेनां वस्वीं करोति। पुरा क्रूरस्यं विसृपों विरप्शिन्नित्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदांनुर्यामेरंयं चन्द्रमंसि स्वधाभिरित्यांह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देवयजंनीं कृत्वा॥८०॥

यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तद्स्यामेरंयति। तां धीरांसो अनुदृश्यं यजन्त इत्याहानुंख्यात्यै। प्रोक्षंणीरा सांदय। इध्माब्र्हिरुपंसादय। स्रुवं च स्रुचंश्च सम्मृंड्डि। पत्नी क्स्नंह्य। आज्येनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांयै। प्रोक्षंणीरा सांदयति। आपो वै रंक्षोघ्नीः॥८१॥

रक्षंसामपंहत्ये। स्फास्य वर्त्मंन्थ्सादयति। युज्ञस्य सन्तंत्ये। उवाच हासिंतो देवलः। पृतावंतीवां अमुष्मिं श्लोक आपं आसन्। यावंतीः प्रोक्षंणीरिति। तस्मांद्बह्वीरासाद्याः। स्फामुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यायेत्। शुचैवैनंमपंयति॥८२॥ व वायुर्गह परावतीत्याहाहं द्वितीयर् हर्तीतिं परिगृह्वन्तिं देवयजंनीं करोति भवन्ति खनत्यकरेतत्कृत्वा रक्षोष्ठीरंपंयति॥——[९]

वज्रो वै स्फाः। यद्नवश्चं धारयेंत्। वज्रेंऽध्वर्युः क्षंण्वीत। पुरस्तांत्तिर्यश्चं धारयति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेंणैव यज्ञस्यं दक्षिणतो रक्षाङ्स्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्फोनोदींचश्चाधराचंश्च। स्फोन वा एष वज्रेंणास्यै पाप्मानं

## भातृंव्यमपुहत्यं। उत्क्रेऽधि प्रवृंश्चति॥८३॥

यथोपधार्यं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानंमेव पंवयते। स्फ्यं प्रक्षांलयति मेध्यत्वार्यः। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्युङ्गं छिनित्ति। इध्माबुर्हिरुपंसादयति युक्त्यै। यज्ञस्यं मिथुन्त्वार्यः। अथो पुरोरुचंमेवैतां दंधाति। उत्तरस्य कर्मणोऽनुंख्यात्यै। न पुरस्तांत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥

यत्पुरस्तौत्प्रत्यगुंपसादयैत्। अन्यत्रोऽऽहुतिप्थादि्ध्मं प्रतिंपादयेत्। प्रजा वै ब्र्हिः। अपंराध्रुयाद्वर्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्। पृश्चात्प्रागुपंसादयित। आहुतिपथेने्ध्मं प्रतिं-पादयित। सम्प्रत्येव ब्र्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्पैति। दक्षिणमि्ध्मम्। उत्तरं ब्र्हिः। आत्मा वा इध्मः। प्रजा ब्र्हिः। प्रजा ह्यात्मन् उत्तरितरा तीर्थे। ततो मेधंमुप्नीयं। यथादेवतमेवेन्त्प्रतिष्ठापयित। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥८५॥

वृश्चित साद्येदिध्मः पर्श्व च॥\_\_\_\_\_\_[१०]

तृतीयंस्यां देवस्यांश्वपुर्शुं यो वै पूँर्वेद्युः कर्मणे वामिन्द्रों वृत्रमंहुन्थ्सोंऽपोऽवंधूतं धृष्टिंदेवस्येत्यांहु सं वंपामि देवस्य स्फ्यमा दंदे वज्रो वै स्फ्यो दर्श॥१०॥ तृतीयंस्यां यज्ञस्यानंतिरेकाय प्वित्रंवत्यध्वर्युं चांधिषवंणमस्यन्तरिक्ष एव रक्षंसाम्नतर्हित्यै द्वौ वाव पुरुषौ यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यं पञ्चाशींतिः॥८५॥ तृतीयंस्यां यज्ञमानः॥ हिर्रः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

# ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युष्ट्रं रक्षः प्रत्युष्टा अरातय इत्याह। रक्षेसामपहत्यै। अग्नेर्वस्तेजिष्ठेन तेजंसा निष्टंपामीत्यांह मेध्यत्वायं। स्रुचः सम्माष्टिं। स्रुवमग्रें। पुमार्स्समेवाभ्यः सङ्श्यंति मिथुन्त्वायं। अथं जुहूम्। अथोप्भृतम्। अथं ध्रुवाम्। असौ वै जुहूः॥१॥

अन्तिरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। इमे वै लोकाः स्रुचेः। वृष्टिः सम्मार्जनानि। वृष्टिर्वा इमाँ ल्लोकानं नुपूर्वं केल्पयित। ते ततः क्रुप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृशुभिः। य एवं वेदे। यदि कामयेत् वर्षेकः पूर्जन्यः स्यादितिं। अग्रतः सम्मृज्यात्॥२॥

वृष्टिमेव नि यंच्छति। अवाचीनांग्रा हि वृष्टिः। यदि कामयेतावंर्षुकः स्यादितिं। मूलतः सम्मृंज्यात्। वृष्टिंमेवोद्यंच्छति। तदु वा आंहुः। अग्रत एवोपरिंष्टाथ्सम्मृं-ज्यात्। मूल्तोंऽधस्तांत्। तदंनुपूर्वं कंल्पते। वर्षुंको भवतीतिं॥३॥

प्राचींमभ्याकारम्। अग्रैरन्तर्तः। एविमव् ह्यन्नंमुद्यते। अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। अधस्तांत्प्रतीचींम्। दण्डम्ंत्तम्तः। मूलेन् मूलं प्रतिष्ठित्ये। तस्मांदर्बो प्राञ्च्यपरिष्टाल्लोमानि।

### प्रत्यश्च्यधस्तांत्॥४॥

सुग्ध्येषा। प्राणो वै स्रुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृथ्सव्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्न सम्मार्जनानि। मुख्तो वै प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्यं। बाह्यतस्तनुव श्रिभयति। तस्माध्स्रुवमेवाग्रे सम्मार्षि। मुख्तो हि प्राणो-ऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नमाविश्वि। तौ प्राणापानौ। अर्व्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति। य एवं वेदं॥५॥

जुहूर्मृज्याद्भवृतीति प्रत्यश्च्यथस्तांन्मार्ष्ट् पश्चं च॥\_\_\_\_\_\_[१]

दिवः शिल्पमवंततम्। पृथिव्याः कुकुभिं श्रितम्। तेनं वयः सहस्रंवल्शेन। सपत्रं नाशयामस् स्वाहेतिं स्रुख्सम्मार्जनान्यग्रौ प्र हंरति। आपो वै दर्भाः। रूपमेवैषांमेतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। अनुष्टुभूर्चा। आनुष्टुभः प्रजापंतिः। प्राजापत्यो वेदः। वेदस्याग्रः स्रुख्सम्मार्जनानि॥६॥

स्वेनैवैनांनि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समर्धयति। अथो ऋग्वाव योषां। दुर्भो वृषां। तन्मिथुनम्। मिथुनम्वास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्रजायते प्रजयां पृशुभिर्यजमानः। तान्येके वृथैवापांस्यन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरंब्यस्य यज्ञियंस्य कर्मणः सविंदोहः॥७॥

यद्यंनानि पृशवांऽभि तिष्ठंयुः। न तत्पृशुभ्यः कम्।

अद्भिर्मां जीयत्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै यज्ञियंस्य कर्मणो-ऽन्यत्राऽऽहुंतीभ्यः सन्तिष्ठंते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। एता १ हि तस्मैं प्रतिष्ठां देवाः समभंरन्। यद्द्भिर्मा जयंति। तेनं शान्तम्। यदुंत्करे न्यस्यति। प्रतिष्ठामेवैनांनि तद्गंमयति॥८॥

प्रति तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजंमानः। अथौं स्तम्बस्य वा पृतद्रूपम्। यथ्स्रुंख्सम्मार्जनानि। स्तम्बशो वा ओषंधयः। तासाँ जरत्कक्षे पृशवो न रंमन्ते। अप्रियो ह्यंषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो हु वे जंरत्कक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दधंति। नुवदाव्यांसु वा ओषंधीषु पृशवो रमन्ते॥९॥

न्वदावो ह्येषां प्रियः। यावंत्प्रियो हु वै नंवदावः पंशूनाम्। तावंत्प्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्युग्नौ प्रहरंन्ति। तस्मादेतान्युग्नावेव प्रहरेत्। यत्रस्मिन्थ्सम्मृज्यात्। पृशूनां धृत्यैं। यो भूतानामधिपतिः। रुद्रस्तंन्तिचरो वृषां। पृशूनस्माकं मा हि सीः। पृतदंस्तु हुतं तव स्वाहेत्यंग्निस्मार्जनान्युग्नौ प्रहरित। पृषा वा पृतेषां योनिः। पृषा प्रतिष्ठा। स्वामेवैनांनि योनिम्ं। स्वां प्रतिष्ठां गंमयति। प्रति तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजंमानः॥१०॥

वेदस्याग्रई स्रुख्सम्मार्जनानि विदोहो गंमयति पुशवों रमन्ते हि॰सीः षट् चं॥——[२]

अयंज्ञो वा एषः। योऽप्त्तीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्यन्वास्ते। यज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। यत्तिष्ठंन्ती सन्नह्येत। प्रियं ज्ञाति १ रुन्ध्यात्। आसीना सन्नह्यते। आसीना ह्येषा वीर्यं करोति॥११॥

यत्पश्चात्प्राच्यन्वासीत। अनयां समदंन्दधीत। देवानां पिर्लिया समदंन्दधीत। देशाँदक्षिणत उदीच्यन्वाँस्ते। आत्मनों गोपीथायं। आशासांना सौमन्सिमत्यांह। मेध्यांमेवैनां केवंलीं कृत्वा। आशिषा समर्धयित। अग्नेरनुंव्रता भूत्वा सन्नेह्ये सुकृताय किनत्यांह। एतद्वे पिर्लिये व्रतोपनयंनम्॥१२॥

तेनैवैनां व्रतमुपंनयति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। योक्रमेव युंते। यम्नवास्तें। तस्यामुष्मिं ह्योके भंवतीति योक्रेण। यद्योक्रम्ं। स योगः। यदास्तें। स क्षेमः॥१३॥

योगक्षेमस्य क्र्रह्यै। युक्तं क्रियाता आशीः कामें युज्याता इति। आशिषः समृद्धे। ग्रन्थिं ग्रंशाति। आशिषं पुवास्यां परि गृह्णाति। पुमान् वे ग्रन्थिः। स्त्री पत्नीं। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्र जांयते प्रजयां पश्मिर्यजमानः॥१४॥

अथों अर्धो वा एष आत्मनंः। यत्पर्नीं। यज्ञस्य धृत्या अशिथिलं भावाय। सुप्रजसंस्त्वा वयः सुपत्नीरुपं सेदिमेत्यांह। यज्ञमेव तन्मिथुनीकरोति। ऊनेऽतिरिक्तं धीयाता इति प्रजाँत्यै। मृहीनां पयोऽस्योषंधीनाः रस् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। तस्य तेऽक्षीयमाणस्य निर्वपामि देवयुज्याया इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते॥१५॥

कुरोतिं व्रतोपनयंनुं क्षेमो यर्जमानः शास्ते॥\_\_\_\_\_\_

घृतं च वै मधुं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्वांसीत्। ततः प्रजा अंसृजत। तस्मान्मधुंषि प्रजनंनिमवास्ति। तस्मान्मधुंषा न प्रचंरन्ति। यातयांम् हि। आज्येन् प्रचंरन्ति। यज्ञो वा आज्यम्। यज्ञेनेव यज्ञं प्रचंरन्त्ययांतयामत्वाय। पत्र्यवेंक्षते॥१६॥

मिथुनत्वाय प्रजांत्यै। यद्वै पत्नीं युज्ञस्यं करोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया एवेष युज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। अमेध्यं वा एतत्करोति। यत्पत्यविक्षंते। गार्हंपत्येऽधिं श्रयति मेध्यत्वायं। आहुवनीयंम्भ्युद्दंवति। युज्ञस्य सन्तंत्यै। तेजोऽस् तेजोऽन् प्रेहीत्यांह॥१७॥

तेजो वा अग्निः। तेज् आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्धयति। अग्निस्ते तेजो मा विनैदित्याहाहि स्सायै। स्फ्यस्य वर्त्मन्थ्सादयति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽसिं सुभूर्देवानामित्यांह। यथायजुरेवैतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यजुंषेयजुषे भ्वेत्यांह। आशिषंभेवेतामा शांस्ते॥१८॥

तद्वा अतः प्वित्राभ्यामेवोत्प्नाति। यजमानो

वा आज्यम्। प्राणापानौ प्वित्रें। यजंमान एव प्राणापानौ दंधाति। पुन्राहारम्। एविमेंव हि प्राणापानौ स्थरंतः। शुक्रमंसि ज्योतिरसि तेजोऽसीत्याह। रूपमेवास्यैतन्महिमानं व्याचंष्टे। त्रिर्यजुंषा। त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

पुषां लोकानामास्यै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अथाऽऽज्यंवतीभ्यामुपः। रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि वा उताऽऽहुंः। यथां हु वै योषां सुवर्ण्ष्ट्रं हिरंण्यं पेश्वलं बिभ्रंती रूपाण्यास्तै। पुवमेता पुतर्हीति। आपो वै सर्वा देवताः॥२०॥

पुषा हि विश्वेषां देवानां तृनः। यदाज्यम्। तृत्रोभयोमीमाक्सा। जामि स्यात्। यद्यजुषाऽऽज्यं यज्ञेषाऽप उत्पृनीयात्। छन्दंसाऽप उत्पृनात्यजामित्वाय। अथो मिथुनत्वायं। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदिति। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्णमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषधीः सं नयति। ओषधीभिः पृशून्। पृशुभिर्यजमानम्। शुक्रं त्वां शुक्रायां ज्योतिंस्त्वा ज्योतिंष्यर्चिस्त्वाऽर्चिषीत्याह सर्वत्वायं। पर्याप्त्या अनंन्तरायाय॥२१॥

ईक्षत आह शास्ते लोका देवतां भवति षट् चं॥\_\_\_\_

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स एतमिन्द्र आज्यंस्याव-काशमंपश्यत्। तेनावैंक्षत्। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः। य एवं विद्वानाज्यंम्वेक्षंते। भवंत्यात्मनाँ। पराँऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। यदाज्यंनान्यानि ह्वी इष्यंभिघारयंति॥२२॥

अथ् केनाऽऽज्यमिति। सृत्येनेति ब्रूयात्। चक्षुर्वे सृत्यम्। सृत्येनैवैनंद्भि घारयति। ईश्वरो वा एषौऽन्यो भवितोः। यश्वक्षुषाऽऽज्यंम्वेक्षंते। निमील्यावैक्षेत। दाधारात्मश्रक्षुः। अभ्याज्यं घारयति। आज्यं गृह्णाति॥२३॥

छन्दार्शस् वा आज्यम्। छन्दार्शस्येव प्रीणाति। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। चतुर्ष्यादः पृशवंः। पृश्न्वेवावं रुन्धे। अष्टावृप्भृतिं। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव पृश्र्षं दधाति। चतुर्भुवायाम्॥२४॥

चतुंष्पादः प्शवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। चतुर्जुह्वां गृह्णन्भूयो गृह्णीयात्। अष्टावुंपभृतिं गृह्णन्कनीयः। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे स्रुचंः। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टावुंपभृतिं। तस्मांद्ष्टाशंफा। चृतुर्धुवायांम्। तस्मा्चतुः स्तना। गामेव तथ्सङ्स्कंरोति। साऽस्मै सङ्स्कृतेषुमूर्जं दुहे। यञ्जुह्वां गृह्णातिं। प्रयाजेभ्यस्तत्। यद्ंप्भृतिं। प्रयाजानूयाजेभ्यस्तत्। सर्वस्मै वा एतद्यज्ञायं गृह्यते। यद्भुवायामाज्यम्॥२६॥

अभिघारयंति गृह्णाति ध्रुवायां चतुंष्पदी प्रयाजानूयाजिभ्यस्तद्वे चं॥—————[५]

आपों देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्यांह। रूपमेवासांमेतन्मंहि-मानं व्याचंष्टे। अग्रं इमं यज्ञन्नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रों-ऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रंमवृणीध्वं वृत्रतूर्य इत्यांह। वृत्र हं हिन्ष्यन्निन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्रेर। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचंष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह॥२७॥

तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविशत्। कृष्णो ऽस्याखरेष्ठो ऽग्नये त्वा स्वाहेत्याह। अग्नयं एवेनं जुष्टं करोति। अथो अग्नेरेव मेधमवं रुन्धे। वेदिरिस बर्हिषे त्वा स्वाहेत्याह। प्रजा व बर्हिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। ब्र्हिरंसि स्रुग्भ्यस्त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै ब्र्हिः। यजमानः स्रुचंः। यजमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेतिं ब्र्हिरासाद्य प्रोक्षंति। प्रभ्य प्रवैनं ल्लोकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ ततः सह स्रुचा पुरस्तांत्प्रत्यश्चं ग्रन्थिं प्रत्युंक्षति। प्रजा वै ब्र्हिः। यथा सूत्यै काल आपंः पुरस्ताद्यन्तिं॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्यांह। स्वधाकारो हि पितृणाम्। ऊर्ग्भव बर्हिषद्भ्य इति दक्षिणाये श्रोणेरोत्तंरस्ये निनयति सन्तंत्ये। मासा वै पितरो बर्हिषदंः। मासांनेव प्रीणाति। मासा वा ओषंधीर्वर्धयंन्ति। मासाः पचन्ति समृद्धे। अनंतिस्कन्दन् ह पूर्जन्यो वर्षित। यत्रैतदेवं क्रियते॥३०॥

ऊर्जा पृथिवीं गंच्छुतेत्यांह। पृथिव्यामेवोर्जं दधाति। तस्मांत्पृथिव्या ऊर्जा भुंञ्जते। ग्रुन्थिं वि स्रश्ंसयति। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राश्चमुद्गूढं प्रत्यश्चमा यंच्छति। तस्मांत्प्राचीन्श्रेतों धीयते। प्रतीचीः प्रजा जायन्ते। विष्णोः स्तूपोऽसीत्याह। युज्ञो वै विष्णुं:॥३१॥

यज्ञस्य धृत्यै। पुरस्तांत्प्रस्तरं गृह्णाति। मुख्यंमेवेनं करोति। इयंन्तं गृह्णाति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। यज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। पृतावृद्धे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥३२॥

अपंरिमितं गृह्णाति। अपंरिमित्स्यावंरुख्यै। तस्मिन्यवित्रे अपि सृजति। यजमानो व प्रंस्तरः। प्राणापानौ प्वित्रें। यजमान एव प्राणापानौ दंधाति। ऊर्णांम्रदसं त्वा स्तृणामीत्याह। यथायजुरेवेतत्। स्वासस्थं देवेभ्य इत्याह। देवेभ्यं पुवैनंथ्स्वासस्थं करोति॥३३॥ ब्र्हिः स्तृंणाति। प्रजा वै ब्र्हिः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्वः स्तृणाति। प्रजयैवैनं पृश्भिरनंतिदृश्वं करोति। धारयंन्प्रस्तरं परिधीन्परि दधाति। यजमानो वै प्रंस्तरः। यजमान एव तथ्स्वयं परिधीन्परि दधाति। गृन्धुर्वोऽसि विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥

विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। मित्रावरुंणौ त्वोत्तर्तः परिधत्तामित्यांह। प्राणापानौ मित्रावरुंणौ। प्राणापानावेवास्मिन्दधाति। सूर्यस्त्वा पुरस्तांत् पात्वित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। कस्यांश्चिद्भिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवेनंं पाति॥३५॥

वीतिहाँत्रं त्वा कव इत्यांह। अग्निमेव होत्रेण् समर्धयित। द्युमन्त्र सिमधीम्हीत्यांह सिमेद्धौ। अग्ने बृहन्तंमध्वर इत्यांह वृद्धौ। विशो यन्ने स्थ इत्यांह। विशां यत्यौ। उदीचीनाँग्ने नि दंधाति प्रतिष्ठित्यै। वसूंनार रुद्राणांमादित्यानार सदिस सीदेत्यांह। देवतांनामेव सदेने प्रस्तुर सांदयित। जुहूरंसि घृताची नाम्नेत्यांह॥३६॥

असौ वै जुहूः। अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। तासामेतदेव प्रियं नामं। यद्घृताचीतिं। यद्घृताचीत्याहं। प्रियेणैवैना नाम्नां सादयति। एता अंसदन्थ्सुकृतस्यं लोक इत्यांह। सृत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सृत्य एवैनाः सुकृतस्यं लोके सांदयित। ता विष्णो पाहीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञस्य धृत्यैं। पाहि युज्ञं पाहि युज्ञपंतिं पाहि मां यंज्ञिनयमित्यांह। युज्ञाय यजंमानायाऽऽत्मनें। तेभ्यं पुवाऽऽशिषुमाशास्तेऽनांत्ये॥३७॥

स्थेत्यांह पृथिवी वेदिर्यन्तिं क्रियते वीणुंर्वीर्यसम्मितं करोत्याह पाति नाम्नेत्यांह लोके सांदयित

अग्निना वै होत्रां। देवा असुंरान्भ्यंभवन्। अग्नयं सिम्ध्यमानायानुंब्रूहीत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्ये। एकंवि शति- मिध्मदारूणिं भवन्ति। एकवि शो वै पुरुषः। पुरुषस्याऽऽह्यैं। पश्चंदशेध्मदारूण्यभ्या दंधाति। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमास्याः संवथ्सर औप्यते। त्रीन्पंरिधीन्परिं दधाति॥३८॥

ऊर्ध्वे स्मिधावा दंधाति। अन्याजेभ्यः स्मिध्मितं शिनष्टि। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनोपं वाजयित। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यः प्राणः। यजमान आहवनीयः। यजमान एव प्राणं दंधाति॥३९॥

त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। वेदेनोप्यत्यं स्रुवेणं प्राजापत्यमाघारमा घारयित। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंतिं मुख्त आरंभते। अथौं प्रजापंतिः सर्वा देवताः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीतिस्तिः सं मृङ्कीत्यांह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥ अथो रक्षंसामपंहत्यै। पुरिधीन्थ्सं माँष्टिं। पुनात्येवैनान्। त्रिस्त्रिः सं माँष्टिं। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अथों पृते वै देवाश्वाः। देवाश्वानेव तथ्सं माँष्टिं। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्रो। आसीनोऽन्यमांघारमा घारयति॥४१॥

तिष्ठंन्नन्यम्। यथाऽनों वा रथं वा युआत्। एवमेव तदंध्वर्युर्यज्ञं युनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूँढ्यै। वहंन्त्येनं ग्राम्याः पृशवंः। य एवं वेदं। भुवंनमिस वि प्रथस्वेत्यांह। यज्ञो वै भुवंनम्। यज्ञ एव यजंमानं प्रजयां पृशुभिः प्रथयति। अग्ने यष्टंरिदन्नम इत्यांह॥४२॥

अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव नमंस्करोति। जुह्वेह्यग्निस्त्वां ह्वयति देवयुज्याया उपंभृदेहिं देवस्त्वां सिवृता ह्वयति देवयुज्याया इत्याह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्र्युंपभृत्। ताभ्यांमेवैने प्रसूत् आदंत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं क्रमिष्मित्यांह। अग्निः पुरस्तांत्। विष्णुंर्युज्ञः पश्चात्॥४३॥

ताभ्यांमेव प्रंतिप्रोच्यात्या क्रांमित। विजिंहाथां मा मा सन्तांप्तमित्याहाहि स्सायै। लोकं में लोककृतौ कृणुत्मित्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। विष्णोः स्थानम्सीत्यांह। युज्ञो वे विष्णुः। एतत्खलु वे देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानांमेवापंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्याणीत्यांह॥४४॥ इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। समारभ्योर्ध्वो अध्वरो दिविस्पृश्मित्यांह् वृद्धौ। आघारमांघार्यमांणमनुं समारभ्यं। एतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यर्जमानः सुवर्गं लोकमेति। अथो समृद्धेनेव युज्ञेन यर्जमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुंतो युज्ञो युज्ञपंतिरत्याहानांत्ये। इन्द्रांवान्थ्स्वाहेत्यांह। इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। बृहद्भा इत्यांह॥४५॥

सुवर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण आंघारः। यथ्म ईस्पर्शयेत्। भ्रातृंव्येऽस्य प्राणं दंध्यात्। अस ईस्पर्शयन्नत्या क्रांमिति। यजमान एव प्राणं दंधाित। पाहि माँउग्ने दुश्चंरितादा मा सुचंरिते भुजेत्यांह॥४६॥

अग्निर्वाव प्वित्रम्। वृज्ञिनमनृतं दुश्चरितम्। ऋजुक्मं स्त्य स्चरितम्। अग्निरेवैनं वृज्ञिनादनृताद्दश्चरितात्पाति। ऋजुक्में सत्ये सुचरिते भजति। तस्मादेवमा शांस्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यदांघारः। आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आघारमाघार्यं ध्रुवाः समंनक्ति। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रतिं दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्रांणापानौ। तदांहुः। त्रिरेव समंख्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इतिं। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरों ऽसि सञ्चातिषा ज्योतिरङ्गामित्याह। ज्योतिरेवास्मां उपरिष्टाद्वधाति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥ परिदर्भात प्राणं दंभाति हि युज्ञो घारयति नम् इत्यांह पृश्चाद्वीर्याणीत्यांह भा इत्यांह

पारदधात प्राण दधात् हि युज्ञा धारयात् नम् इत्यहि पुश्चाद्वायाणात्याह् मा इत्यहि भुजेत्याह ध्रुवैवास्मिन्दधाति त्रीणि च॥—————[७]

धिष्णिया वा पृते न्युंप्यन्ते। यद्घ्रह्मा। यद्घोतां। यदंध्वर्युः। यद्ग्रीत्। यद्यजमानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजमानस्य प्राणान्थ्सङ्कर्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्। पुरोडाशमप्गृह्य सश्चरत्यध्वर्युः॥४९॥

यजंमानायैव तल्लोक शिर्षित। नास्यं प्राणान्थ्सङ्कंर्-षति। न प्रमायुंको भवति। पुरस्तांत् प्रत्यङ्कासीनः। इडांया इडामा दंधाति। हस्त्या होत्रें। प्रावो वा इडां। प्रावः पुरुषः। प्राष्ट्रेव प्रान्प्रतिष्ठापयति। इडांये वा एषा प्रजांतिः॥५०॥

तां प्रजांतिं यजमानोऽनु प्र जांयते। द्विर्ङ्गुलांवनिक्ति पर्वणोः। द्विपाद्यजमानः प्रतिष्ठित्यै। स्कृदुपं स्तृणाति। द्विरा दंधाति। स्कृद्भि घांरयति। चृतुः सम्पंद्यते। चृत्वारि वै पृशोः प्रतिष्ठानांनि। यावांनेव पृशुः। तमुपंह्वयते॥५१॥

मुखंमिव प्रत्युपंह्वयेत। सम्मुखानेव पृश्नुपं ह्वयते। पृशवो वा इडाँ। तस्माथ्साऽन्वारभ्याँ। अध्वर्युणां च यजंमानेन च। उपंहूतः पशुमानंसानीत्यांह। उप ह्येनौ ह्वयंते होताँ। इडांयै देवतांनामुपहुवे। उपंहूतः पशुमान्भंवति। य पृवं वेदं॥५२॥ यां वै हस्त्यामिडांमादधांति। वाचः सा भांगधेयम्। यामुंपह्वयंते। प्राणाना सा। वाचं चैव प्राणा श्र्यावं रुन्धे। अथ वा एतर्ह्युपंहूतायामिडांयाम्। पुरोडाशंस्यैव बंहि्षदों मीमा सा। यजंमानं देवा अंब्रुवन्। ह्विर्नो निर्व्पेतिं। नाहमंभागो निर्वपस्यामीत्यं ब्रवीत्॥ ५३॥

न मयांऽभागयाऽनुंबक्ष्यथेति वागंब्रवीत्। नाहमंभागा पुरोनुवाक्यां भविष्यामीतिं पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीतिं याज्यां। न मयांऽभागेन वर्षद्वरिष्यथेतिं वषद्वारः। यद्यंजमानभागं निधायं पुरोडाशंं बर्हिषदं करोतिं। तानेव तद्भागिनंः करोति। चतुर्धा करोति। चतस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतिं तिष्ठति। ब्रहिषदंं करोति॥५४॥

यजंमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा बर्हिः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। तस्मादस्थ्राऽन्याः प्रजाः प्रतितिष्ठंन्ति। मार्सेनान्याः। अथो खल्वांहुः। दक्षिणा वा एता हंविर्यज्ञस्यांन्तर्वेद्यवं रुध्यन्ते। यत्पुरोडाशं बर्हिषदं करोतीतिं। चतुर्धा कंरोति। चत्वारो ह्यंते हंविर्यज्ञस्यर्त्विजंः॥५५॥

ब्रह्मा होताँ ऽध्वर्युरग्नीत्। तम्भि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणंः। इदः होतुंः। इदमंध्वर्योः। इदम्ग्नीध् इतिं। यथैवादः सौम्येँ ऽध्वरे। आदेशंमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्तें। ताद्दगेव तत्। अग्नीधें

#### प्रथमाया दंधाति॥५६॥

अग्निम्ंखा ह्यृद्धिः। अग्निम्ंखामेवर्द्धिं यजंमान ऋभ्नोति। सकृदुंप्स्तीर्य द्विरादधंत्। उपस्तीर्य द्विर्भि घारयति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनं ब्रह्मणे ब्रह्मभागं परिहरति। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्मा॥५७॥

स्विता यज्ञस्य प्रसूँत्यै। अथ कामंमन्येनं। ततो होत्रैं। मध्यं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्धोताँ। मध्यत एव यज्ञं प्रीणाति। अथाध्वर्यवें। प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्यं। यद्ध्वर्युः। तस्मौद्धविर्यज्ञस्यैतामेवाऽऽवृतमनुं॥५८॥

अन्या दक्षिणा नीयन्ते। युज्ञस्य प्रतिष्ठित्यै। अग्निमंग्नीथ्मकृथ्मंकृथ्मं मृङ्ढीत्यांह। परांङिव ह्यंतर्हिं युज्ञः। इषिता दैव्या होतांर इत्यांह। इषित हि कर्म क्रियतें। भृद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। स्वगा दैव्या होतृभ्य इत्यांह। युज्ञमेव तथ्स्वगा करोति। स्वस्तिर्मानुषभ्य इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। शुं योर्ब्रूहीत्यांह। शुंयुमेव बार्हस्पत्यं भाग्धेयेन समर्धयति॥५९॥

च्रृत्यृध्वर्युः प्रजातिर्ह्वयते वेदाँब्रवीद्वर्रहिषदं करोत्यृत्विजों दधाति ब्रह्माऽनुंकरोति च्त्वारिं

अथु सुचांवनुष्टुग्भ्यां वाजंवतीभ्यां व्यूहिति। प्रतिष्ठा वा

अंनुष्टुक्। अत्रं वाजः प्रतिष्ठित्यै। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। प्राचीं जुहूमूंहति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। प्रतीचींमुप्भृतम्। जिन्वयमांणानेव प्रतिनुदते। सविषूंच एवापोह्यं सपत्नान् यजमानः। अस्मिँ होके प्रतिं तिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्यांम्। द्विप्रंतिष्ठो हि। वसुंभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वा-ऽऽदित्येभ्यस्त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्रुक्षु प्रंस्त्रमंनक्ति। इमे वै लोकाः स्रुचंः। यजंमानः प्रस्तरः। यजंमानमेव तेजंसाऽनक्ति। त्रेधाऽनंक्ति। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥

पृभ्य एवैनं लोकभ्योऽनिक्तः। अभिपूर्वमंनिकः। अभिपूर्वमेव यजमानं तेजंसाऽनिक्तः। अक्तः रिहाणा इत्याहः। तेजो वा आज्यम्। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजंसाऽनिक्तः। वियन्तु वयु इत्याहः। वयं एवैनं कृत्वाः सुवृगं लोकं गंमयति॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्यांह। प्रजायें गोपीथायं। आप्यायन्तामाप ओषंधय इत्यांह। आपं एवौषंधीरा प्याययति। मुरुतां पृषंतयः स्थेत्यांह। मुरुतो वै वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। दिवंं गच्छु ततों नो वृष्टिमेर्येत्यांह। वृष्टिर्वे द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे॥६३॥

यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तुरं प्रहरंति। तार्वद्स्यायुंर्मीयते। आयुष्पा अंग्रेऽस्यायुंर्मे पाहीत्यांह। आयुरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यावृद्वा अध्वर्यः प्रस्त्रं प्रहरित। तावंदस्य चक्षुंर्मीयते। चक्षुष्पा अग्नेऽस् चक्षुंर्मे पाहीत्याह। चक्षुंरेवाऽऽत्मन्धेत्ते। ध्रुवाऽसीत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। यं परिधिं पूर्यधेत्था इत्यांह॥६४॥

यथायजुरेवैतत्। अग्ने देव पणिभिर्वीयमाण इत्याह। अग्नयं एवेनं जुष्टं करोति। तन्तं एतमन् जोषं भरामीत्याह। सजातानेवास्मा अनुंकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयांता इत्याहानुंख्यात्ये। यज्ञस्य पाथ उप समित्मित्यांह। भूमानंमेवोपैति। परिधीन्प्र हंरति। यज्ञस्य समिष्ट्ये॥६५॥

सुचौ सं प्रस्नांवयित। यदेव तत्रं क्रूरम्। तत्तेनं शमयित। जुह्वामुंपभृतम्। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। स्र्स्यावभागाः स्थेत्यांह। वसंवो वै रुद्रा आंदित्याः सङ्स्रावभागाः। तेषां तद्भाग्धेयम्॥६६॥

तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वं देवाः। त्रिष्टुग्भवति। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। अग्नेर्वामपन्नगृहस्य सदिस सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपंन्नगृहः। अस्या एवैने सदेने सादयति। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै प्शर्वः सुम्नम्। प्रजामेव पृशूनात्मन्धेत्ते। धुरि धुर्यौ पातमित्याह। जायापत्योर्गोपीथायं। अग्नेऽदब्धायोऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसित्ये पाहि दुरिष्ठौ पाहि दुंरद्मन्यै पाहि दुर्श्वरितादित्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। अविषन्नः पितुं कृण सुषदा योनिङ् स्वाहेतींध्मस्ंवृश्चनान्यन्वाहार्यपचंनेऽभ्याधायं फलीकरणहोमं जुंहोति। अतिंरिक्तानि वा इंध्मसं वृश्चनानि॥६८॥

अतिरिक्ताः फलीकरणाः। अतिरिक्तमाज्योच्छेषणम्। अतिरिक्त एवातिरिक्तं दधाति। अथो अतिरिक्तेनैवातिरिक्त-मास्वाऽवं रुन्धे। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन् वेदिं विविद्ः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि। गर्भं बिभर्ति भुवंनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जांयते विश्वदानिरिति पुरस्तांथ्स्तम्बयुजुषां वेदेन् वेदिष् सम्मार्ध्यनुंवित्त्यै॥६९॥

अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। प्रजापंतेर्वा एतानि श्मश्रूणि। यद्वेदः। पत्निया उपस्थ आस्यंति। मिथुनमेव कंरोति। विन्दते प्रजाम्। वेद॰ होता-ऽऽहंवनीयांथ्स्तृणत्रेति। यज्ञमेव तथ्सन्तंनोत्योत्तंरस्मादर्ध-मासात्। त॰ सन्तंतमुत्तंरेऽर्धमास आलंभते॥७०॥

तं कालेकांल आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा अध्वर्यः स्यात्। यो यतों यज्ञं प्रयुक्के। तदेनं प्रतिष्ठापयतीति। वाताद्वा अध्वर्युर्य्ज्ञं प्रयुक्के। देवां गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितेत्याह। यतं एव यज्ञं प्रयुक्के। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥७१॥

यो वा अयंथादेवतं यज्ञम्ंपूचरंति। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यो यंथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। वारुणो वे पाशंः। इमं विष्यांमि वर्रुणस्य पाश्मित्यांह। वरुणपाशादेवेनां मुश्चति। स्वितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥७२॥

न देवताँभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। धातुश्च योनौं सुकृतस्यं लोक इत्याह। अग्निर्वे धाता। पुण्यं कर्म सुकृतस्यं लोकः। अग्निरेवैनां धाता। पुण्ये कर्मणि सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्यांह। आत्मनश्च यर्जमानस्य चानांत्ये सन्त्वायं। समायुंषा सं प्रजयेत्यांह॥७३॥

आशिषंमेवैतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततोंऽनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा एतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पित्रिये पूर्णपात्रे भवति। अस्मिन्नेक प्रतिं तिष्ठानीति। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्टुक्। वाङ्गिंथुनम्। आपो रेतः प्रजननम्। एतस्माद्वे मिथुनाद्विद्योतंमानः स्त्नयंन्वर्षति। रेतः सिश्चन्॥७४॥

प्रजाः प्रंजनयन्। यद्वै यज्ञस्य ब्रह्मणा युज्यतें। ब्रह्मणा वै तस्यं विमोकः। अद्भिः शान्तिः। विमुक्तं वा एतर्हि योक्रं ब्रह्मणा। आदायैन्त्पत्नी सहाप उपंगृह्णीते शान्त्यै। अञ्जलौ पूर्णपात्रमा नयति। रेतं एवास्याँ प्रजां दंधाति। प्रजया हि मंनुष्यः पूर्णः। मुखं वि मृष्टे। अवभृथस्यैव रूपं कृत्वोत्तिष्ठति॥७५॥

स्वितृप्रंसूतो यथादेवतं प्रजयेत्यांह सिश्चन्मृष्ट् एकं च॥-----[१०]

प्रिवेषो वा एष वनस्पतीनाम्। यदुंपवेषः। य एवं वेदं। विन्दते परिवेष्टारम्। तमुंत्करे। यं देवा मनुष्येषु। उपवेषमधारयन्। ये अस्मदपं चेतसः। तानस्मभ्यमिहा कुरु। उपवेषोपं विङ्कि नः॥७६॥

प्रजां पृष्टिमथो धनम्। द्विपदो न्श्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंपगान्कुर्विति पुरस्तांत्प्रत्यश्चमुपं गूहति। तस्मांत्पुर-स्तांत्प्रत्यश्चंः शूद्रा अवंस्यन्ति। स्थविमृत उपंगूहति। अप्रंतिवादिन पृवैनांन्कुरुते। धृष्टि्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मणा सर्शितः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म इतिं॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रह्रंरित। निर्मुन्नुंद् ओकंसः। सपत्नो यः पृंतन्यितं। निर्बाध्येन हिविषां। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्रः पंरावतः। इहि पश्च जनार् अति। इहि तिस्रोऽतिं रोचनायावंत्। सूर्यो असंदिवि। पुरमान्त्वां परावतम्॥७८॥

इन्द्रों नयतु वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इति। त्रिवृद्वा एष वज्रो ब्रह्मणा स॰शितः। शुचैवैनं विध्वा। पुभ्यो लोकेभ्यों निर्णुद्यं। वर्न्नेण ब्रह्मंणा स्तृणुते। हृतोंऽसावविधिष्मामुमित्यांह् स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तं ध्यांयेत्। शुचैवैनंमर्पयति॥७९॥

प्रत्युष्टं दिवः शिल्पमयंज्ञो घृतं चं देवासुराः स एतमिन्द्र आपो देवीर्ग्निना धिष्णिया अथ स्रुचौ यो वा अयंथादेवतं परिवेषो वा एकांदश॥११॥ प्रत्युष्टमयंज्ञ एषा हि विश्वेषां देवानांमूर्जा पृथिवीमथो रक्षंसान्तां प्रजांतिं द्वाभ्यां तं कालेकांले नवंसप्ततिः॥७९॥ प्रत्युष्टमपंयति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

# ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमार्लभते। क्षुत्रायं राज्नन्यम्। मुरुद्धो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमंसे तस्करम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्मने क्रीबम्। आक्रयायांयोगूम्। कामांय पुङ्श्वलूम्। अतिंकुष्टाय मागुधम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाच्रम्। नुर्मायं रेभम्। निर्रष्ठायै भीमुलम्। हसाय कारिम्। आनुन्दायं स्रीष्खम्। प्रमुदं कुमारीपुत्रम्। मेधाये रथका्रम्। धैर्याय तक्षाणम्॥२॥

श्रमांय कौलालम्। मायायै कार्मारम्। रूपायं मणिकारम्। शुभे वपम्। शुरव्याया इषुकारम्। हेत्यै धंन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्यवे मृग्युम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥

स्न्थये जारम्। गेहायोपपतिम्। निर्ऋंत्ये परिवित्तम्। आर्त्ये परिविविदानम्। अराध्ये दिधिषूपतिम्। प्वित्रांय भिषजम्। प्रज्ञानांय नक्षत्रदर्शम्। निष्कृत्ये पेशस्कारीम्। बलांयोपदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

न्दीभ्यंः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुष्व्याघ्रायं

दुर्मदम्। प्रयुद्ध्य उन्मंत्तम्। गृन्धव्यिपस्पराभ्यो व्रात्यम्। सप्देवजनेभ्योऽप्रतिपदम्। अवेभ्यः कित्वम्। इर्यताया अकितवम्। पिशाचेभ्यो बिदलकारम्। यातुधानेभ्यः कण्टककारम्॥५॥

उथ्मादेभ्यः कुज्जम्। प्रमुदे वामनम्। ह्याभ्यः स्नामम्। स्वप्नायान्थम्। अधमाय बधिरम्। संज्ञानाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्जिनम्। उपशिक्षायां अभिप्रश्जिनम्। मुर्यादाये प्रश्जिववाकम्॥६॥

ऋत्यैं स्तेनह्रंदयम्। वैरंहत्याय पिशुंनम्। विवित्त्ये क्षतारम्। औपंद्रष्टाय सङ्ग्रहीतारम्। बलायानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कुन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधांय वासः पल्पूलीम्। प्रकामायं रजयित्रीम्॥७॥

भायै दार्वाह् रम्। प्रभायां आग्नेन्थम्। नार्कस्य पृष्ठायांभिषेक्तारम्। ब्रुध्नस्यं विष्ठपाय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकायं पेशितारम्। मनुष्यलोकायं प्रकरितारम्। सर्वेभ्यो लोकेभ्यं उपसेक्तारम्। अवंत्ये वधायोपमन्थितारम्। सुवर्गायं लोकायं भागद्धम्। वर्षिष्ठाय नार्काय परिवेष्टारम्॥८॥

अर्मेंभ्यो हस्तिपम्। जुवायांश्वपम्। पुष्टौ गोपालम्। तेजंसेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इरांयै कीनाशम्। कीलालांय सुराकारम्। भुद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्तुधम्। अध्यंक्षायानुक्षत्तारम्॥९॥

मृन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधांय निस्रम्। शोकांयाभिस्रम्। उत्कूलविकूलाभ्यां त्रिस्थिनम्। योगांय योक्तारम्। क्षेमांय विमोक्तारम्। वर्ष्षे मानस्कृतम्। शीलांयाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्यै कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥

युम्यै यमसूम्। अर्थर्वभ्योऽवंतोकाम्। संवृथ्स्रायं पर्यारिणींम्। परिवृथ्स्रायाविजाताम्। इदावृथ्स्रायांप्-स्कद्वरीम्। इद्वथ्स्रायातीत्वरीम्। वृथ्स्राय् विजर्जराम्। संवृथ्स्राय् पर्लिक्रीम्। वनाय वन्पम्। अन्यतोरण्याय दाव्पम्॥११॥

सरोँभ्यो धेवरम्। वेशंन्ताभ्यो दाशम्ँ। उपस्थावंरीभ्यो बैन्दम्ँ। नुङ्गुलाभ्यः शौष्कलम्। पार्याय कैवर्तम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थेभ्यं आन्दम्। विषंमभ्यो मैनालम्। स्वनेँभ्यः पर्णकम्। गुहाँभ्यः किरांतम्। सानुंभ्यो जम्भंकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्कांया ऋतुलम्। घोषांय भृषम्। अन्तांय बहुवादिनम्। अनुन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणवृष्मम्। आऋन्दायं दुन्दुभ्याघातम्। अवरुस्परायं शङ्खुष्मम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्म्मणम्॥१३॥ बीभ्थ्सायैं पौल्क्सम्। भूत्यैं जागर्णम्। अभूँत्यै स्वपनम्। तुलायैं वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वैभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पृश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यैं जनवादिनम्। व्यृद्धा अपगुल्भम्। स्र्श्रारायं प्रच्छिदम्॥१४॥

हसाय पु श्रृश्रूलूमा लेभते। वीणावादं गणेकं गीताये। यादेसे शाबुल्याम्। नुर्मायं भद्रवृतीम्। तूण्वध्मं ग्रामण्यं पाणिसङ्घातं नृत्तायं। मोदायानुक्रोशंकम्। आन्नन्दायं तलवम्॥१५॥

अक्षराजायं कित्वम्। कृतायं सभाविनम्। त्रेतांया आदिनवदुर्शम्। द्वापरायं बहिः सदम्। कलये सभास्थाणुम्। दुष्कृतायं चरकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्। पिशाचेभ्यंः सैलगम्। पिपासायें गोव्यच्छम्। निर्ऋत्ये गोघातम्। क्षुधे गोविकर्तम्। क्षुतृष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मार्सं भिक्षंमाण उपतिष्ठते॥१६॥

भूम्यै पीठस्पिणमा लंभते। अग्नयेऽर्स्सलम्। वायवे चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय वर्शनृतिनम्। दिवे खंलतिम्। सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षेत्रेभ्यः किलासम्। अहे शुक्रं पिङ्गलम्। रात्रियै कृष्णं पिङ्गाक्षम्॥१७॥

वाचे पुरुषमा लंभते। प्राणमंपानं व्यानमुंदानः संमानं

तान् वायवै। सूर्याय चक्षुरा लंभते। मनंश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१८॥

अथैतानरूपेभ्य आर्लभते। अतिहस्वमितदीर्घम्। अतिकृशमत्यर्श्सलम्। अतिशुक्रुमितिकृष्णम्। अतिश्रक्षण्-मितिलोमशम्। अतिकिरिट्मितिदन्तुरम्। अतिमिर्मिर्मिते-मेमिषम्। आशायै जामिम्। प्रतीक्षायै कुमारीम्॥१९॥

ब्रह्मणे गीताय श्रमाय सन्धर्ये नृदीभ्यं उथ्सादेभ्य ऋत्यै भाया अर्मेभ्यो मृन्यवे यृम्यै दशंदश् सरोभ्यो द्वादंश प्रतिश्रुत्काये बीभृथ्सायै दशंदश् हसाय सप्ताक्षराजाय त्रयोदश् भूम्यै दशं वाचे षडथ नवैकान्नवि शितिः॥१९॥ ब्रह्मणे युम्यै नवंदश॥१९॥ ब्रह्मणे कुमारीम्॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

स्त्यं प्रपेद्ये। ऋतं प्रपेद्ये। अमृतं प्रपेद्ये। प्रजापेतेः प्रियां तनुव्मनातां प्रपेद्ये। इदम्हं पेश्चद्येन् वर्जेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं क्रामामि। योऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। भूर्भुवः सुवंः। हिम्॥१॥

सृत्यं दर्श॥——[१]

प्र वो वाजां अभिद्यंवः। ह्विष्मंन्तो घृताच्यां। देवाञ्जिंगाति सम्भूयः। अग्न आयांहि वीतयें। गृणानो ह्व्यदांतये। नि होतां सिथ्स ब्र्हिषिं। तं त्वां समिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामि। बृहच्छोंचा यविष्ठा। स नः पृथुः श्रुवाय्यम्॥२॥

अच्छां देव विवासिस। बृहदंग्ने सुवीर्यम्। ईडेन्यों नमस्यंस्तिरः। तमा रेसि दर्शतः। सम्ग्रिरिध्यते वृषां। वृषों अग्निः समिध्यते। अश्वो न देववाहंनः। तर ह्विष्मंन्त ईडते। वृषंणं त्वा वृयं वृषन्। वृषांणः समिधीमहि॥३॥

अग्ने दीर्घतं बृहत्। अग्निं दूतं वृंणीमहे। होतांरं विश्ववेदसम्। अस्य यज्ञस्यं सुऋतुम्ं। समिध्यमानो अध्वरे। अग्निः पांवक ईड्यः। शोचिष्केशस्तमीमहे। समिद्धो अग्न आहुत। देवान् यक्षि स्वध्वर। त्व॰ हि हंव्यवाडसिं। आ जुंहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रयत्यध्वरे। वृणीध्व॰ हंव्यवाहंनम्। त्वं वर्रण उत मित्रो अंग्ने। त्वां वंधिन्त मृतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषण्नानि सन्तु। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥४॥ श्रवायंमिधीमुह्यसि सुप्त चं॥——[२]

अग्नें महार असि ब्राह्मण भारत। असावसौँ। देवेद्धो मन्विद्धः। ऋषिष्ठतो विप्रांनुमदितः। कृविश्वस्तो ब्रह्मंसर्शितो घृताहंवनः। प्रणीर्यज्ञानाम्। र्थीरेध्वराणाम्। अतूर्तो होता। तूर्णिर्हव्यवाट्। आस्पात्रं जुहूर्देवानाम्॥५॥

चम्सो देवपानंः। अराश् ईवाग्ने नेमिर्देवाश्स्त्वं परिभूरिस। आ वह देवान् यजंमानाय। अग्निमंग्न आवह। सोम्मावंह। अग्निमावंह। प्रजापंतिमावंह। अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी आवंह। इन्द्रमावंह। महेन्द्रमावंह। देवाश् आंज्यपाश् आवंह। अग्निश् होत्रायावंह। स्वं मंहिमान्मा वंह। आ चाँग्ने देवान् वहं। सुयजां च यज जातवेदः॥६॥

अग्निर्होता वेत्वग्निः। होत्रं वैत्तु प्रावित्रम्। स्मो वयम्। साधु ते यजमान देवता। घृतवंतीमध्वर्यो सुचमास्यंस्व। देवायुवं विश्ववाराम्। ईडांमहै देवा ईडेन्यान्। नुमस्यामं नमस्यान्। यजांम यज्ञियान्॥७॥

स्मिधों अग्रु आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपांदग्नु आज्यंस्य

वेतु। इडो अंग्र आज्यंस्य वियन्तु। ब्र्हिरंग्र आज्यंस्य वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहाँ प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौँ। स्वाहेँन्द्राग्नी। स्वाहेन्द्रम्। स्वाहां महेन्द्रम्। स्वाहां देवा॰ आँज्यपान्। स्वाहाऽग्नि॰ होत्राञ्जंषाणाः। अग्न आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

डुन्द्राग्नी पर्श्व च॥—————[५]

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत्। द्रविणस्युर्विप्न्ययां। सिमिद्धः शुक्र आहुंतः। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। त्व सोमासि सत्पंतिः। त्व राजोत वृत्रहा। त्वं भद्रो असि कर्तुः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषो वेतु। अग्निः प्रत्नेन जन्मंना। शुम्भांनस्त्नुव् स्वाम्। क्विर्विप्रेण वावृधे। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गीर्भिष्टां व्यम्। वर्धयांमो वचोविदंः। सुमृडीको न आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य हिवषों वेतु॥९॥

स्वार षट् चं॥\_\_\_\_\_\_[६]

अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पितः पृथिव्या अयम्। अपार रेतार्रस जिन्वति। भुवो यज्ञस्य रजंसश्च नेता। यत्रां नियुद्धिः सचेसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानं दिधेषे सुवर्षाम्। जिह्वामंग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नो अस्तु॥१०॥ वय स्यांम् पतंयो रयीणाम्। स वेंद पुत्रः पितर् समातरम्। स सूनुर्भुवथ्स भुंवत्पुनंभिधः। स द्यामौर्णोदन्तिरिक्ष् स सुर्वः। स विश्वा भुवो अभवथ्स आभंवत्। अग्नीषोमा सवेंदसा। सहूंती वनत्ङ्गिरंः। सन्देवत्रा बंभूवथः। युवमेतानि दिवि रोचनानि। अग्निश्चं सोम सर्त्रत् अधत्तम्॥११॥

युव सिन्धू रे रिभशंस्तेरवद्यात्। अग्नीषोमावमुंश्चतं गृभीतान्। इन्द्रौग्नी रोचना दिवः। परि वाजेषु भूषथः। तद्वौश्चेति प्रवीर्यम्। श्वथंद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रायो अग्नी सहंरी सप्यात्। इर्ज्यन्तां वस्व्यंस्य भूरैः। सहंस्तमा सहंसा वाज्यन्तौ। एन्द्रं सान्सि रियम्॥१२॥

स्जित्वांन सदासहम्ँ। वर्षिष्ठमूतये भर। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रूनं। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। महा इन्द्रो य ओजंसा। पूर्जन्यो वृष्टिमा इंव। स्तोमैंर्व्थसस्यं वावृधे। महा इन्द्रो नृवदाचंर्षणिप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोभिः। अस्मद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उरुः पृथुः सुकृंतः कुर्तृभिर्भूत्। पिप्रीहि देवार उंशतो यंविष्ठ। विद्वार ऋतूर्रऋतुपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज्सतेभिरग्ने। त्वर होतॄणामस्यायंजिष्ठः। अग्निर् स्विष्टकृतम्। अयांडग्निर्ग्नेः प्रिया धामांनि। अयाद्थ्सोमंस्य

## प्रिया धार्मानि॥१४॥

अयांड्ग्रेश प्रिया धामांनि। अयांद्वजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांड्ग्रीषोमयोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्रंस्य प्रिया धामांनि। अयांण्महेन्द्रस्यं प्रिया धामांनि। अयांड्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्रग्नेरहोतुंः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं मंहिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता हिवः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या ते अद्या१५॥

अस्त्व्यत्रुष् र्यिं चर्षणिप्राः सोमस्य प्रिया धामानीषः षद्वं॥————[७]

उपंहूत रथन्तर स्मह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर स्मह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य स्महान्तिरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य स्महान्तिरिक्षेण। ह्वयताम्। उपंहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्वयन्ताम्। उपंहूताः धृनुः सहर्षंभा। उपं मा धृनुः सहर्षंभा। ह्वयताम्॥१६॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मा इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मान्वी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृतमुपंहृतम्॥१७॥ दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंतिं वर्धान्। उपंहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपंहूतोऽयं यज्ञमानः। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूतः। भूयंसि हिवष्करंण उपंहूतः। दिव्ये धामृत्रुपंहूतः। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति तस्मिन्नुपंहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहूतस्योपंहूतः॥१८॥

देवं ब्र्हिः। व्सुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो नराशरसंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कृविः। सृत्यमंन्मायजी होतां। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयांट। यार अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमंध्सत। तार संसुनुषीर् होत्रान्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि॥१९॥

अपिप्रेः पर्श्व च॥———[९]

ड्दं द्यांवापृथिवी भुद्रमंभूत्। आध्मं सूक्तवाकम्। उत नंमोवाकम्। ऋध्यास्मं सूक्तोच्यंमग्ने। त्व र सूक्तवागंसि। उपंश्रितो दिवः पृथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन् युज्ञे यंजमान् द्यावांपृथिवी स्ताम्। शृङ्गये जीरदान्। अत्रंस्रू अप्रंवेदे। उरुगंव्यूती अभयं कृतौ॥२०॥ वृष्टिद्यांवा रीत्यांपा। शम्भुवौं मयोभुवौं। ऊर्जस्वती च् पर्यस्वती च। सूप्चरणा चं स्वधिचरणा चं। तयोराविदिं। अग्निरिद हविरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोऽकृत। सोमं इद १ ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्निरिद १ हविरंजुषत॥ २१॥

अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। प्रजापंतिरिदः हिवरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। अग्नीषोमांविदः हिवरंजुषेताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः हिवरंजुषेताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः हिवरंजुषेताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽकाताम्। इन्द्रं इदः हिवरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। महेन्द्र इदः हिवरंजुषत॥२२॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। देवा आँज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवीवृधन्त महो ज्यायोऽकृत। अग्निरहोत्रेणेद १ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अस्यामृध्द्धोत्रांयान्देवङ्गमायांम्। आशांस्तेऽयं यर्जमानोऽसौ। आयुरा शांस्ते। सुप्रजास्त्वमा शांस्ते। स्जात्वन्स्यामा शांस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयुज्यामा शाँस्ते। भूयों हिव्षष्करंणमा शाँस्ते। दिव्यं धामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यद्नेनं हिवषाऽऽशाँस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मै देवा रांसन्ताम्। तद्ग्निर्देवो देवेभ्यो वनंते। व्यमुग्नेर्मानुषाः। इष्टं चं वीतं चं। उभे चं नो द्यावापृथिवी अश्हंसस्पाताम्। इह गतिंवामस्येदं च। नमों देवेभ्यः॥२४॥

अभ्यं कृतांवकृताग्निरिदर ह्विरंजुषत महेन्द्र इदर ह्विरंजुषत सजातवनस्यामा शाँस्ते वीतं च त्रीणि च॥—————[१०]

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीं स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे॥२५॥

तच्छुं योर्ष्टौ॥-----[११]

आप्यांयस्व सन्तें। इह त्वष्टांरमग्रियं तन्नंस्तुरीपम्ं। देवानां पत्नीरुश्तीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वार्जसातये। याः पार्थिवासो या अपामिपं व्रते। ता नों देवीः सुहवाः शर्म यच्छत। उत ग्रा वियन्तु देवपंत्नीः। इन्द्राण्यंग्राय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी श्रंणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निर्होतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद् जिनेमा जातवेदाः। देवानांमुत यो मर्त्यांनाम्। यजिष्ठः स प्र यंजतामृतावां। व्यम् त्वा गृहपते जनांनाम्। अग्ने अकंर्म समिधां बृहन्तम्। अस्थूिर णो गार्हंपत्यानि सन्तु। तिग्मेनं नस्तेजंसा सर्शिशाधि॥२७॥

जनींनामृष्टौ चं॥——[१२]

उपंहूत रथन्तर सह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तिरक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्रौः। उपं मा सप्त होत्रौ ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥ २८॥

उपहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपहूताँ(४)हो। इडोपहूता। उपहूतेडां। उपो अस्मा १ इडां ह्वयताम्। इडोपहूता। उपहूतेडां। मान्वी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपहूतम्॥२९॥

दैव्यां अध्वर्यव् उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः।
य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंश्लीं वर्धान्। उपंहूते
द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपंहूतेयं
यजमाना। इन्द्राणीवांऽविध्वा। अदितिरिव सुपुत्रा।
उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूता। भूयंसि हिव्ष्करंण उपंहूता।
दिव्ये धामृत्रुपंहूता। इदं में देवा हुविर्जुषन्तामिति
तस्मिन्नुपंहूता। विश्वंमस्याः प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य
प्रियस्योपंहूतस्योपंहूता॥३०॥

स्हर्षंभा ह्वयतामुपंहूत सपुत्रा षद्वं॥———[१३]

स्तयं प्रवोऽग्ने म्हान्ग्निर्होतां स्मिधोऽग्निर्वृत्राण्यग्निर्मूर्धोपंहूतं देवं बर्हिरिदं द्यांवापृथिवी तच्छुं योरा प्यायुस्वोपंहूत्त्रयोदश॥१३॥ स्तयं वयः स्याम वृष्टिद्यांवा त्रिष्शत्॥३०॥ स्त्यमुपंहृता॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥षष्ठमः प्रश्नः॥

# ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामंध्वरे देवयन्तंः। वनंस्पते मधुना दैव्येन। यदूर्ध्वस्तिष्ठाद्वविणेह धंत्तात्। यद्वा क्षयो मातुरस्या उपस्थै। उच्छ्रंयस्व वनस्पते। वर्ष्मंन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवाहसे। समिद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तात्। ब्रह्मं वन्वानो अजर्र सुवीरम्॥१॥

आरे अस्मदमंतिं बाधंमानः। उच्छ्रंयस्व मह्ते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊष्णं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वा वाजंस्य सनिता यदक्षिभिः। वाघद्विर्विह्वयांमहे। ऊर्ध्वा नः पाह्य १ हंसो नि केतुनां। विश्व १ सम्त्रिणन्दह। कृधी नं ऊर्ध्वां च रथांय जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवंः॥२॥

जातो जांयते सुदिन्त्वे अह्नाँम्। सम्पर्य आ विदथे वर्धमानः। पुनन्ति धीरां अपसों मनीषा। देवया विप्र उदियर्ति वाचम्ं। युवां सुवासाः परिवीत् आगांत्। स उ श्रेयांन्भवित् जायंमानः। तं धीरांसः क्वय् उन्नयन्ति। स्वाधियो मनसा देवयन्तः। पृथुपाजा अमर्त्यः। घृतिनिर्णिख्स्वाहुतः। अग्निर्यज्ञस्यं हव्यवाद। त॰ स्वाधों यतः स्नुचः। इत्था धिया यज्ञवंन्तः। आचंकुर्ग्निमूतयें। त्वं वर्रण उत मित्रो अग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिर्वसिष्ठाः। त्वे वस्ं सुषण्नानि

# सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥

सुवीरं दुवः स्वांहतोऽष्टो चं॥-----[१]

होतां यक्षद्ग्नि स्मिधां सुष्मिधा सिमंद्धं नाभां पृथिव्याः संङ्ग्थे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्मतनूनपात्मिदितेर्गर्भं भुवंनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यो देवयानांन्प्यो अनक्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षन्नराश्चर्सं नृश्कां नृशः प्रणेत्रम्। गोभिर्वपावान्थ्स्याद्वीरैः शक्तीवान्नथैः प्रथम्या वा हिरंण्येश्चन्द्री वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्ग्निमिड ईडितो देवो देवार आवंक्षद्द्तो हंव्यवाडमूरः। उपेमं यज्ञमुपेमां देवो देवहूंतिमवतु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्रहिः सुष्टरीमोर्णमदा अस्मिन् यज्ञे वि च प्र चं प्रथताः स्वास्थ्यं देवेभ्यः। एमेनद्द्य वसंवो रुद्रा आदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥४॥

होतां यक्षद्द्रं ऋष्वाः कंवष्यो कोषधावनीरुदातांभीर्जिहेतां विपक्षोंभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायणा अस्मिन् यज्ञे विश्रयन्तामृतावृधों वियन्त्वाज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषासानक्तां बृह्ती सुपेशंसा नृशः पितंभ्यो योनिं कृण्वाने। स्र्स्मयंमाने इन्द्रंण देवेरेदं ब्र्हिः सीदतां वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्देव्या होतांरा

मन्द्रा पोतारा कवी प्रचेतसा। स्विष्टमद्यान्यः करदिषा स्वंभिगूर्तमन्य ऊर्जा सर्तवसेमं यज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां वीतामाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीरपसांमपस्तंमा अच्छिंद्रमद्येदमपंस्तन्वताम्। देवेभ्यों देवीर्देवमपों वियन्त्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षत्त्वष्टांरमचिष्टुमपांक ५ रेतोधां विश्रवसं यशोधाम्। पुरुरूपुमकांमकर्शन १ सुपोषः पोषेः स्याथ्सुवीरों वीरैर्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षद्वनस्पतिमुपावंस्रक्षद्धियो जोष्टार १ शुशमुन्नरेः। स्वदाथ्स्वधितिर्ऋतुथाद्य देवो देवेभ्यो हव्यावाङ्गेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा मेदंसः स्वाहाँ स्तोकाना इं स्वाहा स्वाहां कृतीना इं स्वाहां हव्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवार आंज्यपान्थ्स्वाहाऽग्निर होत्राञ्जुंषाणा अग्न आज्यंस्य वियन्तु होतुर्यजं॥५॥

प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं सुवीरों वी्रैर्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं चृत्वारिं च (अग्निन्तनूनपांतृत्रराशः संमृग्निमिड ईडि़तो बुर्हिर्दुरं उषासानक्ता दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरं वन्स्पतिंमृग्निम्। पश्च वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेकों वियन्तु होत्र्यंजं॥)॥[२]

सिमिद्धो अद्य मनुषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिसि जातवेदः। आ च वहं मित्रमहिश्चिकित्वान्। त्वं दूतः क्विरंसि प्रचेताः। तनूनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्यां सम्अन्थ्स्वंदया सुजिह्न। मन्मांनि धीभिरुत यज्ञमृन्धन्। देवत्रा चं कृणुह्यध्वरं नंः। नराशर्श्संस्य महिमानंमेषाम्।

### उपं स्तोषाम यजतस्यं यज्ञैः॥६॥

ते सुक्रतंवः शुचंयो धियन्थाः। स्वदंन्तु देवा उभयांनि ह्व्या। आजुह्वांन् ईड्यो वन्द्यंश्च। आयाँह्यग्ने वसुंभिः सजोषाः। त्वं देवानांमिस यह्व होताः। स एनान् यक्षीषितो यजीयान्। प्राचीनं बूर्हिः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोर्स्या वृंज्यते अग्रे अहाँम्। व्यं प्रथते वित्रं वरीयः। देवेभ्यो अदितये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पर्तिभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवींर्द्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यो भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्तते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौं। दिव्ये योषंणे बृहती सुंरुक्ये। अधि श्रियर् शुक्रपिशं दर्धाने। दैव्या होर्तारा प्रथमा सुवाचौ। मिमाना यज्ञं मनुषो यजंध्ये॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदर्थेषु कारू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां दिशन्तां। आ नो यज्ञं भारंती तूयंमेतु। इडां मनुष्वदिह चेतयंन्ती। तिस्रो देवीर्बर्हिरेद स्योनम्। सरंस्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावांपृथिवी जिनेत्री। रूपैरिप श्राद्भवंनानि विश्वां। तम्द्य होतिरिषितो यजीयान्। देवं त्वष्टांरिमेह यक्षि विद्वान्॥९॥

उपावंसृज्तन्मन्यां सम्अन्। देवानां पार्थं ऋतुथा ह्वी १ षिं। वनस्पतिः शमिता देवो अग्निः। स्वदंन्तु ह्व्यं मधुना घृतेनं। सुद्यो जातो व्यंमिमीत यज्ञम्। अग्निर्देवानांमभवत्पुरोगाः। अस्य होतुंः प्रदिश्यृतस्यं वाचि। स्वाहांकृतः ह्विरंदन्तु देवाः॥१०॥

युज्ञैः स्योनं यर्जध्यै विद्वानृष्टौ चं॥————[3]

अग्निर्होतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं यज्ञियः। परित्रिविष्टांध्वरम्। यात्यग्नी र्थीरिव। आ देवेषु प्रयो दर्धत्। परि वाजंपतिः कविः। अग्निर्ह्व्यान्यंक्रमीत्। दध्द्रत्नांनि दाशुषे॥११॥

अग्निर्होतां नो नवं॥----[४]

अजैंद्गिः। असंनुद्वाज्ञिः। देवो देवेभ्यों हृव्यावाँट्। प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेर्नाभिः कल्पमानः। यज्ञस्यायुः प्रतिरन्। उप प्रेष्यं होतः। हव्या देवेभ्यः॥१२॥

दैव्याः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपंनयत् मेध्या दुरंः। आशासांना मेधंपतिभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भंरत। स्तृणीत ब्रहिः। अन्वेनं माता मंन्यताम्। अनुं पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सयूँथ्यः। उदीचीना अस्य पदो निधंत्तात्॥१३॥

सूर्यं चक्षुंर्गमयतात्। वातं प्राणम्नववंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एक्धाऽस्य त्वचमाच्छातात्। पुरा नाभ्यां अपिशसो वपामृत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षः कृणुतात्। प्रशसां बाहू॥१४॥

श्रुला दोषणीं। कृश्यपेवारसां। अच्छिंद्रे श्रोणीं। कृवषोरू स्रेकपंणिष्ठीवन्तां। षिट्वरेशितरस्य वङ्क्ष्यः। ता अनुष्ठ्योच्यावयतात्। गात्रं गात्रमस्यानूनं कृणुतात्। ऊवध्यगोहं पार्थिवं खनतात्। अस्ना रक्षः सर्सृजतात्। वनिष्ठमंस्य मा रांविष्ट॥१५॥

उर्रूकं मन्यंमानाः। नेद्वंस्तोके तनये। रवितारवंच्छिमितारः। अधिंगो शमीष्वम्। सुशिमें शमीष्वम्। शमीष्वमंधिगो। अधिंगुश्चापांपश्च। उभौ देवानार् शिमृतारौँ। ताविमं पृशू ॥ श्रंपयतां प्रविद्वारसौँ। यथांयथाऽस्य श्रपंणन्तथांतथा॥१६॥

धृत्ताद्भाहू मा रांविष्ट् तथांतथा॥————[६]

जुषस्वं स्प्रथंस्तमम्। वचों देवपसंरस्तमम्। ह्व्या जुह्वांन आसिनं। इमं नों यज्ञम्मृतेषु धेहि। इमा ह्व्या जांतवेदो जुषस्व। स्तोकानांमग्ने मेदंसो घृतस्यं। होतः प्राशांन प्रथमो निषद्यं। घृतवंन्तः पावक ते। स्तोकाः श्लोतन्ति मेदंसः। स्वधंमं देववींतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्ं। तुभ्य ई स्तोका घृंतश्चतंः। अग्ने विप्रांय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः समिध्यसे। यज्ञस्यं प्राविता भंव। तुभ्य ई श्चोतन्त्यिप्रगो शचीवः। स्तोकासो अग्ने मेदसो घृतस्यं। कृविशस्तो बृंह्ता भानुनागाः। ह्व्या जुंषस्व मेधिर। ओजिंष्ठन्ते मध्यतो मेद् उद्गृतम्। प्र ते वयं देदामहे। श्लोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्देवशोविंहि॥१८॥

आवृंत्रहणा वृत्रहिमः शुष्मैः। इन्द्रं यातन्नमोभिरग्ने अर्वाक्। युव र राधोभिरकेवेभिरिन्द्र। अग्ने अस्मे भंवतमुत्तमेभिः। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छार्गस्य वृपाया मेदंसः। जुषेता हितां होत्र्यजे। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रौग्नी ज्ञास उत वां सजातान्॥१९॥

नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्मम्। स वां धियं वाज्यन्तीमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता हिवः। होत्र्यजं। त्वामींडते अजिरं दूत्यांय। हिविष्मंन्तः सद्मिन्मानुंषासः। यस्यं देवैरासंदो बर्हिरंग्ने। अहाँन्यस्मै सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षदिग्निम्। पुरोडाशंस्य जुषता हिवः। होत्र्यजं॥२०॥

स्जातान्ग्रिन्द्वे चं॥——————[८]

गीर्भिर्विप्रः प्रमंतिमिच्छमानः। ईट्टें र्यिं यशसं पूर्वभाजम्। इन्द्रांग्री वृत्रहणा सुवज्रा। प्र णो नव्येभिस्तिरतं देष्णैः। माच्छेंद्म र्श्मीश्रिति नाधंमानाः। पितृणाश् शक्तीरनुयच्छंमानाः। इन्द्राग्निभ्यां कं वृषंणो मदन्ति। ताह्यद्रीं धिषणांया उपस्थें। अग्निश् सुंदीतिश् सुदृशंं गृणन्तंः।

नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेदः। त्वां दूतमंर्ति हंव्यवाहम्। देवा अंकृण्वन्नमृतंस्य नाभिम्॥२१॥

जात्वेदो द्वे चं॥-----[९]

त्व इत्यंग्ने प्रथमो मनोताँ। अस्या धियो अभंवो दस्महोताँ। त्व सीं वृषन्नकृणोर्दृष्टरीत्। सहो विश्वंसमै सहंसे सहंध्ये। अधा होता न्यंसीदो यजीयान्। इडस्पद इषयन्नीड्यः सन्। तं त्वा नर्रः प्रथमं देवयन्तंः। महो राये चितयंन्तो अनुंग्मन्। वृतेव यन्तं बहुभिर्वस्व्यैः। त्वे र्यिं जांगृवा सो अनुंग्मन्॥२२॥

रुशंन्तमृग्निं देर्शतं बृहन्तम्। वृपावंन्तं विश्वहां दीदिवाश्सम्। पृदं देवस्य नर्मसा वियन्तः। श्रृवस्यवः श्रवं आपृत्रमृंक्तम्। नार्मानि चिद्दिधिरे यृज्ञियांनि। भृद्रायां ते रणयन्त् सन्दृष्टो। त्वां वर्धन्ति क्षित्रयः पृथिव्याम्। त्वश्रायं उभयांसो जनांनाम्। त्वं त्राता तरणे चेत्योऽभूः। पिता माता सदिमन्मानुंषाणाम्॥२३॥

सपूर्येण्यः स प्रियो विक्ष्वंग्निः। होतां मृन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तं त्वां वयं दम् आ दीदिवा स्मम्। उपंज्ञुबाधो नमंसा सदेम। तं त्वां वय स्पुधियो नव्यंमग्ने। सुम्नायवं ईमहे देवयन्तः। त्वं विशो अनयो दीद्यानः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां कविं विश्पति शर्श्वतीनाम्। नितोशंनं वृष्मं चंर्षणीनाम्॥२४॥ प्रेतीषणि मिषयंन्तं पावकम्। राजंन्तमृग्निं यंज्तरः रंयीणाम्। सो अंग्न ईजे शश्मे च मर्तः। यस्त आनंदथ्समिधां ह्व्यदांतिम्। य आहुंतिं परि वेदा नमोंभिः। विश्वेथ्सवामा दंधते त्वोतः। अस्मा उं ते मिहं मृहे विधेम। नमोंभिरग्ने समिधोत ह्व्यैः। वेदीसूनो सहसो गीर्भिरुक्थैः। आ ते भुद्रायार् सुमृतौ यंतेम॥२५॥

आ यस्तृतन्थ रोदंसी विभासा। श्रवोभिश्च श्रवस्यंस्तर्रत्रः। बृहद्भिवांजैः स्थविरेभिर्स्मे। रेवद्भिरग्ने वित्रं वि भाहि। नृवद्धंसो सद्मिद्धेंह्यस्मे। भूरितोकाय तनयाय पृश्वः। पूर्वीरिषो बृहतीरारे अंघाः। अस्मे भूद्रा सौश्रवसानि सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूनि राजन्वसुतांते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्ति। अग्ने वसुं विधृते राजनित्वे॥२६॥

जागृवारसो अर्नुग्मन्मार्नुषाणाश्चर्षणीनां यंतेमाश्यान्द्वे चं॥————[१०]

आभेरत शक्षितं वज्रबाहू। अस्मा ईन्द्राग्नी अवत श्र् शचींभिः। इमे नु ते र्श्मयः सूर्यस्य। येभिः सिपृत्वं पितरो न आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य ह्विष् आत्तांमुद्य। मध्यतो मेद उद्गृतम्। पुरा द्वेषौभ्यः। पुरा पौरुषेय्या गृभः। घस्तांन्नूनम्॥२७॥

घासे अंज्राणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणाः श्तरुंद्रियाणाम्। अग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शितामृत उथ्साद्तः। अङ्गादङ्गादवंत्तानाम्। करंत एवेन्द्राग्नी। जुषेता १ ह्विः। होत्र्यर्जं। देवेभ्यों वनस्पते ह्वी १ षिं। हिरण्यपर्ण प्रदिवंस्ते अर्थम्॥ २८॥

प्रदक्षिणिद्रंशनयां नियूयं। ऋतस्यं वक्षि पृथिभी रिजेष्ठेः। होतां यक्षद्वनस्पतिम्भिहि। पिष्टतंमया रिभंष्ठया रश्नयाधित। यत्रैन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामानि। यत्र वनस्पतेः प्रिया पाथा स्सि। यत्रं देवानांमाज्यपानां प्रिया धामानि। यत्राग्नेरहोतुः प्रिया धामानि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोप्स्तुत्ये वोपावंस्रक्षत्। रभीया समिव कृत्वी॥२९॥

करंदेवं देवो वनस्पतिः। जुषता हिवः। होत्र्यजी पिप्रीहि देवा उष्ट्रातो यविष्ठ। विद्वा ऋतू र ऋतू पते यजेह। ये देव्या ऋत्विज् स्तेभिरग्ने। त्व होत्णामस्यायंजिष्ठः। होतां यक्षद्ग्नि स्विष्ट्रकृतम्। अयांड्रग्निरिन्द्राग्नियोष्ठागंस्य हिवषः प्रिया धामांनि। अयाङ्गनस्पतः प्रिया पाथा सि। अयाङ्ग्विवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता हिवः। होतर्यजी॥३०॥

नूनमर्थं कृत्वी पाथा रेसि सप्त चं॥\_\_\_\_\_[११]

उपों हु यद्विदर्थं वाजिनो गूः। गीर्भिर्विप्राः प्रमंतिमिच्छमानाः। अर्वन्तो न काष्ठान्नक्षंमाणाः। इन्द्राग्नी जोहुंवतो नर्स्ते। वनंस्पते रश्नयांऽभिधायं। पिष्टतंमया वयुनांनि विद्वान्। वहं देवत्रा दिधिषो ह्वी १ षिं। प्र चंदातारंम्मृतेषु वोचः। अग्नि १ स्विष्टकृतम्। अयां डग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य हविषंः प्रिया धामांनि॥ ३१॥

अयाङ्गन्स्पतैः प्रिया पाथा १सि। अयाङ्ग्वानां माज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्रग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवंदाः। जुषता १ हिवः। अग्ने यद्द्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व १ हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या ते अद्या ३२॥

धार्मानि भूरेकं च॥-----[१२]

देवं ब्रहिः सुंदेवं देवैः स्याथ्सुवीरं वीरैर्वस्तौंर्वृज्येताकाः प्रिभ्रेयेतात्यन्यात्राया ब्रहिष्मतो मदेम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवीर्द्वारं सङ्घाते विङ्वीर्यामञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ वथ्स ईमनास्तरुण आमिमीयात्कुमारो वा नवंजातो मेना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देवी उषासानक्ताऽद्यास्मिन् यज्ञे प्रयत्यंह्वतामिपं नूनं देवीर्विशः प्रायांसिष्टा सप्रीते सुधिते वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्जा। देवी जोष्टी वसुंधिती ययोर्न्याऽघाद्देषा सि युयवदान्यावंक्षद्वसु

वार्याणि यर्जमानाय वसुवने वसुधेर्यस्य वीतां यर्ज। देवी ऊर्जाहुंती इष्मूर्जम्यावंक्षथ्सिग्ध् सपींतिम्न्या नवेन पूर्वन्दयंमानाः स्यामं पुराणेन नवन्तामूर्जमूर्जाहुती ऊर्जयमाने अधातां वसुवने वसुधेयस्य वीतां यर्ज। देवा दैव्या होतांरा नेष्टांरा पोतांरा हताघंश सावाभ्रद्धंसू वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सरस्वती भारती द्यां भारत्यादित्यैरस्पृक्ष्यसरस्वतीम । रुद्रैर्य्ज्ञमांवीदिहैवेडंया वसुंमत्या सधुमादं मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराश १ संस्निशीर्षा षंडक्षः शतमिदंन श्शितिपृष्ठा आदंधति सहस्रंमीं प्रवंहन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हंतो बृहस्पतिः स्तोत्रमश्विना-ऽऽध्वंर्यवं वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यर्जा। देवो वनस्पतिं वर्षप्रांवा घृतिनं णिंग्द्यामग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षं मध्यंनाप्राः पृथिवीमुपंरेणाद १ हिस्सुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं ब्रहिर्वारितीनां निधेधांऽसि प्रच्युंतीनामप्रं-च्युतन्निकाम्धरेणं पुरुस्पार्हं यशस्वदेना बुर्हिषाऽन्या बर्ही इष्यिम ष्यांम वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृथ्सुद्रविणा मन्द्रः कविः सत्यमन्माऽऽयजी होता होतुंर्होतुरायंजीयानम् यान्देवानयाड्या अपिप्रेर्ये ते होत्रे अमध्सत् तार संसुनुषीर होत्रां देवङ्गमान्दिवि

देवेषुं यज्ञमेरंयेम इस्विष्टकृ चाग्ने होता अर्वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि यजं॥ ३३॥

यजैकं च॥----[१३]

देवं ब्रहिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवीर्द्वारंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवी उषासानक्तां। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी जोष्ट्रीं। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी ऊर्जाहुंती। वसुवनं वसुधेयस्य वीताम्॥३४॥

देवा दैव्या होतांरा। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराशक्तंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवं बर्हिवीरितीनाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु॥३५॥

देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मृन्द्रः कृविः। सृत्यमेन्मायुजी होताँ। होतुंरहोतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयाँट्। या अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमेथ्सत। ता र संसुनुषी होत्रान्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषु यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥३६॥

वीतां वेत्वभूरेकं च॥\_\_\_\_\_

**-**[88]

अग्निम्द्य होतारमवृणीतायं यजमानः पर्चन्यक्तीः

पर्चन्पुरोडाशं बृध्रन्निन्द्राग्निभ्यां छाग्रं सूप्स्था अद्य देवो वन्स्पतिरभवदिन्द्राग्निभ्यां छाग्रेनाघंस्तान्तं मेंद्स्तः प्रतिपचताग्रंभीष्टामवीवृधेतां पुरोडाशेन त्वामद्यर्षं आर्षेय ऋषीणान्नपादवृणीतायं यजंमानो बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्य एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति ता या देवा देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं होत्रसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुंषः सूक्तवाकायं सूका ब्रूहि॥३७॥

अग्निम्दैकम्ँ॥——[१५]

अञ्जन्ति होतां यक्ष्य्यमिद्धो अद्याग्निरजैदैव्यां जुषस्वा वृंत्रहणा गीर्भिस्त्व इ् ह्याभेरतमुपोंह यद्देवं ब्र्हिः सुंदेवं देवं ब्र्हिर्ग्निम्द्य पश्चंदश॥१५॥ अञ्जन्त्यग्निर्होतां नो गीर्भिरुपों हु यद्विदर्थं वाजिनः सप्तित्रिर्श्यत्॥३७॥ अञ्जन्तिं सूक्ताब्रूंहि॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

## ॥सप्तमः प्रश्नः॥

## ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषों ऽग्नौ कामान्प्रवेशयति। यों ऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैति। सयदिनं द्वा प्रयायात्। अकां मप्रीता एनं कामा नानुप्रयायुः। अतेजा अवीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम। विश्वाः सुिक्षतयः पृथंक्। अग्ने कामांय येमिर् इति। कामांनेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एनं कामा अनु प्रयांन्ति। तेज्स्वी वीर्यावान्भवति। सन्तंतिर्वा एषा यज्ञस्यं। योंऽग्रीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। स यदुद्वायंति। विच्छिंत्तिरेवास्य सा। तं प्रार्श्वमुद्धृत्यं। मन्सोपतिष्ठेत। मनो वै प्रजापंतिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥

मनंसैव युज्ञ सन्तंनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः। भूतिमेवोपैति। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याऽऽहिताग्नेर्ग्निरंपक्षायंति। यावच्छम्यंया प्रविध्यैत्। यदि तावंदपक्षायैत्। तर सम्भरेत्। इदं त एकं प्र उं त एकम्॥३॥

तृतीयेंन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशंनस्तुनुवै चारुंरेधि। प्रिये देवानां पर्मे जनित्र इतिं। ब्रह्मंणैवैन् सम्भंरति। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यदिं परस्तरामंपक्षायेंत्।

अनुप्रयायावंस्येत्। सो एव ततः प्रायंश्चित्तिः। ओषंधीर्वा एतस्यं पृशून्पयः प्रविंशति। यस्यं ह्विषे वृथ्सा अपार्कृता धर्यन्ति॥४॥

तान् यद्दुह्यात्। यातयांमा ह्विषां यजेत। यन्न दुह्यात्। यज्ञपुरुरुन्तरियात्। वायव्यां यवागून्निर्वपेत्। वायुर्वे पयंसः प्रदापयिता। स एवास्मे पयः प्रदापयति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मे पयोऽवं रुन्धे॥५॥

अथोत्तंरस्मै ह्विषे वृथ्सान्पार्कुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अन्यत्रान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयित। ये यर्जमानस्य सायं गृहमा गच्छंन्ति। यस्यं सायं दुग्धः ह्विरार्तिमार्च्छति। इन्द्रांय ब्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं पुवारभ्यं गृहीत्वोपं वसति। यत्प्रातः स्यात्। तच्छृतं कुंर्यात्॥६॥

अथेतंर ऐन्द्रः पुरोडाशंः स्यात्। इन्द्रिये एवास्मैं स्मीचीं दधाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मै पयो-ऽवं रुन्धे। अथोत्तंरस्मै ह्विषं वृथ्सान्पाकुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। उभयान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयति। ये यर्जमानस्य सायं च प्रातश्चं गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभयर् ह्विरार्तिमार्च्छतिं॥७॥

पुन्द्रं पश्चेशरावमोदनं निर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं

यंजेत्। अग्निमुंखा एव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता एवोभर्याः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे। अथोत्तरस्मे हिवषं वथ्सान्पाकुर्यात्॥८॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्धो वा एतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्येऽह्न्यत्यंनालम्भुका भवंति। तामंप्रुध्यं यजेत। सर्वेणेव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्वोपं ह्वयेत। अमूहमंस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुर्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायेति। अर्ध एवैनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥९॥

द्धाति यज्ञ उत् एक्न्थयंन्ति रुन्धे कुर्यादार्च्छत्यपाकुर्यात्पृथिवी त्वमृष्टौ चं (सर्वान् वि वै यदिं परस्तरामोषंधीरन्यत्रानुभयांनुर्धो वै॥)॥———[१]

यद्विष्यंण्णेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनायतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापत्ययूर्चा वंल्मीकवृपायामवं नयेत्। प्राजापत्यो वै वृल्मीकः। युज्ञः प्रजापंतिः। प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः॥१०॥

भूतिंमेवोपैति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यांत्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यंयुर्चाऽन्तंः परिधि निनंयेत्। द्यावांपृथिव्योरेवैनुत्प्रतिष्ठापयति॥११॥

तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यदवेवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्याऽऽत्मञ्जायेत। किलासो वास्यादंर्श्वसो वा। यत्प्रत्येयात्। यज्ञं विच्छिंन्द्यात्। स जुंहुयात्। मित्रो जनान्कल्पयति प्रजानन्॥१२॥

मित्रो दांधार पृथिवीमुत द्याम्। मित्रः कृष्टीरनिंमिषाऽभि चंष्टे। सत्यायं हृव्यं घृतवंज्जहोतेतिं। मित्रेणैवैनंत्कल्पयति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पूर्वस्यामाहृंत्याः हृतायामुत्तराऽऽहृंतिः स्कन्देंत्। द्विपाद्भिः पशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥

चतुंष्पाद्भिः पृशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यत्र वेत्थं वनस्पते देवानां गुह्या नामानि। तत्रं ह्व्यानि गाम्येतिं वानस्पत्ययुर्चा स्मिधंमाधायं। तूष्णीमेव पुनंर्जुहुयात्। वनस्पतिनैव यज्ञस्यार्तां चानांतां चाऽऽहुंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायश्चित्तिः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारः स्कन्देत्। अध्वर्यवे च यजंमानाय चाक ई स्यात्॥१४॥

यदंक्षिणा। ब्रुह्मणें च यजंमानाय चाकई स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रें च पत्नियै च यजंमानाय चाकई स्यात्। यदुदर्इः। अग्नीधे च पृशुभ्यंश्च यर्जमानाय चाकई स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रौऽस्य पृशून्धातुंकः स्यात्। यन्नाभिजुहुयात्। अशौन्तः प्रहियेत॥१५॥

स्रुवस्य बुध्रेनाभिनिदेध्यात्। मा तमो मा यज्ञस्तम्मा यजमानस्तमत्। नमंस्ते अस्त्वायते। नमो रुद्र परायते। नमो यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हिर्सीर्मुं मा हिर्सीरिति येन स्कन्देंत्। तं प्रहरेत्। सहस्रंशृङ्गो वृष्भो जातवेदाः। स्तोमंपृष्ठो घृतवान्थ्सुप्रतीकः। मा नो हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहांम। गोपोषं नो वीरपोषं चं यच्छेति। ब्रह्मंणैवैनं प्र हंरति। सेव ततः प्रायंश्चित्तः॥१६॥

वै प्रजापंतिः स्थापयति प्रजानन्त्रभि जुंहुयाथ्स्याँद्धियेत् जहांम् त्रीणिं च (यद्विष्यंण्णेन प्राजापृत्यया यत्कीटा मेध्यमेन् यदवेवृष्टेन् यत्पूर्वंस्यां यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारो यद्वेक्षिणा यत्प्रत्यग्यदुदङ्कं॥)॥———[२]

वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यति। यस्याऽऽहिंताग्ने-रिग्नर्म्थ्यमानो न जायते। यत्रान्यं पश्येत्। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भंवति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजाया होत्व्यम्। आग्नेयी वा एषा। यद्जा। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भंवति॥१७॥

अजस्य तु नाश्नीयात्। यद्जस्याँश्नीयात्। यामेवाग्नावाहुतिं जुहुयात्। तामंद्यात्। तस्माद्जस्य नाश्यम्। यद्यजान्न विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्ते होत्व्यम्। एष वा अग्निर्वेश्वानुरः। यद्ग्राह्मणः। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भेवति॥१८॥

ब्राह्मणं तु वंस्त्यै नापं रुन्ध्यात्। यद्ग्राह्मणं वंस्त्या अपरुन्ध्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहंतिं जुहुयात्। तं भागधेयेन् व्यर्धयेत्। तस्माद्भाह्मणो वंस्त्यै नाप्रध्यः। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। दुर्भस्तम्बे होत्व्यम्। अग्निवान् वे दंर्भस्तम्बः। अग्नावेवास्याग्निहोत्र हुतं भवति। दुर्भाङ्स्तु नाध्यांसीत॥१९॥

यद्दर्भान्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्माँद्दर्भा नाध्यांसित्व्याः। यदिं दुर्भान्न विन्देत्। अपसु होत्व्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांस्वेवास्यांग्निहोत्र॰ हुतं भंवति। आपुस्तु न परिचक्षीत। यदापः परिचक्षीत॥२०॥

यामेवाफ्स्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिचक्षीत। तस्मादापो न परिचक्ष्याः। मेध्यां च वा एतस्यामेध्या चं तनुवौ स॰ सृज्येते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्न्यैरग्निभिर्ग्नयः स॰सृज्यन्तै। अग्नये विविंचये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। मेध्यां चैवास्यामेध्यां चं तनुवौ व्यावंतियति। अग्नये ब्रुतपंतये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। अग्निमेव ब्रुतपंतिङ् स्वेनं भागुधेयेनोपं धावति। स एवैनं व्रतमा लम्भयति॥२१॥

गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा पृतद्वाजिनमाहिताग्नेः। यदिग्नहोत्रम्। तद्यथ्सवैत्। रेतो उस्य वाजिन्ड् स्रवेत्। गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकरित्यांह। रेतं पुवास्मिन्वाजिनं दधाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। इन्द्र इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टेत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनाना रे रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। बृह्स्पतिरित्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवास्मै प्रजाः प्र जनयति। पृथिव्यामव चुश्चोतैतदित्यांह। अस्यामेवैन्त्प्रतिष्ठापयति। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचेरित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥२३॥

अजाऽग्नावेवास्याँग्निहोत्रर हुतं भंवति भवत्यासीत परिचक्षीत लम्भयति दधाति देवानां बृह्स्पतिः पश्चं च (वि वै यद्यन्यमृजायाँ ब्राह्मणस्यं दर्भस्तम्बैंऽफ्सु होत्वयम्॥)॥——[३]

याः पुरस्तांत्प्रस्नवंन्ति। उपरिष्टाध्सर्वतंश्च याः। ताभी रश्मिपंवित्राभिः। श्रद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गातुविदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनस्यपतिना देवेनं। वातांद्यज्ञः प्र युज्यताम्। तृतीयंस्यै दिवः। गायत्रिया सोम् आभृतः॥२४॥

सोमपीथाय सन्नंयितुम्। वर्कलमन्तरमा दंदे। आपों देवीः शुद्धाः स्थं। इमा पात्रांणि शुन्धत। उपातुङ्क्यांय देवानांम्। पूर्णवल्कमुत शुंन्धत। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासुं। पयो वथ्सेषु पय इन्द्रांय ह्विषे ध्रियस्व। गायत्री पंर्णवल्केन। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥

अग्निं गृह्णामि सुरथं यो मंयोभूः। य उद्यन्तंमारोहंति सूर्यमहें। आदित्यं ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमम्। श्वो यज्ञायं रमतां देवतांभ्यः। वसूत्रुद्रानांदित्यान्। इन्द्रेण सह देवताः। ताः पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इमामूर्जं पश्चद्शीं ये प्रविष्टाः। तान्देवान्परि गृह्णामि पूर्वः॥२६॥

अग्निर्हं व्यवाडिह ताना वंहतु। पौर्णमास हिविरिदमेंषां मिये। आमावास्य हिविरिदमेंषां मिये। अन्तराऽग्नी पृशवंः। देवस् सदमा गंमन्। तान्पूर्वः पिरं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इह प्रजा विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। ताः पूर्वः पिरं गृह्णामि॥२७॥

स्व आयतंने मनीषयाँ। इह पृशवों विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। तान्पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाँ। अयं पिंतृणाम्ग्निः। अवाङ्कव्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परिं गृह्णामि। अविषन्नः पितुं करत्। अर्जस्रं त्वार संभापालाः॥२८॥

विजयभांगुर् सिमंन्धताम्। अग्ने दीदांय मे सभ्य। विजित्यै शुरदेः शुतम्। अन्नमावसुथीयम्। अभि हंराणि श्रर्दः श्रतम्। आवस्थे श्रियं मन्नम्। अहिंर्बुप्नियो नि यंच्छत्। इदम्हम्ग्रिज्येष्ठभ्यः। वस्भयो यज्ञं प्रब्रंवीमि। इदम्हमिन्द्रंज्येष्ठभ्यः॥२९॥

रुद्रेभ्यो युज्ञं प्र ब्रंवीमि। इदमहं वर्रणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यो युज्ञं प्र ब्रंवीमि। पर्यस्वतीरोषंधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः। अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन् मामिन्द्र स॰ सृंज। अग्नै व्रतपते वृतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्मे राध्यताम्। वार्यौ व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥

वृतानां व्रतपते वृतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। इमां प्राचीमुदीचीम्। इष्मूर्जमिभ सङ्स्कृताम्। बहुपूर्णामशृष्काग्राम्। हरामि पशुपामहम्। यत्कृष्णों रूपं कृत्वा। प्राविश्वस्त्वं वनस्पतीन्। तत्तस्त्वामेकविश्शित्धा। सम्भेरामि सुसम्भृतां॥३१॥

त्रीन्पंरिधी इस्तिम्नः समिधंः। यज्ञायुंरनुसश्चरान्। उपवेषं मेक्षंणं धृष्टिम्। सं भेरामि सुसम्भृता। या जाता ओषंधयः। देवेभ्यंस्त्रियुगं पुरा। तासां पर्व राध्यासम्। परिस्तरमाहरन्। अपां मेध्यं यज्ञियम्। सदेव शिवमंस्तु मे॥३२॥

आच्छेत्ता वो मा रिषम्। जीवांनि श्ररदेः श्तम्। अपंरिमितानां परिमिताः। सन्नेह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगांङ्कतमच्चनाहम्। पुनंरुत्थायं बहुला भंवन्तु। सकृदाच्छिन्नं बर्हिरूणांमृद्। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मिन्थ्सींदन्तु मे पितर्रः सोम्याः। पितामहाः प्रपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥

त्रिवृत्पंलाशे दर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। यज्ञे प्वित्रं पोतृंतमम्। पयों हृव्यं कंरोतु मे। इमौ प्रांणापानौ। यज्ञस्याङ्गांनि सर्वृशः। आप्याययंन्तौ सश्चरताम्। प्वित्रें हव्यशोधंने। प्वित्रें स्थो वैष्णवी। वायुर्वां मनंसा पुनातु॥३४॥

अयं प्राणश्चापानश्चं। यजमान्मपिं गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूंतां पोतांरौ। पवित्रें हव्यशोधंने। त्वया वेदिं विविदुः पृथिवीम्। त्वयां यज्ञो जांयते विश्वदानिः। अच्छिंद्रं यज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सन्तंनोत्यर्धमासान्। त्रयस्त्रिष्शोऽसि तन्तूनाम्। पवित्रेण सहागंहि॥३५॥

शिवेय र र र्जुरिमधानीं। अग्नियामुपं सेवताम्। अप्रंस्र र साय यज्ञस्यं। उखे उपंदधाम्यहम्। पृशुिमः सन्नीतं बिभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधं। उपवेषोऽसि यज्ञायं। त्वां परिवेषमधारयन्। इन्द्रांय हिवः कृण्वन्तः। शिवः शृग्मो भंवासि नः॥३६॥

अर्मृन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्याऽऽयुंषि प्र युंज्यताम्। तिरः पवित्रमतिनीताः। आपो धारय मातिगुः। देवेनं सवित्रोत्पूंताः। वसोः सूर्यस्य रुश्मिभिः। गां दोहपवित्रे रज्जुम्। सर्वा पात्राणि शुन्धत। एता आ चंरन्ति मधुंमृद्दुहांनाः। प्रजावंतीर्य्शसों विश्वरूपाः॥३७॥

बह्वीर्भवंन्तीरुप्जायंमानाः। इह व इन्द्रों रमयतु गावः। पूषा स्थं। अयुक्ष्मा वंः प्रजया सः सृंजािम। रायस्पोषंण बहुलाभवंन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वंमाना घृतं चं। जीवो जीवंन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं युज्ञं पृंथिवी च् सन्दुंहाताम्। धाता सोमेन सह वार्तेन वायुः। यजमानाय द्रविणं दधातु॥३८॥

उथ्सं दुहन्ति कुलशं चतुंर्बिलम्। इडाँ देवीं मधुंमतीश् सुवर्विदम्। तदिन्द्राग्नी जिन्वतश् सूनृतांवत्। तद्यजंमान-ममृत्त्वे देधातु। कामधुक्षः प्र णौ ब्रूहि। इन्द्रांय ह्विरिन्द्रियम्। अमूं यस्याँ देवानांम्। मृनुष्यांणां पयो हितम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हुव्यमा प्यांयतां पुनः॥३९॥

वृथ्सेभ्यों मनुष्येंभ्यः। पुनर्दोहायं कल्पताम्। यृज्ञस्य सन्तंतिरसि। यृज्ञस्यं त्वा सन्तंतिमनु सन्तंनोमि। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वा। यृज्ञायापि दधाम्यृहम्। अद्भिरिक्तेन पात्रेण। याः पूताः परिशेरते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमपि गच्छतु॥४०॥

पूर्णवुल्कः पुवित्रम्। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चं दुर्भं चं। देवाना १ हव्युशोधंनौ। प्रातुर्वेषायं गोपाय। विष्णो ह्व्य १ हि रक्षंसि। उभावग्नी उपस्तृण्ते। देवता उपवसन्तु मे। अहं ग्राम्यानुपं वसामि। मह्यं गोपंतये पृशून्॥४१॥ आर्मत इमं गृंह्णाम् पूर्वस्ताः पूर्वः परिंगृह्णामे सभापाला इन्द्रंज्येष्ठेभ्य आर्दित्य व्रतपते सुसम्भृतां मे सह पुंनातु गिह नो विश्वरूपा दधातु पुनर्गच्छतु पृशून् (याः पुरस्तांदिमामूर्जिम् प्रजा इह पृशवोऽयं पिंतृणामृग्निः।)॥——[४]

देवां देवेषु पराँकमध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु। द्वितीयास्तृतीयेषु। त्रिरंकादशा इह मांऽवत। इदश् शंकेयं यदिदं क्रोमिं। आत्मा करोत्वात्मनें। इदं करिष्ये भेषजम्। इदं में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्। इदमहश् सेनांया अभीत्वंर्ये॥४२॥

मुख्मपोहामि। सूर्यं ज्योतिर्वि भांहि। मह्त इंन्द्रियायं। आ प्यायतां घृतयोनिः। अग्निर्ह्व्याऽनुं मन्यताम्। खमंङ्क्ष् त्वचंमङ्क्षा सुरूपं त्वां वसुविदम्। पृशूनां तेजंसा। अग्नये जुष्टंमिभ घारयामि। स्योनं ते सदेनं करोमि॥४३॥

घृतस्य धारंया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्थ्सीदामृते प्रतिं तिष्ठ। व्रीहीणां मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथस्नुर्भुवंनस्य गोपाः। शृत उथ्म्नांति जनिता मंतीनाम्। यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। देवानां विष्ठामनु यो वितस्थे। आत्मन्वान्थ्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवानांच्छ् सुवंविन्द यजमानाय मह्मम्। इरा भूतिः पृथिव्यै रसो मोत्क्रंमीत्॥४४॥ देवाः पितरः पितंरो देवाः। योऽहमंस्मि स सन् यंजे। यस्यांस्मि न तम्नतरेमि। स्वं मं इष्टश् स्वं दत्तम्। स्वं पूर्तश् स्वश् श्रान्तम्। स्वश् हुतम्। तस्यं मेऽग्निरुंपद्रष्टा। वायुरुंपश्चोता। आदित्योऽनुख्याता। द्यौः पिता॥४५॥

पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा भेमी संविक्था मा त्वां हिश्सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भरतमुद्धेरेमनुंषिश्च। अवदानांनि ते प्रत्यवदास्यामि। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। यदंवदानांनि तेऽवद्यन्। विलोमाकांर्षमात्मनः॥४६॥

आज्येन प्रत्यंनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यांयतां पुनेः। अज्यांयो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूरुपाम यज्ञस्यं। शुद्ध स्वष्टिमिद हिवः। मनुना दृष्टां घृतपंदीम्। मित्रावरुणसमीरिताम्। दक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवंद्याम्येकतोमुंखाम्॥४७॥

इडें भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्याँस्ते भिक्षवाणः स्याम। सर्वात्मानः सर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वंस्व। ददंतो मे मा क्षांयि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशां क्रिप्तिंरिस। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पंन्तां मे दिशः॥४८॥

देवींश्च मानुंषिश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां मे कल्पन्ताम्। ऋतवों मे कल्पन्ताम्। सुंवृथ्सरो में कल्पताम्। क्रुप्तिरिस् कल्पंतां मे। आशांनां त्वाऽऽशापा॒लेभ्यः। चृतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यक्षेभ्यः॥४९॥

विधेमं ह्विषां वयम्। भजंतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्ता निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्व। ओषंधीर्जिन्व। द्विपात्पांहि। चतुंष्पादव। दिवो वृष्टिमेरंय। ब्राह्मणानांमिद॰ ह्विः॥५०॥

सोम्यानार् सोमपीथिनाम्। निर्भक्तो ब्राह्मणः। नेहा ब्राह्मणस्यास्ति। समंङ्कां ब्रुहिर्ह्विषां घृतेनं। समादित्यैर्वसृभिः सं म्रुद्धिः। सिमन्द्रेण विश्वेभिर्देविभिरङ्काम्। दिव्यं नभो गच्छत् यथ्स्वाहाँ। इन्द्राणीवांविध्वा भूयासम्। अदितिरिव सुपुत्रा। अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥

उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्। यज्ञस्यं युक्तौ धुर्यावभूताम्। सञ्जानानौ विजंहतामरांतीः। दिवि ज्योतिरजरमा रंभेताम्। दशंते तनुवो यज्ञ यज्ञियाः। ताः प्रीणातु यजंमानो घृतेनं। नारिष्ठयौः प्रशिषमीडंमानः। देवानां दैव्येऽपि यजंमानोऽमृतोऽभूत्। यं वां देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जी भाग शंतऋत्। एतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतम १ हही। अहं देवाना १ सुकृतांमस्मि लोके। ममेदिम्ष हं न मिथुर्भवाति। अहं नांरिष्ठावनं यजामि विद्वान्। यदाँभ्यामिन्द्रो अदंधाद्भाग्धेयम्। अदांरसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् युज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नो विदद्भिभामो अशंस्तिः॥५३॥

मा नो विदद्धृजना द्वेष्या या। ऋष्मं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता स्वीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहां। अमावास्यां सुभगां सुशेवां। धेनुरिव भूयं आप्यायंमाना। सा नो दोहता स्वीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्यांये स्वाहां। अभि स्तृणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिं मा हि सीरमुया शयांना। होतृषदंना हरिताः सुवर्णाः। निष्का इमे यर्जमानस्य ब्रिश्ने॥ ५४॥

अभीत्वंर्ये करोमि क्रमीत्पिताऽऽत्मनं एक्तो मुंखां में दिशोऽध्यंक्षेभ्यो हुविर्गार्हपत्या कल्पयुन्नशंस्तिः सा नों दोहतार सुवीर्यर् सप्त चं॥—————[५]

परिस्तृणीत् परिधत्ताग्निम्। परिहितोऽग्निर्यजंमानं भुनक्तु। अपा रस् ओषंधीना र सुवर्णः। निष्का इमे यजंमानस्य सन्तु कामदुर्घाः। अमुत्रामुष्मिं श्लोके। भूपंते भुवंनपते। महुतो भूतस्यं पते। ब्रह्माणं त्वा वृणीमहे। अहं भूपंतिरहं भुवंनपतिः। अहं महितो भूतस्य पतिः॥५५॥

देवेनं सिवता प्रसूत् आर्त्विज्यं करिष्यामि। देवं सिवतरेतं

त्वां वृणते। बृह्स्पतिं दैव्यं ब्रह्माणम्। तद्हं मनंसे प्र ब्रंवीमि। मनो गायत्रिये। गायत्री त्रिष्टुभै। त्रिष्टुज्जगंत्ये। जगंत्यनुष्टुभै। अनुष्टुक्पुङ्की। पुङ्किः प्रजापंतये॥५६॥

प्रजापंतिर्विश्वेंभ्यो देवभ्यः। विश्वे देवा बृह्स्पतंये। बृह्स्पतिर्ब्रह्मणे। ब्रह्म भूर्भवः सुवंः। बृह्स्पतिर्देवानां ब्रह्मा। अहं मनुष्याणाम्। बृहंस्पते युज्ञं गोपाय। इदं तस्मै हुम्यं करोमि। यो वो देवाश्चरंति ब्रह्मचर्यम्। मेधावी दिक्षु मनसा तप्स्वी॥५७॥

अन्तर्दूतश्चरित मानुंषीषु। चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाँः। घृतप्रतीका भुवंनस्य मध्यैं। मुर्मृज्यमांना महृते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। भूमिंभूत्वा मंहिमानं पुपोष। ततो देवी वंधयते पया स्सि। यज्ञियां यज्ञं वि च यन्ति शं चं। ओषंधीरापं इह शक्वरीश्च। यो मां हृदा मनंसा यश्चं वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन् हृदंयेनेष्णता चं। तस्यैन्द्र वज्रेण शिरंश्छिनद्मि। ऊर्णामृदु प्रथमानः स्योनम्। देवेभ्यो जुष्ट्र सदंनाय ब्र्हिः। सुवर्गे लोके यर्जमान्र हि धेहि। मां नाकंस्य पृष्ठे पंरमे व्योमन्। चर्तुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका व्युनानि वस्ते। साऽऽस्तीर्यमाणा मह्ते सौभंगाय॥५९॥ सा में धुक्ष्व यर्जमानाय कामान्। शिवा चं मे श्ग्मा चैधि। स्योना चं मे सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पर्यस्वती चैधि। इष्मूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्ष्त्रमोजों मे पिन्वस्व। विश्ं पुष्टिं मे पिन्वस्व। आयुंर्न्नाद्यं मे पिन्वस्व। प्रजां पुशून्में पिन्वस्व॥६०॥

अस्मिन् यज्ञ उप भूय इन्नु में। अविक्षोभाय परिधीं देधामि। धर्ता धरुणो धरीयान्। अग्निर्देषा देसि निरितो नुंदाते। विच्छिनिद्यो विधृतीभ्या स्पलान्। जातान्म्रातृंच्यान् ये चं जिन्छ्यमाणाः। विशो यन्नाभ्यां विध्माम्येनान्। अहङ् स्वानांमुत्तमोऽसानि देवाः। विशो यन्ने नुदमांने अरांतिम्। विश्वं पाप्मानममंतिं दुर्मरायुम्॥६१॥

सीदंन्ती देवी सुंकृतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृंती स्वधृंती। प्राणान्मियं धारयतम्। प्रजां मियं धारयतम्। प्रशून्मियं धारयतम्। अयं प्रस्तर उभयंस्य धृतां। धृतां प्रयाजानां मृतानूं याजानां म्। स दाधार समिधो विश्वरूपाः। तस्मिन्थ्युचो अध्या सांदयामि। आ रोह पृथो जुंहु देवयानान्॥६२॥

यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुराणाः। हिरंण्यपक्षाऽजिरा सम्भृताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सुपत्नान्। जातान्त्रातृंव्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। दोहैं युज्ञः सुदुर्घामिव धेनुम्। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधेरे मथ्सपत्नाः। यो मां वाचा मनंसा दुर्मरायुः। हृदाऽरांतीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥

ड्दमंस्य चित्तमधंरं ध्रुवायाः। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधंरे मथ्सपत्नाः। ऋषभोऽसि शाक्करः। घृताचीनाः सूनुः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदेसि सीद। स्योनो में सीद सुषदः पृथिव्याम्। प्रथंयि प्रजयां पृश्भिः सुवर्गे लोके। दिवि सीद पृथिव्यामन्तरिक्षे। अहमुत्तंरो भूयासम्॥६४॥

अधेरे मध्सपत्नाः। इयः स्थाती घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः श्वतधार उथ्सः। मारुतेन शर्मणा दैव्येन। यज्ञोऽसि सर्वतः श्रितः। सर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रेयताम्। श्वतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। प्रजापंतिरसि सर्वतः श्रितः॥६५॥

स्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। श्वतं में सन्त्वाशिषंः।
सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः।
इदिमिन्द्रियम्मृतं वीर्यम्। अनेनेन्द्रांय पृशवोऽचिकिथ्सन्।
तेनं देवा अवतोप माम्। इहेष्मूर्जं यशः सह ओर्जः सनेयम्।
श्वतं मियं श्रयताम्। यत्पृथिवीमचंर्त्तत्प्रविष्टम्॥६६॥

येनासिश्चह्रलुमिन्द्रै प्रजापितिः। इदं तच्छुकं मधुं वाजिनीवत्। येनोपरिष्टादधिनोन्महेन्द्रम्। दिध मां धिनोतु। अयं वेदः पृथिवीमन्विविन्दत्। गृहां स्तीं गहेने गह्वरेषु। स विन्दतु यजमानाय लोकम्। अच्छिद्रं युज्ञं भूरिकर्मा करोतु। अयं युज्ञः समसदद्धविष्मान्। ऋचा साम्ना यजुंषा देवतांभिः॥६७॥

तेनं लोकान्थ्सूर्यंवतो जयेम। इन्द्रंस्य सुख्यमंमृत्त्वमंश्याम्। यो नः कनीय इह कामयांतै। अस्मिन् युज्ञे यजंमानाय मह्मम्। अप तिमेन्द्राग्नी भुवनानुदेताम्। अहं प्रजां वीरवंतीं विदेय। अग्ने वाजजित्। वाजं त्वा सिर्ष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजजितम्॥६८॥

वाज्जित्यायै सं माँजिमी अग्निमंत्रादम्त्राद्यांय। उपंहूतो द्यौः पिता। उप मां द्यौः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींधात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृंथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नींधात्॥६९॥

आयुंषे वर्चसे। जीवात्वे पुण्यांय। मनो ज्योतिंर्जुषतामा-ज्यम्। विच्छिन्नं युज्ञ र सिम्मं देधातु। बृह्स्पितंस्तनुतािम्मं नंः। विश्वे देवा इह मादयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्चािमे। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीचैर्देवा नि वृश्चत॥७०॥

अग्ने यो नोंऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदः। यं चाऽऽहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्स्तानंग्ने सन्दंह। याङ्श्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजजित्। वाजं त्वा ससृवारसम्॥७१॥

वार्जं जिगिवा रसम्। वाजिनं वाज्जितम्। वाज्जित्यायै सम्मांजिमं। अग्निमंत्रादमृत्राद्याय। वेदिर्बुर्हिः शृतर हुविः। इध्मः पंरिधयः सुर्चः। आज्यं यज्ञ ऋचो यजुः। याज्याश्च वषद्वाराः। सं मे सन्नंतयो नमन्ताम्। इध्मुसृत्रहंने हुते॥७२॥

दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्युत्थितः। तेनां सहस्रंकाण्डेन। द्विषन्तः शोचयामिस। द्विषन्मं बहु शोंचतु। ओषंधे मो अह १ शुंचम्। यज्ञ नमंस्ते यज्ञ। नमो नमंश्च ते यज्ञ। शिवेनं मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व॥७३॥

सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यर्ष्ट्रिमनु सन्तिष्ठस्व। उपं ते यज्ञ नमः। उपं ते नमः। उपं ते नमः। त्रिष्फ्लीक्रियमाणानाम्। यो न्यङ्गो अवशिष्यंते। रक्षंसां भाग्धेयम्। आपुस्तत्प्र वहतादितः॥७४॥

उलूखंले मुसंले यच्च शूर्पें। आशिश्लेषं दृषदि यत्कपालें। अवप्रुषों विप्रुषः संयंजािम। विश्वे देवा ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्तिं बह्बीः। अग्नौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सुहुंता जुहोिम। उद्यन्नद्यमित्र महः। सप्रत्नांन्मे अनीनशः। दिवैनान् विद्युतां जिहि। निम्नोचन्नधंरान्कृिध॥७५॥ उद्यन्नद्य वि नों भज। पिता पुत्रेभ्यो यथाँ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य। उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोहृन्नुत्तंरां दिवम्ं। हृद्रोगं ममं सूर्य। हृरिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्। रोपणाकांसु दध्मसि॥७६॥

अथों हारिद्रवेषुं मे। हुरिमाणुं नि देध्मसि। उदंगाद्यमादित्यः। विश्वेन सहसा सह। द्विषन्तुं ममं रन्थयन्। मो अहं द्विष्तो रेधम्। यो नः शपादशंपतः। यश्चे नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मै निम्नुक्रे। सर्वं पापः समूहताम्॥७७॥

यो नंः स्पत्नो यो रणंः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। अवसृष्टः परापत। शरो ब्रह्मंस॰शितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विंश। मैषां कश्चनोच्छिषः॥७८॥

पितः प्रजापंतये तप्स्वी वाचा सौभंगाय पृश्नमें पिन्वस्व दुर्मरा्युं देवयानांनग्नेऽन्तिरिक्षेऽहम्तत्ते भूयासं प्रजापंतिरिस सर्वतः श्रितः प्रविष्टं देवतांभिर्वाज्जितं पृथिवी ह्रंयताम्प्रिराग्नींध्राद्दश्चत सस्वा॰स॰ हुते स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्वेतः कृषि दथ्मस्यूहतामृष्टौ चं॥————[६]

सक्षेदं पंश्य। विधंतिरिदं पंश्य। नाकेदं पंश्य। रमितः पिनेष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो विरेष्ठो अक्षिभिविभाति। अनु द्यावापृथिवी देवपंत्रे। दीक्षाऽसि तपंसो योनिः। तपंऽसि ब्रह्मणो योनिः॥७९॥

ब्रह्मांसि क्षुत्रस्य योनिः। क्षुत्रमंस्यृतस्य योनिः। क्षुतमंसि भूरा रंभे। श्रुद्धां मनंसा। दीक्षां तपंसा। विश्वंस्य भुवंनस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यजमानस्य सन्तु। वातं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे। प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नो मृत्योस्नांयतां पात्व १ हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा ज्रामंशीमिह। इन्द्रं शाक्कर गायतीं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर त्रिष्टुम्ं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर् जर्गतीं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकरानुष्टुम्ं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर पृङ्किं प्रपंद्ये॥८१॥

तान्ते युनज्मि। आऽहं दीक्षामंरुहमृतस्य पत्नींम्। गायत्रेण् छन्दंसा ब्रह्मणा च। ऋतर सत्येऽधायि। सत्यमृतेऽधायि। ऋतं चे मे सत्यं चांभूताम्। ज्योतिरभूवर् सुवंरगमम्। सुवर्गं लोकं नाकंस्य पृष्ठम्। ब्र्ध्नस्यं विष्टपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥

तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तिरिक्षं दीक्षा। तयां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। द्यौर्दीक्षा। तयांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः॥८३॥

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चुन्द्रमां

दीक्षयां दीक्षितः। ययां चन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वरुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वरुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। वाग्दीक्षा। तयां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। ययां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। अन्तरिक्षं त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। दीक्षताम्॥८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। वाक्का दीक्षंमाण्मनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। सामानि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। यजूरंषि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। अहंश्च रात्रिंश्च। कृषिश्च वृष्टिंश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च॥८६॥

आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्च सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षे दक्षंपितृह सींद। देवाना र सुम्नो महते रणांय। स्वास्थ्यस्तनुवा संविंशस्व। पितेवैंधि सूनव आ सुशेवंः। शिवो मां शिवमा विंश। सृत्यं मं आत्मा। श्रद्धा मेऽक्षिंतिः॥८७॥ तपों मे प्रतिष्ठा। स्वितृप्रंस्ता मा दिशों दीक्षयन्तु। स्त्यमंस्मि। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंककृञ्जांतवेदः। आजुह्वांनः सुप्रतींकः पुरस्तांत्। अग्ने स्वां योनिमा सींद साध्या। अस्मिन्थ्स्थस्थे अध्युत्तंरस्मिन्॥८८॥

विश्वं देवा यजंमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। च्रत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। पश्चं पृशुभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। स्प्तप्त स्प्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सखांयः स्प्तपंदा अभूम। सख्यं ते गमेयम्॥८९॥

स्ख्याते मा योषम्। स्ख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते पृथिवी पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्तेऽन्तिरक्षं पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्तेऽन्तिरक्षं पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते दिशः पादः॥९०॥

प्रोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न इष्मूर्जं धुक्ष्व। तेर्जं इन्द्रियम्। ब्रह्मवर्च्समृत्राद्यम्। वि मिमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानां धेनु सुद्धामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबत्। क्षेमो अस्तु नः। इमान्नराः कृणुत् वेदिमेत्यं। वसुंमती स्रुद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥ वर्ष्मन्दिवः। नामां पृथिव्याः। यथाऽयं यजंमानो न रिष्येत्। देवस्यं सिवतुः स्वे। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। तस्यारं सुपूर्णाविध् यो निविष्टो। तयोदिवानामिधं भागधेयम्। अप जन्यं भ्यं नुंद। अपं च्क्राणि वर्तय। गृहर सोमस्य गच्छतम्। न वा उं वेतन्त्रियसे न रिष्यसि। देवार इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः। तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु॥९२॥

यदस्य पारे रजंसः। शुक्रं ज्योतिरजांयत। तन्नः पर्षदित द्विषंः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहाँ। यस्माँद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततों नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीदुषें। यस्माँद्भीषा न्यषंदः। ततों नो अभयं कृधि॥९३॥

प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीढुषें। उद्ग्रंस तिष्ठ प्रति तिष्ठ मारिषः। मेमं यज्ञं यजमानं च रीरिषः। सुव्गें लोके यजमान् हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। यस्मौद्भीषाऽवेपिष्ठाः पुलायिष्ठाः समज्ञौस्थाः। ततो नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीढुषे॥९४॥ य इदमकंः। तस्मै नमंः। तस्मै स्वाहाँ। न वा उंवेतिन्प्रंयसे। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौं। इन्द्रांग्री चेतंनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहंतस्य हुतस्यं च। हुतस्य चाहंतस्य च। अहंतस्य हुतस्यं च। इन्द्रांग्री अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथांम्। मा यजंमानं तमो विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः सोमंमिमं पिबात्। स॰सृष्टमुभयं कृतम्॥९५॥

कृधि मीढुषेऽहृंतस्य च सप्त चं॥\_\_\_\_

[2]

अनागसंस्त्वा वयम्। इन्द्रंण प्रेषिता उपं। वायुष्टं अस्त्व १ शुभूः। मित्रस्ते अस्त्व १ शुभूः। वर्रुणस्ते अस्त्व १ शुभूः। अपाङ्क्षया ऋतंस्य गर्भाः। भुवंनस्य गोपाः १ येनां अतिथयः। पर्वतानां ककुभः प्रयुतों नपातारः। वृशुनेन्द्र १ ह्वयत। घोषेणामीं वा १ श्वातयत॥ ९ ६॥

युक्ताः स्थ् वहंत। देवा ग्रावांण् इन्दुरिन्द्र इत्यंवादिषुः। एन्द्रंमचुच्यवुः पर्मस्याः परावतः। आऽस्माथ्स्थस्यात्। ओरोर्न्तरिक्षात्। आ स्ंभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्चसं म् आस्ंषवुः। समरे रक्षाः स्यविषषुः। अपंहतं ब्रह्मज्यस्यं। वाक्रं त्वा मनेश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणश्चं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च श्रीणीताम्। दक्षंश्चत्वा बलंं च श्रीणीताम्। ओर्जश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज्ञ्रा चं श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा तुनूश्चं श्रीणीताम्। शृतोऽिस शृतं कृतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यिमन्द्रंमाहुर्वरुणं यमाहुः। यं मित्रमाहुर्यमुं स्त्यमाहुः॥९८॥

यो देवानां देवतंमस्तपोजाः। तस्मैं त्वा तेभ्यंस्त्वा। मिया त्यदिन्द्रियं महत्। मिया दक्षो मिया ऋतुंः। मियां धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो वि भातु मे। आकृत्या मनसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। तस्य दोहंमशीमहि॥९९॥

तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भृक्षमंशीमिह। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। मित्रो जनान्त्र स मित्र। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति। य आंविवेश भुवंनानि विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती १षि सचते स षोंड्शी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियंः। इन्द्रो नामं श्रुतो गुणे॥१००॥

प्रते महे विदथे शश्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषो हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतं नयः। हरिभिश्चार् सेचेते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु। हरिवर्पसङ्गिरेः। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्त्वं देवानांमिस। अधिपतिं माम्। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तं मनुष्येषु कुरु॥१०१॥

इन्द्रंश्च समाङ्गर्रणश्च राजां। तौ ते भृक्षं चंक्रतुरग्रं एतम्। तयोरनुं भृक्षं भंक्षयामि। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। प्रजापितिर्विश्वकंमी। तस्य मनो देवं युज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जहितः। अवसानंपतेऽवसानं मे विन्द। नमो रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयने विद्रवंणे॥१०२॥

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोंपायित् त॰ हुंवे। यान्यंपामित्यान्यप्रंतीत्तान्यस्मिं। यमस्यं बुलिना चरामि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परंस्मिन्। तृतीयें लोके अनृणाः स्यांम। ये देवयानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

उदंस्ताम्फ्सीथ्सिवता मित्रो अंर्यमा। सर्वानित्रांन-वधीद्युगेनं। बृहन्तं मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्त्रे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहाऽन्तरिक्षे। बृहति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृह्ता त्वोपंस्तभ्रोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्याय च। अस्मास्वंिघ्रया यूयं दंधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्तै द्रफ्सो यस्तं उदर्षः॥१०५॥

दैव्यः केतुर्विश्वं भुवंनमाविवेशं। स नंः पाह्यरिष्ठ्ये स्वाहाँ। अनुं मा सर्वो यज्ञोऽयमेतु। विश्वे देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियुश्छन्दार्श्स निविदो यजूर्श्ष। अस्य पृथिव्ये यद्यज्ञियम्। प्रजापंतेर्वर्तिनमनुं वर्तस्व। अनुंवीरेरनुं राध्याम् गोभिः। अन्वश्वेरनु सर्वेरु पुष्टेः। अनुं प्रजया-ऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥

देवा नों यज्ञमृंजुधा नंयन्तु। प्रतिक्षत्रे प्रतिं तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रतिं तिष्ठामि गोषुं। प्रतिं प्रजायां प्रतिं तिष्ठामि भव्यैं। विश्वंमन्याऽभिं वावृधे। तद्न्यस्यामधिंश्रितम्। दिवे चं विश्वंभर्मणे। पृथिव्यै चांकरं नमः। अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कांनृष्भो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नेमा विश्वा भुवना। स्कन्नो युज्ञः प्र जनयतु। अस्कानजीनि प्राजीनि। आ स्कन्नाञ्जीयते वृषौ। स्कन्नात्प्र जीनिषीमिह। ये देवा येषामिदं भागधेयं बभूवं। येषां प्रयाजा उतानूंयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठेभ्यो वर्रुणराजभ्यः। अग्निहीतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। उत त्या नो दिवां मृतिः॥१०८॥

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप

स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांम्स्मद्रपंः। अप स्निधंः। शम्भिर्म्निर्मिस्करत्। शन्नंस्तपतु सूर्यः। शं वातों वात्वरुपाः॥१०९॥

अप स्निधंः। तदित्पदं न विचिकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंरप्येतिं जीवान्। त्रिवृद्यद्भवंनस्य रथवृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपीषते। विश्वांनि विदुषे भर। अर्ङ्गमाय जग्मेवे। अपश्चाद्द्यवने नरें। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रोऽपात्। तस्यं त इन्द्विन्द्रंपीतस्य मधुंमतः। उपहृतस्योपंहृतो भक्षयामि॥११०॥

उद्रुष इंन्द्रियेण गा मृतिरंरुपा अंगात्रीणिं च॥-----[१०]

ब्रह्मं प्रतिष्ठा मनंसो ब्रह्मं वाचः। ब्रह्मं युज्ञानाः हिविषामाज्यंस्य। अतिरिक्तं कर्मणो यचं हीनम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्। आश्रांवितमृत्याश्रांवितम्। वषंद्वृतमृत्यनूंकं च युज्ञे। अतिरिक्तं कर्मणो यचं हीनम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्॥१११॥

यद्वो देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतं देवहेर्डनम्। अरायो अस्मा अभिदुंच्छुनायतें। अन्यत्रास्मन्मंरुतस्तिन्निधे-तन। तृतं म् आपस्तदुं तायते पुनः। स्वादिष्ठा धीतिरुचथांय शस्यते। अय संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहांकृतस्य समृतृण्णुतर्भुवः। उद्वयं तमस्यिर्परि। उदुत्यं चित्रम्॥११२॥

ड्मं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासि प्रजांपते। इमं जीवेभ्यः पिरिधिं दंधामि। मैषान्नुंगादपंरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीः। तिरो मृत्युं दंधतां पर्वतेन। इष्टेभ्यः स्वाहा वष्डिनिष्टेभ्यः स्वाहां। भेष्जं दुरिष्टौ स्वाहा निष्कृत्यै स्वाहां। दौरांध्यै स्वाहा दैवींभ्यस्तनूभ्यः स्वाहां॥११३॥

ऋद्धै स्वाह्य समृद्धै स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयांमहे। ततों नो अभयं कृषि। मघंवञ्छुग्धि तव तन्नं ऊतयेँ। वि द्विषो वि मृधो जिहि। स्वस्तिदा विशस्पतिः। वृत्रहा वि मृधो वृशी। वृषेन्द्रः पुर एतु नः। स्वस्तिदा अभयङ्करः। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्॥११४॥

आप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। अनौज्ञातं यदाज्ञांतम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथुं। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व॰ हि वेत्थं यथात्थम्। पुरुषसम्मितो यज्ञः। यज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व॰ हि वेत्थं यथात्थम्। यत्पांकत्रा मनसा दीनदंक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तासः। अग्निष्टद्धोतौ क्रतुविद्विजानन्। यजिष्ठो देवा॰ ऋतुशो यंजाति॥११५॥

देवाङ्श्चित्रं तुनूभ्यः स्वाहोनं पुर्रुषसिम्मितोऽग्ने तदंस्य कल्पय पर्श्वं च॥———[११]

यद्वेवा देव्हेडंनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्या-स्तस्मांन्मा मुश्चत। ऋतस्यतेन् मामुत। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचाऽनृंतमूदिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुश्चतु। दुरिता यानिं चकृम। करोतु मामनेनसम्॥११६॥

ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन् त्वः संरस्वति। ऋतान्मां मुञ्चताः हंसः। यद्न्यकृतमारिम। सृजात्शः सादुत वां जामिशः सात्। ज्यायंसः शः सादुत वा कनीयसः। अनौज्ञातं देवकृतं यदेनंः। तस्मात्त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि। यद्वाचा यन्मनंसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवद्धांम्॥११७॥

शिश्त्रैर्यदर्नृतं चकुमा व्यम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यद्धस्ताम्यां चकर् किल्बिषाणि। अक्षाणां व्रमुम्पिजिन्नेमानः। दूरेप्श्या चं राष्ट्रभृचं। तान्यंपस्रसावनुंदत्तामृणानि। अदींव्यत्रृणं यदहं चकारं। यद्वादांस्यन्थ्सञ्ज्ञगारा जनेम्यः। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मयिं माता गर्भे स्ति॥११८॥

एनश्चकार् यत्पता। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदां पिपेषं मातरं पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहि स्सितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनृणो भंवामि। यदन्तिरक्षं पृथिवीमृत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहि स्मिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदाशसां निशसा यत्पंराशसां॥११९॥

यदेनश्चकृमा नूतेनं यत्पुंराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनसः।

अति कामामि दुर्ति यदेनः। जहांमि रिप्रं पर्मे स्थस्थै। यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः। तमा रोहामि सुकृतां नु लोकम्। त्रिते देवा अमृजतैतदेनः। त्रित एतन्मनुष्येषु मामृजे। ततो मा यदि किश्चिदानशे। अग्निर्मा तस्मादेनसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानि चकुम। क्रोतु मामनेनसम्। दिवि जाता अफ्सु जाताः। या जाता ओषंधीभ्यः। अथो या अंग्रिजा आपंः। ता नेः शुन्धन्तु शुन्धंनीः। यदापो नक्तं दुरितं चर्राम। यद्वा दिवा नूर्तनं यत्पुराणम्। हिरंण्यवर्णास्तत् उत्पुनीत नः। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नो अग्रे स त्वन्नो अग्रे। त्वमंग्रे अयासिं॥१२१॥

अनेनसंमधीवज्ञारं स्ति पंराशसांऽऽनशंंऽग्निर्मा तस्मादेनंसः पुनीत नुस्नीणिं च (यहें वा देवां ऋतेनं सजातश्र्रसाद्यद्वाचा यद्धस्तांभ्यामदीं व्यं यन्मियं माता यदां पिपेष यदन्तिरक्षं यदाशसाऽतिं क्रामामि त्रिते देवा दिवि जाता अपस् जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वन्नों अग्रे स त्वन्नों अग्रे त्वमंग्ने अयासिं। )॥——[१२]

यत्ते ग्राव्णां चिच्छिद्ः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गांनि स्विधिता परूरंषि। तथ्मन्ध्रथ्स्वाज्येनोत वर्धयस्व। अनागसो अधिमध्सङ्क्षयेम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युंतो अचुंच्यवः। नरो यत्ते दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त् आप्यांयतां तत्ते। निष्ट्यांयतां देव सोम। यत्ते त्वचं बिभिदुर्यच् योनिम्। यदास्थानात्प्रच्युंतो वेनंसि त्मनां॥१२२॥

त्वया तथ्सोम गुप्तमंस्तु नः। सा नः सुन्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीरं पर्यसा समेत्यं। अन्यौन्यो भवति वर्णो अस्य। तस्मिन्वयमुपंहूतास्तवं स्मः। आ नो भज् सदंसि विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीद्गिरं आवृणानः। अनांगास्तनुवो वावृधानः। आ नो रूपं वहतु जार्यमानः॥१२३॥

उपं क्षरन्ति जुह्नों घृतेनं। प्रियाण्यङ्गांनि तवं वर्धयंन्तीः। तस्मैं ते सोम् नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्थसुकृते ह्वंयस्व। सं प्राणापानाभ्या सम् चक्षुंषा त्वम्। सः श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त आस्थित शम् तत्ते अस्तु। जानीतान्नेः सङ्गनेन पथीनाम्। एतं जानीतात्पर्मे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमंस्य॥१२४॥

यदागच्छाँतपथिभिर्देवयानैंः। इष्टापूर्ते कृंणुतादाविरंस्मै। अरिष्टो राजन्नगदः परेहि। नमंस्ते अस्तु चक्षंसे रघूयते। नाकमारोह सह यजमानेन। सूर्यं गच्छतात्पर्मे व्योमन्। अभूँद्देवः संविता वन्द्योनु नंः। इदानीमहं उपवाच्यो नृभिः। वि यो रत्ना भर्जति मानवभ्यः। श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दर्धत्। उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा शतापाष्ठा घविषा परिं णो वृणक्तु। आप्यांयस्व सन्ते॥१२५॥

त्मना जायंमानोऽस्य दधत्पश्चं च॥

·[٤3]

यिद्दिश्चे मनंसा यचं वाचा। यद्वाँ प्राणैश्चक्षुंषा यच् श्रोत्रेण। यद्वेतंसा मिथुनेनाप्यात्मनां। अद्भो लोका देधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोचनीः। आपो विमोक्रीमिये तेजं इन्द्रियम्। यद्वचा साम्ना यजुंषा। पृशूनां चर्मन् ह्विषां दिदीक्षे। यच्छन्दोंभिरोषंधीभिर्वन्स्पतौं। अद्भो लोका देधिरे तेजं इन्द्रियम्॥१२६॥

शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिय तेर्जं इन्द्रियम्। येन् ब्रह्म येनं क्षुत्रम्। येनेंन्द्राग्नी प्रजापंतिः सोमो वर्रुणो येन् राजां। विश्वं देवा ऋषंयो येनं प्राणाः। अद्भो लोका दंधिरे तेर्जं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिये तेर्जं इन्द्रियम्। अपां पुष्पंमस्योषंधीना रूपंः। सोमंस्य प्रियं धामं॥१२७॥

अग्नेः प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमस्य प्रियं धामं। इन्द्रंस्य प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमस्य प्रियं धामं। विश्वेषां देवानां प्रियतंम १ ह्विः स्वाहां। वय १ सोम व्रते तवं। मनंस्तुनूषु पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमहि॥१२८॥

देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। कृव्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। देवांस इह मादयध्वम्। सोम्यांस इह मादयध्वम्। कव्यांस इह मादयध्वम्। अनन्तिरताः पितरंः सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युर्मृतं न आगन्। वैवस्वतो नो अभेयं कृणोतु। पुणं वनस्पतेरिव॥१२९॥

अभि नंः शीयता १ र्यिः। सर्चतां नः शचीपितः। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थांम्। यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजा १ रीरिषो मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसानमार्गन्म। यद्गोजिद्धंनजिदंश्वजिद्यत्। पृणं वनस्पतेरिव। अभि नंः शीयता १ र्यिः। सर्चतां नः शचीपितिः॥१३०॥

वनस्पतांबुद्धो लोका दंधिरे तेर्ज इन्द्रियं धार्माशीमहीबाभिनः शीयता र्रियरेर्कं च॥ [१४]

सर्वान् यद्विष्यंण्णेन् वि वै याः पुरस्ताद्देवां देवेषु परिस्तृणीत् सक्षेदं यदस्य पारेंऽनागस् उदंस्ताम्प्रसीद्वह्मं प्रतिष्ठा यद्देवा यत्ते ग्राव्ण्णा यद्दिंदीक्षे चतुंर्दश॥१४॥ सर्वान्भूतिमेव यामेवाप्स्वाहुंतिं ब्रतानां पर्णवल्कः सोम्यानांमस्मिन् यज्ञेऽग्रे यो नो ज्योग्जीवाः प्रोरंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हंपत्यस्त्रिष्शाद्तंत्तरशतम्॥१३०॥ सर्वाञ्छचीपतिः॥

# हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ अष्टमः प्रश्नः॥

### ॥तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्ग्रहण्येष्ट्यां यजते। इमाञ्चनता सङ्गिह्णानीति। द्वादेशारत्नी रशना भवति। द्वादेश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावं रुन्धे। मौञ्जी भवति। ऊर्ग्वे मुञ्जाः। ऊर्ज-मेवावं रुन्धे। चित्रा नक्षेत्रं भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥

यदंश्वमेधः समृद्धौ। पुण्यंनाम देवयजंनम्ध्यवंस्यति। पुण्यांमेव तेनं कीर्तिम्भि जंयति। अपंदातीनृत्विजंः समावंहन्त्या सुंब्रह्मण्यायाः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्यै। केश्श्मश्रु वंपते। नुखानि नि कृन्तते। द्तो धांवते। स्नातिं। अहंतं वासः परिंधत्ते। पाप्मनोऽपंहत्यै। वाचं यत्वोपं वसति। सुवर्गस्यं लोकस्य गुप्त्यै। रात्रिं जाग्रयंन्त आसते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्यै॥२॥

कर्म धत्ते पश्च च॥———[१]

चतुंष्टय्य आपो भवन्ति। चतुंः शफो वा अर्श्वः प्राजापृत्यः समृंद्धौ। ता दिग्भ्यः समाभृंता भवन्ति। दिक्षु वा आपंः। अत्रं वा आपंः। अत्रो वा अत्रं जायते। यदेवाद्योऽत्रं जायते। तदवं रुन्थे। तासुं ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति॥३॥

चतुः शरावो भवति। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति। उभयतोरुक्मौ भवतः। उभयतं पुवास्मिन्नुचं दधाति। उद्धंरित शृत्तवायं। सूर्पिष्वांन्भवति मेध्यत्वायं। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। चत्वारि हिरंण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योतीङ्ष्यवं रुन्धे॥४॥

यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मिन्नश्नान्युंनत्ति। प्रजापंतिर्वा ओंद्नः। रेत् आज्यम्। यदाज्यं रश्नान्युनत्ति। प्रजापंतिमेव रेतंसा समर्थयति। दुर्भमयी रश्ना भवति। बहु वा एष कुंचरों मेध्यमुपंगच्छति। यदश्वः। पवित्रं वै दर्भाः॥५॥

यहंर्भ्मयीं रश्ना भवंति। पुनात्येवैनम्ं। पूतमेंनं मेध्यमा लेभते। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य मिह्मोदंक्रामत्। स महर्त्विजः प्राविंशत्। तन्महर्त्विजां महर्त्विक्तम्। यन्महर्त्विजः प्राश्वनितं। मिह्मानंमेवास्मिन्तद्दंधित। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य रेत् उदंक्रामत्। तथ्सुवर्ण्ष् हिरंण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण्ष् हिरंण्यं ददांति। रेतं एव तद्दंधाति। ओद्देन दंदाति। रेतो वा ओद्देनः। रेतो हिरंण्यम्। रेतंसैवास्मिन्नेतो दधाति॥६॥

दुधाति रुन्धे दुर्भा अभवृथ्यद चं॥———[२]

यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापंतयेऽप्रंतिप्रोच्याश्वं मेध्यं ब्राति। आ देवताभ्यो वृश्यते। पापीयान्भवति। यः प्रतिप्रोच्यं। न देवताभ्य आवृश्यते। वसीयान्भवति। यदाहं। ब्रह्मन्नश्वं मेध्यं भन्थस्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यास्मितिं। ब्रह्म वै ब्रह्मा। ब्रह्मण एव देवेभ्यः प्रजापंतये प्रतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बध्नाति॥७॥

न देवताँभ्य आ वृंश्च्यते। वसीयान्भवति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इति रश्नामादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्याह यत्यै। व्यृंद्धं वा एतद्यज्ञस्यं। यदंयुजुष्केण क्रियतें। इमामंगृभ्णत्रश्नामृतस्ये-त्यिं वदित् यजुंष्कृत्यै। यज्ञस्य समृंद्धे॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारत्नी रश्ना कंर्त्व्या(३) त्रयोदशार्त्नी(३)-रितिं। ऋष्मो वा एष ऋंतूनाम्। यथ्संवथ्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासो विष्टपम्। ऋष्म एष यज्ञानाम्। यदंश्वमेधः। यथा वा ऋष्मस्यं विष्टपम्। एवमेतस्यं विष्टपम्। त्रयोदशमंरत्निः रंश्नायांमुपा दंधाति॥९॥

यथंर्षभस्यं विष्टपर् सङ्स्करोतिं। ताहगेव तत्। पूर्व आयुंषि विदथेषु क्वयेत्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। तयां देवाः सुतमा बंभूवुरित्यांह। भूतिंमेवोपावंति। ऋतस्य सामन्थ्यरमारपन्तीत्यांह। सत्यं वा ऋतम्। सत्येनैवैनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्यांह॥१०॥

तस्मांदश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवंनमुसीत्यांह। भूमानंमेवोपैति। युन्ताऽसीत्यांह। यन्तारंमेवेनं करोति। धूर्ताऽसीत्यांह। धूर्तारंमेवेनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वानरमित्यांह। अग्नावेवेनं वैश्वानरे जुंहोति। सप्रथसमित्यांह॥११॥

प्रजयैवेनं पृश्निः प्रथयित। स्वाहांकृत इत्यांह। होमं एवास्यैषः। पृथिव्यामित्यांह। अस्यामेवेनं प्रतिष्ठापयित। यन्ता राड्यन्ताऽसि यमंनो धर्ताऽसि ध्रुण इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। कृष्ये त्वा क्षेमांय त्वा रय्ये त्वा पोषांय त्वेत्यांह। आशिषमेवेतामा शांस्ते। स्वगा त्वां देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवेनई स्वगा करोति। स्वाहां त्वा प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। यस्यां एव देवतांया आलभ्यतें। तयैवेन समर्धयित॥१२॥

बुध्राति समृद्धा उपादंधात्यसीत्यांह् सप्रथस्मित्यांह देवेभ्य इत्यांह् पश्चं च॥———[३]

यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्ताः त्रयित। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पृश्चान्नंयित। विष्वंश्चमेवास्माः त्पाप्मानं विवृंहतः। यो अर्वन्तं जिघारं सित् तम्भ्यंमीति वर्रुण इति श्वानं चतुरक्षं प्रसौति। पूरो मर्तः पुरः श्वेति शुनंश्चतुरक्षस्य प्रहंन्ति। श्वेव व पाप्मा भ्रातृं व्यः। पाप्मानं मेवास्य भ्रातृं व्यः हन्ति। सैभुकं मुसंलं भवति॥१३॥

कर्मकर्मेवास्में साधयति। पौ्ड्श्वलेयो हंन्ति। पुड्श्वल्वां वै देवाः शुचं न्यंदधुः। शुचैवास्य शुचर् हिन्ति। पाप्मा वा एतमींपस्तीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन् यजंत् इति। अश्वंस्याधस्पदमुपास्यिति। वृज्जी वा अश्वः प्राजापत्यः। वञ्जेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यमवंक्रामित। दक्षिणाऽपं प्रावयति॥१४॥

पाप्मानंमेवास्माच्छमंलमपं प्रावयति। ऐषीक उंदूहो भंवति। आयुर्वा इषीकाः। आयुरेवास्मिन्दधित। अमृतं वा इषीकाः। अमृतंमेवास्मिन्दधित। वेतस्शाखोपसम्बद्धा भवति। अपसुयोनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेतसः। स्वादेवैनं योनेर्निर्मिमीते। पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभ्युदूंहित। पुरस्तांदेवास्मिन्प्रतीच्यमृतं दधाति। अहं च त्वं चं वृत्रहित्रितिं ब्रह्मा यजमानस्य हस्तं गृह्णाति। ब्रह्मक्षत्रे एव सन्दंधाति। अभिक्रत्वेन्द्र भूरध्जमित्रत्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजित्यै॥१५॥

भुवति ष्रावयति मिमीते पश्चं च॥———[४]

चृत्वारं ऋत्विजः समृक्षिन्ति। आभ्य एवैनं चत्सभ्यों दिग्भ्योंऽभि समीरयन्ति। शृतेनं राजपुत्रैः सहाध्वर्यः। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टम्प्रोक्षंति। अनेनाश्वेन् मेध्येनेष्ट्वा। अयश्र राजां वृत्रं वध्यादिति। राज्यं वा अध्वर्यः। क्षत्रश्र राजपुत्रः। राज्येनैवास्मिन्क्षत्रं दंधाति। शृतेनां राजभिरुग्रैः सह ब्रह्मा॥१६॥

दक्षिणत उदङ्गिष्ठन्त्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्यंनेष्ट्वा। अयश् राजांप्रतिधृष्योंऽस्त्वितं। बलं वे ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। बलंनेवास्मिन्बलं दधाति। शतेनं सूतग्रामणिभिः सह होतां। पृश्चात्प्राङ्गिष्ठन्त्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येनेष्ट्वा। अयश् राजाऽस्ये विशः॥१७॥

बहुग्वे बंहुश्वायें बहुजाविकायें। बहुव्रीहियवायें बहुमाषितलायें। बहुहिरण्यायें बहुहस्तिकाये। बहुदास-पूरुषायें रियमत्ये पृष्टिंमत्ये। बहुरायस्पोषाये राजास्त्विति। भूमा वे होतां। भूमा सूंतग्रामण्यः। भूम्नेवास्मिन्भूमानं दधाति। श्तेनं क्षत्तसङ्गृहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तर्तो देक्षिणा तिष्ठन्त्रोक्षंति॥१८॥

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अय राजा सर्वमायुरेत्विति। आयुर्वा उद्गाता। आयुंः क्षत्तसङ्ग्रहीतारंः। आयुंषैवास्मिन्नायुंदि-धाति। श्तरशंतं भवन्ति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। चृतुः श्ता भंवन्ति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति॥१९॥

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दिति। एवं वा एतदश्वस्य स्कन्दित। यित्रक्तमनांलब्धमुध्मृजन्तिं। यथ्स्तोक्यां अन्वाहं। सर्वहुतंमेवैनंं करोत्यस्कन्दाय। अस्केन्न्र हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। सहस्रमन्वांह। सहस्रंसिम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजिंत्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवं रुन्धीत। अपेरिमिता अन्वांह। अपेरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री। स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्या आपेः। ता अव रुन्धे। अस्यां जुंहोति। इयं वा अग्निवैश्वानरः॥२१॥

अस्यामेवेनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापंतिः। स्तोक्यांसु वा अहमंश्वमेधः सङ्स्थांपयामि। तेन ततः सङ्स्थितेन चरामीतिं। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुहोति। सोमाय स्वाहेत्यांह। सोमायेवेनं जुहोति। स्वित्रे स्वाहेत्यांह। स्वित्र एवैनं जुहोति॥२२॥

सरंस्वत्ये स्वाहेत्यांह। सरंस्वत्या एवैनं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण एवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहेत्यांह। बृह्स्पतंय एवैनं जुहोति। अपां मोदांय स्वाहेत्यांह। अन्ध्र एवैनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं एवैनं जुहोति॥२३॥

मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवैनं जुहोति। वर्रणाय स्वाहेत्यांह। वर्रणायैवैनं जुहोति। एताभ्यं एवैनं देवताभ्यो जुहोति। दशंदश सम्पादं जुहोति। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। प्र वा एषौं- उस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहुंतीर्जुहोतिं। पुनंः

पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। पुता ह वाव सौं ऽश्वमेधस्य सङ्स्थितिमुवाचास्कंन्दाय। अस्कंन्नु हि तत्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दंति॥२४॥ अभिजित्ये वैश्वान्यः संवित्र पृवेनं जुहोति वायवं पृवेनं जुहोति व्यवते पद चं॥—[६]

प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीतिं पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गछन्प्रोक्षंति।
प्रजापंतिर्वे देवानांमन्नादो वीर्यावान्। अन्नाद्यंमेवास्मिन्वीर्यं
दधाति। तस्मादश्वः पश्नामंन्नादो वीर्यावत्तमः। इन्द्राग्निभ्यां
त्वेतिं दक्षिणतः। इन्द्राग्नी व देवानामोजिष्ठौ बिलेष्ठौ।
ओजं प्रवास्मिन्बलं दधाति। तस्मादश्वः पश्नामोजिष्ठो
बिलेष्ठः। वायवे त्वेतिं पृश्चात्। वायुर्वे देवानांमाशः
सारसारितंमः॥२५॥

ज्वमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामाशुः सारसारितंमः। विश्वेभ्यस्त्वा देवभ्य इत्यंत्तर्तः। विश्वे वै देवा देवानां यशस्वितंमाः। यशं एवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनां यशस्वितंमः। देवभ्यस्त्वेत्यधस्तात्। देवा वै देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युपिरेष्टात्। सर्वे वै देवास्त्विषिमन्तो हर्स्वनंः। त्विषिमेवास्मिन् हरों दधाति। तस्मादश्वः पशूनां त्विषिमान् हर्स्वितंमः। दिवे त्वाऽन्तिरक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेत्यांह। पृभ्य पृवैनं लोकभ्यः प्रोक्षंति। स्ते त्वाऽसंते त्वाऽद्धस्त्वौषंधीभ्यस्त्वा विश्वभ्यस्त्वा भूतेभ्य इत्यांह। तस्मांदश्वमेधयाजिन् सर्माणि भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यत्प्रांजापृत्योऽश्वंः। अथ् कस्मांदेनम्न्याभ्यों देवताभ्योऽपि प्रोक्षतीतिं। अश्वे वै सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः। तं यद्विश्वभ्यस्त्वा भूतेभ्य इतिं प्रोक्षतिं। देवतां पृवास्मिन्नन्वा यांतयित। तस्मादश्वे सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः॥२७॥

सार्सारितमोऽपंचिततमः प्राजापत्योऽश्वः पश्चं च॥------[७]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यत्प्रोक्षित्मनांलब्धमुथ्मृजन्ति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। सूर्वहुतंमेवेनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कन्नु हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। ईङ्काराय स्वाहेङ्कृंताय स्वाहेत्यांह। एतानि वा अंश्वचिर्तानिं। चरितैरेवैन् समर्धयति॥२८॥

तदांहुः। अनांहुतयो वा अश्वचिर्तानि। नैता होंत्व्यां इति। अथो खल्वांहुः। होत्व्यां एव। अत्र वावैवं विद्वानश्वमेधः सङ्स्थांपयति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। तस्मांद्वोत्व्यां इतिं। बृहि्धां वा एनमेतदायतंनाद्दधाति। भ्रातृंव्यमस्मै जनयति॥२९॥

यस्यांनायत्ने ऽन्यत्राग्नेराहुंतीर्जुहोतिं। सावित्रिया इष्ट्याः

पुरस्तांध्स्वष्टकृतः। आहुवनीयेंऽश्वचिर्तानिं जुहोति। आयतंन पुवास्याहुंतीर्जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। तदांहुः। युज्ञमुखेयंज्ञमुखे होत्व्याः। युज्ञस्य क्रृष्ट्यैं। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्या इति। अथो खल्वांहुः॥३०॥

यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभियंजंमानं व्यंध्येत्। अवं सुवर्गाल्लोकात्पंद्येत। पापीयान्थ्स्यादितिं। स्कृदेव होत्व्याः। न यजंमानं पृशुभिर्व्यर्धयति। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। न पापीयान्भवति। अष्टाचंत्वारि शतमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारि श्रवस्य जगंती। जाग्तोऽश्वंः प्राजापृत्यः समृंद्धौ। एक्मितिरिक्तं जुहोति। तस्मादेकंः प्रजास्वर्धुकः॥३१॥

अ့र्ध्यति जन्यति खल्बांहुर्जगंती त्रीणिं च॥————[८]

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यांह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिददाति। अश्वीऽिस हयोऽसीत्यांह। शास्त्येवेनंमेतत्। तस्मांच्छिष्टाः प्रजा जांयन्ते। अत्यो-ऽसीत्यांह। तस्मादश्वः सर्वोन्पशूनत्येति। तस्मादश्वः सर्वेषां पशूना श्रेष्ठां गच्छति॥३२॥

प्र यशः श्रेष्ठांमाप्नोति। य एवं वेदं। नरोऽस्यवांऽसि सप्तिरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। ययुर्नामाऽसीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियं नांमधेयम्। प्रियेणैवैनं नाम्धेयंनाभि वंदति। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयंते। मित्रमेव भंवतः॥३३॥

आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवेनं गमयित। अग्नये स्वाहा स्वाहेंन्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्व पृव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। भूरंसि भुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्युथ्मृंजित सर्वत्वायं। देवां आशापाला पृतं देवेभ्योऽश्वं मेधांय प्रोक्षितं गोपायतेत्यांह। शृतं वे तत्प्यां राजपुत्रा देवा आशापालाः। तेभ्यं पृवैनं परिं ददाति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमृंक्तः परां परावतं गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रितः स्वाहेह रमितः स्वाहेह रमितः स्वाहेह रानेतः स्वाहेह रमितः स्वाहेतं चतृषु पृथ्मु जुंहोति॥३४॥

पुता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिरेवैनं बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनमा गंच्छति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनं न जहाति। राष्ट्रं वा अश्वमेधः। राष्ट्रे खलु वा एते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वं मेध्यू रक्षंन्ति। तेषां य उद्दचं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं गंच्छन्ति। अथु य उद्दचं न गच्छंन्ति॥३५॥

राष्ट्रादेव ते व्यवंच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिंच्यते। योऽबुलौऽश्वमेधेन यजंते। यदमित्रा अश्वं विन्देरन्ं। हुन्येतांस्य यज्ञः। चृतुः शृता रक्षिन्ति। यज्ञस्याघांताय। अथान्यमानीय प्रोक्षेयुः। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः॥३६॥ गुच्छुति भुवतः पृथ्स जुहोति न गच्छंन्ति नवं च॥-----[९]

प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं यजेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। सप्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स एतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्थ। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे॥३७॥

सप्त जुंहोति। सप्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहम्व दीक्षामवं रुन्धे। त्रीणि वैश्वदेवानि जुहोति। चृत्वार्यौद्गहणानि। सप्त सम्पंद्यन्ते। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे॥३८॥

एकंविश्शतिं वैश्वदेवानिं जुहोति। एकंविश्शतिर्वे देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। तद्दैव्यं क्षत्रम्। सा श्रीः। तद्वध्नस्यं विष्टपम्। तथ्स्वाराज्यमुच्यते॥३९॥

त्रिष्शतंमौद्गहुणानिं जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्ये। एषां लोकानां क्रुस्ये। अप वा एतस्मौत्प्राणाः क्रांमन्ति॥४०॥

यो दीक्षामंतिरेचयंति। सप्ताहं प्रचंरन्ति। सप्त वै

शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्थे। पूर्णाहुतिमंत्तमां जुंहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः। सर्वमेवाप्नोति। अथो इयं वै पूर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति॥४१॥

रुन्धे प्राणान्दीक्षामवं रुन्ध उच्यते क्रामन्ति तिष्ठति॥————[१०]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैश्वदेवान्येवोदंयच्छन्। यद्वैश्वदेवानि जुहोति। यज्ञस्योद्यंत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहाँ। स्वाहा-ऽधीतं मनसे स्वाहाँ। स्वाहा मनः प्रजापंतये स्वाहाँ। काय् स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै स्वाहेति प्राजापृत्ये मुख्ये भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवैनं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥

अदित्ये स्वाहाऽदित्ये मृह्यै स्वाहाऽदित्ये सुमृहीकाये स्वाहेत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या पृवैनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सरंस्वत्ये स्वाहा सरंस्वत्ये वृह्त्यै स्वाहा सरंस्वत्ये पावकाये स्वाहेत्यांह। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवेनमुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां पूष्णे न्रन्धिषाय स्वाहेत्यांह। पृश्वो वे पूषा। पृश्विनेमुद्यंच्छते। त्वष्टे स्वाहा त्वष्टे तुरीपांय स्वाहा त्वष्टे पुरुरूपांय स्वाहेत्यांह। त्वष्टा वे पंशूनां मिथुनाना रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। अथों रूपैरेवेनमुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाहा विष्णंवे निखुर्यपाय स्वाहा विष्णंवे निखुर्यपाय स्वाहा विष्णंवे निभूयपाय स्वाहेत्यांह। युज्ञो वे विष्णंः।

यज्ञायैवैनमुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिम्त्मां जुंहोति। प्रत्युत्तंब्ध्यै सयत्वायं॥४३॥

युच्छुते पुरुरूपांय स्वाहेत्यांहाष्टी चं॥-----[११]

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातिर्नवंपति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रांतः सवनम्। प्रातः सवनादेवैनं गायित्रयाश्छन्दसो-ऽिं निर्मिमीते। अथौ प्रातः सवनमेव तेनौऽऽप्रोति। गायत्रीं छन्दंः। सवित्रे प्रंसवित्र एकांदशकपालं मध्यन्दिने। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभं माध्यं दिन् सवंनम्। माध्यं दिनादेवेन् सवंनात्रिष्टुभृश्छन्दसोऽिं निर्मिमीते॥४४॥

अथो माध्यं दिनमेव सर्वनं तेनांऽऽप्नोति। त्रिष्टुमं छन्दं। स्वित्र आंसवित्रे द्वादंशकपालमपराह्ने। द्वादंशाक्षरा जगती। जागतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनादेवैनं जगत्याश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथो तृतीयसवनमेव तेनांऽऽप्नोति। जगतीं छन्दं। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतं गन्तोः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमितः स्वाहेत चतंस्र आहंतीर्जुहोति॥४५॥

चर्तस्रो दिशः। दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति। आश्वंत्थो वृजो भवति। प्रजापंतिर्देवेभ्यो निलायत। अश्वां रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थो वृजो भवंति। स्व पृवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥

त्रिष्टुभुष्कुन्द्सोऽधि निर्मिमीते जुहोति नवं च॥————[१२]

आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयतामित्यांह। ब्राह्मण एव ब्रह्मवर्च्सं दंधाति। तस्मौत्पुरा ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्स्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे रांज्न्यं इष्व्यः शूरों महार्थो जांयतामित्यांह। राज्न्यं एव शौर्यं मंहिमानं दधाति। तस्मौत्पुरा रांज्न्यं इष्व्यः शूरों महार्थोऽजायत। दोग्ध्रीं धेनुरित्यांह। धेन्वामेव पयो दधाति। तस्मौत्पुरा दोग्ध्रीं धेनुरंजायत। वोढांऽनङ्वानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मांत्पुरा वोढांऽनुङ्वानंजायत। आशुः सिप्तिरत्यांह। अश्वं एव जवं दंधाति। तस्मांत्पुरा-ऽऽशुरश्वोंऽजायत। पुरेन्धियोंषेत्यांह। योषित्येव रूपं दंधाति। तस्माथ्स्री युवतिः प्रिया भावुंका। जिष्णू रंथेष्ठा इत्यांह। आ ह वै तत्रं जिष्णू रंथेष्ठा जांयते॥४८॥

यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। स्भेयो युवेत्यांह। यो वै पूँववयसी। स स्भेयो युवा। तस्माद्युवा पुमान्त्रियो भावुंकः। आऽस्य यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ हु वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयते। यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। निकामेनिंकामे नः पर्जन्यो वर्षित्वत्यांह। निकामेनिंकामे हु वै तत्रं पर्जन्यों वर्षित। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। फिलन्यों न ओषंधयः पच्यन्तामित्यांह। फिलन्यों हु वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। योगुक्षेमो नंः कल्पतामित्यांह। कल्पंते हु वै

तत्रं प्रजाभ्यो योगक्षेमः। यत्रैतेनं यज्ञेन् यर्जन्ते॥४९॥
अनुङ्गानित्यांह जायते वर्षित सुप्त सं॥———[१३]

प्रजापंतिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्नेश्वमेधमंधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यदेश्वमेधः। अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं एतानंत्रहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानंप्रीणात्। यदंत्रहोमां जुहोति॥५०॥

देवानेव तैर्यजंमानः प्रीणाति। आज्यंन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्यंन जुहोतिं। अग्निमेव तत्प्रीणाति। मधुंना जुहोति। महत्यै वा एतद्देवतांयै रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुंना जुहोतिं॥५१॥

मह्तीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोतिं। वसूनेव तत्प्रीणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकेर्जुहोति॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रीणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा एतद्रूपम्। यल्लाजाः। यल्लाजैर्जुहोतिं। आदित्यानेव तत्प्रीणाति। क्रम्बैर्जुहोति। विश्वेषां वा एतद्देवानार्थं रूपम्। यत्करम्बौः। यत्करम्बैर्जुहोतिं॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्प्रींणाति। धानाभिंर्जुहोति। नक्षंत्राणां वा पुतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिंर्जुहोतिं। नक्षंत्राण्येव तत्प्रीणाति। सक्तुंभिर्जुहोति। प्रजापंतेर्वा एतद्रूपम्। यथ्सक्तंवः। यथ्सक्तुंभिर्जुहोतिं॥५४॥

प्रजांपितमेव तत्प्रीणिति। मृसूस्यैंर्जुहोति। सर्वांसां वा एतद्देवतांना र रूपम्। यन्मसूस्यांनि। यन्मसूस्यैंर्जुहोति। सर्वा एव तद्देवताः प्रीणिति। प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति। प्रियङ्गा ह व नामैते। एतेर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समंदधः। यत्प्रियङ्गृतण्डुलैर्जुहोति। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधाति। दशान्नांनि जुहोति। दशांक्षरा विराद्। विराद्वश्यस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥५५॥

जुहोति मधुंना जुहोति पृथुंकैर्जुहोतिं क्रम्बैंजुंहोति सक्तुंभिर्जुहोतिं प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोतिं च्वातिं च (अन्नहोमानाऽऽज्येनाग्नेर्मधुंना तण्डुलैः पृथुंकैर्लाजैः क्रम्बैंधानिमः सक्तंभिर्मस्यैः प्रियङ्गुतण्डुलैर्द्शान्नानि द्वादंश। )॥———[१४]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। तर सृष्टर रक्षा इंस्यजिघारसन्।
स पृतान्प्रजापंतिर्नृक्तर होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे
स युज्ञाद्रक्षा इंस्यपाहन्। यन्नंक्तर होमां जुहोति। युज्ञादेव
तैर्यजंमानो रक्षा इंस्यपं हन्ति। आज्येन जुहोति। वज्रो वा
आज्यम्। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षा इंस्यपं हन्ति॥५६॥

आज्यंस्य प्रतिपदं करोति। प्राणो वा आज्यम्। मुख्त एवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जहोति। शरीरवदेवावं रुन्थे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुद्धै। नक्तं जुहोति।

## रक्षंसामपंहत्यै। आज्यंनान्त्तो जुंहोति॥५७॥

प्राणो वा आज्यम्। उभयतं एवास्यं प्राणं देधाति। पुरस्तां चोपरिष्टा च। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। द्वाभ्या इं स्वाहेत्यांह। अमुष्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रति तिष्ठति। अस्मि इश्चामुष्मि ईश्च। श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः श्वावीं यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। सर्वस्मै स्वाहेत्यांह। अपरिमितमेवावं रुन्धे॥५८॥

पुव युज्ञाद्रक्षाुङ्स्यपंहन्त्यन्तुतो जुंहोति शृताय स्वाहेत्यांह सप्त चं॥————[१५]

प्रजापंतिं वा एष ईंप्स्तीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन यजंत् इतिं। अथो आहुः। सर्वाणि भूतानीतिं। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। प्रजापंतिर्वा एकंः। तमेवाऽऽप्नोति। एकंस्मै स्वाहा द्वाभ्याङ् स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवर्गं लोकमेति। एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

पुक्वदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। शताय स्वाहेत्यांह। शतायुर्वे पुरुषः शतवीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। अयुताय स्वाहां नियुताय स्वाहां प्रयुताय स्वाहेत्यांह॥६०॥ त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्धे। अर्बुदाय स्वाहेत्यांह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचमेवावं रुन्धे। न्यंर्बुदाय स्वाहेत्यांह। यो वै वाचो भूमा। तन्न्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानमवं रुन्धे। सुमुद्राय स्वाहेत्यांह॥६१॥

स्मुद्रमेवाऽऽप्नोति। मध्याय स्वाहेत्यांह। मध्यमेवाऽऽप्नोति। अन्ताय स्वाहेत्यांह। अन्तमेवाऽऽप्नोति। प्रार्थाय स्वाहेत्यांह। प्रार्थमेवाऽऽप्नोति। उषसे स्वाहा व्युष्ट्रमे स्वाहेत्यांह। प्रार्थमेवाऽऽप्नोति। उषसे स्वाहा व्युष्ट्रमे स्वाहेत्यांह। रात्रिर्वा उषाः। अहुर्व्युष्टिः। अहोरात्रे एवावं रुन्थे। अथो अहोरात्रयोरेव प्रति तिष्ठति। ता यदुभयीर्दिवां वा नक्तं वा जुहुयात्। अहोरात्रे मोहयेत्। उषसे स्वाहा व्युष्ट्रमे स्वाहोदेष्यते स्वाहोद्यते स्वाहेत्यनंदिते जुहोति। उदिताय स्वाहां सुवर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति। अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

एकोत्तरं जुहोति प्रयुतांय स्वाहेत्यांह समुद्राय स्वाहेत्याहाहृर्व्युष्टिः सप्त चं॥———[१६]

विभूमात्रा प्रभूः पित्रेत्यंश्वनामानि जुहोति। उभयोरेवैनं लोकयौर्नामधेयं गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणाय स्वाहेत्यंद्वावाञ्चंहोति। सर्वमेवैन्मस्कंत्रः सुवर्गं लोकं गंमयति। अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वहोमाञ्चंहोति। पूर्व पुव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमित कामित। पृथिव्ये स्वाहा- उन्तिरक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अग्नये स्वाहा

सोमांय स्वाहेतिं पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं ऋामित॥६३॥

पृथिव्यै स्वाहाऽन्तिरिक्षाय स्वाहेत्येकिविश्शिनीं दीक्षां जुहोति। एकिविश्शितिर्वे देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकिविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रेष्टो। भुवो देवानां कर्मणेत्यृंतुदीक्षा जुंहोति। ऋतूनेवास्में कल्पयति। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेतिं जुहोत्यनंन्तिरत्ये॥६४॥

अर्वाङ्मज्ञः सङ्गांमृत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याप्त्यै। भूतं भव्यं भिवष्यदिति पर्याप्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य पर्याप्त्ये। आ में गृहा भवन्त्वत्याभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याभूत्ये। अग्निना तपोऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंभूत्ये। स्वाहाऽऽिधमाधीताय स्वाहेति समस्तानि वैश्वदेवानि जुहोति। समस्तमेव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामित॥६५॥

द्रद्धः स्वाहा हर्नूभ्या इस्वाहेत्यं इहोमा इहोति। अङ्गं अङ्गं वै पुरुषस्य पाप्मोपंश्चिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवैनं पाप्मनस्तेनं मुश्चति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहेत्यं श्वरूपाणि जुहोति। रूपेरेवैन् समंध्यति। ओषंधीभ्यः स्वाहा मूलैभ्यः स्वाहेत्यं षिहोमा इहोति। द्वय्यो

वा ओषंधयः। पुष्पैभ्योऽन्याः फर्लं गृह्णन्ति। मूर्लैभ्योऽन्याः। ता एवोभयीरवं रुन्धे॥६६॥

वन्स्पतिंभ्यः स्वाहेतिं वनस्पतिहोमाञ्जंहोति। आर्ण्यस्यान्नाद्यस्यावंश्रद्धौ। मेषस्त्वां पचतेरंवत्वित्यपाँच्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवावं रुन्थे। कूप्याँभ्यः स्वाहाद्धः स्वाहेत्यपा होमाँ ञ्जहोति। अपसु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्द्रो वा अन्नं जायते। यदेवाद्भोऽन्नं जायते। तदवं रुन्थे॥६७॥

पूर्वेदीक्षा जुंहोति पूर्व पुव द्विषन्तुं भ्रातृंव्यमितं कामृत्यनंन्तिरित्यै कामित रुन्धे जायंतु एकं

[8*\to*]

अम्भार्श्स जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्श्स। तस्य वस्वोऽधिपतयः। अग्निज्योतिः। यदम्भार्श्स जुहोति। इममेव लोकमवं रुन्थे। वसूनार्श्व सार्युज्यं गच्छति। अग्निं ज्योतिरवं रुन्थे। नभार्श्स जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभार्श्स॥६८॥

तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुर्ज्योतिः। यन्नभारेसि जुहोति। अन्तिरक्षमेवावं रुन्धे। रुद्राणार् सायुंज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्धे। महारेसि जुहोति। असौ वै लोको महारेसि। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥

यन्महा १सि जुहोति। अमुमेव लोकमर्व रुन्थे। आदित्याना १ सार्यंज्यं गच्छति। सूर्यं ज्योतिरवं रुन्थे। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेति युव्यानि जुहोति। अन्नाद्यस्यावरुद्धे। मयोभूर्वातो अभि वांतूस्ना इति गव्यानि जुहोति। पुशूनामवरुद्धे। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेति सन्ततिहोमाञ्जहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तत्यै॥७०॥

स्वात्यं स्वाहाऽसितायं स्वाहेति प्रमुंक्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रमुंक्त्ये। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तरिक्षायं स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। दत्वते स्वाहांऽदन्तकांयं स्वाहेतिं शरीरहोमाञ्जंहोति। पितृलोकमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। कस्त्वां युनक्ति स त्वां युनक्तितिं परिधीन् युनक्ति। इमे वे लोकाः परिधयः। इमानेवास्में लोकान् युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्रौ॥७१॥

यः प्रांणतो य आंत्मदा इति महिमानौ जुहोति। सुवर्गो वै लोको महंः। सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यर्जमानोऽवं रुन्थे। आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जांयतामिति समस्तानि ब्रह्मवर्चसानि जुहोति। ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। जित्र बीजमिति जुहोत्यनंन्तरित्ये। अग्नये समनमत्पृथिव्ये समनमदिति सन्नतिहोमाञ्चहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्ये। भूताय स्वाहां भिवष्यते स्वाहेति भूताभ्व्यौ होमौ जुहोति। अयं वै लोको भूतम्॥७२॥

असौ भंविष्यत्। अनयोरेव लोकयोः प्रति तिष्ठति। सर्वस्यार्यै। सर्वस्यावरुद्धै। यदर्ऋन्दः प्रथमं जायमान् इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्याप्त्रैं। सर्वस्य जित्यैं। सर्वमेव तेनाँप्रोति। सर्वं जयति। योँऽश्वमेधेन यजंते॥७३॥

य उं चैनमेवं वेदं। यज्ञ रक्षा ईस्यजिघा रसन्। स पुतान्प्रजापंतिर्नक्त १ होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा इस्यपाहन्। यन्नेक्त १ होमां जुहोतिं। यज्ञादेव तैर्यजंमानो रक्षाः स्यपंहन्ति। उषसे स्वाहा व्युष्टे स्वाहेत्यंन्त्तो जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य समध्ये॥७४॥

वै नभार्रसि सूर्यो ज्योतिः सन्तत्यै समध्ये भूतं यर्जते नवं च॥————[१८]

पुक्यूपो वैकाद्शिनीं वा। अन्येषां यज्ञानां यूपां भवन्ति। एकवि १ शिन्यंश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञऋतूनां यूपां भवन्ति। राज्जुंदाल एकंवि॰शत्यरितरश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्य समेध्ये। नान्येषां पशूनां तेजन्या अवद्यन्ति। अवद्यन्त्यश्वस्य॥७५॥

पाप्मा वै तेंजनी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रक्षशाखायांमन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। वेत्सशाखायामश्वंस्य। अपसुयोनिर्वा अर्थः। अपसुजो वेत्सः। स्व पुवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु ग्राम्यान्पशून्नियुअन्ति। आरोकेष्वारुण्यान्धारयन्ति। पुशूनां व्यावृत्त्यै। आ ग्राम्यान्पशूह्रँभेन्ते। प्रारण्यान्थ्सृंजन्ति। पाप्मनोऽपंहत्यै॥७६॥

अश्वंस्य व्यावृत्त्यै त्रीणि च॥

१९

राञ्जंदालमग्निष्ठं मिनोति। भ्रूणहृत्याया अपंहत्यै। पौतुंद्रवाव्भितों भवतः। पुण्यंस्य गुन्थस्यावंरुद्धौ। भ्रूणहृत्यामेवास्मांदपहत्यं। पुण्यंन गुन्थेनोभ्यतः परिं गृह्णाति। षङ्केल्वा भवन्ति। ब्रह्मवर्चसस्यावंरुद्धौ। षद्धांदिराः। तेजसोऽवंरुद्धौ॥७७॥

षद्वांलाशाः। सोम्पीथस्यावंरुद्धौ। एकंविश्शितः सम्पंद्यन्ते। एकंविश्शित्विं देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकंविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रिः। शृतं पृश्वो भवन्ति॥७८॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सर्वं वा अश्वमेध्याप्नोति। अपंरिमिता भवन्ति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धे। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मांध्मत्यात्। दक्षिणतोंऽन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। उत्तर्तोऽश्वस्येति। वारुणो वा अश्वंः॥७९॥

पुषा वै वर्रुणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति। यदितंरेषां पशूनामंवद्यति। शृतदेवत्यं तेनावं रुन्धे। चितेंऽग्नाविधं वैत्से कटेऽश्वं चिनोति। अपसुयोंनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेत्सः। स्व एवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं तूप्रं चिनोति। पृश्चात्प्राचीनं गोमृगम्॥८०॥ प्राणापानावेवास्मिन्थसम्यश्ची दधाति। अर्श्व तूपरं गोमृगमिति सर्वहृतं पृताञ्चहोति। पृषां लोकानांमभिजित्यै। आत्मनाऽभि जुंहोति। सात्मानमेवेन् सत्नं करोति। सात्माऽमुष्मिं लोको भेवति। य पृवं वेदं। अथो वसोरेव धारां तेनावं रुन्धे। इलुवर्दाय स्वाहां बिलवर्दाय स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वा इंलुवर्दः। परिवथ्सरो बंलिवर्दः। संवथ्सरादेव परिवथ्सरादायुरवं रुन्धे। आयुरेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वमेधयाजी जरसां विस्नसामुं लोकमेति॥८१॥

तेजुसोऽवंरुद्धै भवुन्त्यश्वों गोमृगमिंलुवर्दश्चत्वारि च॥—————[२०]

पुक्विष्शौंऽग्निर्भविति। पुक्विष्शः स्तोमंः। एकं-विश्वतिर्यूपौः। यथा वा अश्वां वर्षमा वा वृषाणः सङ्स्फुरेरन्। पुवमेव तथ्स्तोमाः सङ्स्फुरन्ते। यदेकिविष्शाः। ते यथ्समृच्छेरन्। हुन्येतौस्य यज्ञः। द्वाद्वा पुवाग्निः स्यादित्यांहुः। द्वाद्वाः स्तोमंः॥८२॥

एकांदश् यूपाः। यद्वांदशौंऽग्निर्भवंति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। यद्दश् यूपा भवंन्ति। दशौक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। य एंकाद्शः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥

दुह पुवैनां तेनं। तदांहुः। यद्वांदशौंऽग्निः स्याँद्वादशः स्तोम् एकांदश् यूपौः। यथा स्थूरिंणा यायात्। तादक्तत्। पुक्वि १ श प्वाग्निः स्यादित्यां हुः। पुक्वि १ शः स्तो मः। एकं वि १ शतिर्यूपाः। यथा प्रष्टिभियाति। तादगेव तत्॥८४॥

यो वा अंश्वमेधे तिस्रः क्कुभो वेदं। क्कुद्ध राज्ञाँ भवति। एक्विट्शाँ ऽग्निर्भवति। एक्विट्शाः स्तोमंः। एकंविश्शित्यूंपाः। एता वा अंश्वमेधे तिस्रः क्कुभंः। य एवं वेदं। क्कुद्ध राज्ञाँ भवति। यो वा अंश्वमेधे त्रीणि शीर्षाण् वेदं। शिरो ह राज्ञाँ भवति। एक्विट्शाँ ऽग्निर्भवति। एक्विट्शाः स्तोमंः। एकंविश्शित्यूंपाः। एतानि वा अंश्वमेधे त्रीणि शीर्षाणे। य एवं वेदं। शिरो ह राज्ञाँ भवति॥८५॥ ब्राद्धः स्तोमः स एव तिच्छरो ह राज्ञां भवति पद चं॥———[२१]

देवा वा अंश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यदंश्वमेधेऽश्वेन मेध्येनोदंश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञांत्यै। न वै मंनुष्यः सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो वै सुंवर्गं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्रातोद्गार्यंत्। यथा क्षेत्रज्ञोऽन्येनं पृथा प्रंतिपादयेत्। तादक्तत्॥८६॥

उद्गातारंमप्रध्ये। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञो-ऽञ्जंसा नयंति। एवमेवैनमर्श्वः सुवर्गं लोकमञ्जंसा नयति। पुच्छंमन्वा रंभन्ते। सुवर्गस्यं लोकस्य समध्ये। हिं करोति। सामैवाकंः। हिं करोति। उद्गीथ एवास्य सः॥८७॥ वर्डबा उपं रुन्धन्ति। मिथुन्त्वाय प्रजाँत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायंन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मेध्य इत्याह। प्राजापत्यो वा अश्वः। प्रजापंतिरुद्गीयः। उद्गीथमेवावं रुन्धे। अथों ऋख्सामयोरेव प्रतिं तिष्ठति। हिरंण्येनोपाकंरोति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेव मुंखतो दंधाति। यर्जमाने च प्रजासुं च। अथो हिरंण्यज्योतिरेव यर्जमानः सुवर्गं लोकमेति॥८८॥

तथ्स उपाकंरोति चुत्वारिं च॥————[२२]

पुरुषो वै यज्ञः। यज्ञः प्रजापंतिः। यदश्वं पृश्नियुञ्जन्ति। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। अश्वं तूपरं गोमृगम्। तानिग्रिष्ठ आलंभते। सेनामुखमेव तथ्सङ्श्यंति। तस्माद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आग्नेयं कृष्णग्रींवं पुरस्तां हुलाटें। पूर्वाग्निमेव तं कुरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाभ्रिं पुरस्तौथ्स्थापयन्ति। पौष्णम्नवश्रम्ं। अत्रुं वै पूषा। तस्मौत्पूर्वाभ्रावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। ऐन्द्रो वै राजन्योऽत्रं पूषा। अन्नाद्येनैवैनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। तस्मौद्राजन्यौऽन्नादो भावुंकः। आ्रभ्रेयौ कृष्णग्रीवौ बाहुवोः। बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते॥९०॥

तस्माँद्राज्ञन्यों बाहुब्लीभावुंकः। त्वाष्ट्रौ लोमशस्वथौ सुक्थ्योः। सुक्थ्योरेव वीर्यं धत्ते। तस्माँद्राज्ञन्यं ऊरुब्लीभावुंकः। शितिपृष्ठौ बांर्हस्पृत्यौ पृष्ठे। ब्रह्मवर्चसमेवोपरिष्टाद्धत्ते। अथो क्वचे एवेते अभितः पर्यूहते। तस्माद्राज्नन्यः सन्नद्धो वीर्यं करोति। धात्रे पृषोद्रम्धस्तात्। प्रतिष्ठामेवेतां कुरुते। अथो इयं वै धाता। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छैं। उथ्सेधमेव तं कुरुते। तस्माद्थ्येधं भये प्रजा अभिस्श्र्यंयन्ति॥९१॥

कुरुते धत्ते कुरुते पर्श्व च॥————[२३]

साङ्ग्रहण्या चतुष्टय्यो यो वै यः पितुश्चत्वारो यथां निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूरांह प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं प्रजापंतिर्ने किश्चन सांवित्रमा ब्रह्मंन्य्रजापंतिर्देवेभ्यः प्रजापंती रक्षा १सि प्रजापंतिमीपसति विभूरंश्वनामान्यम्भा १स्येकयूपो राज्जंदालमेकवि १शो देवाः पुरुष्म् योवि १शितः॥२३॥

साङ्ग्रहुण्या तस्मांदश्वमेधयाजी यत्परिमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षां देवानेव त्रयं इमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्मांद्राजुन्यं एकंनवतिः॥९१॥

साङ्ग्रहुण्या सङ्श्रंयन्ति॥

# हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

#### ॥ नवमः प्रश्नः॥

### ॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपाँकामत्। तमंष्टाद्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तमाँप्रोत्। तमास्वाऽष्टांद्शिभिरवां-रुन्ध। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। यज्ञमेव तैरास्वा यजंमानो-ऽवं रुन्धे। संवथ्सरस्य वा एषा प्रतिमा। यदंष्टाद्शिनंः। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः॥१॥

संवथ्सरौंऽष्टाद्शः। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तैं। संवथ्सरमेव तैरास्वा यजंमानोऽवं रुन्धे। अग्निष्ठेंऽन्यान्पशून्पाक्रोतिं। इतरेषु यूपेष्वष्टाद्शिनोऽजांमित्वाय। नवंनवालंभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदांरुण्यैः सर्स्थापयेत्। व्यवंस्येतां पितापुत्रो। व्यध्वांनः क्रामेयुः। विदूरं ग्रामंयोर्ग्रामान्तौ स्यांताम्॥२॥

ऋक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः परिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरेण्येष्वाजांयेरन्। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदांर्ण्याः। यदांर्ण्येः सर्इस्थापर्यंत्। क्षिप्रे यजमानमरंण्यं मृत १ हरेयुः। अरंण्यायतना ह्यांर्ण्याः पृशव इतिं। यत्पशून्नालभेत। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। यत्पर्यग्निकृतानुथ्मृजेत्॥३॥

यज्ञवेशसं कुंर्यात्। यत्पशूनालभंते। तेनैव पृशूनवं रुन्थे। यत्पर्यप्रिकृतानुथ्सृजत्ययंज्ञवेशसाय। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवन्ति। न यंज्ञवेशसम्भविति। न यजंमान्मरंण्यं मृतः हंरन्ति। ग्राम्यैः सङ् स्थांपयिति। एते वै पृशवः क्षेमो नामं। सं पितापुत्राववंस्यतः। समध्वांनः क्रामन्ति। स्मृन्तिकं ग्रामंयोर्ग्रामान्तौ भवतः। नक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

ऋतवंः स्यातामुथ्मृजेथ्स्यंतुस्रीणिं च॥\_\_\_\_\_

१

प्रजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेतिं। स एतानुभयाँन्पशूनंपश्यत्। ग्राम्याङ्श्चांरुण्याङ्श्चं। तानालंभतः। तैर्वे स उभौ लोकाववांरुन्धः। ग्राम्येरेव पृशुभिरिमं लोकमवांरुन्धः। आर्ण्येर्मुम्। यद्ग्राम्यान्पशूनालभेते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदांरुण्यान्॥५॥

अमुं तैः। अनंवरुद्धो वा एतस्यं संवथ्सर इत्यांहुः। य इतइंतश्चातुर्मास्यानि संवथ्सरं प्रयुङ्क इति। एतावान् वै संवथ्सरः। यचातुर्मास्यानि। यदेते चातुर्मास्याः पृशवं आलुभ्यन्तै। प्रत्यक्षंमेव तैः संवथ्सरं यजमानोऽवं रुन्थे। वि वा एष प्रजयां पृशुभिर्ऋध्यते। यः संवथ्सरं प्रयुङ्के। संवथ्सरः सुवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गं तु लोकं नापंराध्नोति। प्रजा वै प्शवं एकाद्शिनीं। यदेत ऐकादशिनाः पृशवं आलभ्यन्तें। साक्षादेव प्रजां पृशून् यजमानोऽवं रुन्थे। प्रजापंतिर्विराजमसृजत। सा सृष्टाऽश्वमेधं प्राविंशत्। तान्द्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तामाप्रोत्। तामास्वा दशिभिरवांरुन्ध। यद्दशिनं आलभ्यन्तें॥७॥

विराजमेव तैरास्वा यर्जमानोऽवं रुन्धे। एकांदश दशत आलंभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रैष्टुंभाः पशर्वः। पश्ननेवार्व रुन्थे। वैश्वदेवो वा अर्श्वः। नानादेवत्याः पशवीं भवन्ति। अश्वंस्य सर्वत्वायं। नानांरूपा भवन्ति। तस्मान्नानांरूपाः पुशवंः। बहुरूपा भवन्ति। तस्मौद्धहुरूपाः पुशवः समृद्धौ॥८॥

आ्रण्याँ क्षोको दुशिनं आलुभ्यन्ते नानां रूपाः पुशवो द्वे चं॥\_\_\_\_\_\_

अस्मै वै लोकार्यं ग्राम्याः पशव आलंभ्यन्ते। अमुष्मां आरण्याः। यद्ग्राम्यान्पशूनालभेते। इममेव तैर्लोकमर्व रुन्थे। यदारुण्यान्। अमुं तैः। उभयान्पशूनालभते। गाम्या ५ श्वांरण्या ५ श्वं। उभयौर्लोकयोरवंरु स्त्रे। उभयौन्पशूना-र्लभते॥ ९॥

ग्राम्या ॥ अर्थस्या नाह्यस्या चंरु स्ट्री। उभयाँन्पशूनालभते। ग्राम्या ॥ श्रांरुण्या ॥ अर्थेषां पशूनामवंरुद्धै। त्रयंस्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्यै। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। कस्माँथ्सत्यात्॥१०॥

अस्मिँ ह्योके बहवः कामा इति। यथ्समानीभ्यो देवताभ्योऽन्येंऽन्ये पशवं आलभ्यन्तें। अस्मिन्नेव तल्लोके कामान्द्रधाति। तस्माद्रिमाँ ह्लोके बहुवः कामाः। त्रयाणां त्रयाणा सह वपा जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्यै। एषां लोकानां क्रुस्यै।

## पर्यग्निकृतानारण्यानुथ्मृंजन्त्यहि ५ंसायै॥११॥

अवंरुद्धा उभयाँन्पृशूनालंभते स्त्यादिहर्श्सायै॥————[3]

युअन्तिं ब्रध्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्रध्नः। आदित्यमेवास्मै युनक्ति। अरुषमित्यांह। अग्निर्वा अरुषः। अग्निमेवास्मै युनक्ति। चरंन्तमित्यांह। वायुर्वे चरन्। वायुमेवास्मै युनक्ति। परितस्थुष इत्यांह॥१२॥

ड्मे वै लोकाः परितस्थुषः। इमानेवास्मै लोकान् यंनक्ति। रोचंन्ते रोचना दिवीत्यांह। नक्षत्राणि वै रोचना दिवि। नक्षत्राण्येवास्मै रोचयति। युअन्त्यंस्य काम्येत्यांह। कामांनेवास्मै युनक्ति। हरी विपंक्षसेत्यांह। इमे वै हरी विपंक्षसा। इमे एवास्मै युनक्ति॥१३॥

शोणां धृष्णू नृवाह्सेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे एवास्में युनिक्त। एता एवास्में देवतां युनिक्त। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्धि। केतुं कृण्वन्नंकेतव इतिं ध्वजं प्रतिमुश्चति। यशं एवैन् राज्ञां गमयति। जीमूर्तस्येव भवति प्रतींक्मित्यांह। यथायजुरेवैतत्। ये ते पन्थांनः सवितः पूर्व्यास् इत्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजित्ये॥१४॥

परा वा एतस्यं यज्ञ एंति। यस्यं पृशुरुपार्कृतोऽन्यत्र वेद्या एति। एत इस्तोतरेतेनं पृथा पुन्रश्वमावंर्तयासि न् इत्यांह। वायुर्वे स्तोतां। वायुमेवास्यं पुरस्तांद्वधात्यावृत्त्यै। यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दित। यदंस्योपाकृतस्य लोमानि शीयंन्ते। यद्वालेषु काचानावयंन्ति। लोमान्येवास्य तथ्सम्भरन्ति॥१५॥

भूर्भुवः सुव्रितिं प्राजापृत्याभिरावंयन्ति। प्राजापृत्यो वा अश्वः। स्वयैवैनं देवतया समर्धयन्ति। भूरिति महिषी। भुव इति वावातां। सुव्रितिं परिवृक्ती। एषां लोकानांम्भिजिंत्ये। हिर्ण्ययाः काचा भवन्ति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिश्चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। सहस्रं भवन्ति। सहस्रंसम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अप वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीः क्रांमन्ति। यौऽश्वमेधेन यजंते। वसंवस्त्वाऽअन्तु गायत्रेण छन्द्सेति महिष्यभ्यंनक्ति। तेजो वा आज्यम्। तेजो गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवं रुन्धे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रेष्टुंभेन् छन्द्सेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्। इन्द्रियं त्रिष्टुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवं रुन्थे। आदित्यास्त्वां ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्सेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्। पृशवो जगंती। तेजंसैवास्में पृशूनवं रुन्थे। पत्नयो ऽभ्यं अन्ति। श्रिया वा एतद्रूपम्॥१८॥

यत्पत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्दंधित। नास्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीरपं क्रामन्ति। लाजी(३)ञ्छाची(३)न् यशोंमुमाँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वायोपाहं रन्ति। प्रजामेवान्नादीं कुंवते। एतद्देवा अन्नमत्तैतदन्नमिद्ध प्रजापत् इत्यांह। प्रजायांमेवान्नाद्यं दथते। यदि नावजिन्नेत्त्। अग्निः पृशुरांसीदित्यवं प्रापयेत्। अवं हैव जिंन्नति। आक्रान्ं वाजी क्रमेरत्यं क्रमीद्वाजी द्यौस्ते पृष्ठं पृथिवी स्थस्थमित्यश्वमनुमन्नयते। पृषां लोकानां म्भिजित्ये। समिद्धो अञ्चन्कृदंरं मतीनामित्यश्वंस्याप्रियों भवन्ति सरूपत्वायं॥१९॥

परितस्थुष इत्यांह्मे एवास्मै युनक्त्यभिजिंत्यै भरन्त्यश्वमेधो रुन्धे रूपिश्चेप्रति त्रीणि च॥ [४]

तेजंसा वा एष ब्रंह्मवर्चसेन् व्यृंद्धते। योंऽश्वमेधेन् यजंते। होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मोद्यं वदतः। तेजंसा चैवैनं ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भंवति। दक्षिणतआयतनो वै ब्रह्मा। बार्ह्स्पत्यो वै ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽधीं ब्रह्मवर्चसितंरः। उत्तरतो होतां भवति॥२०॥

उत्तर्तआंयतनो वै होतां। आग्नेयो वै होतां। तेजो वा अग्निः। तेजं एवास्योंत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्तरो- ऽर्धस्तेजस्वितंरः। यूपंमभितों वदतः। यजमानदेवत्यों वै यूपंः। यजमानमेव तेजंसा च ब्रह्मवर्चसेनं च् समर्धयतः। किङ् स्विदासीत्पूर्वित्तिरित्यांह। द्यौर्वे वृष्टिः पूर्वित्तिः॥२१॥

दिवंमेव वृष्टिमवं रुन्धे। कि स्वंदासीद्भृहद्वय

इत्यांह। अश्वो वै बृहद्वयः। अश्वमेवावं रुन्धे। किश् स्विदासीत्पिशङ्गिलेत्यांह। रात्रिर्वे पिशङ्गिला। रात्रिमेवावं रुन्धे। किश् स्विदासीत्पिलिप्पिलेत्यांह। श्रीर्वे पिलिप्पिला। अन्नाद्यमेवावं रुन्धे॥२२॥

कः स्विदेकाकी चंरतीत्यांह। असौ वा आंदित्य एंकाकी चंरति। तेजं एवावं रुन्धे। क उंस्विज्ञायते पुन्रित्यांह। चन्द्रमा वै जांयते पुनंः। आयुरेवावं रुन्धे। किङ् स्विद्धिमस्यं भेषजमित्यांह। अग्निर्वे हिमस्यं भेषजम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। किङ् स्विदावपंनं महदित्यांह॥२३॥

अयं वै लोक आवर्पनं महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। पृच्छामिं त्वा पर्मन्तं पृथिव्या इत्याह। वेदिवें परो-ऽन्तः पृथिव्याः। वेदिमेवावं रुन्थे। पृच्छामिं त्वा भुवंनस्य नाभिमित्याह। यज्ञो वै भुवंनस्य नाभिः। यज्ञमेवावं रुन्थे। पृच्छामिं त्वा वृष्णो अश्वंस्य रेत इत्याह। सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतः। सोम्पीथमेवावं रुन्थे। पृच्छामिं वाचः पर्मं व्योमेत्याह। ब्रह्म वै वाचः पर्मं व्योम। ब्रह्मवर्च्समेवावं रुन्थे॥२४॥

होतां भवति वै वृष्टिः पूर्विचित्तिरन्नाद्यमेवावं रुन्धे मृहदित्यांहु सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतंश्चत्वारिं

अप वा एतस्मौत्राणाः ऋामन्ति। यौऽश्वमेधेन् यजेते। प्राणाय स्वाहौ व्यानाय स्वाहेति संज्ञुप्यमान् आहंतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति। नास्मौत्प्राणा अपंक्रामन्ति। अवन्तीः स्थावन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियं त्वौ प्रियाणौम्। वर्षिष्ठमाप्यांनाम्। निधीनां त्वां निधिपति ह्वामहे वसो ममेत्यांह। अपैवास्मै तद्भंवते॥२५॥

अथो धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येवास्मै हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यो धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति॥२६॥

ये यज्ञे धुवंनं तन्वतें। नुवकृत्वः परियन्ति। नव वै पुरुषे प्राणाः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिक् इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। सुभगे काम्पीलवासिनीत्याह। तपं पुवैनामुपंनयति। सुवर्गे लोके सम्प्रोण्वांथामित्यांह॥२७॥

सुवर्गमेवेनां लोकं गंमयति। आऽहमंजानि गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधमित्यांह। प्रजा वै प्रशवो गर्भः। प्रजामेव प्रशूनात्मन्धंत्ते। देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यथ्सूचीभिरसिप्थान्कल्पयंन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्यै। गायुत्री त्रिष्टुज्ञगुतीत्यांह॥२८॥

यथायजुरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यों भवन्ति। अयस्मय्यों रज्ता

हरिण्यः। अस्य वै लोकस्यं रूपमंयस्मय्यंः। अन्तरिक्षस्य रज्ञताः। दिवो हरिण्यः। दिशो वा अयस्मय्यंः। अवान्त्रिष्टिशा रंज्ञताः। ऊर्ध्वा हरिण्यः। दिशं पुवास्मै कल्पयति। कस्त्वां छाति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि रसायै॥२९॥

ह्रुवृत् काम-त्यूण्र्वाथामित्यां जगुतीत्यां कल्पयृत्येकं च॥————[ $\xi$ ]

अप वा पृतस्माच्छ्री राष्ट्रं ऋांमित। याँऽश्वमेधेन् यजंते। ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रंयतादित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रमंश्वमेधः। श्रियंमेवास्में राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयित। वेणुभारिङ्गराविवेत्यांह। राष्ट्रं वै भारः। राष्ट्रमेवास्मे पर्यूहिति। अथास्या मध्यंमेधतामित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥

श्रियंमेवावं रुन्थे। शीते वातें पुनन्निवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं शीतो वातः। क्षेमंमेवावं रुन्थे। यद्धंरिणी यवमत्तीत्यांह। विड्वे हंरिणी। राष्ट्रं यवः। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। न पुष्टं पृशु मन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पृशूत्र पृष्यंति॥३१॥

शूद्रा यदर्यंजारा न पोषांय धनायतीत्यांह। तस्माँद्वेशीपुत्रं नाभिषिश्चन्ते। इयं यका शंकुन्तिकेत्यांह। विश्वे शंकुन्तिका। राष्ट्रमंश्वमेधः। विशं चैवास्में राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आहलमिति सर्पतीत्यांह। तस्माँद्राष्ट्राय विशं सर्पन्ति। आहंतं गुभे पस् इत्यांह। विश्वे गर्भः॥३२॥ राष्ट्रं पसंः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विशं घातुंकम्। माता चं ते पिता चं त इत्यांह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवैनं परिंददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहत् इत्यांह। श्रीवैं वृक्षस्याग्रम्। श्रियंमेवावं रुन्धे॥३३॥

प्रसृंलामीतिं ते पिता गुभे मुष्टिमंत एसयदित्यांह। विश्वे गर्भः। राष्ट्रं मुष्टिः। राष्ट्रमेव विश्वयाहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विश्ं घातुंकम्। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये यज्ञे ऽपूंतं वदंन्ति। दुधिकाव्यणों अकारिष्मितिं सुरिभमतीमृचं वदन्ति। प्राणा वे सुर्भयः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नेभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। आपो हि ष्ठा मंयोभुव इत्यद्भिर्मार्जयन्ते। आपो वे सर्वा देवताः। देवतांभिरेवात्मानं पवयन्ते॥३४॥ गुष्ट्रस्य मध्यं पुष्यंति गर्भं रुन्थे दक्षते चुल्वारिं चा [७]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविंशत्। ताभ्यः पुनः सम्भवितुं नाशंक्रोत्। सौंऽब्रवीत्। ऋध्रवृदिथ्सः। यो मेतः पुनः सम्भर्दितिं। तं देवा अंश्वमेधेनैव समंभरन्। ततो वै त आध्रुंबन्। यौंऽश्वमेधेन् यजंते। प्रजापंतिमेव सम्भरत्युध्रोतिं। पुरुषमालंभते॥३५॥

वैराजो वै पुरुषः। विराजंमेवालंभते। अथो अत्रं वै विराट। अन्नमेवावं रुन्धे। अश्वमालंभते। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतिमेवालंभते। अथो श्रीर्वा एकंशफम्। श्रियंमेवावं रुन्धे। गामालंभते॥३६॥ यज्ञो वै गौः। यज्ञमेवार्लभते। अथो अन्नं वै गौः। अन्नमेवार्वं रुन्थे। अजावी आर्लभते भूम्ने। अथो पृष्टिर्वे भूमा। पृष्टिमेवार्वं रुन्थे। पर्यग्निकृतं पुरुषं चार्ण्या इक्षोध्सृंजन्त्यिहि सायै। उभौ वा एतौ पृशू आर्लभ्यते। यश्चांवमो यश्चं पर्मः। तें उस्योभयं यज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिता अभिह्तंता भवन्ति। नैनं दृङ्क्षवंः पृशवो यज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिता अभिह्तंता हि स्मन्ति। यों ऽश्वमेधेन् यज्ञंते। य उं चैनमेवं वेदं॥३७॥

लुभुते गामालंभते पर्मौंऽष्टौ चं॥\_\_

[2]

प्रथमेन वा एष स्तोमेन राध्वा। चतुष्टोमेनं कृतेनायांनामुत्तरेहन्। एकविश्शे प्रतिष्ठायां प्रति तिष्ठति। एकविश्शात्प्रतिष्ठायां ऋतूनन्वारोहित। ऋतवो वै पृष्ठानि। ऋतवेः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिष्ठायं। देवतां अभ्यारोहित। शक्वरयः पृष्ठं भवन्त्यन्यदेन्यच्छन्देः। अन्येऽन्ये वा एते पृशव आलंभ्यन्ते॥३८॥

उतेवं ग्राम्याः। उतेवांरण्याः। अहंरेव रूपेण समर्धयति। अथो अह्नं एवैष बुलिर्ह्वियते। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्चारण्याश्चं। एते वै सर्वे पृशवंः। यद्गव्या इतिं। गुव्यान्पृशूनुंत्तमेऽहुं नालभते॥३९॥

तेनैवोभयाँन्पृशूनवं रुन्धे। प्राजापत्या भंवन्ति। अनंभिजितस्याभिजित्यै। सौरीर्नवं श्वेता वृशा अनूबन्ध्यां भवन्ति। अन्त्त एव ब्रह्मवर्च्समवं रुन्धे। सोमांय स्वराज्ञें ऽनोवाहावंनुङ्घाहावितिं द्वन्द्वनः पृश्नालंभते। अहोरात्राणांम्भिजित्ये। पृश्मिर्वा एष व्यृध्यते। यौं ऽश्वम्धेन् यजेते। छुगुलं कल्माषं किकिदीविं विदीगय्मितिं त्वाष्ट्रान्पृश्ना लंभते। पृश्मिरेवात्मान् समंध्यति। ऋतुभिर्वा एष व्यृध्यते। यौं ऽश्वम्धेन् यजेते। पृशङ्गास्त्रयो वास्नता इत्यृत्पृश्नालंभते। ऋतुभिरेवात्मान् समंध्यति। आ वा एष पृश्भयो वृश्यते। यौं ऽश्वम्धेन् यजेते। पर्यग्निकृता उथ्मृंजन्त्यनां वृस्यते। यौं ऽश्वम्धेन् यजेते। पर्यग्निकृता उथ्मृंजन्त्यनां वृस्यते। यौं ऽश्वम्धेन् यजेते। पर्यग्निकृता उथ्मृंजन्त्यनां वृस्यते। यो ऽश्वम्धेन् यजेते। पर्यग्निकृता

लुभ्युन्ते लुभुते त्वाष्ट्रान्पुशूनालंभतेऽष्टौ चं॥————[९]

प्रजापंतिरकामयत महानंत्रादः स्यामिति। स प्तावंश्वम्धे मंहिमानांवपश्यत्। तावंगृह्णीत। ततो वै स महानंत्रादों- ऽभवत्। यः कामयेत महानंत्रादः स्यामिति। स प्तावंश्वम्धे मंहिमानौं गृह्णीत। महानेवात्रादो भंवति। यजमानदेवत्यां वै वपा। राजां महिमा। यद्धपां मंहिम्रोभ्यतः परियजंति। यजमानमेव राज्येनोभ्यतः परिगृह्णाति। पुरस्तां ध्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपरिष्टाध्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा पृतेऽश्वं पृव मेध्यं उभयेऽवंरुध्यन्ते। यद्धपां मंहिम्रोभ्यतः परियजंति। तानेवोभयां न्प्रीणाति॥४१॥

परियजंति षद्वं॥------[१०]

वैश्वदेवो वा अर्थः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या

देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन व्यर्धयेत्। देवताभ्यः समदं दध्यात्। स्तेगान्दङ्ष्ट्राभ्यां मृण्डूकां जम्भ्येभिरिति। आज्यमवदानं कृत्वा प्रतिसङ्ख्यायमाहृतीर्ज्ञहोति। या एव देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन समर्धयति। न देवताभ्यः समदं दधाति॥४२॥

चतुंर्दशैतानंनुवाकाञ्जंहोत्यनंन्तरित्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चदशम्। पश्चदश् वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमासशः संवथ्सर आप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। तेंऽब्रुवन्नग्नयः स्विष्टकृतः। अर्श्वस्य मेध्यंस्य वयमुंद्धारमुद्धंरामहै। अथैतान्भि भंवामेतिं। ते लोहिंत्मुदंहरन्त। ततों देवा अभंवन्॥४३॥

पराऽसुंराः। यथ्स्विष्टकृद्धो लोहितं जुहोति भ्रातृंव्याभिभूत्ये। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। गोमृगुकुण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वै गोमृगः। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृशूनुन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिरहूयतें। न तत्रं रुद्रः पृशूनुभिमंन्यते॥४४॥

अश्वश्रफेनं द्वितीयामाहंतिं जुहोति। पृशवो वा एकंशफम्। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृश्ननन्तर्दधाति। अथो यत्रैषा-ऽऽहंतिर्ह्यतें। न तत्रं रुद्रः पृश्ननिमंन्यते। अयुस्मयेन कमण्डलुंना तृतीयांम्। आहंतिं जुहोत्यायास्यों वै प्रजाः।

रुद्रौँऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः प्रजा अभिमन्यते॥४५॥ द्र्यात्यमंबन्मन्यते प्रजा अन्तर्दधाति हे चं॥———[११]

अश्वंस्य वा आलंब्यस्य मेध् उदंक्रामत्। तदंश्वस्तोमीयं-मभवत्। यदंश्वस्तोमीयं जुहोतिं। समेधमेवेनमालंभते। आज्यंन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधोंऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनैवास्मिन्मेधं दधाति। षद्गिरंशतं जुहोति। षद्गिरंशदक्षरा बृहती॥४६॥

बार्ह्ताः प्रावंः। सा पंशूनां मात्रां। प्रशूनेव मात्रंया समर्धयति। तायद्भ्यंसीर्वा कनीयसीर्वा जुहुयात्। प्रशून्मात्रंया व्यंध्येत्। षद्भिर्श्शतं जुहोति। षद्भिर्श्शदक्षरा बृह्ती। बार्ह्ताः प्रावंः। सा पंशूनां मात्रां। प्रशूनेव मात्रंया समर्धयति॥४७॥

अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपाद्वे पुरुषो द्विप्रतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्धयति। तदांहुः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होत्व्याँ(३)न्द्विपदा(३) इति। अश्वो वा अश्वस्तोमीयम्। पुरुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीयर् हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्माद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौ द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठायपति। द्विपदां हुत्वा। नान्यामुत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। यदन्यामुत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। प्रप्रतिष्ठायांश्च्यवेत।

## द्विपदां अन्त्तो जुंहोति प्रतिष्ठित्यै॥४८॥

बृह्त्र्यंर्धयति स्थापयति पश्चं च॥———[१२]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छत्। तं यंज्ञकृतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमिष्टिंभिरन्वैंच्छत्। तिमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तिदिष्टींनािमिष्टित्वम्। यथ्संवथ्सरमिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। सावित्रियों भवन्ति॥४९॥

इयं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते। अस्यां वाव तं विन्दन्ति। न वा इमां कश्चनेत्यांहुः। तिर्यङ्गोर्ध्वोत्यंतुमर्ह्तीतिं। यथ्सांवित्रियो भवंन्ति। स्वितृ-प्रंसूत एवैनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतं गन्तौः। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्यै धृत्यै॥५०॥

यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदिन्वंच्छिति। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्य यत्यै धृत्यैं। तस्मांथ्सायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदिन्वंच्छिति। तस्मादिवां नष्टेष एति। यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते सायं धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवेन्मिन्वंच्छिति। अथों अहोरात्राभ्यांमेवासमें योगक्षेमं कल्पयित॥५१॥

भुवन्ति धृत्यां एन्मन्विंच्छुत्येकं च॥-----[१३]

अप वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रं ऋांमिति। यों ऽश्वमेधेन यज्ञंते। ब्राह्मणौ वींणागाथिनौ गायतः। श्रिया वा एतद्रूपम्। यद्वीणां। श्रियंमेवास्मिन्तद्धंत्तः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियंमश्जुते। वीणाँऽस्मै वाद्यते। तदांहुः। यदुभौ ब्राँह्मणौ गायंताम्॥५२॥

प्रभःशंकास्माच्छीः स्यात्। न वै ब्राँह्मणे श्री रंमत् इति। ब्राह्मणाँऽन्यो गायेत्। राजन्योंऽन्यः। ब्रह्म वै ब्राँह्मणः। क्षत्रः राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतः श्रीः परिगृहीता भवति। तदांहुः। यदुभौ दिवा गायेताम्। अपाँस्माद्राष्ट्रं क्रांमेत्॥५३॥

न वै ब्राँह्मणे राष्ट्र रंमत् इतिं। यदा खलु वै राजां कामयते। अथं ब्राह्मणं जिनाति। दिवाँ ब्राह्मणो गांयेत्। नक्त रं राजन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहंः। क्ष्रत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्ष्रत्रेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृहीतं भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इतिं ब्राह्मणो गायेत्। इष्टापूर्तं वै ब्राँह्मणस्यं॥५४॥

ड्ष्टापूर्तेनैवेन् स समर्धयित। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्यमु संङ्गाममंहिन्निति राजन्यः। युद्धं व राजन्यंस्य। युद्धेनैवेन् स समर्धयित। अक्रुप्ता वा एतस्यर्तव इत्यांहुः। योऽश्वमेधेन् यजंत इति। तिस्रोंऽन्यो गायंति तिस्रोंऽन्यः। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवः। ऋतूनेवास्में कल्पयतः। ताभ्या स् सङ्स्थायाम्। अनोयुक्ते च शते च ददाति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति॥५५॥

गायेताङ्कामेद्वाह्मणस्यं कल्पयतश्चत्वारिं च॥

सर्वेषु वा एषु लोकेषुं मृत्यवोऽन्वायंत्ताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्। लोकेलोंक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। लोकाल्लोंकादेव मृत्युमवंयजते। नैनं लोकेलोंके मृत्युर्विन्दित। यदमुष्मै स्वाहाऽमुष्मै स्वाहेति जुह्वंथ्मश्रक्षीत। बहुं मृत्युम्मित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवैकां जुहुयात्। एको वा अमुष्मिंलोंके मृत्युः॥५६॥

अशन्या मृत्युरेव। तमेवामुष्मिं ह्लोके ऽवंयजते। भ्रूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्याऽथं। कस्मां द्यज्ञेऽपिं क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं। यद्भूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाऽऽहुंत्या तर्पयित्वा पंरिपाणं कृत्वा। भ्रूण्घ्रे भेषुजं करोति। एताः हु वै मृण्डिभ औदन्यवः। भ्रूण्हृत्यायै प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार। यो हास्यापि प्रजायां ब्राह्मणः हन्तिं। सर्वस्मै तस्मै भेषुजं करोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ उत्तमामाहुंतिं जुहोति। वर्रुणो वै जुम्बकः। अन्तत एव वर्रुणमवयजते। खुलुतेर्विक्टिधस्यं शुक्कस्यं पिङ्गाक्षस्यं मूर्धं जुंहोति। एतद्वै वर्रुणस्य रूपम्। रूपेणैव वर्रुणमवयजते॥५८॥

लोके मृत्युर्जुहोतिं मूर्धं जुंहोति द्वे चं॥-----[१५]

वारुणो वा अर्थः। तं देवतंया व्यर्धयति। यत्प्रांजापृत्यं करोति। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायत्यांह। वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽश्वांय नमः प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽधिपतय इत्यांह॥५९॥

धर्मो वा अधिपतिः। धर्ममेवार्वं रुन्धे। अधिपतिर्स्यधिपतिं मा कुर्वधिपतिर्हं प्रजानां भूयासमित्यांह। अधिपतिमेवैन रे समानानां करोति। मां धेहि मियं धेहीत्यांह। आशिषं-मेवैतामाशांस्ते। उपार्कृताय स्वाहेत्युपार्कृते जुहोति। आलेब्धाय स्वाहेति नियुंक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुहोति। एषां लोकानांम्भिजिंत्यै॥६०॥

प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। योंऽश्वमेधेन यजंते। आग्नेयमैन्द्राग्नमाश्विनम्। तान्पशूनालंभते प्रतिष्ठित्यै। यदांग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतां एवावं रुन्थे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षुत्रमिन्द्रेः। यदैन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

ब्रह्मक्षत्रे एवावं रुन्धे। यदांश्विनो भवंति। आशिषामवंरुद्धे। त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। अग्नयेऽ रहोम्चेऽष्टाकंपाल इति दर्शहिवष्मिष्टिं निर्वपित। दशाँक्षरा विराट्। अर्न्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतस् इतिं याज्यानुवाक्यां भवन्ति सर्वत्वायं॥६२॥

अधिपतय इत्यांह्[भिंजित्या ऐन्द्राग्नो भवंति रुन्ध् एकं च॥----[१६]

यद्यश्वंमुप्तपंद्विन्देत्। आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। सौम्यं चरुम्। सावित्रमृष्टाकंपालम्। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेवेनं भिषज्यति। यथ्सौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीना राजाः। याभ्यं एवेनं विन्दति॥६३॥

ताभिरेवेनं भिषज्यति। यथ्सांवित्रो भवंति। स्वितृप्रंसूत एवेनं भिषज्यति। एताभिरेवेनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। पौष्णां चरुं निर्वपेत्। यदिं श्लोणः स्यात्। पूषा वे श्लोण्यंस्य भिषक्। स एवेनं भिषज्यति। अश्लोणो हैव भंवति॥६४॥

रौद्रं चुरुं निर्विपेत्। यदिं महुती देवतांऽभिमन्येत।
एत्द्देवत्यों वा अश्वः। स्वयैवैनं देवतंया भिषज्यति।
अगदो हैव भेवति। वैश्वानुरं द्वादंशकपालुं निर्विपेन्मृगाखरे
यदि नागच्छैत्। इयं वा अग्निवैश्वानुरः। इयमेवैनंमुर्चिभ्यां
परिरोधमानंयति। आहैव सुत्यमहंर्गच्छति। यद्यधीयात्॥६५॥

अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पर्यः। वायव्यं आज्यंभागः। यजंमानो वा अश्वः। अरहंसा वा एष गृहीतः। यस्याश्वो मेधाय प्रोक्षितोऽध्येति। यद रहोमुचे निर्वपंति। अरहंस एव तेनं मुच्यते। यजंमानो वा अश्वः। रतंसा वा एष व्यृध्यते॥ ६६॥

यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षिंतोऽध्येतिं। सौर्य रेतः। यथ्सौर्यं पयो भवंति। रेतंसैवेन् स् समर्धयित। यजमानो वा अश्वः। गर्भैर्वा एष व्यृध्यते। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षिंतोऽध्येतिं। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भेरेवेन् स् समर्धयिति। अथो यस्यैषाऽश्वंमेधे प्रायंश्वित्तः क्रियतें। इष्ट्वा वसींयान्भवति॥६७॥

बिन्दत्यश्लोंणो हैव भंवत्यधीयाद्दंध्यते गर्भेरेवैन् स समंधंयति द्वे चं॥———[१७]

तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्थ्स इस्थिते निर्वपेत्। द्वाद्शिभवें विष्टिंभियं जेति। यदिष्टिंभियं जेत। उपनामुंक एनं यज्ञः स्यात्। पापीया १ स्तु स्यात्। आप्तानि वा एतस्य छन्दा १ सि। य ईजानः। तानि क एतावंदाशु पुनः प्रयं जीतेति। सर्वा वै स इस्थिते यज्ञे वागांप्यते॥६८॥

साप्ता भंवति यातयाँम्नी। ऋूरीकृतेव हि भवत्यरुष्कृता। सा न पुनंः प्रयुज्येत्यांहुः। द्वादंशैव ब्रंह्मौदनान्थ्सङ्स्थिते निर्वपेत्। प्रजापंतिर्वा ओंदनः। युज्ञः प्रजापंतिः। उपनामुंक एनं युज्ञो भवति। न पापीयान्भवति। द्वादेश भवन्ति। द्वादेशमासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रति तिष्ठति॥६९॥

आप्यते संवथ्सर एकं च॥----[१८]

पृष वै विभूनामं युज्ञः। सर्वरं हु वै तत्रं विभु भंवति। युत्रेतनं युज्ञेन युज्ञंनते। पृष वै प्रभूनामं युज्ञः। सर्वरं हु वै तत्रं प्रभु भंवति। युत्रेतनं युज्ञेन युज्ञंनते। पृष वा ऊर्ज्ञस्वान्नामं युज्ञः। सर्वरं हु वै तत्रोर्ज्ञस्वद्भवति। युत्रेतनं युज्ञेन युज्ञंनते। पृष व पर्यस्वान्नामं युज्ञः॥७०॥

सर्वर् हु वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। पृष वै विधृतो नामं यज्ञः। सर्वर् हु वै तत्र विधृतं भवति। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। पृष वै व्यावृत्तो नामं यज्ञः। सर्वर् हु वै तत्र व्यावृत्तो भवति। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। पृष वै प्रतिष्ठितो नामं यज्ञः। सर्वर् ह वै तत्र प्रतिष्ठितो नामं यज्ञः। सर्वर् ह वै तत्र प्रतिष्ठितं भवति॥७१॥

यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। एष वै तेंज्ञस्वी नामं य्ज्ञः। सर्वरं हु वै तत्रं तेज्ञस्वि भंवति। यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। एष वै ब्रंह्मवर्च्सी नामं य्ज्ञः। आ हु तत्रं ब्राह्मणो ब्रंह्मवर्च्सी जांयते। यत्रैतनं य्ज्ञेन यजंन्ते। एष वा अंतिव्याधी नामं य्ज्ञः। आ हु वै तत्रं राज्ञन्योंऽतिव्याधी जांयते। यत्रैतेनं य्ज्ञेन यजंन्ते। एष वै दीर्घो नामं य्ज्ञः। दीर्घायुंषो हु वै तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यत्रैतेनं य्ज्ञेन यजंन्ते। एष वै क्रुप्तो नामं य्ज्ञः। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं य्ज्ञेन

### यजंन्ते॥७२॥

पर्यस्वान्नामं युज्ञः प्रतिष्ठितं भवति यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते षट्वं (एष वै विभूः प्रभूरूर्जस्वान्पर्यस्वान् विर्थृतो व्यावृत्तः प्रतिष्ठितस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यतिव्याधी दीर्घः क्रुप्तो द्वादंश॥)॥———[१९]

तार्प्येणाश्वर् संज्ञंपयन्ति। युज्ञो वै तार्प्यम्। युज्ञेनैवैन्र् समर्धयन्ति। यामेन् साम्ना प्रस्तोताऽनूपंतिष्ठते। यमुलोकमेवेनं गमयति। तार्प्ये चं कृत्यधीवासे चाश्वर् संज्ञंपयन्ति। एतद्वे पंशूनार रूपम्। रूपेणैव पृशूनवं रुन्थे। हिर्ण्युक्शिपु भंवति। तेजुसोऽवंरुख्वे॥७३॥

रुक्मो भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वीं भवति। प्रजापंतेराप्त्यै। अस्य वै लोकस्यं रूपन्तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिरण्यकशिपु। आदित्यस्यं रुक्मः। प्रजापंतेरश्वः। इममेव लोकन्तार्प्यणाप्तोति॥७४॥

अन्तरिक्षं कृत्यधीवासेनं। दिव हिरण्यकशिपुनां। आदित्य हिरण्यकशिपुनां। अश्वेनैव मेध्येन प्रजापंतेः सायुज्य सलोकतांमाप्रोति। एतासांमेव देवतांना सायुज्यम्। सार्थिता समानलोकतांमाप्रोति। योंऽश्वमेधेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥ ७५॥

अवंरुध्या आप्नोत्यृष्टौ चं॥———[२०]

आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस आदित्येभ्यः। अमुमादित्यमश्वई श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्। तेंंऽब्रुवन्। यन्नो नेंष्ट। स वर्यो भूदितिं। तस्मादश्वर् सवर्येत्याह्वंयन्ति। तस्माँ द्यञ्जे वरों दीयते। यत्प्रजापंतिरा-लुब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यच्छ्वयदरुरासींत्। तस्मादर्वा नामं। यथ्सद्यो वाजांन्थ्समजंयत्। तस्माद्वां नामं। यदस्रेराणां लोकानादेत्त। तस्मादादित्यो नामं। अग्निर्वा अंश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेंऽग्नो चित्यं उत्तरवेदिम्रंपवपंति। योनिमन्तमेवेनंमायतंनवन्तं करोति॥७७॥

योनिमानायतंनवान्भवति। य एवं वेदं। प्राणापानौ वा एतौ देवानाम्। यदंकिश्वमेधौ। प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानाम्। यदंकिश्वमेधौ। ओजो बलंमेवावं रुन्धे। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधैंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिं चिनोतिं। तावंकिश्वमेधौ। अर्काश्वमेधावेवावं रुन्धे। अथो अर्काश्वमेधयोरेव प्रतिं तिष्ठति॥७८॥

नामं करोति सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनश्चत्वारि च॥-----[२१]

प्रजापंतिं वै देवाः पितरम्। पृशुं भूतं मेधायालंभन्त। तमालभ्योपावसन्। प्रातर्यष्टांस्मह् इति। एकं वा पृतद्देवानामहंः। यथ्संवथ्सरः। तस्मादर्श्वः पुरस्तांथ्संवथ्सर आलंभ्यते। यत्प्रजापंतिरालुब्योऽश्वोऽभंवत्। तस्मादर्श्वः। यथ्सद्यो मेधोऽभंवत्॥७९॥ तस्मादश्वम्धः। वेदुकोऽश्वमाशुं भविति। य एवं वेदे। यद्वै तत्प्रजापित्रालुब्धोऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वः प्रजापितः पशूनामनुंरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिंरूपो जायते। य एवं वेदे। सर्वाणि भूतानि सम्भृत्यालंभते। समेनं देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं भरन्ति। यौऽश्वम्धेन यजंते॥८०॥

य उं चैनमेवं वेदं। पृतद्वै तद्देवा पृतान्देवतांम्। पृशुं भूतं मेधायालंभन्त। यज्ञमेव। यज्ञेनं यज्ञमयजन्त देवाः। कामप्रं यज्ञमंकुर्वत। तेऽमृत्त्वमंकामयन्त। तेऽमृत्त्वमंगच्छन्। योऽश्वमेधेन यज्ञेते। देवानांमेवायंनेनैति॥८१॥

प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यजते काम्प्रेणं। अपुनर्मारमेव गंच्छति। एतस्य वै रूपेणं पुरस्तात्प्राजापत्यमृष्मं तूपरं बंहुरूपमालंभते। सर्वेभ्यः कामेंभ्यः। सर्वस्याप्त्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनाप्रोति। सर्वं जयति। योऽश्वमेधेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥

मेधोऽभंबृद्यजंत एति वेदं॥-----[२२]

यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमंनी वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। अहोरात्रे वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमंनी। यथ्मायं प्रांतर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं जुह्वति। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पुदे वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य प्देपंदे जुहोति। दुर्शपूर्णमासौ वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पदे॥८३॥

यद्दंशपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्येव मेध्यंस्य प्देपंदे जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य प्देपंदे जुह्वति। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य विवर्तनं वेदं। अश्वंस्येव मेध्यंस्य विवर्तनं विवर्तनं विवर्तनं विवर्तनं जुहोति। असौ वा आंदित्योऽश्वंः। स आंहवनीयमागंच्छति। तद्विवंति। यदंग्निहोत्रं जुहोति। अश्वंस्येव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तनं जुहोति। एतदनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तनं जुहोति। एतदनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तनं जुहोति। उत्वंत्नकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तनं जुह्वति॥८४॥

पदे अग्निहोत्रं जुहोति त्रीणिं च॥———[२३]

प्रजापंतिस्तमंष्टादिशिभिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मै युअन्ति तेज्साऽपंप्राणा अपृश्रीरूध्वां प्रजापंतिः प्रेणाऽन् प्रथमेन प्रजापंतिरकामयत मृहान्वैश्वदेवो वा अश्वोऽश्वंस्य प्रजापंतिस्तं यंज्ञकृतुभिरपृश्रीर्बांह्मणौ सर्वेषु वारुणो यद्यश्वन्तदांहुरेष वै विभूस्तार्प्येणांदित्याः प्रजापंतिं पितर्ं यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमेनी त्रयोंविश्शितः॥२३॥ प्रजापंतिर्सिमँ ह्लोक उत्तर्तः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत मृहान्यत्प्रातः प्र वा एष पृभ्यो लोकेभ्यः सर्वरं हु वै तत्र पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चृत्वार्यशीतिः॥८४॥ प्रजापंतिरश्वमे्धं जुंह्नति॥

# हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

### ॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

#### ॥प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भृद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवाः संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति न्स्ताक्ष्यों अरिष्टनेभिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिंद्धातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशेम देवितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिंदिधातु। आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्मादस्मादितोऽमुतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्करिष्ट्या। वाय्वश्वां रिम्पित्यः। मरींच्यात्मानो अद्रुहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वः। देवीः पंर्जन्यसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥

अपार्श्यंष्णिम्पा रक्षंः। अपार्श्यंष्णिम्पारघम्। अपाँघ्रामपं चावर्तिम्। अपदेवीरितो हित। वर्ज्यं देवीरजीता इश्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥३॥

8]

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुंमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादिंत्य-मण्डलम्। सर्वैरेव विधास्यते। सूर्यो मरींचिमादंत्ते। सर्वस्माद्भवंनाद्धि। तस्याः पाकविंशेषेण। स्मृतं काल-विशेषंणम्। नदीव प्रभंवात्काचित्। अक्षय्याध्स्यन्दते यथा॥४॥

तां नद्योऽभि संमायन्ति। सो्रुः सतीं न निवंति। पुवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवथ्सर् श्रिंताः। अणुशश्च महश्रश्च। सर्वे समवयत्रितम्। सतैः सूर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः संत्र निवर्तते। अधिसंवथ्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥

अणुभिश्च महिद्धिश्च। समार्रूढः प्रदृश्यंते। संवथ्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसंत्वः प्रदृश्यंते। पृटरों विक्लिधः पिङ्गः। पृतद्वंरुण्लक्षंणम्। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। सहस्रं तत्र नीयंते। एक हि शिरो नाना मुखे। कृथ्सं तंदतुलक्षंणम्॥६॥

उभयतः सप्तैन्द्रियाणि। जिल्पतं त्वेव दिह्यंते। शुक्लकृष्णे संवंध्सर्स्य। दक्षिणवामयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषन्निह रातिरस्तिवितं।

नात्र भुवंनम्। न पूषा। न पृशवंः। नाऽऽदित्यः संवथ्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियतंमं विद्यात्। एतद्वै संवथ्सरस्य प्रियतंम श् रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पथ्स्यमांनो भ्वति। इदं पुण्यं कुरुष्वेति। तमाहरंणं दद्यात्॥ ७॥

<del>---</del>[२]

साकुआना र स्प्तर्थमाहुरेक जम्। षडुं द्यमा ऋषेयो देवजा इतिं। तेषांमिष्टानि विहिंतानि धामुशः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपशः। को नुं मर्या अमिथितः। सखा सखांयमब्रवीत्। जहांको अस्मदीषते। यस्तित्याजं सिख्विवद् सखांयम्। न तस्यं वाच्यपि भागो अस्ति। यदी रे शृणोत्यलक रे शृणोति॥८॥

न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामितिं। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमानः। विनेनादाभिधावः। षष्टिश्च त्रिश्शंका वृत्गाः। शुक्लकृष्णौ च षाष्टिंकौ। साराग्वस्त्रेर्ज्र्रदेक्षः। वस्नतो वसुंभिः सह। संवथ्सरस्यं सिवतुः। प्रैषकृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥

अमू इश्चं परिरक्षंतः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। एतदेव विजानीयात्। प्रमाणं कालपंर्यये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तिन्नबोधंत। शुक्लवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणांऽऽवर्तते संह। निजहंन् पृथिवी स् सूर्वाम्॥१०॥ ज्योतिषाँ ऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणिं वासार्सा। आदित्यानां निबोधंत। संवथ्सरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिदंदतार् सह। अदुःखों दुःखचंक्षुरिव। तद्मां ऽऽपीत इव दृश्यंते। शीतेनां व्यथंयित्रव। रुरुदंक्ष इव दृश्यंते। ह्रादयतें ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षुंषी। या व प्रजा भ्रं इथ्यन्ते। संवथ्सरात्ता भ्रं इथ्यन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवथ्सरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥

[३]

अक्षिंदुःखोत्थितस्यैव। विप्रसंत्रे क्नीनिके। आङ्के चार्द्रणं नास्ति। ऋभूणां तित्रबोधंत। कनकाभानिं वासार्सा। अहतांनि निबोधंत। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वो जीवनप्रदः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। शुरद्यंत्रोपदृश्यंते॥१२॥

अभिधून्वन्तोऽभिघ्नंन्त इव। वातवंन्तो म्रुद्गंणाः। अमृतो जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैविस्तिवंणैरिव। विशिखासंः कपूर्दिनः। अनुद्धस्य योथ्स्यंमान्स्य। नुद्धस्यंव लोहिनी। हेमतश्चक्षंषी विद्यात्। अक्ष्णयोः क्षिपणोरिंव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवेलोकेषु। मनूनांमुद्कं गृंहे। एता वाचः प्रवद्न्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिंरीः। ता अग्निः पर्वमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेह्नंवः स्वतपसः। मरुतः सूर्यत्वचः। शर्म सप्रथा

### आर्वृणे॥१४॥

[୪]

अतिताम्राणि वासार्सा। अष्टिवंजिशतिष्ठें च। विश्वे देवा विप्रंहर्न्ति। अग्निजिंह्वा असश्चंत। नैव देवों न मृत्यः। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृकंचन् विद्यंते। दिव्यस्यैका धनुंरार्तिः। पृथिव्यामपंरा श्रिता॥१५॥

तस्येन्द्रो विम्नेरूपेण। धनुज्यांमिछिनथ्स्वंयम्। तिदंन्द्रधनुं-रित्युज्यम्। अभवंणेषु चक्षंते। एतदेव शंयोबर्ह्स्पत्यस्य। एतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्त्तिः। शिर् उत्पिपेष। स प्रवृग्योंऽभवत्। तस्माद्यः सप्रवृग्येणं युज्ञेन यजंते। रुद्रस्य स शिर्ः प्रतिद्धाति। नैन र् रुद्र आरुको भवति। य एवं वेदं॥१६॥

-[٤]

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिरश्चात्। शिशिरः प्रदृश्यते। नैव रूपं नं वासार्सा। न चक्षुः प्रतिदृश्यते। अन्योन्यं तु नं हिङ्स्रातः। सृतस्तंद्देवलक्षणम्। लोहितोऽक्ष्णि शारशीर्ष्णिः। सूर्यस्योदयनं प्रति। त्वं करोषि न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुंकाम्॥१७॥

निजानुका में न्यञ्चलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नम्न्ते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्रोति। य एवं वेद। स खलु संवथ्सर एतैः सेनानीभिः स्ह। इन्द्राय सर्वान्कामानंभिवृहति। स द्रफ्सः। तस्यैषा भवंति॥१८॥

अवंद्रफ्सो अर्श्युमतींमतिष्ठत्। इयानः कृष्णो द्शिभिः सहस्रैः। आवर्तिमन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उपस्रुहि तं नृमणामथंद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् परिवृश्चति। पृथिंव्यर्शुमंती। तामन्ववंस्थितः संवथ्सरो दिवं चं। नैवं विदुषाऽऽचार्योन्तेवासिनो। अन्योन्यस्मैं द्रुह्याताम्। यो द्रुह्यति। भ्रश्यते स्वर्गाल्लोकात्। इत्यृतुमंण्डलानि। सूर्यमण्डलान्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्वर संनिर्वृचनाः॥१९॥

**[٤**]

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्ङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषिमान् विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमांतपुन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यंपोऽष्ट्रमः। स महामेरुं नं जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंतपुष्कुलं चित्रभांनु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्॥२०॥

तस्मिन् राजानमधिविश्वयेमिमिति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाञ्चोतिर्लभृन्ते। तान्थ्सोमः कश्यपादधिनिर्धमित। अस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्त शीर्षण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्थ्सप्त सूर्यानिति। पश्चकर्णो वाथ्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्राक्षिः॥२१॥

आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेद्यिते। न हि शेकुमिव महामेरं गुन्तुम्। अपश्यमहमेथ्सूर्यमण्डलं परिवर्तमानम्। गार्ग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेरुम्। एकं चाजहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मांदिह तिष्ठितपाः॥२२॥

अमुत्रेतरे। तस्मांदिहातिष्रितपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिवमनुप्रविष्टाः। तान्-वेति पृथिभिदिक्षिणावान्। ते अस्मै सर्वे घृतमांतप्नि। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। सप्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

स्प्त होतांर ऋत्विजंः। देवा आदित्यां ये स्प्ता तेभिः सोमाभी रक्षण इति। तदंप्याम्रायः। दिग्भाज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्यावं इन्द्र ते श्तर श्तं भूमीः। उतस्युः। नत्वां विज्ञन्थ्सहस्रू सूर्याः॥२४॥

अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वादतूनां नानांसूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥

**-**[り]

क्वेदमभ्रं निविशते। क्वायरं संवथ्सरो मिथः। क्वाहः क्वेयं देव रात्री। क्व मासा ऋतवः श्रिताः। अर्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्तुंटिभिः सह। क्वेमा आपो निंविश्वन्ते। यदीतों यान्ति सम्प्रंति। काला अफ्सु निंविश्वन्ते। आपः सूर्ये समाहिताः॥२६॥

अभ्राण्यपः प्रंपद्यन्ते। विद्युथ्सूर्ये स्माहिता। अनवर्णे इंमे भूमी। इयं चांऽसौ च रोदंसी। किङ्स्विदत्रान्तंरा भूतम्। येनेमे विंधृते उभे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंथ्सस्य वेदंना। इरावती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दशस्ये॥२७॥

व्यंष्टभ्राद्रोदंसी विष्णंवेत। दाधर्थं पृथिवीम्भितों म्यूखैंः। किं तद्विष्णोर्बलमाहुः। का दीप्तिः किं प्रायंणम्। एको युद्धारंयद्देवः। रेजती रोद्सी उंभे। वाताद्विष्णोर्बलमाहुः। अक्षराँदीप्तिरुच्यंते। त्रिपदाद्धारंयद्देवः। यद्विष्णोरेकमुत्तंमम्॥२८॥

अग्नयो वायंवश्चैव। एतदंस्य प्रायंणम्। पृच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमं मध्यमश्चंतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृच्छामि सम्प्रंति। अमुमाहुः पंरं मृत्युम्। प्वमानं तु मध्यंमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चन्द्रमाश्चतुरुच्यंते॥२९॥ अनाभोगाः पेरं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुण्यकृतो जनाः। ततों मध्यममायन्ति। चतुमंग्निं च सम्प्रति। पृच्छामि त्वां पापकृतः। यत्र यातयते यमः। त्वं नस्तद्वह्मंन् प्रब्रूहि। यदि वैत्थाऽसतो गृंहान्॥३०॥

कृश्यपांद्दिताः सूर्याः। पापान्निर्प्रान्ति सर्वदा। रोदस्योन्तिर्देशेषु। तत्र न्यस्यन्ते वास्। तेऽशरीराः प्रंपद्यन्ते। यथाऽपुंण्यस्य कर्मणः। अपाण्यपादंकेशासः। तत्र तेऽयोनिजा जनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमांपद्यन्ते। अद्यमानाः स्वकर्मभिः॥३१॥

आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्ते वास्रवैः। अपैतं मृत्युं जंयित। य एवं वेदं। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रृंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिंथिः सिद्धगंमनः सिद्धागंमनः। तस्यैषा भवंति। आयस्मिन्थ्सप्त वास्रवाः। रोहंन्ति पूर्व्या रुहंः॥३२॥

ऋषिर्ह दीर्घश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिथिरित। कश्यपः पश्यंको भ्वति। यथ्सवं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुरुष्स्य। तस्यैषा भवंति। अग्ने नयं सुपथां राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहराणमेनः। भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेमेति॥३३॥

[८]

अग्निश्च जातंवेदाश्च। सहोजा अंजिराप्रभुः। वैश्वानरो नंर्यापाश्च। पङ्किरांधाश्च सप्तंमः। विसर्पेवाऽष्टंमोऽग्नीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिंता इति। यथर्त्ववाग्नेरर्चिर्वर्णविशेषाः। नीलार्चिश्च पीतकाँचिश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैका-दशंस्रीकस्य। प्रभ्राजमाना व्यंवदाताः॥३४॥

याश्च वासुंकिवैद्युताः। रजताः पर्रुषाः श्यामाः। कपिला अतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं वैद्युतो हिनुस्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पाराश्चर्यः। विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैंच्छमिति। न त्वकांम १ हन्ति॥३५॥

य एवं वेद। अथ गंन्धर्वगणाः। स्वानुभ्राट्। अङ्घारिकम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशांनुर्विश्वावंसुः। मूर्धन्वान्थ्सूँर्यवृचीः। कृतिरित्येकादश गंन्धर्वगणाः। देवाश्च महादेवाः। रश्मयश्च देवां गरगिरः॥३६॥

नैनं गरों हिन्स्ति। य एंवं वेद। गौरी मिंमाय सिल्लानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमित्रिति। वाचों विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुर्क्रमिष्यामः। व्राहवंः स्वतपसः॥३७॥

विद्युन्मंहसो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधाँश्चेत्येते। ये चेमेऽशिंमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवंर्षन्ति। वृष्टिंभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तिभिवां तैरुदीरिताः। अमूँ ल्लोकानभिवंर्षन्ति। तेषांमेषा भवंति। समानमेतदुदंकम्॥३८॥

उ्चैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पूर्जन्या जिन्वंन्ति। दिवं जिन्वन्त्यग्नय इति। यदक्षरं भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासंते। महर्षिमस्य गोप्तारम्। जमदंग्निमकुर्वत। जमदंग्निराप्यांयते। छन्दोभिश्चतुरुत्तरेः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः॥३९॥

ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नेः प्रदिशो दिशेः। तच्छं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदे। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

3]

सहस्रवृदियं भूमिः। परं व्योम सहस्रवृत्। अश्विनां भुज्यूनास्त्या। विश्वस्यं जगतस्पंती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यथुः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। स्रमां इतिं स्नीपुमम्। शुक्रं वांमन्यद्यंज्तं वांमन्यत्। विषुरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भुद्रा वाँ पूषणाविह रातिरंस्तु। वासाँत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौ। द्यावांभूमी चुरथंः स् सखांयौ। ताविश्वनां रासभांश्वा हवंं मे। शुभस्पती आगतर्र सूर्ययां सह। त्युग्रोह भुज्युमंश्विनोदमेघे। र्यिं न कश्चिन्ममृवां (२) अवांहाः। तमूहथुर्नीभिरांत्मुन्वतींभिः। अन्तरिक्षप्रिद्भिरांदकाभिः॥४२॥

तिस्रः, क्षपस्त्रिरहांतिव्रजिद्धिः। नासंत्या भुज्यमूंहथुः पत्ङ्गेः। समुद्रस्य धन्वंत्रार्द्रस्यं पारे। त्रिभीरथैंः शतपंद्धिः षडंश्वेः। सवितारं वितंन्वन्तम्। अनुंबध्नाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरश्चेव। सवितारेपसोऽभवत्। त्यः सुतृप्तं विदित्वेव। बहुसोम गिरं वंशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्थ्सोमंतृपसुषु। स सङ्ग्रामस्तमों द्योऽत्योतः। वाचो गाः पिंपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवां ऽत्येत्यन्ये। रक्षसां निन्वताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। पुवमेतौ स्थों अश्विना। ते पुते द्युंः पृथिव्योः। अहं रहर्गर्भं दधाथे॥४४॥

तयोंरेतौ वृथ्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहंः। दिवो रात्रिः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भवतः। तयोंरेतौ वृथ्सौ। अग्निश्चांदित्यश्चं। रात्रेर्वृथ्सः। श्वेत आंदित्यः। अह्योऽग्निः॥४५॥

ताम्रो अंरुणः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरेतौ वथ्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरेतौ वथ्सौ॥४६॥

उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तौ तावेव प्रतिपद्येते। सेय॰ रात्रीं गुर्भिणीं पुत्रेण संवंसित। तस्या वा एतदुल्बणम्ं। यद्रात्रौं रृष्टमयः। यथा गोर्गिभिण्यां उल्बणम्ं। एवमेतस्यां उल्बणम्ं। प्रजियष्णुः प्रजया च पशुभिश्च भ्वति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयंन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य वथ्मः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

**-**[80]

प्वित्रंवन्तः परिवाज्ञमासंते। पितेषां प्रत्नो अभिरंक्षति व्रतम्। महः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदंधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्। पिवित्रं ते वितंतं ब्रह्मणस्पतें। प्रभुगित्रांणि पर्येषिविश्वतंः। अतंप्ततनूर्न तदामो अंश्रुते। शृतास् इद्वहंन्तस्तथ्समांशत। ब्रह्मा देवानांम्। असंतः सद्ये ततंक्षुः॥४८॥

ऋषंयः स्प्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षेत्रैः शङ्कृतोऽवसन्। अर्थ सवितुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निहितास उचा। नक्तं दर्दश्चे कुहंचिद्दिवेयुः। अदंब्यानि वर्रुणस्य वृतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षंत्रमेति। तथ्संवितुवरिण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तथ्संवितुर्वृणीमहे। वयं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठ र सर्वधातमम्। तुरं भगस्य धीमहि। अपांगूहत सविता तृभीन्। सर्वान्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्दृशे। अस्थ्यस्थ्रा सम्भविष्यामः। नाम् नामैव नाम मै॥५०॥

नपुरसंकं पुमाङ्क्यंस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। यजेऽयिक्षे यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षत। पृशवों ममं भूतानि। अनूबन्ध्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियंः स्तीः। ता उंमे पुर्स आंहुः। पश्यंदक्षण्वान्नविचेतद्न्यः। कृविर्यः पुत्रः स इमा चिकेत॥५१॥

यस्ता विजानाथ्मंवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्। तमंनङ्गुलिरावंयत्। अग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्। तमजिंह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमंवाक्छाखम्। वृक्षं यो वेद सम्प्रंति। न स जातु जनः श्रद्धध्यात्। मृत्युर्मा मार्यादितिः। हसित॰ रुदितं गीतम्॥५२॥

वीणांपणवृलासिंतम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानिं स्नेव विद्धिं तत्। अतृष्यु इस्तृष्यंध्यायत्। अस्माञ्जाता में मिथू चरत्रं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतंनः। स् तं मणिमंविन्दत्। सोंऽनङ्गुलिरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्॥५३॥

सोऽजिंह्वो असश्चंत। नैतमृषिं विदित्वा नगरं प्रविशेत्। यंदि प्रविशेत्। मिथौ चरिंत्वा प्रविशेत्। तथ्सम्भवंस्य व्रतम्। आतमंग्ने रथं तिष्ठ। एकाँश्वमेक्योर्जनम्। एकचर्त्रमेक्धुरम्। वातध्रांजिगतिं विभो। नु रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥

नास्याक्षो यातु सर्ज्ञति। यच्छ्वेतांन् रोहिंता इश्चाग्नेः। र्थे युंकाऽधितिष्ठंति। एकया च दशिश्चं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये विर्शत्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिर्शता च। नियुद्धिर्वायविह तां विमुश्च॥५५॥

[88]

आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमाऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि यः पुमान्। इतः सिक्तः सूर्यगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यंते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दृश्यंते॥५६॥

पुवमेतं निंबोधत। आम्न्द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। याहि म्यूरंरोमिभः। मा त्वा केचिन्नियेमुरिंन्न पाशिनः। द्धन्वेव ता इंहि। मा म्न्द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। यामि म्यूरंरोमिभः। मा कचिन्नियेमुरिंन्न पाशिनः। नि्धन्वेव तां (२) इंमि। अणुभिश्च महद्भिश्च॥५७॥

निघृष्वैरस्मायुंतैः। कालैर्हरित्वंमापृन्नैः। इन्द्राऽऽयांहि स्हस्रयुक्। अग्निर्विभ्राष्टिंवसनः। वायुः श्वेतंसिकद्रुकः। संवथ्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचरास्त्व। सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योम्। इन्द्राऽऽगच्छ हरिव आगच्छ मेंधातिथेः। मेष वृषणश्वंस्य मेने॥५८॥

गौरावस्कन्दिन्नहल्यांये जार। कौशिकब्राह्मण गौतमंब्रुवाण। अरुणाश्वां इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितंः। अष्टौदिग्वासंसोऽग्नयंः। अग्निश्च जातवेदांश्चेत्येते। ताम्राश्वांस्ताम्ररथाः। ताम्रवर्णांस्तथाऽसिताः। दण्डहस्ताः खाद्ग्दतः। इतो रुद्राः पराङ्गताः॥५९॥

उक्त स्थानं प्रमाणं चं पुर् इत। बृह्स्पतिश्च सिवता चं। विश्वरूपैरिहाऽऽगंताम्। रथेनोदक्वर्त्मना। अप्रमुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषों वासार्श्स च। कालावयवानामितः प्रतीज्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तरिक्षे शब्दं करोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमार्श्सां चक्रे। तस्यैषा भवंति। वाश्रेवं विद्युदितिं। ब्रह्मण उदरंणमिस। ब्रह्मण उदीरणंमिस। ब्रह्मण आस्तरंणमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस॥६०॥

**-**[१२]

[अपंक्रामत गर्भिण्यः]

अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीमिमां महींम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयौन्यृष्टपुंत्रम्। अष्टपंदिदम्नतिरक्षम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युरघाऽऽहंरत्। अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्मूं दिवम्॥६१॥ अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युरघाऽऽहंरत्। सुत्रामाणं महीमू षु। अदितिर्द्यौरदितिर्न्तिरक्षिम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पश्चजनाः। अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तन्वः परि। देवां (२) उपप्रैथ्सप्तभिः॥६२॥

प्रा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिनिः पुत्रेरिदंतिः। उपप्रैत्पूर्वं युगम्। प्रजायं मृत्यवे तंत्। प्रा मार्ताण्डमाभरिदिति। ताननुक्रमिष्यामः। मित्रश्च वरुणश्च। धाता चार्यमा च। अश्रशंश्च भगंश्च। इन्द्रश्च विवस्वाईश्चेत्येते। हिर्ण्यगर्भो ह्रसः शुंचिषत्। ब्रह्मंजज्ञानं तिदत्पदिमिति। गर्भः प्रांजापत्यः। अथ् पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥ [यथास्थानं गंभिण्यः]

[१३]

योऽसौ तपत्रुदेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायोदेतिं। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायोदंगाः। असौ योंऽस्तमेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायाऽस्तमेतिं। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायाऽस्तंङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरापूर्यति॥६४॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरापूरिष्ठाः। असौ योऽपक्षीयंति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षंत्राणि। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्सृंपत॥६५॥

ड्मे मासाँश्चार्थमासाश्चं। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्संपत। इम ऋतवंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्संपत। अय संवथ्सरः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोथ्संपति च॥६६॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोथ्संपिति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इय॰ रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोथ्संपिति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। ॐ भूर्भुवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुन॰ रीद्वम्॥६७॥

[88]·

अथाऽऽदित्यस्याष्टपुंरुषस्य। वसूनामादित्यानाः स्थाने

स्वतेर्जसा भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। अभिधून्वतांमभिष्ठताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। संवथ्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वः। रश्मयो वो मिथुनं मा नो मिथुनः रीद्वम्॥६८॥

**-**[१५]

आरोगस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुनं रीृद्वम्॥६९॥

[१६]

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्त्रीक्स्य। प्रभ्राजमानानाः रहाणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा

भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। श्यामानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। कपिलानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि। ऊर्ध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जसा भानि॥७०॥

अवपतन्ताना १ रुद्राणा इ स्थाने स्वते जंसा भानि। वैद्युताना १ रुद्राणा इ स्थाने स्वते जंसा भानि। प्रभ्राजमानीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। व्यवदातीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। वासु कि वैद्युतीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। रजताना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। परुषाणा १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। परुषाणा १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। किपलाना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। अतिलोहितीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। अधिलो हितीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। अध्याना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। वैद्युतीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। वैद्युतीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। कै भूर्युवः स्वंः। रूपाणि वो मिथुनं मा नो मिथुन १ रीद्वम्॥ ७१॥

[१७]

अथाग्नेरष्टपुंरुष्स्य। अग्नेः पूर्वदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। सहोजसो दक्षिणदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। अजिराप्रभव उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैश्वानरस्यापरदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। नर्यापस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पङ्किराधस उदग्दिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विसर्पिण उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुंन १ रीढ्वम्॥७२॥

दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। आ यस्मिन्थ्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतक्रतंवित्येते॥७३॥

**-**[१९]

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनोजवसो वः पितृभिंदिक्षिणत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पश्चादुपंदधताम्। विश्वकंमां व आदित्यैरुंत्तरत उपंदधताम्। त्वष्टां वो रूपैरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृथिव्याम्। वायुरन्तरिक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमां दिक्षु। नक्षंत्राणि स्वलोके। एवा ह्यंव। एवा ह्यंग्ने। एवा हि वायो। एवा हींन्द्र। एवा हि पूषन्। एवा हि देवाः॥७४॥

**-**[२०]

आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽमृतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्रिद्या। वाय्वश्वां रश्मिपत्यः। मरींच्यात्मानो अद्रुहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वः॥७५॥

देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवृत्वायं मे सुत। अपाश्चंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चंिष्णम्पारघम्। अपाँघामपंचावर्तिम्। अपंदेवीरितो हित। वज्ञं देवीरजीता श्रश्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदिंतिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥७६॥

भृद्रं कर्णभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवाः संस्तृन्भिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। केतवो अरुणासश्च। ऋष्यो वातरश्चनाः। प्रतिष्ठाः शृतधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सर्रस्वति। मा ते व्योम सन्दिशे॥७७॥

योऽपां पुष्पं वेदं। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भंवति। चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भंवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। अग्निर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽग्नेरायतंनं वेदं॥७८॥

आयतंनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो वायोरायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति॥७९॥

आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै तपंत्रपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽमुष्य तपंत आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥

य एवं वेदे। योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भवति। नक्षेत्राणि वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भवति। यो

नक्षंत्राणामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै नक्षंत्राणामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं॥८२॥

योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। पूर्जन्यो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः पूर्जन्यंस्याऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै पूर्जन्यंस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य पृवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं॥८३॥

आयतंनवान् भवति। संवथ्सरो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः संवथ्सरस्याऽऽयतंनं वेदे। आयतंनवान् भवति। आपो वै संवथ्सरस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदे। यौऽपसु नावं प्रतिष्ठितां वेदे। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥

इमे वै लोका अपसु प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपार रस्मुदंयरसत्र्। सूर्ये शुक्रर समाभृतम्। अपार रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तममितिं। इमे वै लोका अपार रसंः। तेऽमुष्मिन्नादित्ये समाभृताः। जानुद्व्रीमृत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फद्व्रम्॥८५॥

पुष्करपर्णैः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्वि-हायसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मौत्प्रणीतेऽयम्ग्निश्चीयतें। साप्रणीतेऽयम्पसु ह्ययंं चीयतें। असौ भुवंनेप्यनांहिताग्निरेताः। तम्भितं एता अबीष्टंका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयोः। पृशुब्न्धे चातुर्मास्येषुं॥८६॥

अथो आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्विति। एतद्धे स्मृ वा आहुः शण्डिलाः। कमृग्निं चिनुते। सृत्रियमृग्निं चिन्वानः। स्वथ्मरं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते। सावित्रमृग्निं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिनुते॥८७॥

नाचिकेतम्भिं चिन्वानः। प्राणान्प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिनुते। चातुर्होत्रियम्भिं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिनुते। वैश्वसृजम्भिं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिनुते। उपानुवाक्यमाशुम्भिं चिन्वानः॥८८॥

इमाँ ह्यो कान्य्रत्यक्षेण। कम् भिं चिन्ते। इममां रूणकेतुकम् भिं चिन्वान इति। य एवासौ। इतश्चा ऽमृतंश्चा ऽव्यतीपाती। तिमिति। यौ ऽग्नेर्मिथूया वेदे। मिथुन्वान्नेवति। आपो वा अग्नेर्मिथूयाः। मिथुन्वान्नेवति। य एवं वेदे॥८९॥

[२२]

आपो वा इदमांसन्थ्सिल्लमेव। स प्रजापंतिरेकंः पुष्करपूर्णे सम्भवत्। तस्यान्तुर्मनंसि कामः सम्वर्तत। इद॰ सृजेयमिति। तस्माद्यत्पुरुषो मनसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदति। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूक्ता। कामस्तदग्रे समवर्तताधि। मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्॥९०॥ स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्न्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषेति। उपैनन्तदुपंनमित। यत्कांमो भवंति। य एवं वेदं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तृत्वा। शरीरमधूनुत। तस्य यन्मा १ समासीत्। ततोंऽरुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषंय उदंतिष्ठन्न्॥९१॥

ये नखाः। ते वैखान्साः। ये वालाः। ते वालखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्। अन्तर्तः कूर्मं भूतः सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्। मम् वैत्वङ्गार्सा। समंभूत्॥९२॥

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहिम्हास्मितिं। तत्पुरुंषस्य पुरुष्वत्वम्। स सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर्रं समंभूः। त्विम्दं पूर्वः कुरुष्वेतिं। स इत आदायाऽऽपः॥९३॥

अञ्चलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। पुवाह्येवेतिं। ततं आदित्य उदंतिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांरुणः केतुर्दक्षिणत उपादंधात्। पुवाह्यग्र इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। पुवा हि वायो इतिं॥९४॥

ततों वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथांरुणः केतुरुत्तर्त उपादंधात्। एवाहीन्द्रेतिं। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदींची दिक्। अथांरुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। एवा हि पूष्तिति। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथांरुणः केतुरुपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इति। ततो देवमनुष्याः पितरंः। गृन्धर्वापस्रस्श्लोदंतिष्ठन्न्। सोध्वां दिक्। या विप्रुषो विपरापतन्न्। ताभ्योऽसुंरा रक्षा रेसि पिशाचाश्लोदंतिष्ठन्न्। तस्मात्ते पराभवन्न्। विप्रुङ्ग्रो हि ते समंभवन्न्। तदेषाऽभ्यनूंक्ता॥९६॥

आपो ह् यहृंहतीर्गर्भमायत्रं। दक्ष्वं दर्धाना जनर्यन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृंज्यन्त् सर्गाः। अद्भो वा इदश् सम्भूत्। तस्मादिदश् सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवति। तस्मादिदश् सर्वश् शिथिलम्वाऽध्रुवंमिवाभवत्। प्रजापंतिर्वाव तत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविशत्। तदेषाऽभ्यनूक्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानिं। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानंम्भि संविवेशेतिं। सर्वमेवेदमास्वा। सर्वमवुरुद्धां। तदेवानुप्रविशति। य एवं वेदं॥९८॥

**-**[२३]

चतुंष्टय्य आपों गृह्णाति। चत्वारि वा अपाः रूपाणि। मेघों विद्युत्। स्तुन्यिलुर्वृष्टिः। तान्येवावंरुन्थे। आतपंति वर्ष्यां गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंदधाति। पृता वै ब्रंह्मवर्च्स्या आपंः। मुख्त एव ब्रंह्मवर्च्समवंरुन्थे। तस्मान्मुख्तो ब्रंह्मवर्च्सितरः॥९९॥

कूप्यां गृह्णाति। ता देक्षिण्त उपंदधाति। एता वै तेंज्ञस्विनीरापंः। तेजं एवास्यं दक्षिण्तो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽर्धस्तेज्ञस्वितंरः। स्थावरा गृंह्णाति। ताः पृश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थावराः। पृश्चादेव प्रतितिष्ठति। वहंन्तीर्गृह्णाति॥१००॥

ता उत्तर्त उपंदधाति। ओजंसा वा पृता वहंन्तीरिवोद्गंतीरिव आकूर्जतीरिव धावंन्तीः। ओजं पृवास्योंत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धं ओजस्वितंरः। सम्भार्या गृंह्णाति। ता मध्य उपंदधाति। इयं वै संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतिंतिष्ठति। पुल्वल्या गृंह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥

असौ वै पंत्व्याः। अमुष्यांमेव प्रतितिष्ठति। दिक्षूपंदधाति। दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नो वा अन्नं जायते। यदेवान्नोऽन्नं जायते। तदवंरुन्थे। तं वा एतमंरुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषंयोऽचिन्वन्। तस्मादारुणकेतुकंः॥१०२॥

तदेषाऽभ्यनूँक्ता। केतवो अर्रुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठा १ श्तर्था हि। सुमाहितासो सहस्र्धायंस्मिति। श्तर्शश्चेव सहस्रंशश्च प्रतितिष्ठति। य एतम्ग्निं चिंनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०३॥

[२४]

जानुद्धीम्र्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयति। अपार सर्वत्वार्य। पुष्करपूर्णर रुकां पुरुषमित्युपंदधाति। तपो वै पुष्करपूर्णम्। सत्यर रुकाः। अमृतं पुरुषः। एतावृद्वा वाऽस्ति। यावदेतत्। यावदेवास्ति॥१०४॥

तदवंरुन्थे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेधमवंरुन्थे। अथौं स्वर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्रो। आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्ररिद्धया इति। वाय्वश्वां रिष्म्पत्यः। लोकं पृणच्छिद्रं पृण॥१०५॥

यास्तिस्रः पंरम्जाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्येवेतिं। पश्चचितंय उपंदधाति। पाङ्कोऽग्निः। यावानेवाग्निः। तं चिनुते। लोकं पृणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वै विराट्। तस्या वा इयं पादः। अन्तरिक्षं पादः। द्यौः पादः। दिशः पादः। प्रोरंजाः पादः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य पृतमृग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०६॥

-[२५]

अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। तम्भित पृता अबीष्टका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयौः। पृशुब्न्धे चांतुर्मास्येषुं। अथो आहुः। सर्वेषुं यज्ञकृतुष्वितिं। अथे ह स्माहारुणः स्वांयम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं

मन्यामहे। नाना वा पुतेषां वीर्याणि। कमुग्निं चिनुते॥१०७॥

स्त्रियम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। सावित्रम्गिं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। नाचिकेतम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। वैश्वसृजम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते॥१०८॥

उपानुवाक्यंमाशुम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। इममारुणकेतुकम्भिं चिंन्वान इतिं। वृषा वा अभिः। वृषांणौ सङ्स्फांलयेत्। हुन्येतांस्य युज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तरवेद्याङ् ह्यंभिश्चीयतें। प्रजाकांमश्चिन्वीत॥१०९॥

प्राजापत्यो वा पृषौंऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावांन् भवति। य एवं वेदं। पृशुकांमश्चिन्वीत। संज्ञानं वा एतत् पंशूनाम्। यदापंः। पृशूनामेव संज्ञानेऽग्निं चिनुते। पृशुमान् भंवति। य एवं वेदं॥११०॥

वृष्टिंकामश्चिन्वीत। आपो वै वृष्टिः। पूर्जन्यो वर्षुंको भवति। य एवं वेदं। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेषजम्। भेषजमेवास्मै करोति। सर्वमायुरिति। अभिचर श्विन्वीत। वज्रो वा आपंः॥१११॥

वर्ज्रमेव भ्रातृं व्येभ्यः प्रहंरित। स्तृणुत एंनम्। तेर्ज्ञस्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्चसकामः स्वर्गकामश्चिन्वीत। एतावृद्वा वाऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति। तदवंरुन्थे। तस्यैतद्वतम्।

## वर्षंति न धांवेत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृत्स्यानंन्तिरत्यै। नाफ्सु मूत्रंपुरीषं कुर्यात्। न निष्ठींवेत्। न विवसंनः स्नायात्। गृह्यो वा पृषोंऽग्निः। पृतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पृष्करपूर्णानि हिरंण्यं वाऽिधतिष्ठेत्। पृतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्मस्याश्नीयात्। नोदकस्याघातुंकान्येनंमोदकानि भवन्ति। अघातुंका आपंः। य पृतमृग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

-[२६]

इमानुंकं भुंबना सीषधेम। इन्द्रेश्च विश्वें च देवाः। यज्ञं चं नस्तुन्वं चं प्रजां चं। आदित्यैरिन्द्रंः सह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सगंणो मुरुद्धिः। अस्माकं भूत्विवता तुनूनाम्। आप्रंवस्व प्रप्लंबस्व। आण्डीभंवज् मा मुहुः। सुखादीन्दुंःखनिधनाम्। प्रतिमुश्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥

मरींचयः स्वायम्भुवाः। ये शरीराण्यंकल्पयत्र्। ते ते देहं केल्पयन्तु। मा चं ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिष्ठत् मा स्वंप्त। अग्निमिच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमस्य तृप्तासः। सूर्येण स्युजोषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचंक्रा नवंद्वारा॥११५॥

देवानां पूर्रयोध्या। तस्यार्ं हिरण्मयः कोशः। स्वर्गो लोको ज्योतिषाऽऽवृतः। यो वै ताँ ब्रह्मणो वेद। अमृतेनाऽऽवृतां पुरीम्। तस्मैं ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां दंदुः। विभाजंमानाः हरिणीम्। यशसां सम्प्रीवृंताम्। पुर्श्ं हिरण्मंयीं ब्रह्मा॥११६॥

विवेशांऽप्राजिता। पराङेत्यंज्याम्यी। पराङेत्यंनाश्की। इह चांमुत्रं चान्वेति। विद्वान्देवासुरानुंभ्यान्। यत्कुंमारी मन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चं क्रियतें। अग्निस्तदनुंवेधति। अशृतांसः शृंतास्श्व॥११७॥

युज्वानो येऽप्यंयुज्वनंः। स्वंर्यन्तो नापेंक्षन्ते। इन्द्रंमुग्निं ये विदुः। सिकंता इव स्यन्ति। रिश्मिभिः समुदीरिताः। अस्माल्लोकादंमुष्माच। ऋषिभिरदात्पृश्निभिः। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिर्त्तु-भिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च कृष्टंजाः। कुमारीषु कनीनीषु। जारिणीषु च ये हिताः। रेतः पीता आण्डंपीताः। अङ्गारेषु च ये हुताः। उभयान् पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। शतिमन्नु श्ररदः॥११९॥

अदो यद्वह्मं विल्बम्। पितृणां चं यमस्यं च। वर्रुणस्याश्विनोर्ग्नेः। मुरुतां च विहायसाम्। काम्प्रयवणं मे अस्तु। स ह्येवास्मिं सुनातनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवो रायो धनम्। पुत्रानापो देवीरिहाऽऽहित॥१२०॥

**-**[२७]

विशींष्णीं गृध्रंशीष्णीं च। अपेतों निर्ऋति हैथः। परिबाध श्वेतकुक्षम्। निजङ्घ श्वे शब्लोदंरम्। स् तान् वाच्यायया सह। अग्रे नाश्य सन्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मन्युं कृत्यां चं दीधिरे। रथेन किश्शुकावंता। अग्रे नाश्य सन्दर्शः॥१२१॥

**-**[२८]

पूर्जन्यांय प्रगांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नी यवसंमिच्छत्। इदं वचेः पूर्जन्यांय स्वराजें। हृदो अस्त्वन्तंरन्तद्यंयोत। मयोभूर्वातो विश्वकृष्टयः सन्त्वस्मे। सुपिप्पूला ओषंधीर्देवगोपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गर्वां कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥

**-**[२९]

पुनंर्मामैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्र्भगंः। पुन्र्ब्राह्मंणमैतु
मा। पुन्द्र्विणमैतु मा। यन्मेऽद्य रेतंः पृथिवीमस्कान्।
यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। इदं तत्पुन्रादंदे। दीर्घायुत्वाय
वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिच्यते। यन्म आजांयते पुनंः। तेनं
माम्मृतंं कुरु। तेनं सुप्रजसंं कुरु॥१२३॥

[३०]

अन्धस्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवणः संदा। तिरोऽधेहि सपुतान्नः। ये अपोऽश्नन्तिं केचुन। त्वाष्ट्रीं मायां वैश्रवणः। रथर् सहस्रवन्ध्रंरम्। पुरुश्चऋर सहंस्राश्वम्। आस्थायायांहि नो बुलिम्। यस्मै भूतानि बुलिमावंहन्ति। धनं गावो हस्ति हिरंण्यमश्वान्॥१२४॥

असाम सुमृतौ युज्ञियंस्य। श्रियं बिश्रुतोऽन्नंमुखीं विराजम्। सुदर्शने च ऋौश्चे च। मैनागे च महागिरौ। शृतद्वाट्टारंगम्न्ता। स्र्ष्हार्यं नगरं तव। इति मन्नाः। कल्पोऽत ऊर्ध्वम्। यदि बिलुर् हरैत्। हिर्ण्यनाभये वितुदये कौबेरायायं बंिलः॥१२५॥

सर्वभूताधिपतये नंम इति। अथ बलि॰ हत्वोपंतिष्ठेत। क्षुत्रं क्षुत्रं वैश्विवणः। ब्राह्मणां वयु स्मः। नमस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। अस्मात्प्रविश्यान्नंमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवंः॥१२६॥

तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्यं सीदेति। अथ तमग्निंमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भुवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वंः स्वाहाँ। तिरोऽधाः भूर्युः स्वाहाँ। विरोऽधाः भूर्युः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हुतां भवेयुः॥१२७॥

अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रंयुश्चीत। पर्रः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थाः सिद्ध्यन्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्था नं सिद्ध्यन्ते। यस्ते विघातुंको भ्राता। ममान्तर्ह्हंदये श्रितः॥१२८॥

तस्मां इममग्रपिण्डं जुहोमि। स मैंऽर्थान्मा विवंधीत्। मिय स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों व्यं वैश्ववणायं कुर्महे। स मे कामान्कामकामांय मह्यम्। कामेश्वरो वैश्ववणो दंदात्। कुबेरायं वेश्ववणायं। महाराजाय नमः। केतवो अरुंणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः श्वतधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्त्। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥१२९॥

[३१]

संवथ्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पूर्शी। चतुर्थकालपानंभक्तः स्यात्। अहरहर्वा मैक्षंमश्रीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्धिरिग्नं परिचरेत्। पुनर्मामैक्त्विन्द्रियमि-त्येतेनऽनुंवाकेन। उद्धृतपरिपूताभिरद्धिः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥

अंसश्चयवान्। अग्नये वायवे सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापृतये। चन्द्रमसे नेक्षत्रेभ्यः। ऋतुभ्यः संवंध्सराय। वरुणायारुणायेति व्रंतहोमाः। प्रवर्ग्यवंदादेशः। अरुणाः काण्डऋषयः। अरण्यंऽधीयी्रज्ञ्। भद्रं कर्णेभिरिति द्वे जिपुत्वा॥१३१॥

महानाम्रीभिरुदक ए सं इस्पृश्य। तमाचौर्यो दुद्यात्। शिवा

नः शन्तमेत्योषधीरालभते। सुमृडीकेति भूमिम्। एवमंपव्गे। धेनुर्दक्षिणा। क॰सं वासंश्च क्षौमम्। अन्यद्वा शुक्रम्। यथाशक्ति वा। एवङ्स्वाध्यायधर्मेण। अरण्येऽधीयीत। तपस्वी पुण्यो भवति तपस्वी पुंण्यो भवति॥१३२॥

·[३२]

भद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

## ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतये नमो विष्णंवे बृह्ते करोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सह वै देवानां चास्राणां च युज्ञौ प्रतंतावास्तां वय स्वर्गं लोकमें ष्यामा वयमें ष्याम् इति तेऽस्राः स्त्रह्य सहंसै वाचेरन् ब्रह्मचर्येण् तपंसेव देवास्तेऽस्राः अमुह्य स्तं न प्राजांन इस्ते परांऽभवन्ते न स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेन वै युज्ञेनं देवाः स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेनास्रान् परांभावयन् प्रसृतो ह वै यंज्ञोपवीतिनों युज्ञोऽप्रंसृतोऽन्पवीतिनो यितं च ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधीते यज्ञंत एव तत्तस्मां द्यज्ञोपवीत्येवाधीयीत याज्येद्यज्ञेत वा यज्ञस्य प्रसृत्या अजिनं वासो वा दक्षिण्त उपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धंरतेऽवं धत्ते स्व्यमिति यज्ञोपवीतमेतदेव विपंरीतं प्राचीनावीत स्वंवीतं मानुषम्॥१॥

[8]

रक्षा रेस् ह वां पुरोऽनुवाके तपोग्रंमतिष्ठन्त तान् प्रजापंतिर्वरेणोपामंत्रयत् तानि वरंमवृणीताऽऽदित्यो नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधंयध्वमिति तस्मादुत्तिष्ठन्तर् ह वा तानि रक्षा रेस्यादित्यं योधंयन्ति यावंदस्तमन्वंगात्तानिं ह वा एतानि रक्षा रेसि गायत्रिया- ऽभिमित्रितेनाम्भंसा शाम्यन्ति तद् हु वा एते ब्रह्मवादिनेः पूर्वाभिमुखाः सन्ध्यायाँ गायित्रयाऽभिमित्रिता आपं ऊर्ध्वं विक्षिपन्ति ता एता आपो वृज्ञीभूत्वा तानि रक्षा स्सि मन्देहारुणे द्वीपे प्रक्षिपन्ति यत्प्रंदिक्षणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मानमविधून्वन्त्युद्यन्तंमस्तं यन्तंम् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्राह्मणो विद्वान्ध्सकलं भृद्रमंश्रुतेऽसावांदित्यो ब्रह्मिति ब्रह्मेव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेदं॥२॥

[२]

यद्देवा देवहेळंनं देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्चत्तिस्यतेन् मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृंत-मूदिम। तस्मांन्न इह मुंश्चत् विश्वं देवाः स्जोषंसः। ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन् त्व॰ संरस्वति। कृतान्नंः पाह्येनंसो यत्किं चानृंतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावर्रुणौ सोमो धाता बृह्स्पतिंः। ते नो मुश्चन्त्वेनंसो यद्न्यकृतमारिम। स्जात्शृ॰सादुत जांमिशृ॰साञ्च्यायंसः श॰सांदुत वा कनीयसः। अनांधृष्टं देवकृतं यदेन्स्तस्मात् त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि॥३॥

यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमश्चीवद्धा १ शिश्वैर्यदर्नृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु चकुम यानि दुष्कृता। येनं त्रितो अण्वात्रिर्बभूव येन् सूर्यं तमंसो निर्मुमोर्च। येनेन्द्रो विश्वा अजहादरातीस्तेनाहं ज्योतिषा ज्योतिरानशान आक्षि। यत्कुसींद्मप्रंतीत्तं मयेह

येनं यमस्यं निधिना चरांमि। एतत्तदंग्ने अनृणो भंवामि जीवंन्नेव प्रति तत्तं दधामि। यन्मियं माता यदां पिपेष् यदन्तिरक्षं यदाशसातिंकामामि त्रिते देवा दिवि जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने त्वमंग्ने अयासिं॥४॥

**-**[३]

यददीं व्यन्नृणमहं बभूवादिं थ्यन्वा सञ्जगर जनें भ्यः। अग्निर्मा तस्मादिन्द्रेश्च संविदानौ प्रमुश्चताम्। यद्धस्तौभ्यां चकर किल्बिषाण्यक्षाणां वसुमुप्जिघ्नमानः। उस्रं पृश्या चं राष्ट्रभृच् तान्यंपस्रसावनुंदत्तामृणानिं। उग्रं पश्ये राष्ट्रंभृत्किल्बिषाणि यदक्षवृंत्तमनुंदत्तमेतत्। नेन्नं ऋणानृणव इथ्समानो युमस्य लोके अधिरज्जराय। अवं ते हेळ उदुंत्तमिमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नों अग्ने स त्वं नो अग्ने। सङ्कुंसुको विकुंसुको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूरादूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन योऽ(१)स्मथ्समृंच्छातै तमंस्मै प्रसुवामसि। दुःशुरुसानुशुरुसाभ्यां घणेनानुघणेनं च। तेनान्योऽ(१)स्मथ्समृच्छातै तमस्मै प्रसुवामसि। सं वर्चसा पर्यसा सन्तनूभिरगंन्महि मनंसा सर शिवेनं। त्वष्टां नो अत्र विदंधातु रायोऽनुंमार्षु तन्वो(१) यद्विलिष्टम्॥५॥

[8]

आयंष्टि विश्वतों दधद्यम्ग्निर्वरेण्यः। पुनेस्ते प्राण आयांति परायक्ष्म र सुवामि ते। आयुर्दा अंग्ने ह्विषों जुषाणो घृतप्रंतीको घृतयोंनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यं पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्। इममंग्न आयंषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजों वरुण सर्शिशाधि। मातेवासमा अदिते शर्म यच्छु विश्वं देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्। अग्न आयूर्षि पवस् आ सुवोर्ज्ञमिषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनाम्। अग्ने पवंस्व स्वपां अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधंद्रियं मिय् पोषम्॥६॥

अग्निर्ऋषिः पर्वमानः पार्श्वजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महाग्यम्। अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सप्रबान्प्रत्यजाताञ्चातवेदो नुदस्व। अस्मे दीदिहि सुमना अहेळ्ञ्छर्मन्ते स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः सप्रबान्प्रत्यजाताञ्चातवेदो नुदस्व। अधि नो ब्रूहि सुमन्स्यमानो वयः स्याम प्रणुंदा नः सप्रबान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सप्तानं। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सित। ता इस्त्वं वृत्रहं जिह् वस्वस्मभ्यमाभेर। अग्ने यो नोऽभिदासंति समानो यश्च निष्ट्यः। तं वयः समिधं कृत्वा तुभ्यम्ग्नेऽपि दध्मसि॥७॥

यो नः शपादशंपतो यश्चं नः शपंतः शपात्। उषाश्च

तस्मैं निम्नुक्कृ सर्वं पाप समूहताम्। यो नंः सपत्नो यो रणो मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो मा तस्योच्छेषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदो यं चाहं द्वेष्टिम् यश्च माम्। सर्वाङ्क्तानंग्ने सन्दंह याङ्श्चाहं द्वेष्टिम् ये च माम्। यो अस्मभ्यमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषते जनः। निन्दाद्यो अस्मान्दिफ्सांच् सर्वाङ्क्तान्मंष्ट्रम्षा कुरु। सर्शितं मे ब्रह्म सर्शितं वीर्या(१)म्बलम्। सर्शितं क्षत्रं में जिष्णु यस्याहमस्मिं पुरोहितः। उदेषां बाहू अतिरमुद्वर्चो अथो बलम्। क्षिणोमि ब्रह्मणाऽमित्रानुन्नंयामि स्वा(१)म् अहम्। पुनर्मनः पुनरायुर्म् आगात्पुनश्चित्तं पुनराधीतं म् आगात्पुनंः प्राणः पुनराकूतं म् आगात्पुनंश्चित्तं पुनराधीतं म् आगात्प् वैश्वानरो मेऽदंब्यस्तनूपा अवंबाधतां दिरतानि विश्वा॥८॥

[५]

वैश्वान्राय प्रतिवेदयामो यदीनृण संङ्गरो देवतांस्। स एतान्पाशांन प्रमुचन् प्रवेद स नो मुश्चातु दुरितादवद्यात्। वैश्वान्रः पवयात्रः प्वित्रैर्यथ्संङ्गरम्भिधावांम्याशाम्। अनोजान्मनंसा याचंमानो यदत्रैनो अव तथ्संवामि। अमी ये सुभगे दिवि विचृतौ नाम तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामेतद्वंद्धक्मोचंनम्। विजिहीष्वं लोकान्कृंधि बन्धान्मंश्चासि बद्धंकम्। योनंरिव प्रच्यंतो गर्भः सर्वांन् प्रथो अनुष्व। स प्रंजानन्प्रतिगृभ्णीत विद्वान्प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। अस्माभिर्दत्तं ज्ररसंः प्रस्तादच्छिन्नं तन्तुंमनुसश्चरेम॥९॥

तृतं तन्तुमन्वेके अनु सश्चरिन्त् येषां दत्तं पित्र्यमायंनवत्। अबुन्ध्वेके दर्दतः प्रयच्छाद्वातुं चेच्छुक्रवार्सः स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु सर्रंभेथार समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यहाँ पूर्तं परिविष्टं यदुग्नौ तस्मै गोत्रायेह जायांपती संररेभेथाम्। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहिश्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्य उन्नों नेषद्गुरिता यानिं चकुम। भूमिंमा्ताऽदिंतिनीं जनित्रं भ्राताऽन्तरिंक्षम्भिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भेवासि जामि मित्वा मा विविध्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदन्ते विहाय रोगं तुन्वा(१) इ स्वायाम्। अस्त्रोणाङ्गेरह्नताः स्वर्गे तत्रं पश्येम पितरंं च पुत्रम्। यदन्रमद्यनृतेन देवा दास्यन्नदांस्यनुत वा करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहम्भिर्मा तस्मादनृणं कृणोत्। यदन्रमिद्रा बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गामुजामविम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं च प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मोदनुणं कृणोतु। यन्मयां मनसा वाचा कृतमेनेः कदाचन। सर्वस्मौत्तस्मौन्मेळितो मोग्धि त्वर हि वेत्थं यथातथम्॥१०॥

·[٤]

वातंरशना ह् वा ऋषंयः श्रम्णा ऊर्ध्वमंन्थिनो बंभूवुस्तानृषंयोऽर्थमांय्र्स्ते निलायंमचर्र्स्तेऽनुंप्रविशः कूश्माण्डानि तार्स्तेष्वन्वंविन्दञ्छूद्धयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायं चर्थेति त ऋषीनब्रुवन्नमों वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धांमि केनं वः सपर्यामेति तानृषंयोऽब्रुवन्पवित्रं नो ब्रूत येनारेपसंः स्यामेति त एतानि सूक्तान्यंपश्यन् यद्देवा देवहेळेनं यददीं व्यन्नृणमहं ब्भूवाऽऽयुंष्टे विश्वतो दध्दित्येतैराज्यं जुहुत वैश्वान्राय प्रतिवेदयाम् इत्युपंतिष्ठत् यदंवीचीन्मेना भ्रूणहृत्याया-स्तस्मान्मोक्ष्यध्व इति त एतैरंजुहवुस्तेऽरेपसो-ऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुह्यात्पूतो देवलोकान्थ्समंश्रुते॥११॥

[७]

कूश्माण्डेर्जुंहुयाद्योऽपूंत इव मन्यंत यथाँ स्तेनो यथाँ भ्रूणहैवमेष भंवति योऽयोनौ रेतः सिञ्चिति यदंर्वाचीनमेनों भ्रूणहृत्यायास्तस्मांन्मुच्यते यावदेनो दीक्षामुपैति दीक्षित एतेः संतित जुंहोति संवथ्सरं दीक्षितो भंवति संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते मासं दीक्षितो भंवति यो मासः स संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते चतुंर्विश्शिति रात्रींदीक्षितो भंवति चतुंर्विश्शितिर्धमासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश रात्रींदीिक्षितो भविति द्वादंश मासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते षड्ठात्रींदीिक्षितो भविति षड्ठा ऋतवः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीिक्षितो भविति त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया पुवाऽऽत्मानं पुनीते न मा समंश्रीयात्र स्त्रियमुपेयात्रोपर्यासीत् जुगुंपसेतानृतात्पयौ ब्राह्मणस्यं वृतं येवागू राजन्यंस्यामिक्षा वैश्यस्याथों सौम्येप्यंष्वर पृतद्वतं ब्रूयाद्यदि मन्येतोपदस्यामीत्योदनं धानाः सक्तं घृतमित्यनुंव्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

[2]

अजान् हु वै पृश्नी ईस्तप्स्यमांनान् ब्रह्मं स्वयम्भ्वंभ्यानंर्ष्त ऋषयोऽभवन्तद्यीणामृष्टित्वं तां देवतामुपातिष्ठन्त यज्ञकांमास्त एतं ब्रह्मयज्ञमंपश्यन्तमाहंर्न्तेनांयजन्त यद्योऽध्यगीषत् ताः पर्यआहुतयो देवानांमभवन् यद्यजूरंषि घृताहुंतयो यथ्सामांनि सोमांहृतयो यद्यंवीङ्गिरसो मध्याहुतयो यद्माह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराश्र्सीर्मेदाहुतयो देवानांमभवन्ताभिः क्षुधं पाप्मानम-पाँघुन्नपंहतपाप्मानो देवाः स्वर्गं लोकमायन् ब्रह्मणः सायुंज्यमृषयोऽगच्छन्॥१३॥

पश्च वा एते महायज्ञाः संतति प्रतायन्ते सतति सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति यदग्नौ जुहोत्यपि समिधं तद्देवयज्ञः सन्तिष्ठते यत्पितृभ्यः स्वधा करोत्यप्यपस्तित्पंतृयज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो बुलि १ हरित् तद्भंतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्वाँह्मणेभ्योऽन्नं ददांति तन्मनुष्ययज्ञः सन्तिष्ठते यथ्स्वाध्यायमधीयीतैकामप्यृचं यजुः साम वा तद्वंह्मयज्ञः सन्तिष्ठते यदचोऽधीते पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्यजू १षि घृतस्यं कूल्या यथ्सामानि सोमं एभ्यः पवते यदर्थवाङ्गिरसो मधौः कूल्या यद्वाँह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गार्था नाराश १ सीमें दंसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्द्योऽधीते पयंआहुतिभिरेव तद्देवा इस्तंपयिति यद्यज् रेषि घृताहुंतिभिर्यथ्सामानि सोमाहुतिभिर्यदर्थवाङ्गिरसो मध्वां-हतिभिर्यद्वाँह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराशु रसीर्मेदाहुतिभिरेव तद्देवा इस्तर्पयित त एनं तृप्ता आयुंषा तेर्जमा वर्चमा श्रिया यशंमा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्यंन च तर्पयन्ति॥१४॥

**-**[१०]

ब्रह्मयज्ञेनं यक्ष्यमांणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्द्रश उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये दंक्षिणत उपवीयोपविश्य हस्तांववनिज्य त्रिराचांमेद्दिः पंरिमृज्यं सकृदुंपस्पृश्य शिरश्चक्षुंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यित्रराचामंति तेन ऋचंः प्रीणाति यद्दिः पंरिमृजंति तेन यजू रेषि यथ्सकृदुपस्पृशंति तेन सामानि यथ्सव्यं पाणिं पादौ प्रोक्षति यच्छिरश्चक्षुंषी नासिके श्रोत्रे हृदयमालभंते तेनाथंवाङ्गिरसौ ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथा नाराश १ सी: प्रींणाति दर्भांणां मृहदुंपुस्तीर्योपस्थं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एष ओषंधीना रसो यद्भाः सरंसमेव ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्तरौ पाणी पादौ कृत्वा सपवित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वै यजुंस्रयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्परममक्षरं तदेतदचा ऽभ्युंक्तमृचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुर्यस्तन्न वेद किमृचा केरिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासत् इति त्रीनेव प्रायुंङ्क भूर्भुवः स्वंरित्यांहैतद्वे वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्कार्थं सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पच्छौंऽर्धर्चशोऽनवान संविता श्रियं प्रसविता श्रियंमेवाऽऽप्नोत्यथौं प्रज्ञातंयैव प्रंतिपदा छन्दा ५सि प्रतिपद्यते॥१५॥

**-**[११]

ग्रामे मनंसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आह्वेय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठंत्रुत व्रजन्त्रुताऽऽसीन उत शयांनोऽधीयीतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यो भवति य एवं विद्वान्थ्स्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्व्रयये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहुते कंरोमि॥१६॥

[83]

मध्यन्दिने प्रबल्मधीयीतासौ खलु वावैष आंदित्यो यद्ग्रौह्मणस्तस्मात्तर्हि तेऽक्ष्णिष्ठं तपित् तदेषाऽभ्यंक्ता। चित्रं देवानामुदंगादनीकं चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्ष्ण् सूर्यं आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष यज्ञः सद्यः प्रतायते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण् इतिं परिधानीयां त्रिरन्वांहाप उंपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च ददांति सा दक्षिणा॥१७॥

[१३]

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य मेघों हिवधानं विद्युदिग्नर्वर्षः हिवः स्तंनियृत्वंषद्वारो यदंवस्फूर्जित् सोऽनुंवषद्वारो वायुरात्माऽमांवास्यां स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे वर्षितं विद्योतंमाने स्तनयंत्यवस्फूर्जित् पर्वमाने वायावंमावास्यांयाः स्वाध्यायमधीते तपं एव तत्तंप्यते तपो हि स्वाध्याय इत्युत्तमं नाकः रोहत्युत्तमः संमानानां भवति यावंन्तः ह वा इमां वित्तस्यं पूर्णां ददंथ्स्वगं लोकं जंयित् तावंन्तं लोकं जंयित् भूयाः सं चाक्ष्ययं चापं पुनर्मृत्यं जंयित् ब्रह्मंणः सायुज्यं गच्छति॥१८॥

तस्य वा पुतस्यं युज्ञस्य द्वावंनध्यायौ यदात्माऽशुचियंदेशः समृद्धिर्देवतानि य एवं विद्वान्महारात्र उषस्युदिते व्रज्ञ इस्तिष्ठन्नासीनः शयानोऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसई स्वाध्यायमधीते सर्वां होका अयित सर्वां होका नेनृणोऽनु-सश्चरित तदेषाभ्यंक्ता। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परेस्मि -स्तृतीये लोके अनृणाः स्योम। ये देवयानां उत पितृयाणाः सर्वान्यथो अनृणा आक्षीयेमेत्यग्निं वै जातं पाप्मा जंग्राह तं देवा आहंतीभिः पाप्मानमपौघ्नन्नाहुंतीनां युज्ञेनं युज्ञस्य दक्षिणाभिदिक्षिणानां ब्राह्मणेन ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्देसाङ् स्वाध्यायेनापंहतपाप्मा स्वाध्यायों देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽनूंध्सृजत्यभांगो वाचि भंवत्यभांगो नाके तदेषाऽभ्युंक्ता। यस्तित्याजं सिखविद्र सर्खायं न तस्यं वाच्यपिं भागो अस्ति। यदी र शृणोत्यलक र शृणोति न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति तस्मांथ्स्वाध्यायोऽध्येतव्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्यभ्रेवीयोरांदित्यस्य सायुंज्यं गच्छति तदेषाऽभ्यंक्ता। ये अविङ्गत वा पुराणे वेदं विद्वा रसंमभिती वदन्त्यादित्यमेव ते परिवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयं च हर्समिति यावंतीवें देवतास्ताः सर्वा वेदविदिं ब्राह्मणे वंसन्ति तस्माँद्वाह्मणेभ्यों वेदविद्यों दिवे दिवे नर्मस्कुर्यान्नाश्लीलं कीर्तयेदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिच्यते यो याजयंति प्रतिं वा गृह्णाति याजयित्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्वित्रः स्वाध्यायं वेदमधीयीत त्रिरात्रं वां सावित्रीं गांयत्रीम्नवातिरेचयित वरो दक्षिणा वरेणैव वर इंस्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२०॥

[१६]

दुहे हु वा एष छन्दा रेसि यो याजयंति स येनं यज्ञकृतुनां याजयेथ्सोऽरंण्यं प्रेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवेन्मधीयन्नासीत तस्यानशंनं दीक्षा स्थानमृप्सद आसंन र सुत्या वाग्जुहूर्मनं उप्भृद्धृतिर्ध्रुवा प्राणो ह्विः सामाध्वर्यः स वा एष यज्ञः प्राणदंक्षिणोऽनंन्तदक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥

[१७]

कृतिधावंकीणीं प्रविशितं चतुर्धेत्यांहुर्ब्रह्मवादिनों मुरुतंः प्राणैरिन्द्रं बलेन बृह्स्पितं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवतंरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार सुदेवः काँश्यपो यो ब्रह्मचार्यविकरेदमावास्यायाः रात्र्यांमग्निं प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातं जुहोति कामावंकीर्णोऽस्म्यवंकीर्णोऽस्मि काम कामाय स्वाहा कामाभिंद्रुग्धोऽस्म्यभिंद्रुग्धोऽस्मि काम कामाय स्वाहेत्यमृतं वा आज्यंममृतंमेवाऽऽत्मन्धंते हुत्वा प्रयंताञ्चलिः कवांतिर्यङ्काग्निमिनन्नयेत सं मांऽऽसिञ्चन्तु मुरुतः सिमन्द्रः सं बृहस्पितिः। सं

माऽयम्भिः सिश्चत्वायुंषा च बलेन् चाऽऽयुंष्मन्तं करोत् मेति प्रतिं हास्मै मुरुतः प्राणान्दंधित् प्रतीन्द्रो बलं प्रति बृहुस्पतिर्ब्रह्मवर्चसं प्रत्यग्निरितर्थ्सर्वर् सर्वतनुर्भूत्वा सर्वमायुरिति त्रिर्भिमंत्रयेत् त्रिषंत्या हि देवा योऽपूंत इव मन्येत् स इत्थं जुंहुयादित्थम्भिमंत्रयेत् पुनीत प्वाऽऽत्मान्मायुरेवाऽऽत्मन्धंत्ते वरो दक्षिणा वरंणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२२॥

**-**[86]

भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये स्वः प्रपंद्ये भूभुवः स्वः प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्मकोशं प्रपंद्येऽमृतं प्रपंद्येऽमृतकोशं प्रपंद्ये चतुर्जालं ब्रह्मकोशं यं मृत्युर्नाव्पश्यति तं प्रपंद्ये देवान् प्रपंद्ये देवपुरं प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणाऽहं तेजंसा कश्यंपस्य यस्मै नमस्तिच्छिरो धर्मो मूर्धानं ब्रह्मोत्तर्ग हर्नुर्यज्ञोऽधंरा विष्णुर्हृदंय संवथ्सरः प्रजनंनमिश्वनौ पूर्वपादांवित्रिर्मध्यं मित्रावरुणावपर्पादांवित्रिः पुच्छंस्य प्रथमं काण्डं तत इन्द्रस्ततः प्रजापंतिरभयं चतुर्थ स वा एष दिव्यः शांक्ररः शिशुंमारस्त ह य एवं वेदापं पुनर्मृत्यं जयित जयित स्वर्गं लोकं नाध्विन प्रमीयते नापसु प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नान्पत्यः प्रमीयते ल्ष्वान्नो भवित ध्रुवस्त्वमंसि ध्रुवस्य क्षितमिस् त्वं भूताना्र् श्रेष्ठोऽसि

त्वां भूतान्युपं पूर्यावंर्तन्ते नमंस्ते नमः सर्वं ते नमो नमः शिशुकुमाराय नमः॥२३॥

[88]

नमः प्राच्यै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो दक्षिणाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम् उदींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमं ऊर्ध्वाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंराये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽवान्त्राये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मध्ये ये वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानिश्चरं जीवितं वर्धयन्ति नमो गङ्गायमुनयोर्म्पिनेभ्यश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमः॥२४॥

–[२०]

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमेः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

ॐ तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

चित्तिः स्रुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं ब्र्हिः। केतो अग्निः। विज्ञातम्ग्निः। वाक्पंतिर्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो हृविः। सामाध्वर्युः। वाचस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। आऽस्मासुं नृम्णन्धाथ्स्वाहां॥१॥

अुष्वर्यः पश्चं च॥\_\_\_\_\_\_[१]

पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजंमानाय वार्यम्। आसुवस्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। जजनदिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥

पृथिवी होता दर्श॥———[२]

अग्निर्होताँ। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्तं इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवनश्रुतः स्वाहाँ॥३॥

अ्मिर्होताऽष्टौ॥———[३]

सूर्यं ते चक्षुंः। वातं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा। अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवी॰ शरीरैः। वाचंस्पतेऽच्छिंद्रया वाचा। अच्छिंद्रया जुह्नां। दिवि देवावृध् होत्रा मेर्रयस्व स्वाहां॥४॥

सूर्यं ते नवं॥————[४]

महाहंविरहोतां। स्त्यहंविरध्वर्युः। अच्युंतपाजा अग्नीत्। अच्युंतमना उपवक्ता। अना्धृष्यश्चांप्रतिधृष्यश्चं यज्ञस्यांभिग्रो। अयास्यं उद्गाता। वाचंस्पते हृद्विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमंमपात्। मा दैव्यस्तन्तुश्छेदि मा मनुष्यंः। नमों दिवे। नमंः पृथिव्ये स्वाहां॥५॥

अपात्रीणि च॥———[५]

वाग्घोताँ। दीक्षा पत्नीं। वातों ऽध्वर्युः। आपों ऽभिग्रः। मनों ह्विः। तपंसि जुहोमि। भूर्भृवः सुवंः। ब्रह्मं स्वयम्भु। ब्रह्मंणे स्वयम्भुवे स्वाहाँ॥६॥

वाग्घोता नर्व॥———[ह्

ब्राह्मण एकंहोता। स यज्ञः। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। यज्ञश्चं मे भूयात्। अग्निर्द्विहोता। स भूती। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। भूती चं मे भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। स प्रतिष्ठा॥७॥

स में ददातु प्रजां पुशून्पुष्टुं यशंः। प्रतिष्ठा चं मे भूयात्।

अन्तरिक्षं चतुंरहोता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशंः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चंहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशंः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥

चन्द्रमाः षड्ढोता। स ऋतून्केल्पयाति। स मे ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशः। ऋतवेश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्रं सप्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स मे ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। चौर्ष्टहोता। सोऽनाधृष्यः॥९॥

स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशः। अनाधृष्यश्चं भूयासम्। आदित्यो नवहोता। स तेजस्वी। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशः। तेजस्वी चं भूयासम्। प्रजापंतिर्दशंहोता। स इदश् सर्वम्। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशः। सर्वं च मे भूयात्॥१०॥

प्रतिष्ठा प्राणश्चं मे भूयादनाधृष्यः सर्वं च मे भूयात्॥————[७]

अग्निर्यजुंभिः। स्विता स्तोमैः। इन्द्रं उक्थाम्दैः। मित्रावरुणावाशिषाः। अङ्गिरसो धिष्णियैर्ग्निभिः। म्रुतः सदोहविर्धानाभ्याम्। आपः प्रोक्षणीभिः। ओषंधयो ब्र्हिषाः। अदितिर्वेद्याः। सोमो दीक्षयाः॥११॥

त्वष्टेभ्मेनं। विष्णुंर्यज्ञेनं। वसंव आज्येंन। आदित्या दक्षिणाभिः। विश्वें देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पतिः पुरोधयां। प्रजापंतिरुद्गीथेनं। अन्तरिक्षं प्वित्रेण। वायुः पात्रैः। अहङ् श्रद्धयां॥१२॥ दीक्षया पात्रैरेकं च॥----

-[ሪ]

सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतेः। पृत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमंस्य। पृथिव्यंग्नेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणांं त्रिष्टुक्। आदित्यानां जगती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥

वर्रणस्य विराट्। यज्ञस्यं पृङ्किः। प्रजापंतरनुंमितः। मित्रस्यं श्रद्धा। स्वितुः प्रसूतिः। सूर्यस्य मरीचिः। चन्द्रमंसो रोहिणी। ऋषीणामरुन्धती। पूर्जन्यंस्य विद्युत्। चतंस्रो दिशः। चतंस्रोऽवान्तरिदशाः। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विष्श्चापंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्च सूनृतां च देवानां पत्नयः॥१४॥

अनुष्टुग्दिशः षद्वं॥🕳

[6]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रसिवं। अश्विनौंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तौभ्यां प्रतिगृह्णामि। राजां त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिरण्यम्। तेनांमृतत्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामो दाता॥१५॥

कार्मः प्रतिग्रहीता। काम्रं समुद्रमाविंश। कार्मन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा तें काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वौङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु। सोमाय वार्सः। रुद्राय गाम्। वरुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥ मनंवे तल्पम्। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्। निर्ऋंत्या अश्वतरगर्दभौ। हिमवंतो हुस्तिनम्। गुन्धर्वापस्पराभ्यः स्रगलं कर्णे। विश्वेभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्। ब्रह्मण ओदनम्। सुमुद्रायापः॥१७॥

उत्तानायाँङ्गीर्सायानंः। वैश्वान्राय रथम्ं। वैश्वान्रः प्रत्नथा नाक्मारुहत्। दिवः पृष्ठं भन्दंमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववञ्चनयंञ्चन्तवे धनम्। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजाँ त्वा वर्रुणो नयतु देवि दक्षिणे वैश्वान्राय रथम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥

क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता। कामः प्रतिग्रहीता। कामः समुद्रमा विंश। कामेंन त्वा प्रतिंगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा तें काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वांक्षीरुसः प्रतिंगृह्णातु॥१९॥

सुवर्णं घ्रमं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्यात्मानं दश्धा चरंन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनंसा चरंन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्द्द्दशंहोतार्मर्णे। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनानाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। श्त शुक्राणि यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे होतांरो यत्रैकं भवंन्ति। सुमानंसीन आत्मा जनांनाम्॥२०॥ अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांना सर्वांत्मा। सर्वाः प्रजा यत्रेकं भवंन्ति। चतुंरहोतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति देवेः। समानंसीन आत्मा जनांनाम्। ब्रह्मेन्द्रं मृग्निं जगंतः प्रतिष्ठाम्। दिव आत्मान सवितारं बृह्स्पतिम्। चतुंरहोतारं प्रदिशोऽनं क्रुप्तम्। वाचो वीर्यं तप्साऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। त्वष्टांर रूपाणि विकुर्वन्तं विपश्चिम्॥२१॥

अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निचिक्यः। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। देवानां बन्धु निहितं गुहांसु। अमृतेन क्रुप्तं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निचिक्यः। श्वतं नियुतः परिवेद विश्वां विश्ववारः। विश्वमिदं वृंणाति। इन्द्रंस्यात्मा निहितः पश्चंहोता। अमृतं देवानामायुः प्रजानांम्॥२२॥

इन्द्रभ् राजांनभ् सिवतारंमेतम्। वायोरात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। रिश्मिभ् रंश्मीनां मध्ये तपंन्तम्। ऋतस्य पदे क्वयो निर्पान्ति। य आण्डकोशे भुवंनं बिभर्ति। अनिर्मिण्णः सन्नर्थं लोकान् विचष्टें। यस्याण्डकोशभ शुष्ममाहुः प्राणमुल्बम्। तेनं क्रुप्तोऽमृतेनाहमंस्मि। सुवर्णं कोश्भ रजंसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥२३॥

अमृतंस्य पूर्णान्तामुं कुलां विचेक्षते। पाद् षड्ढोंतुर्न

किलांविविथ्से। येन्तवंः पश्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षुड्वा मन्सोत क्रुप्ताः। त॰ षड्ढ्रांतारमृतुभिः कल्पंमानम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपांन्ति। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनसा चरंन्तम्। सहैव सन्तं न विजानित देवाः। इन्द्रंस्यात्मान शत्था चरंन्तम्॥२४॥

इन्द्रो राजा जगेतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्रिप्तः। परेण तन्तुं परिष्चियमानम्। अन्तरादित्ये मनसा चरन्तम्। देवाना ह हदयं ब्रह्मान्वंविन्दत्। ब्रह्मैतद्वह्मण् उर्ज्ञभार। अर्क इ श्चोतंन्त हत्यं परिष्य मध्यैं। आ यस्मिन्थ्सप्त पेरंवः। मेहंन्ति बहुला इश्चियम्। बह्बश्चामिन्द्र गोमंतीम्॥२५॥

अर्च्युतां बहुला १ श्रियम्। स हरिर्वसुवित्तंमः। पे्रिरन्द्रांय पिन्वते। बृह्धामिन्द्रं गोमंतीम्। अर्च्युतां बहुला १ श्रियम्। मह्यमिन्द्रो नियंच्छत्। शृत १ शृता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी रश्मिरिन्द्रः। प्रमश्हंमाणो बहुला १ श्रियम्। रश्मिरिन्द्रः सविता मे नियंच्छतु॥२६॥

घृतं तेजो मधुंमदिन्द्रियम्। मय्ययम्ग्निर्दंधातु। हरिः पत्ङ्गः पंट्री सुंपूर्णः। दिविक्षयो नभंसा य एति। स न इन्द्रः कामव्रं दंदातु। पश्चारं चक्रं परिवर्तते पृथु। हिरंण्यज्योतिः सिर्रस्य मध्ये। अजस्तं ज्योतिर्नभंसा सर्पदेति। स न इन्द्रः कामव्रं दंदातु। सप्त युंञ्जन्ति रथमकंचक्रम्॥२७॥

एको अश्वो वहित सप्तनामा। त्रिनाभि च्क्रम्जर्मनंविम्। येनेमा विश्वा भुवनानि तस्थुः। भुद्रं पश्यन्त उपसेदुरग्रें। तपो दीक्षामृषयः सुवर्विदेः। ततः क्ष्र्तं बल्मोर्जश्च जातम्। तद्स्मै देवा अभि सन्नमन्तु। श्वेत र रिश्मं बोभुज्यमानम्। अपा नेतारं भुवनस्य गोपाम्। इन्द्रं निर्चिक्यः पर्मे व्योमन्॥२८॥

रोहिंणीः पिङ्गला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्गला एकंरूपाः। शृत स्रमाणि प्रयुतांनि नाव्यांनाम्। अयं यः श्वेतो र्शिमः। परि सर्वमिदं जगत्। प्रजां प्शून्धनांनि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रशिमः परि सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं पृशून् विश्वरूपान्। पृतङ्गमृक्तमसुंरस्य माययां॥२९॥

हूदा पंश्यन्ति मनंसा मनीषिणंः। समुद्रे अन्तः क्वयो विचक्षते। मरीचीनां पदिमेच्छन्ति वेधसंः। पत्ङ्गो वाचं मनंसा बिभर्ति। तां गंन्ध्वींऽवद्द्वर्भे अन्तः। तां द्योतंमानाः स्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। ये ग्राम्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। अग्निस्ताः अग्रे प्रमुमोक्त देवः॥३०॥

प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवम्स्मासु नियच्छतम्। प्र प्रं युज्ञपंतिन्तिर। ये ग्राम्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। तेषार्थं सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय। य आंर्ण्याः पृशवी विश्वरूपाः। विरूपाः सन्ती बहुधैकंरूपाः। वायुस्ता अग्रे प्रमुमोक्त देवः। प्रजापितः प्रजयां संविदानः। इडाये सृप्तं घृतवंचराचरम्। देवा अन्वंविन्द्नगुहां हितम्। य आंर्ण्याः पृशवी विश्वरूपाः। विरूपाः सन्ती बहुधैकंरूपाः। तेषा सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥

आत्मा जनानां विकुर्वन्तं विपश्चिं प्रजानां वसुधानीं विराजं चरन्तं गोर्मतीं में नियंच्छित्वेकंचकं व्योमन्माययां देव एकंरूपा अष्टौ चं॥————[११]

सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूमिं विश्वतो वृत्वा। अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गुलम्। पुरुष पुवेद सर्वम्। यद्भूतं यच्च भव्यम्। उतामृतत्वस्येशांनः। यदन्नेनातिरोहंति। पुतावांनस्य महिमा। अतो ज्याया १ श्रु पूरुषः॥३२॥

पादौंऽस्य विश्वां भूतानिं। त्रिपादंस्यामृतं दिवि। त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः। पादौंऽस्येहाभवात्पुनः। ततो विष्वङ्कांकामत्। साशनान्शने अभि। तस्माहिराङंजायत। विराजो अधि पूरुषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्वाद्भिमथो पुरः॥३३॥

यत्पुरुषेण ह्विषां। देवा यज्ञमतंन्वत। वस्नतो अस्यासीदाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः श्ररद्धविः। सप्तास्यांसन्परि-धर्यः। त्रिः सप्त स्मिधंः कृताः। देवा यद्यज्ञं तंन्वानाः। अबंध्रन्पुरुषं पृशुम्। तं युज्ञं बुर्हिष् प्रौक्षन्ं। पुरुषं

## जातमंग्रतः॥३४॥

तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्माँ द्यज्ञार्थ्सर्वहुतंः। सम्भृतं पृषदाज्यम्। पृशू इस्ता इश्चेके वायव्यान्। आर्ण्यान्ग्राम्याश्च ये। तस्माँ द्यज्ञार्थ्सर्वहुतंः। ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दा इसि जज्ञिरे तस्माँत्। यजुस्तस्मांदजायत॥३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चोभ्यादंतः। गावों ह जिन्नेर् तस्मात्। तस्माजाता अंजावयः। यत्पुरुषं व्यंदधः। कृतिधा व्यंकल्पयन्। मुखं किमंस्य कौ बाहू। कावूरू पादावुच्येते। बाहू गंजन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तदंस्य यद्वैश्यंः। पुद्धाः शूद्रो अंजायत। चुन्द्रमा मनंसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रेश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीदन्तरिक्षम्। शीष्णो द्यौः समंवर्तत। पुद्धां भूमिर्दिशः श्रोत्रौत्। तथां लोकाः अंकल्पयन्॥३७॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंस्सतु पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरंः। नामांनि कृत्वाऽभिवद्न् यदास्तै। धाता पुरस्ताद्यमुंदाज्हारं। श्राक्तः प्रविद्वान्प्रदिश्रश्चतंस्रः। तमेवं विद्वान्मृतं इह भविति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। युज्ञेनं युज्ञमंयजन्त देवाः।

तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते ह् नाकं महिमानंः सचन्ते। यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥३८॥

पूर्रुषः पुरौँऽग्रुतोऽजायत कृतोऽकल्पयन्नास्ं द्वे चं (ज्यायानिध् पूर्रुषः। अन्यत्र पुर्रुषः॥)॥[१२]

अद्भः सम्भूतः पृथिव्ये रसाँच। विश्वकंर्मणः समंवर्तताधि। तस्य त्वष्टां विदधंद्रूपमेति। तत्पुरुंषस्य विश्वमाजांनमग्रें। वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्ं। आदित्यवंर्णं तमंसः परंस्तात्। तमेवं विद्वानमृतं इह भंवति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्चरित गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजायते॥३९॥

तस्य धीराः परिजानन्ति योनिम्। मरीचीनां प्दिमेच्छन्ति वेधसंः। यो देवेभ्य आतंपति। यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंब्रवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा अस्नवशें। हीश्चं ते लक्ष्मीश्च पत्र्यौं। अहोरात्रे पार्श्वे। नक्षंत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्ं। इष्टं मंनिषाण। अमुं मंनिषाण। सर्वं मनिषाण॥४०॥

जायते वशे सप्त चं॥----[१३]

भूतां सन्भ्रियमांणो बिभर्ति। एको देवो बंहुधा निर्विष्टः। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। निधायं भारं पुन्रस्तंमेति। तमेव मृत्युम्मृतं तमांहुः। तं भूतारं तम् गोप्तारमाहुः। स भृतो भ्रियमाणो बिभर्ति। य एनं वेदं सत्येन भर्तुम्। सद्यो जातमुत जंहात्येषः। उतो जर्रन्तं न जंहात्येकम्॥४१॥

उतो बहूनेकमहंर्जहार। अतंन्द्रो देवः सदंमेव प्रार्थः। यस्तद्वेद् यतं आबुभूवं। सन्धां च याः सन्द्धे ब्रह्मंणैषः। रमंते तस्मिन्नुत जीणे शयांने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वांश्वरन्ति जानृतीः। वृथ्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमृग्निः हंय्यवाहुः सिमैन्थ्से। त्वं भृतां मात्तिरश्वां प्रजानांम्॥४२॥

त्वं यज्ञस्त्वमुंवेवासि सोमः। तवं देवा हवमायंन्ति सर्वे। त्वमेकोऽसि बहूननुप्रविष्टः। नमस्ते अस्तु सुहवो म एधि। नमो वामस्तु शृणुत हवं मे। प्राणापानावजिर स्थारंन्तौ। ह्वयांमि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जहितं युवाना। प्राणापानौ संविदानौ जहितम्। अमुष्यासुनामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥

तं में देवा ब्रह्मणा संविदानो। वधार्य दत्तं तम्ह १ हेनामि। असंज्ञजान स्त आबंभूव। यं यं ज्जान स उं गोपो अस्य। यदा भारं तन्द्रयंते स भर्त् म्। प्रास्यं भारं पुन्रस्तमिति। तह्रै त्वं प्राणो अभवः। महान्भोगः प्रजापंतेः। भुजः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणयो नवं॥४४॥

एकं प्रजानौङ्गसाथां नवं॥\_\_\_\_\_

[88]

हरि हर्नन्तमनुयन्ति देवाः। विश्वस्येशानं वृष्भं

मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागाँत्। अयंनं मा विवधीर्विक्रमस्व। मा छिंदो मृत्यो मा वंधीः। मा मे बलं विवृहो मा प्रमोषीः। प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम। सद्यश्चंकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवे॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कामेनाजनयन्पुनः। कामेन मे काम् आगाँत्। हृदंयाद्धृदंयं मृत्योः। यदमीषांमदः प्रियम्। तदैतूपमाम्भि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थाँम्। यस्ते स्व इतरो देवयानाँत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नः प्रजाः रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्व्यं मनसा वन्दंमानः। नार्थमानो वृष्मं चर्षणीनाम्। यः प्रजानांमेकराण्मानुंषीणाम्। मृत्युं यंजे प्रथमजामृतस्यं॥४६॥

मृत्यवें वीरा १ श्चरवारिं च॥———[१५]

त्रणिर्विश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भांसि रोचनम्। उपयामगृहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजंस्वत एष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजंस्वते॥४७॥

-[१६]

आ प्यांयस्व मदिन्तम् सोम् विश्वांभिरूतिर्भिः। भवां नः सुप्रथंस्तमः॥४८॥

[88]

ईयुष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तीमुषस्ं मर्त्यांसः। अस्माभिरू नु प्रंतिचक्ष्यांऽभूदो ते यंन्ति ये अंप्रीषु पश्यान्॥४९॥

**-**[१८]

ज्योतिष्मतीं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतं त्वा सादयामि ज्योतिर्विदं त्वा सादयामि भास्वतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि मल्मलाभवंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यंमानां त्वा सादयामि रोचंमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृहज्योतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं त्वा सादयामि॥५०॥

[ ? ? ]

प्रयासाय स्वाहां ऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां संयासाय स्वाहों द्यासाय स्वाहां ऽवयासाय स्वाहां शुचे स्वाहा शोकांय स्वाहां तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहां ब्रह्महत्याये स्वाहा सर्वसमे स्वाहां॥५१॥

[२०]

चित्तर संन्तानेनं भवं युक्रा रुद्रन्तनिम्ना पशुपति ई स्थूलहृद्येनाग्निर हृदयेन रुद्रं लोहितेन शुर्वं मतस्नाभ्यां महादेवमुन्तः पाँर्श्वेनौषिष्ठहनर शिङ्गीनिकोश्याँभ्याम्॥५२॥

[२१]

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः॥



## ॥चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपितभ्यो मा मामृषंयो मन्नकृतों मन्नपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मन्नकृतों मत्रुपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं में प्रजाये पश्नां भूयादुपस्तरणमहं प्रजाये पश्नां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास र शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मत्रकुद्धो मत्रंपतिभ्यो मा मामृषंयो मत्रकृतों मत्रुपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रकृतों मत्रुपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं विद्ये तेजों विद्ये यशों विद्ये तपों विद्ये ब्रह्मं विद्ये सत्यं विद्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणमे प्रजाये पशूनां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजाये पशूनां भूयास् प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मिन्छे मधुं जिन्छे मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास शृश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभाये पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥

[8]

युञ्जते मनं उत युञ्जते धियः। विप्रा विप्रंस्य बृह्तो विप्रिश्चतः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। मही देवस्यं सिवृतः परिष्ठतिः। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अश्विरस्य नारिरसि। अध्वर्कृद्देवभ्यः। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते॥२॥

देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु मुरुतः सुदानंवः। इन्द्रं प्राशूर्भवा सर्चां। प्रैतु ब्रह्मंणस्पतिः। प्र देव्येतु सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किरांधसम्। देवा युज्ञं नंयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथाम्। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥३॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। इयत्यग्रं आसीः। ऋख्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। देवींर्वम्रीर्स्य भूतस्यं प्रथमजा ऋतावरीः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥४॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। इन्द्रस्यौजोंऽसि। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। अग्निजा असि प्रजापंते रेतंः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥५॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीष्णें। आयुंधेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेहि मिये धेहि। मधुं त्वा मधुला करोतु। मुखस्य शिरोंऽसि॥६॥

यज्ञस्यं पदे स्थंः। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रैष्टुंभेन त्वा छन्दंसा करोमि। जागंतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मखस्य रास्नांऽसि। अदिंतिस्ते बिलं गृह्णातु। पाङ्केन छन्दंसा। सूर्यस्य हरंसा श्राय। मुखोंऽसि॥७॥

प्ते शिरं ऋतावरीर्ऋख्यासंमुद्य मुखस्य शिर्ः शिर्ः शिरोऽसि नवं च॥———[२]

वृष्णो अश्वंस्य निष्पदंसि। वर्रणस्त्वा धृतव्रंत आधूंपयतु। मित्रावर्रणयोर्धुवेण धर्मणा। अर्चिषै त्वा। शोचिषै त्वा। ज्योतिषे त्वा। तपंसे त्वा। अभीमं मंहिना दिवम्। मित्रो बंभूव सुप्रथाः। उत श्रवंसा पृथिवीम्॥८॥

मित्रस्यं चर्षणी्धृतंः। श्रवों देवस्यं सानुसिम्। द्युम्नं

चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यै त्वा। देवस्त्वां सिवतोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्गुरिः। सुबाहुरुत शक्त्यौ। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा दिश आ पृण। उत्तिष्ठ बृहन्भव॥९॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भुवस्त्वम्। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवै त्वा। साधवे त्वा। सुक्षित्ये त्वा भूत्यै त्वा। इदमहम्मुमां-मुष्यायणं विशा पृशुभिर्व्रह्मवर्चसेन् पर्यूहामि। गायत्रणं त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। त्रेष्टुंभेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। जागंतेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। छृणत्तुं त्वा वाक्। छृणत्तुं त्वा क्वक्। छृणत्तुं त्वा क्विः। छृन्धि वाचम्। छृन्ध्यूर्जम्। छृन्धि हिवः। देवं पुरश्चर सुग्ध्यासं त्वा॥१०॥

पृथिवीं भंव वाख्यद्वं॥-----[३]

ब्रह्मंन् प्रवर्ग्येण् प्रचेरिष्यामः। होतंर्घ्मम्भिष्टंहि। अग्नीद्रौहिणौ पुरोडाशाविधंश्रय। प्रतिप्रस्थात्रविहंर। प्रस्तोतः सामानि गाय। यजुंर्युक्त्रः सामंभिराक्तंखन्त्वा। विश्वैदिवेरनुंमतं म्रुद्धिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारियृष्णुम्। स्तुभो वहन्तु सुमन्स्यमानम्। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। भूभुवः सुवंः। ओमिन्द्रंवन्तः प्रचंरत॥११॥

अहंणीयमानो द्वे चं॥-----[४]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामः। होतंर्धर्मम्भिष्टंहि। यमायं त्वा मुखायं त्वा। सूर्यस्य हरंसे त्वा। प्राणाय स्वाहां व्यानाय स्वाहां ऽपानाय स्वाहां। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहां। मनसे स्वाहां वाचे सरस्वत्यै स्वाहां। दक्षांय स्वाहा ऋतंवे स्वाहां। ओजंसे स्वाहा बलांय स्वाहां। देवस्त्वां सिवता मध्यां ऽनक्ता। १२॥

पृथिवीं तपंसस्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिंरसि तपोऽसि। स॰सींदस्व महा॰ असि। शोचंस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रंशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वपावंन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पुत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घुर्मो अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥

अनाधृष्या पुरस्तांत्। अग्नेराधिपत्ये। आयुंर्मे दाः। पुत्रवंती दक्षिणतः। इन्द्रस्याधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पृश्चात्। देवस्यं सवितुराधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्रुंतिरुत्तरुतः॥१४॥

मित्रावर्रुणयोराधिपत्ये। श्रोत्रं मे दाः। विधृतिरूपरिष्टात्। बृह्स्पतेराधिपत्ये। ब्रह्मं मे दाः क्षत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि भूरिपुत्रा। विश्वांभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥

सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीः। तपोष्वंग्ने अन्तराश् अमित्रान्। तपाशश्संमर्रुषः परंस्य। तपांवसो चिकितानो अचित्तान्। वि तें तिष्ठन्ताम्जरां अयासः। चितः स्थ परिचितः। स्वाहां म्रुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा असि। प्रतिमा असि॥१६॥ सम्मा असि। विमा असि। उन्मा असि। अन्तरिक्षस्यान्तर्धि-रिस। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भियदतों न ऊनम्। आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो मिहं गोत्रा रुजासि। भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्॥१७॥

विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिरंस्तु। अर्हंन्बभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्तं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमञ्ज्ञंवम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायुत्रमंसि। त्रेष्टुंभमिस। जागंतमिस। मधु मधु मधु॥१८॥ अन्कसादीदुत्रतः पाहि प्रतिमा असि यज्ञतन्तं अन्यज्ञागंतमस्यकं च॥———[५]

दश् प्राचीर्दशं भासि दक्षिणा। दशं प्रतीचीर्दशं भास्युदीचीः। दशोध्वा भांसि सुमन्स्यमानः। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। अग्निष्ट्वा वसंभिः पुरस्ताँद्रोचयतु गाय्त्रेण् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयतु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्लाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्लाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तरतो रोंचयत्वानुंष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोंचय। बृहुस्पतिंस्त्वा विश्वैद्वैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मंनुष्येषु। सम्नाङ्कर्म रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चस्यंसि। रुचितोऽहं मंनुष्येष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासम्। रुगसि। रुचं मियं धेहि॥२०॥

मिय रुक्। दशं पुरस्तांद्रोचसे। दशं दिक्षणा। दशं प्रत्यङ्ड्। दशोदङ्कं। दशोर्ध्वो भांसि सुमनस्यमानः। स नः सम्राडिष्मूर्जं धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो घर्मो रुचीय॥२१॥

रो<u>च</u>य धेहि नवं च॥———[६]

अपंश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च प्थिभिश्चरंन्तम्। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसानः। आ वरीवर्ति भुवनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीः। मधु माध्वीभ्यां मधु माधूचीभ्याम्। अनुं वां देववीतये। सम्ग्रिर्ग्निनां गत। सं देवनं सिवता। स॰ सूर्येण रोचते॥२२॥

स्वाहा सम्ग्रिस्तपंसा गत। सं देवेनं सिवता। सः सूर्यणारोचिष्ट। धूर्ता दिवो विभांसि रजंसः। पृथिव्या धूर्ता। उरोर्न्तिरक्षस्य धूर्ता। धूर्ता देवो देवानाम्। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनंसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥

ऊर्ध्वमिममध्वरं कृषि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते। देवश्रस्त्वं देव घर्म देवान्पांहि। तुपोजां वाचंम्स्मे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥

गर्भो देवानाम्। पिता मंतीनाम्। पिताः प्रजानाम्। मितः कवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट। सः सूर्येणारुक्त। आयुर्दास्त्वम्समभ्यं धर्म वर्चोदा असि। पिता नोऽसि पिता नो बोध। आयुर्धास्तंनूधाः पंयोधाः। वर्चोदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥२५॥

अन्तिरिक्षप्र उरोर्वरीयान्। अशीमिहं त्वा मा मां हिश्सीः। त्वमंग्ने गृहपंतिर्विशामंसि। विश्वांसां मानुंषीणाम्। शृतं पूर्भिर्यविष्ठ पाह्यश्हंसः। समेद्धार्श् शृतश् हिमाः। तुन्द्राविणश् हार्दिवानम्। इहैव रातयः सन्तु। त्वष्टींमती ते सपेय। सुरेता रेतो दर्धाना। वीरं विदेय तवं सुन्हिशी। माऽहश् रायस्पोषंण वि योषम्॥२६॥

रोच्ते सूर्याय त्वा देवायुर्वं द्रविणोदा दर्धांना द्वे चं॥————[ $oldsymbol{9}$ ]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तौभ्यामादंदे। अदित्यै रास्नांसि। इड एहिं। अदित एहिं। सर्रस्वत्येहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं॥२७॥

अदित्या उष्णीषंमसि। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदापय। यस्ते स्तनंः शशुयो यो मयोभूः। येन विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्रुधा वंसुविद्यः सुदर्त्रः। सरंस्वति तिमेह धातंवेकः। उस्रं घुर्मः शिरंष। उस्रं घुर्मं पाहि॥२८॥

घुर्मायं शिश्ष। बृह्स्पतिस्त्वोपंसीदत्। दानंवः स्थ् पेरंवः। विष्वुग्वृतो लोहिंतेन। अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्यै पिन्वस्व। पूष्णे पिन्वस्व। बृह्स्पतंये पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥

गायत्रोऽसि। त्रैष्टुंभोऽसि। जागंतमिस। सहोर्जो भागेनोपमेहिं। इन्द्रौश्विना मधुंनः सार्घस्यं। घर्मं पांत वसवो यजंता वट। स्वाहौ त्वा सूर्यस्य र्श्मये वृष्टिवनंये जुहोमि। मधुं ह्विरंसि। सूर्यस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामि॥३०॥

अन्तिरिक्षेण त्वोपंयच्छामि। देवानौं त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयम्। तेजोऽसि। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। अन्तिरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। सुवंरिस् सुवंर्मे यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां पाहि॥३१॥

एहिं पाहि पिन्वस्व गृह्णाम् नवं च॥\_\_\_\_\_

<del>--</del>[८]

समुद्रायं त्वा वातांय स्वाहां। सृतिलायं त्वा वातांय स्वाहां। अनाधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहां। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अवस्यवें त्वा वातांय स्वाहाँ। दुवंस्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। शिमिंद्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। अग्नयें त्वा वसुंमते स्वाहाँ। सोमांय त्वा रुद्रवंते स्वाहाँ। वरुंणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहाँ॥३२॥

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहां। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहां। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहां। विश्वा आशां दक्षिणसत्। विश्वां देवानंयाडिह। स्वाहांकृतस्य घुर्मस्यं। मधौः पिबतमिश्वना। स्वाहाऽग्नये यज्ञियांय। शं यजुंिभः। अश्विना घुर्मं पांत शहिवानम्॥३३॥

अहंदिवाभिक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्साताम्। स्वाहेन्द्राय। स्वाहेन्द्रावट्। घर्ममंपातमिश्वना हार्दिवानम्। अहंदिवाभिक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमरसाताम्। तं प्रार्व्यं यथा वट्। नमों दिवे। नमः पृथिव्यै॥३४॥

दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्चं प्रदिशों गच्छ। देवान्धर्मपान्गच्छ। पितृन्धर्मपान्गच्छ॥३५॥

आदित्यवंते स्वाहां हार्दिवानं पृथिव्या अष्टौ चं॥———[ १

ड्रषे पींपिहि। ऊर्जे पींपिहि। ब्रह्मणे पीपिहि। क्षुत्रायं पीपिहि। अुद्धः पींपिहि। ओषंधीभ्यः पीपिहि। वनुस्पितंभ्यः पीपिहि। द्यावांपृथिवीभ्यां पीपिहि। सुभूतायं पीपिहि। ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि॥३६॥

यजंमानाय पीपिहि। मह्यं ज्यैष्ठ्यांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा। द्युम्नायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्मांऽसि सुधर्मा मैं न्यस्मे। ब्रह्मांणि धारय। क्षुत्राणिं धारय। विशंं धारय। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयांत्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सह निर्धं गंच्छ। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। पूष्णे शरंसे स्वाहां। ग्रावंभ्यः स्वाहां। प्रतिरेभ्यः स्वाहां। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहां। पितृभ्यो धर्मपेभ्यः स्वाहां। रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहां॥३८॥

अहुर्ज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिर्ज्योतिषा्ड् स्वाहाँ। रात्रिर्ज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिर्ज्योतिषा्ड् स्वाहाँ। अपीपरो माऽह्यो रात्रियै मा पाहि। पृषा तें अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अपीपरो मा रात्रिया अह्यों मा पाहि॥३९॥

पृषा ते अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अग्निज्योतिज्योतिरग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुत हिवः। मधुं हिवः। इन्द्रंतमेऽग्नौ॥४०॥

पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीः। अश्यामं ते देवघर्म।

मध्रमतो वाजंवतः पितुमतः। अङ्गिरस्वतः स्वधाविनः। अशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रश्मिभ्यः। स्वाहाँ त्वा नक्षेत्रेभ्यः॥४१॥

ब्रह्मवुर्चुसायं पीपिहि स्कुन्दयाँद्रुद्रायं रुद्रहोँत्रे स्वाहाऽह्नां मा पाह्यग्नौ सप्त चं॥——[१०]

घर्म् या ते दिवि शुक्। या गांयत्रे छन्दंसि। या ब्राँह्मणे। या हंविधीनें। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। घर्म् या तेऽन्तिरिक्षे शुक्। या त्रैष्टुंभे छन्दंसि। या रांजन्यें। याऽऽग्नींग्ने। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥४२॥

घर्म् या ते पृथिव्या १ शुक्। या जागंते छन्दंसि। या वैश्यैं। या सदंसि। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहाँ। अनुंनोऽद्यानुंमितिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां पर्स्पायाः। अन्तरिक्षस्य तनुवंः पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥

व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पायाः। क्ष्र्त्रस्यं तनुवंः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायः। चक्षुंषस्तनुवंः पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। वत्नुरंसि शं युधायाः॥४४॥

शिशुर्जनंधायाः। शं च् विक्षे परि च् विक्षे। चतुः स्रिक्तिर्नाभिर्ऋतस्यं। सदो विश्वायुः शर्म सप्रथाः। अप् द्वेषो अप् ह्वरंः। अन्यद्वंतस्य सिश्चम। धर्मैतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीषम्।

तेन वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। वर्धिषीमहिं च व्यम्। आ चं प्यासिषीमहिं॥४५॥

रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्धर्वः। तस्यं ते पृद्वद्वंविधानम्। अग्निरध्यक्षाः। रुद्रोऽधिपतिः। समृहमायुषा। सं प्राणेनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौपत्येनं। स॰ रायस्पोषेण॥४६॥

व्यंसौ। यौंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। अचिंऋदृहृषा हरिः। महान्मित्रो न दंर्शृतः। स॰ सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावा। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंरण्युः। महान्थ्स्थस्थै ध्रुव आनिषंत्तः॥४७॥

नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंम्। आपो दृहशुषीः। तृहतेनाव्यायन्। तृद्वववैत्। इन्द्रो रारहाण आसाम्। परि सूर्यस्य परिधीश रंपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नो गृणातु। दिव्यो गन्धवं रजसो विमानः। यद्वां घा सृत्यमुत यन्न विद्या ४८॥

धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यात्। सिम्नेमिवन्द् चरंणे नदीनाम्। अपांवृणोद्दुरो अश्मंत्रजानाम्। प्रासांन्यन्थ्वीं अमृतांनि वोचत्। इन्द्रो दक्षं परिजानादहीनम्। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपांगाः। इदमहं मंनुष्यों मनुष्यान्। सोमंपीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषंण। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु॥४९॥

दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। उद्वयं तमंस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। इममूषुत्यम्स्मभ्य रं सिनम्। गायत्रं नवीया रसम्। अग्ने देवेषु प्रवोचः॥५०॥ याऽऽग्नींध्रे तान्तं एतेनावं यजे स्वाहा धर्मणा शं युधायाः प्यासिषीमहि पोषेण निषंत्तो विद्य संन्त्वष्टौ॥——[११]

महीनां पयोऽसि विहितं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि वनस्पतीनामोषधीना रसंः। वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं नयामः। ऊर्धं मनः सुवर्गम्॥५१॥

·[१२]

अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कानिष्मो युवागाः। स्कन्नेमा विश्वा भुवना। स्कन्नो युज्ञः प्रजनयतु। अस्कानजनि प्राजनि। आ स्कन्नाज्ञांयते वृषां। स्कन्नात् प्रजनिषीमहि॥५२॥

[१३]

या पुरस्तां द्विद्युदापंतत्। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहां। या दक्षिणतः। या पृश्चात्। योत्तंरतः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥५३॥

**-**[88]

प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनसे स्वाहां वाचे सरस्वत्ये स्वाहाँ॥५४॥

-[१५]

पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरंसे स्वाहां। पूष्णे प्रंपुत्थ्यांय स्वाहां पूष्णे नरन्धंषाय स्वाहां। पूष्णेऽङ्गंणये स्वाहां पूष्णे नरुणांय स्वाहां। पूष्णे सांकेताय स्वाहां॥५५॥

-[१६]

उदंस्य शुष्माँद्भानुर्नात् बिर्मिति। भारं पृथिवी न भूमी। प्र शुक्रैतुं देवी मनीषा। अस्मथ्सुतृष्टो रथो न वाजी। अर्चन्त एके मिह् साममन्वत। तेन सूर्यमधारयन्। तेन सूर्यमरोचयन्। धर्मः शिर्स्तद्यमुग्निः। पुरीषमिस सं प्रियं प्रजयां पृशिभिभ्वत्। प्रजापितिस्त्वा सादयतु। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥५६॥

-[१७]

यास्ते अग्न आर्द्रा योनयो याः कुंलायिनीः। ये ते अग्न इन्देवो या उ नाभयः। यास्ते अग्ने तनुव ऊर्जो नाम। ताभिस्त्वमुभयीभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सीद। प्रजापितिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५७॥

**-**[१८]

अग्निरंसि वैश्वान्रोंऽसि। संवृथ्यरोंऽसि परिवथ्यरोंऽसि। इदावृथ्यरोंऽसीदुवथ्यरोंऽसि। इद्वथ्यरोंऽसि वथ्यरोंऽसि। तस्यं ते वसन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितयः। अपरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासांश्चार्थमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवंस्ते कल्पन्ताम्। संवथ्सरस्ते कल्पताम्। अहोरात्राणि ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदिति। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्वद्भुवः सीद॥५८॥

चित्रयो नवं च॥

[१९

भूर्भुवः सुवंः। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। ऊर्ध्वो नंः पाह्यश्हेसः। विधुन्दंद्राणश् समेने बहूनाम्। युवांनुश् सन्तं पितृतो जंगार। देवस्यं पश्य काव्यं मिह्त्वाद्या मुमारं। सह्यः समान। यद्दते चिंदिभिश्लेषंः। पुरा जुर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सन्धिं मुघवां पुरोवसुंः॥५९॥

निष्कंर्ता विह्नंतं पुनंः। पुनंक्र्जा सह रय्या। मा नों घर्म व्यथितो विव्यथो नः। मा नः पर्मधंरं मा रजोंऽनैः। मोष्वंस्माः स्तमंस्यन्त्रा धाः। मा रुद्रियांसो अभिगुंर्वृधानः। मा नः ऋतुंभिर्हीडितेभिर्स्मान्। द्विषांसुनीते मा परां दाः। मा नों रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्ताः। मा चावांपृथिवी हींडिषाताम्॥६०॥

उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नेः सखाया। आदित्यानां प्रसितिर्हेतिः। उग्रा श्तापांष्ठा घविषा परिं णो वृणक्तु। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं। उद्वयं तमस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। वर्यः सुपूर्णाः॥६१॥

भूर्भुवः सुवंः। मिय् त्यिदिन्द्रियं महत्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो विभातु मे। आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। ब्रह्मणा तेजंसा सह। क्षत्रेण यशंसा सह। सत्येन तपंसा सह। तस्य दोहंमशीमिह। तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भूक्षमंशीमिह। तस्यं त इन्द्रेण पीतस्य मधुंमतः। उपंहृतस्योपंहृतो भक्षयामि॥६२॥

यास्ते अग्ने घोरास्तन् वंः। क्षुच् तृष्णां च। अस्रुक्वानां हुतिश्च। अ्श्नुन्या चं पिपासा चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्ते अग्ने घोरास्तनु वंः। ताभिर्मुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः॥६३॥

[२२]

स्निक् स्नीहिंतिश्च स्निहिंतिश्च। उष्णा चे शीता चे। उग्रा चे भीमा चे। सदाम्नी सेदिरिनिरा। एतास्ते अग्ने घोरास्तनुवेः। ताभिरमुं गेच्छ। योऽस्मान्द्वेष्टि। यं चे व्यं द्विष्मः॥६४॥

[२३]

धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनय ईश्च। निलिम्पश्चं विलिम्पश्चं

विक्षिपः॥६५॥

**-**[२४]

उग्रश्च ध्रनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयईश्च। सहसह्यहाइश्च सहमानश्च सहस्वाइश्च सहीयाइश्च। एत्य प्रेत्यं विक्षिपः॥६६॥

-[२५]

अहोरात्रे त्वोदीरयताम्। अर्धमासास्त्वोदीं जयन्तु। मासास्त्वा श्रपयन्तु। ऋतवस्त्वा पचन्तु। संवथ्सरस्त्वां हन्त्वसौ॥६७॥

-[२६]

खट् फट् जिहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः क्रूराणि॥६८॥

[२७]

विगा इंन्द्र विचर्रन्थस्पाशयस्व। स्वपन्तंमिन्द्र पशुमन्तंमिच्छ। वर्त्रेणामुं बोधय दुर्विदत्रम्ं। स्वपतौंऽस्य प्रहंर भोजंनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवंदस्व। मृत्यो मृत्युना संवंदस्व। नमंस्ते अस्तु भगवः। स्कृत्ते अग्ने नमंः। द्विस्ते नमंः। त्रिस्ते नमंः। चतुस्ते नमंः। पश्चकृत्वंस्ते नमंः। दशकृत्वंस्ते नमंः। शृतकृत्वंस्ते नमंः। आस्हस्रकृत्वंस्ते नमंः। अपरिमितकृत्वंस्ते नमंः। नमंस्ते अस्तु मा मा हिश्सीः॥६९॥

| त्रिस्ते नमः सप्त चं॥————[२८]   |
|---|
| असृन्मुखो रुधिरेणाव्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाद्विधांवसि।<br>गृध्रंः सुपूर्णः कुणपुं निषेवसे। यमस्यं दूतः प्रहितो भ्वस्य |
| चोुभयोः॥७०॥   |
| [ <i>8§</i> ]   |
| यदेतह्वंकसो भूत्वा। वाग्देंव्यभिरायंसि। द्विषन्त  |
| मेऽभिराय। तं मृत्यो मृत्यवे नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छतु॥७१॥  |
| <u> </u>  |
| यदींषितो यदि वा स्वकामी। भयेडेको वदिति  |
| वाचंमेताम्। तामिंन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानौ। शिवाम्समभ्य  |
| कृणुतं गृहेषुं॥७२॥  |
| <u> </u>  |
| दीर्घमुखि दुर्हणु। मा स्मं दक्षिणुतो वंदः। यदि दक्षिणुतो  |
| वदाँद्विषन्तुं मेऽवं बाधासै॥७३॥   |
| [32]  |
| इत्थादुलूंक आपंप्तत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्षंसां दूत  |
| आर्गतः। तिमृतो नांशयाग्ने॥७४॥   |
| [33]  |
| यदेतद्भूतान्यंन्वाविश्यं। दैवीं वार्चं वदसिं। द्विषतीं नुः  |
| पर्गवद्य तान्मेत्यो मत्यवे नयः त आत्योऽऽर्तिमार्च्छन्तः   |

अग्निनाऽग्निः संवंदताम्॥७५॥

-[३४]

प्रसार्य सुक्थ्यौ पतिसि। सुव्यमिक्षं निपेपि च। मेहकस्य चनाममत्॥७६॥

[३५]

अत्रिणा त्वा क्रिमे हन्मि। कण्वेन ज्मदेग्निना। विश्वावंसोर्ब्रह्मणा हृतः। क्रिमीणा् राजाः। अप्येषाः स्थपतिरहृतः। अथो माताऽथो पिता। अथौ स्थूरा अथौ श्रुद्राः। अथो कृष्णा अथौ श्रेताः। अथो आशातिका हृताः। श्रेताभिः सह सर्वे हताः॥७७॥

[३६]

आह्रावंद्य। शृतस्यं ह्विषो यथां। तथ्सत्यम्। यदमुं यमस्य जम्भंयोः। आदंधामि तथा हि तत्। खण्फण्मसिं॥७८॥

[३*७*]

ब्रह्मणा त्वा शपामि। ब्रह्मणस्त्वा शपर्थेन शपामि। घोरेणं त्वा भृगूणां चक्षुंषा प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनंसा ध्यायामि। अघस्यं त्वा धारंया विद्धामि। अधंरो मत्पंद्यस्वासौ॥७९॥

[36]

उत्तंद शिमिजावरि। तल्पंजे तल्प उत्तंद। गिरी॰ रनु

प्रवेशय। मरीचीरुप सन्नुंद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितोऽमुं नांशय। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चे वयं द्विष्मः॥८०॥

[३९]

भूर्भवः स्वो भूर्भवः स्वो भूर्भवः स्वंः। भुवोंऽद्धायि भुवोंऽद्धायि भुवोंऽद्धायि। नृम्णायि नृम्णं नृम्णायि नृम्णं नृम्णायि नृम्णम्। निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि। ए अस्मे अस्मे। सुवर्न ज्योतीः॥८१॥

[80]

पृथिवी समित्। ताम्गिः सिनन्धे। साऽग्निः सिनन्धे। ताम्हः सिनन्धे। सा मा सिनिद्धा। आयुंषा तेजसा। वर्चसा श्रिया। यशसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन् सिन्ताः स्वाहां। अन्तरिक्षः समित्॥८२॥

तां वायुः सिनंन्धे। सा वायु सिनंन्धे। ताम्ह सिनंन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चंसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिनंन्ता स्वाहाँ। द्यौः सिन्त। तामांदित्यः सिनंन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य सिनिन्धे। तामह सिनिन्धे। सा मा सिनिद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चंसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिनिन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिनदिस सपत्रक्षयंणी। भ्रातृब्यहा मेंऽसि स्वाहाँ। अग्रैं

## व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि॥८४॥

तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। द्यौः समित्। तामांदित्यः समिन्धे। साऽऽदित्य समिन्धे। तामह समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेर्जसा॥८५॥

वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिनंन्ताः स्वाहाँ। अन्तरिक्षः समित्। तां वायुः सिनंन्धे। सा वायुः सिनंन्धे। सा मा सिनंद्या। आयुंषा तेजसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिमंन्ता र् स्वाहाँ। पृथिवी सिमत्। ताम्गिः सिमंन्धे। साऽग्निर सिमंन्धे। ताम्हर सिमंन्धे। सा मा सिमंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्यंन् समिन्ता्ड् स्वाहाँ। प्राजापत्या में समिदंसि सपत्रक्षयंणी। भ्रातृव्यहा मेंऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्मेंऽराधि। वायौं व्रतपतेऽग्ने व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्मेंऽराधि॥८८॥

स्मिथ्सिर्मिन्धे व्रतं चेरिष्याम्यायुंषा तेजंसा वर्चसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनाष्टौ चं॥•[४१]

शं नो वार्तः पवतां मात्रिश्वा शं नंस्तपतु सूर्यः।

अहांनिशं भंवन्तु नः श॰ रात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्यंच्छतु शमांदित्य उदेतु नः। शिवा नः शन्तंमा भव सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्यांम सन्दिशं। इडांयै वास्त्वंसि वास्तुमद्वांस्तुमन्तों भूयास्म मा वास्तोंश्छिथ्स्मह्यवास्तुः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। प्रतिष्ठासिं प्रतिष्ठावंन्तो भूयास्म मा प्रंतिष्ठायांश्छिथ्स्मह्यप्रतिष्ठः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेषजं वि वांत वाहि यद्रपंः। त्व॰ हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमो वातौ वात आ सिन्धोरा परावतः॥८९॥

दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वांतु यद्रपः। यद्दो वांतते गृहेंऽमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह वात आवांतु भेषजम्। श्राम्भूर्मयोभूर्नों हृदे प्र ण आयूर्षेष तारिषत्। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूर्गुवः सुवः प्रपंद्ये वायुं प्रपद्येऽनांतां देवतां प्रपद्येऽश्मानमाखणं प्रपद्ये प्रजापंतेर्ब्रह्मकोशं ब्रह्म प्रपद्य ओं प्रपद्ये। अन्तरिक्षं म उर्वन्तरं बृहद्ग्रयः पर्वताश्च यया वातः स्वस्त्या स्वंस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वंस्तिमानंसानि। प्राणापानो मृत्योमां पातं प्राणापानौ मा मां हासिष्टं मियं मेधां मियं

प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय् सूर्यो भ्राजों दधातु॥९०॥

द्युभिर्क्तुभिः परिपातम्स्मानिरष्टिभिरिश्वना सौभंगेभिः। तन्नो मित्रो वर्रुणो मामहन्तामिदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्योः। कयां निश्चित्र आ भुंवदूती सदावृधः सखाँ। कया शिचेष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां मर्रहिष्ठो मध्सदन्धंसः। दृढाचिदारुजे वसुं। अभी षु णः सखींनामिवता जरितृणाम्। शृतं भवास्यूतिभिः। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधंमानाः। अपं ध्वान्तमूणुंहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेव बद्धान्॥९१॥

शं नो देवीर्भिष्टंय आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भिस्नंवन्तु नः। ईशांना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि भेषजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यों ऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रस्स्तस्यं भाजयतेह नंः। उश्तीरिंव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥

आपों जनयंथा च नः। पृथिवी शान्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुचर शमयत्। अन्तरिक्षर

शान्तं तद्वायुनां शान्तं तन्में शान्तः शुच र शमयतु। द्योः शान्ता साऽऽदित्येनं शान्ता सा में शान्ता शुच ५ शमयतु। पृथिवी शान्तिरन्तरिक्ष्य शान्तिचीः शान्तिर्दिशः शान्तिरवान्तरदिशाः शान्तिरग्निः शान्तिर्वायुः शान्तिरादित्यः शान्तिश्चन्द्रमाः शान्तिर्नक्षेत्राणि शान्तिरापः शान्तिरोषंधयः शान्तिर्वनस्पतंयः शान्तिर्गौः शान्तिरजा शान्तिरश्वः शान्तिः पुरुषः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिं ब्राह्मणः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः शान्तिमें अस्तु शान्तिः। तयाहर शान्त्या सर्वशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। एह श्रीश्च हीश्च धृतिंश्च तपों मेधा प्रतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चैतानि मोत्तिष्ठन्तुमनूत्तिष्ठन्तु मा माु श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपो मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना रसेनोत्पर्जन्यंस्य शुष्मेणोदंस्थाममृता । अनु। तचक्षुंर्देवहितं पुरस्तांच्छुऋमुचरत्। पश्येम श्ररदः शतं जीवेम शरदेः शतं नन्दाम शरदेः शतं मोदाम शरदेः शतं भवीम शरदेः शत १ शृणवीम शरदेः शतं प्रब्रंवाम शरदेः शतमजीताः स्याम शरदेः शतं ज्योक सूर्यं दृशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाँद्विभ्राजंमानः सरि्रस्य मध्याथ्स मां वृषभो लोहिताक्षः सूर्यो विपश्चिन्मनंसा पुनातु। ब्रह्मणश्चोतंन्यसि ब्रह्मण आणी स्थो ब्रह्मण आवपंनमसि धारितेयं पृथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन मृहद्न्तरिक्षुं दिवं दाधार पृथिवी स्सदेवां यद्हं वेद् तद्हं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्नंसत्। मेधामनीषे माविशता स्मीची भूतस्य भव्यस्यावंरुध्ये सर्वमायुरयाणि सर्वमायुरयाणि। आभिर्गीर्भियदतों न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। ब्रह्म प्रावांदिष्म तन्नो मा हांसीत्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः। १३॥

प्रावतों दधातु बृद्धां जिन्वंथ दृशे सप्त चं॥————[४२]

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मञ्जकुः मञ्जंपतिभ्यो मा मामृषंयो मञ्जकुतो मञ्जपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्जकृतो मञ्जपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म में द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगत। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं विद्ये तेजों विद्ये यशों विद्ये तपों विद्ये ब्रह्मं विद्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मा अहमिदम्प्रस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंण में प्रजाये पश्नां भूयादुपस्तरंणमृहं प्रजाये पश्नां भूयास् प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास श्रशूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अंवन्तु

शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः॥

## ॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं न्स्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥ देवा वै स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषां न्स्तथ्सहासदितिं। तेषां कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यै खाण्ड्वो देक्षिणार्ध आंसीत्। तूर्प्यम्तरार्धः। परीणज्ञंघनार्धः। मरवं उत्करः॥१॥

तेषां मुखं वैष्णुवं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापाकामत्। तं देवा अन्वायन्। यशोऽव्रुरुंश्यमानाः। तस्यान्वागंतस्य। सृव्याद्धनुरजांयत। दक्षिणादिषंवः। तस्मादिषुधन्वं पुण्यंजन्म। युज्ञजन्मा हि॥२॥

तमेक् सन्तम्। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्व-नम्। बहवोऽनिषुधन्वा नाभिधृंष्णुवन्ति। सोऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरितिं। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपांकामत्। तद्देवा ओषंधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मयाका वे नामैते॥३॥

तथ्सम्याकांना इस्मयाकृत्वम्। तस्माँ द्दीक्षितेनां पिगृह्यं समेत्व्यम्। तेजंसो धृत्यैं। सधनुंः प्रतिष्कभ्यां तिष्ठत्। ता उपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अर्थं व इम इस्याम। यत्र कं च खनांम। तद्पों ऽभितृंणदामेति। तस्मां दुपदीका यत्र कं च खनंन्ति। तदपों ऽभितृंन्दन्ति॥४॥

वारेवृत् ह्यांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य धर्नुर्विप्रवंमाण् शिर् उदंवर्तयत्। तद्यावांपृथिवी अनुप्रावंर्तत। यत्प्रावंर्तत। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्धाँ(४)इत्यपंतत्। तद्धमंस्यं धर्मृत्वम्। मृह्तो वीर्यमपप्तदिति। तन्मंहावीरस्यं महावीर्त्वम्॥५॥

यदस्याः समर्भरन्। तथ्सम्राज्ञाः सम्राद्वम्। तङ् स्तृतं देवतां स्त्रोधा व्यंगृह्णत्। अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो माध्यं दिन् सर्वनम्। विश्वेदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीष्णां यज्ञेन् यजमानाः। नाशिषोऽवारुन्धतः। न सुवर्गं लोकम्भ्यंजयन्। ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥

भिषजौ वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिधत्तमिति। तावंबूतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापि गृह्यतामिति। ताभ्यांमेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंधत्ताम्। यत्प्रंवर्ग्यः। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषो- उर्रुन्थत। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणिति। यज्ञस्यैव तिष्ठरः प्रतिद्धाति। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजंमानः। अवाशिषों रुन्थे। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। तस्मादेष आंश्विनप्रंवया इव। यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥

उत्करो होते तृंन्दन्ति महावीर्त्वमंब्रुवन्नजयन्थ्सप्त चं॥————[१]

सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुंष्पादः

प्शवंः। प्शूनेवावंरुन्थे। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतिंतिष्ठति। छन्दा रेसि देवेभ्योऽपांकामन्। न वोऽभागानिं ह्व्यं वंक्ष्याम् इतिं। तेभ्यं एतचंतुर्गृहीतमंधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै याज्यांयै॥८॥

देवतांयै वषद्भारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोतिं। छन्दा इस्येव तत् प्रीणाति। तान्यंस्य प्रीतानि देवेभ्यों हृव्यं वहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न होत्व्या(३)मितिं। हृविर्वे दीक्षितः। यज्जंहुयात्। हृविष्कृंतं यजंमानमुग्नौ प्रदंध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥

यज्ञपुरुरुन्तरियात्। यजुरेव वंदेत्। न ह्विष्कृंतं यजंमानमुग्नौ प्रदर्धाति। न यंज्ञपुरुरुन्तरेति। गायुत्री छन्दा इस्यत्यंमन्यत। तस्यै वषद्वारौं ऽभ्यय्य शिरौं ऽच्छिनत्। तस्यै द्वेधा रसः परापतत्। पृथिवीमुर्धः प्राविंशत्। पृशूनुर्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरों ऽभवत्। यः पृशून्। सों ऽजाम्। यत्खांदिर्यभिर्भ-वंति। छन्दंसामेव रसेंन युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जैव युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वैण्वी। तेजो वै वेणुंः॥११॥

तेर्जसैव यज्ञस्य शिरः सम्भेरित। यद्वैकंङ्कती। भा एवावंरुन्थे। देवस्यं त्वा सवितुः प्रस्व इत्यभ्रिमादंत्ते प्रसूँत्यै। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। वज्रं इव वा एषा। यदभ्रिः। अभ्रिरिस् नारिर्सीत्यांह शान्त्यै॥१२॥

अध्वर्कृद्देवेभ्य इत्यांह। युज्ञो वा अध्वरः। युज्ञकृद्देवेभ्य इति वावैतदांह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्यांह। ब्रह्मणेव युज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिरित्यांह। प्रेत्येव युज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्र देव्येतु सूनृतेत्यांह। युज्ञो वे सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किराधसमित्यांह॥१३॥

पाङ्गो हि युज्ञः। देवा युज्ञं नंयन्तु न इत्यांह। देवानेव यंज्ञिनयः कुरुते। देवी द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्यांह। आभ्यामेवानुंमतो युज्ञस्य शिरः सम्भंरित। ऋद्धासंमुद्य मुखस्य शिर् इत्यांह। युज्ञो वै मुखः। ऋद्धासंमुद्य युज्ञस्य शिर् इति वावैतदांह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीष्णं इत्यांह। निर्दिश्यैवैनंद्धरित॥१४॥

त्रिर्हंरति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य पृव लोकेभ्यों यज्ञस्य शिरः सम्भरित। तूष्णीं चंतुर्थं रहेरति। अपिरिमितादेव यज्ञस्य शिरः सम्भरित। मृत्खनादग्ने हरित। तस्मान्मृत्खनः कंरुण्यंतरः। इयत्यग्नं आसीरित्यांह। अस्यामेवाछंम्बद्धारं यज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऊर्जं वा पृतः रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति॥१५॥ यद्वल्मीकम्ं। यद्वल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्धे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्र्र् होतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः। अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स यत्रं यत्र पराक्रमत॥१६॥

तन्नाद्धियत। स पूंतीकस्तम्बे पराँक्रमत। सौँऽद्धियत। सौँऽब्रवीत्। ऊतिं वै में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्। यदूतीका भवन्ति। यज्ञायैवोतिं देधति। अग्निजा असि प्रजापंते रेत इत्यांह। य एव रसंः पृशून्प्राविंशत्॥१७॥

तमेवावंरुन्थे। पश्चैते संम्भारा भेवन्ति। पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः सम्भेरति। यद्ग्राम्याणां पश्नां चर्मणा सम्भरेत्। ग्राम्यान्पश्र्ञ्ख्वाऽपेयेत्। कृष्णाजिनेन सम्भेरति। आर्ण्यानेव पश्र्ञ्ख्वार्पयति। तस्मौथ्समावंत्पश्नां प्रजायंमानानाम्॥१८॥

आर्ण्याः पृशवः कनीया सः। शुचा ह्यृंताः। लोमतः सम्भंरति। अतो ह्यंस्य मेध्यम्। पृरिगृह्या यन्ति। रक्षंसामपंहत्ये। बृहवों हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धंते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधित शान्त्यै। मदंन्तीभिरुपं सृजित॥१९॥

तेजं पुवास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला कंरोत्वित्यांह।

ब्रह्मंणैवास्मिन्तेजों दधाति। यद्ग्राम्याणां पात्रांणां कृपार्लैः स॰सृजेत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽपंयेत्। अर्मकृपार्लैः स॰सृजिति। एतानि वा अनुपजीवनीयानि। तान्येव शुचापंयित। शर्कराभिः स॰सृजिति धृत्यैं। अथों शन्त्वायं। अज्ञलोमेः स॰सृजिति। एषा वा अग्नेः प्रिया तृनः। यद्जा। प्रिययैवैनं तृनुवा स॰सृजिति। अथो तेजंसा। कृष्णाजिनस्य लोमंभिः स॰सृजिति। यज्ञो वै कृष्णाजिनम्। यज्ञेनैव यज्ञ॰ स॰सृजिति॥२०॥

परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्चसस्य परिगृहीत्यै। न कुर्वन्निम प्राण्यात्। यत्कुर्वन्नीमे प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचार्पयेत्। अपहाय प्राणिति। प्राणानां गोपीथायं। न प्रवग्यं चादित्यं चान्तरेयात्। यदंन्तरेयात्। दुश्चर्मां स्यात्॥२१॥

तस्मान्नान्तराय्यम्। आत्मनो गोपीथायं। वेणुंना करोति। तेजो वै वेणुंः। तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्धयति। मुखस्य शिरोऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्प्रवर्ग्यः॥२२॥

तस्मादेवमाह। यज्ञस्यं पदे स्थ इत्याह। यज्ञस्य ह्यंते पदे। अथो प्रतिष्ठित्यै। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्याह। छन्दोभिरेवैनं करोति। त्र्युंद्धिं करोति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्ये। छन्दोभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वै छन्दा रेसि। वीर्येणैवैनं करोति। यजुंषा बिलं करोति व्यावृंत्यै। इयं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मितम्। इयं तं करोति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयं तं करोति। पुतावृद्धे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपंरिमितं करोति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। पृरिग्रीवं कंरोति धृत्यैं। सूर्यस्य हरंसा श्रायेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अश्वशकेनं धूपयति। प्राजापत्यो वा अर्श्वः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वंस्य निष्पद्सीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽश्वंः। तस्य छन्दारंसि निष्पत्॥२५॥

छन्दोभिरेवैनं धूपयित। अर्चिषं त्वा शोचिषे त्वेत्यांह। तेजं प्वास्मिन्दधाति। वारुणोऽभीद्धंः। मैत्रियोपैति शान्त्यै। सिद्धौ त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिवतोद्वंपत्वित्यांह। स्वितृप्रंसूत एवैनं ब्रह्मणा देवतांभिरुद्वंपित। अपंद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश आपृणेत्यांह॥२६॥

तस्मांद्गिः सर्वा दिशोऽनु विभाति। उत्तिष्ठ बृहन्भं वोर्ध्वस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यां हु प्रतिष्ठित्यै। ईश्वरो वा एषौं उन्धो भवितोः। यः प्रवृग्यम्नवीक्षते। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्ष्व इत्यांह। चक्षुषो गोपीथायं। ऋजवै त्वा

साधवें त्वा सुक्षित्ये त्वा भूत्ये त्वेत्याह। इयं वा ऋजुः। अन्तरिक्षः साधु। असौ सुक्षितिः॥२७॥

दिशो भूतिं। इमानेवास्मैं लोकान्कंल्पयित। अथो प्रतिष्ठित्ये। इदमहम्मुमांमुष्यायणं विशा पृशुभिंब्रह्मवर्चसेन् पर्यूह्मित्यांह। विशेवनं पृशुभिंब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहित। विशेतिं राजन्यंस्य ब्रूयात्। विशेवनं पर्यूहित। पृशुभिरित् वैश्यंस्य। पृशुभिरेवनं पर्यूहित। असुर्यं पात्रमनांच्छृण्णम्॥२८॥

आर्च्छृणित्ति। देव्त्राकः। अज्ञक्षीरेणाऽऽर्च्छृणित्ति। प्रमं वा एतत्पयः। यदंजक्षीरम्। प्रमेणैवैनं पयसाऽऽर्च्छृणित्ति। यज्ञुषा व्यावृत्त्ये। छन्दोभिराच्छृणित्ति। छन्दोभिर्वा एष क्रियते। छन्दोभिरेव छन्दाङ्स्याच्छृणित्ति। छुन्धि वाच्मित्याह। वाचंमेवावंरुन्धे। छुन्ध्यूर्ज्मित्याह। ऊर्जमेवावंरुन्धे। छुन्धि ह्विरित्याह। ह्विरेवाकः। देवं प्रश्चर सुघ्यासन्त्वेत्याह। यथायजुरेवैतत्॥२९॥

स्याद्यत्प्रंवुर्ग्यश्छन्दोंभिः करोति वीर्यंसम्मितं छन्दारंसि निष्पत्पृणेत्यांह सुश्चितिरनांच्छूण्णुञ्छन्दार्स्या-

च्छूंणत्त्यृष्टो चं॥\_\_\_\_\_[3

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामो होतेर्घमम्भिष्टुहीत्यांह। एष वा एतर्ह् बृह्स्पतिः। यद्घृह्मा। तस्मां एव प्रंतिप्रोच्य प्रचेरति। आत्मनोऽनांत्यै। यमायं त्वा मुखाय त्वेत्यांह। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन्ध् समर्धयति। मदन्तीभिः प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥

अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपहत्यै। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। त्रिष्टुभंः स्तीर्गायत्रीरिवान्वांह॥३१॥

गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। सन्तंतमन्वाह। प्राणानामन्नाद्यंस्य सन्तंत्यै। अथो रक्षंसामपंहत्यै। यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवंरुन्धीत। अपरिमिता अन्वांह। अपरिमित्स्यावंरुद्धै। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं॥३२॥

यत्प्रंवर्ग्यः। ऊर्ङ्गुञ्जाः। यन्मौञ्जो वेदो भवंति। ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः समर्धयति। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यजमाने दधाति। सप्त जुहोति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सिवता मध्वाऽनिक्तित्यांह॥३३॥

तेजंसैवैनंमनिक्त। पृथिवीं तपंसस्रायस्वेति हिरंण्यमुपाँ-स्यित। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवुग्यंः। अग्निः सर्वा देवताः। प्रल्वानादीप्योपाँस्यित। देवतां स्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिद्धाति। अप्रतिशीणांग्रं भवति। एतद्वंरिहरह्येषः॥३४॥

अर्चिरंसि शोचिर्सीत्यांह। तेर्ज एवास्मिन्ब्रह्मवर्च्सं दंधाति। स॰सींदस्व महा॰ असीत्यांह। महान् ह्यंषः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। एते वाव त ऋत्विर्जः। ये दंर्शपूर्णमासयौंः। अथं कथा होता यर्जमानायाऽऽशिषो नाशौस्त इतिं। पुरस्तांदाशीः खलु वा अन्यो युज्ञः। उपिरेष्टादाशीरन्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यजूड्ष्याहै। शीर्षत एव यज्ञस्य यजमान आशिषोऽवंरुन्थे। आर्युः पुरस्तादाह। प्रजां दक्षिणतः। प्राणं पृश्चात्। श्रोत्रमुत्तरतः। विधृतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्मै समीचो दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥

मनोरश्वांसि भूरिंपुत्रेतीमाम्भिमृंशित। इयं वै मनोरश्वा भूरिंपुत्रा। अस्यामेव प्रतितिष्ठत्यनुंन्मादाय। सूप्सदां मे भूया मा मां हि सीरित्याहाहि स्सायै। चितः स्थ परिचित् इत्याह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तस्यं मुरुतो रुश्मयः॥३७॥

स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्वेत्यांह। अमुमेवाऽऽदित्य र रशिमिभिः पर्यूहिति। तस्मांदसावांदित्यों ऽमुष्मिं ह्योके रशिमिभिः पर्यूढः। तस्माद्राजां विशा पर्यूढः। तस्माद्रामणीः संजातैः पर्यूढः। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आंच्छित्। यद्वैकंङ्कताः परि्धयो भवंन्ति। भा एवावंरुन्धे। द्वादंश भवन्ति॥३८॥

द्वार्दश मार्साः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावंरुन्थे। अस्ति त्रयोदशो मास् इत्यांहुः। यत्रयोदशः पंरिधिर्भवंति। तेनैव त्रयोदशं मास्मवंरुन्थे। अन्तरिक्षस्यान्तर्धिर्सीत्यांह् व्यावृत्त्यै। दिवं तपंसस्त्रायस्वेत्युपरिष्टाद्धिरंण्यमिष् निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथों आभ्यामेवैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। अर्हन् विभर्षि सायंकानि धन्वेत्यांह॥३९॥

स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रैष्टुंभमसि जागंतम्सीतिं धवित्राण्यादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनान्यादंत्ते। मधु मध्वितिं धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यजमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। यो वै घुर्मस्यं प्रियां तनुवंमाक्रामंति। दुश्चर्मा वै स भवति। एष ह् वा अस्य प्रियां तनुव्माक्रांमति। यित्रिः प्रीत्यं चतुर्थं पर्येति। एता १ ह् वा अस्योग्रदेवो राजंनिराचंक्राम॥४१॥

ततो वै स दुश्चर्मां ऽभवत्। तस्मान्त्रिः प्रीत्य न चंतुर्थं परीयात्। आत्मनों गोपीथायं। प्राणा वै ध्वित्रांणि। अव्यंतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यंतिषङ्गाय क्रृप्त्यैं। विनिषद्यं धून्वन्ति। दि्क्ष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। ऊर्ध्वं धूँन्वन्ति। सुवृर्गस्यं लोकस्य समेष्ठौ। सुर्वतो धून्वन्ति। तस्माद्यः सुर्वतः पवते॥४२॥

अग्निश्च वसुंभिः पुरस्ताँद्रोचयत् गायत्रेण् छन्दसेत्यांह। अग्निरेवैनं वसुंभिः पुरस्ताँद्रोचयति गायत्रेण् छन्दसा। स मां रुचितो रांच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिण्तो रांचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्दसेत्यांह। इन्द्रं एवैन रे रुद्रैदंक्षिण्तो रांचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्दसेत्यांह। इन्द्रं एवैन रे रुद्रैदंक्षिण्तो रांचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्दसा। स मां रुचितो रांच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। वरुणस्त्वाऽऽदित्यैः पश्चाद्रोचयत् जागंतेन् छन्दसेत्यांह। वरुण एवेनंमादित्यैः पश्चाद्रोचयत् जागंतेन् छन्दसेत्यांह। वरुण एवेनंमादित्यैः पश्चाद्रोचयत् जागंतेन् छन्दसा॥४३॥

स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिंरुत्तर्तो रोंच्यत्वानुंष्टुभेन् छन्दसेत्यांह। द्युतान एवैनं मारुतो मुरुद्धिंरुत्तर्तो रोंच्यत्यानुंष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। बृहुस्पतिंस्त्वा विश्वैर्देवैरुपरिंष्टा-द्रोचयतु पाङ्केन् छन्दसेत्यांह। बृहुस्पतिंरेवैन् विश्वैर्देवै-रुपरिंष्टाद्रोचयति पाङ्केन् छन्दसेत्यांह। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह।

## आशिषंमेवैतामा शाँस्ते॥४४॥

रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसीत्यांह। रोचितो ह्येष देवेषुं।
रोचिषीयाहं मंनुष्येष्वित्यांह। रोचंत एवेष मंनुष्येषु। सम्राह्ममं
रुचितस्त्वं देवेष्वायुंष्माइस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चस्यंसीत्यांह।
रुचितो ह्येष देवेष्वायुंष्माइस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी। रुचितोऽहं
मंनुष्येष्वायुंष्माइस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी। रुचितोऽहं
मंनुष्येष्वायुंष्माइस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी भ्रंयासमित्यांह।
रुचित एवेष मंनुष्येष्वायुंष्माइस्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी भंवित।
रुगंसि रुचं मिये धेहि मिये रुगित्यांह। आशिषंमेवेतामा
शास्ते। तं यदेतैर्यजुंर्भिररोचियत्वा। रुचितो धर्म इति
प्रब्रूयात्। अरोचुकोऽध्वर्युः स्यात्। अरोचुको यजमानः।
अथ यदेनमेतैर्यजुंर्भी रोचियत्वा। रुचितो धर्म इति प्राहं।
रोचुकोऽध्वर्युर्भवंति। रोचुंको यजमानः॥४५॥

पृश्चाद्रोचयित् जागंतेन् छन्दंसा पाङ्केन् छन्दंसा स मां रुचितो रोंच्येत्यांहाशिषंमेवैतामाशाँस्ते शास्तेऽष्टौ चं॥————[५]

शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। ग्रीवा उपसर्दः। पुरस्तांदुपसदां प्रवर्ग्यं प्रवृणिक्ति। ग्रीवास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। त्रिः प्रवृणिक्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकभ्यो यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥

ऋतुभ्यं पुव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणिति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। चतुंर्विश्शितः सम्पंद्यन्ते। चतुंर्विश्शितिरर्धमासाः। अर्धमासेभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। अथो खलुं। सकृदेव प्रवृज्यः। एक्श् हि शिरंः॥४७॥

अग्निष्टोमे प्रवृंणिक्ति। एतावान् वै यज्ञः। यावानिग्निष्टोमः। यावानेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिदधाति। नोक्थ्ये प्रवृंज्यात्। प्रजा वै प्शवं उक्थानि। यदुक्थ्ये प्रवृज्यात्। प्रजां प्शूनंस्य निर्दहेत्। विश्वजिति सर्वपृष्ठे प्रवृंणिक्ति॥४८॥

पृष्ठानि वा अच्युंतं च्यावयन्ति। पृष्ठेरेवास्मा अच्युंतं च्यावियत्वाऽवंरुन्थे। अपंश्यं गोपामित्यांह। प्राणो वै गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयित। अपंश्यं गोपामित्यांह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायितं। तमेव प्रजानां गोपारं कुरुते। अनिपद्यमान्मित्यांह॥४९॥

न ह्यंष निपद्यंते। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्त्मित्यांह। आ च ह्यंष परां च पृथिभिश्चरंति। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसान् इत्यांह। स्प्रीचींश्च ह्यंष विषूचीश्च वसानः प्रजा अभि विपश्यंति। आवंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु माध्वींभ्यां मधु माधूचीभ्यामित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंत्पयति। समग्निरग्निनां गतेत्यांह॥५०॥

ग्रैष्मांवेवास्मां ऋतू कंल्पयति। समृग्निरुग्निनां गुतेत्यांह।

अग्निहींवैषाँ ऽग्निनां सङ्गच्छंते। स्वाहा सम्ग्निस्तपंसा ग्तेत्यांह। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। धूर्ता दिवो विभांसि रजंसः पृथिव्या इत्यांह। शारदावेवास्मां ऋतू कंल्पयति॥५१॥

दिवि देवेषु होत्रां यच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ ह्योकान्थ्सन्दं-धाति। विश्वासां भुवां पत् इत्यांह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। देवश्रूस्त्वं देव धर्म देवान्पाहीत्यांह। शैशिरावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। तुपोजां वार्चमस्मे नियंच्छ देवायुवमित्यांह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवार्वरुत्थे॥५२॥

गर्भो देवानामित्यांह। गर्भो ह्यंष देवानांम्। पिता मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयंः। तासांमेष एव पिता। यत्प्रवर्ग्यः। तस्मादेवमांह। पतिः प्रजानामित्यांह। पतिर्ह्येष प्रजानांम्। मितः कवीनामित्यांह॥५३॥

मित्रह्यंष कंवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवृत्रा यंतिष्ट् सः सूर्यणारुक्तेत्यांह। अमुं चैवाऽऽदित्यं प्रवृग्यं च सःशास्ति। आयुर्दास्त्वम्समभ्यं घर्म वर्चोदा असीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। पिता नोंऽसि पिता नों बोधेत्यांह। बोधयंत्येवैनम्ं। न वै तेंऽवकाशा भवन्ति। पितियै दश्मः। नव वै पुरुषे प्राणाः॥५४॥

नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट्। अर्न्न विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। यज्ञस्य शिरौंऽच्छिद्यत। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधुः। ऋत्विजोऽवेंक्षन्ते। एता वै होत्राः। होत्रांभिरेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥५५॥

रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वे प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजाना ए सृष्ट्रौं। रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वे पूर्जन्यो वर्षित। वर्षुंकः पूर्जन्यो भवति। सं प्रजा एंधन्ते। रुचितमवें क्षन्ते। रुचितं वै ब्रह्मवर्चसम्। ब्रह्मवर्चिसनो भवन्ति॥५६॥

अधीयन्तोऽवेंक्षन्ते। सर्वमायुंर्यन्ति। न पत्यवेंक्षेत। यत्पत्यवेक्षेत। प्रजांयेत। प्रजां त्वंस्यै निर्दहेत्। यन्नावेक्षेत। न प्रजांयेत। नास्यैं प्रजां निर्दहेत्। तिर्स्कृत्य यजुंर्वाचयित। प्रजांयते। नास्यैं प्रजां निर्दहित। त्वष्टीमती ते सप्येत्यांह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायंन्ते॥५७॥

ऋतवो हि शिर्ः सर्वपृष्ठे प्रवृंण्क्त्यनिंपद्यमान्मित्यांह गृतेत्यांह शार्दावेवास्मां ऋतू केल्पयित रुन्थे कवीनामित्यांह प्राणाः प्रतिंदधाति भवन्ति वाचयित चृत्वारिं च॥————[६]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इति रश्नामादंते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यै। आद्देऽदित्यै रास्नाऽसीत्यांह यजुंष्कृत्यै। इड एह्यदित एहि सरंस्वृत्येहीत्यांह। एतानि वा अंस्यै देवनामानि।

देवनामैरेवैनामाह्वंयति। असावेह्यसावेह्यसावेहीत्यांह। पुतानि वा अंस्यै मनुष्यनामानिं॥५८॥

मनुष्यनामेरेवेनामाह्वंयति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवेनामाह्वंयति। अदित्या उष्णीषंमसीत्यांह। यथायजुरेवेतत्। वायुरंस्यैड इत्यांह। वायुदेवत्यों वे वथ्सः। पूषा त्वोपावंसृज्तित्यांह। पौष्णा वे देवतंया पृशवंः॥५९॥

स्वयैवैनं देवतंयोपावंसृजति। अश्विभ्यां प्रदांपयेत्यांह। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं कंरोति। यस्ते स्तनः शश्य इत्यांह। स्तौत्येवैनांम्। उस्रं घर्मः शिर्षोस्रं घर्मं पाहि घर्मायं शिर्षेत्यांह। यथां ब्रूयादमुष्में देहीतिं। ताद्दगेव तत्। बृहुस्पतिस्त्वोपं सीद्त्वित्याह॥६०॥

ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनामुपंसीदति। दानंवः स्थ पेर्व इत्यांह। मेध्यांनेवैनांन्करोति। विष्वुग्वृतो लोहितेनेत्यांह् व्यावृत्त्यै। अश्विभ्यां पिन्वस्व सरंस्वत्यै पिन्वस्व पूष्णे पिन्वस्व बृह्स्पतंये पिन्वस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रंमेव भागधेयेन समर्धयति। द्विरिन्द्रायेत्यांह॥६१॥

तस्मादिन्द्रों देवतांनां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायत्रोंऽसि त्रैष्टुंभोऽसि जागंतम्सीतिं शफोपयमानादंत्ते। छन्दोंभि-रेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपमहीत्यांह। ऊर्ज एवैनं भागमंकः। अश्विनौ वा पृतद्यज्ञस्य शिरंः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वर्षद्भियाता इति। इन्द्रांश्विना मधुनः सार्घस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वर्षद्भरोति। अथों अश्विनांवेव भाग्धेयेन समर्धयति॥६२॥

घुमं पांत वसवो यजंता विहत्यांह। वसूनेव भांगधेयेंन् समर्धयित। यद्वेषद्भुर्यात्। यातयांमाऽस्य वषद्भारः स्यांत्। यन्न वंषद्भुर्यात्। रक्षा १सि यज्ञ १ हंन्युः। विहत्यांह। प्रोक्षंमेव वषद्भरोति। नास्यं यातयांमा वषद्भारो भवंति। न यज्ञ १ रक्षा १सि प्रन्ति॥६३॥

स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्ष्मयं वृष्टिवनंये जुहोमीत्यांह। यो वा अस्य पुण्यो र्ष्मिः। स वृष्टिवनिः। तस्मां एवैनं जुहोति। मधुं ह्विर्सीत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्ं। सूर्यस्य तपंस्तपेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं परिगृह्णाति॥६४॥

अन्तिरिक्षेण त्वोपंयच्छामीत्यांह। अन्तिरिक्षेणेवैन्मुपंयच्छिति।
न वा एतं मंनुष्यों भर्तुमर्हित। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो
भर्तु शकेयमित्यांह। देवैरेवैनं पितृभिरनुंमत् आदंत्ते। वि
वा एनमेतदर्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्वंति। तेजोंऽसि
तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। दिविस्पृङ्गा
मां हिश्सीरन्तिरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः पृथिविस्पृङ्गा मां
हिश्सीरित्याहाहिश्साये॥६५॥

सुवंरसि सुवंर्मे यच्छ दिवं यच्छ दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायुः। उद्यत्यं वातनामान्यांह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। अनंवानम्। प्राणाना सन्तंत्यै। पश्चांह॥६६॥

पाङ्को यज्ञः। यावानेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिद्धाति। अग्नये त्वा वसुमते स्वाहेत्याह। असौ वा आदित्योऽग्निर्वसुं-मान्। तस्मा एवैनं जुहोति। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्याह। चन्द्रमा वै सोमो रुद्रवान्। तस्मा एवैनं जुहोति। वर्रुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

अपसु वै वर्रण आदित्यवान्। तस्मां पृवेनं जुहोति। बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मंणैवैनं जुहोति। स्वित्रे त्वंर्भुमते विभुमते प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वै संवितर्भुमान् विभुमान्प्रंभुमान् वाजंवान्। तस्मां पृवेनं जुहोति। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो वै यमोऽङ्गिरस्वान्पितृमान्॥६८॥

तस्मां एवैनंं जुहोति। एताभ्यं एवैनंं देवताभ्यो जुहोति। दश् सम्पंद्यन्ते। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। रौहिणाभ्यां वै देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। तद्रौहिणयों रौहिण्त्वम्। यद्रौहिणौ भवंतः।
रौहिणाभ्यांमेव तद्यजंमानः सुव्गं लोकमेंति। अहुर्ज्योतिः
केतुनां जुषता स् सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहेत्याह। रात्रिर्ज्योतिः
केतुनां जुषता सुज्योतिर्ज्योतिषा स्वाहेत्याह। आदित्यमेव तद्मुष्मिं लोकेऽह्नां प्रस्तौद्दाधार। रात्रिया अवस्तौत्।
तस्मांदसावांदित्यों ऽमुष्मिं लोकेऽहोरात्राभ्यां धृतः॥६९॥
मनुष्यनामानि प्रमवंः सीद्वित्याहेन्द्रायेत्यांहाधयित प्रन्ति गृह्यात्यिहिंसाये पञ्चांऽहादित्यवंते
स्वाहेत्यांह पितृमानेति च्लारि च॥————[७]

विश्वा आशां दक्षिण्सिदत्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रीणाति। अथो दुरिष्ट्या एवैनं पाति। विश्वां देवानयाडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्मांग्धेयेन समर्धयति। स्वाहांकृतस्य घर्मस्य मधौः पिबतमिश्वनेत्यांह। अश्विनांवेव भाग्धेयेन समर्धयति। स्वाहाऽग्रये यिज्ञयांय शं यर्जुर्भिरित्यांह। अभ्येवैनं घारयति। अथो हिवरेवाकः॥७०॥

अश्विना घर्मं पांतर हार्दिवानमहंदिवाभिक्तिभिरित्यांह। अश्विनांवेव भांगुधेयेन समर्धयित। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्ससातामित्याहानुंमत्यै। स्वाहेन्द्रांय स्वाहेन्द्राविहित्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घर्मस्यं युजेतिं। वर्षट्टते जुहोति। रक्षंसामपंहत्यै। अनुयजित स्वगाकृत्यै। धर्ममंपातमश्विनेत्यांह॥७१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमश्सातामित्याहानुंमत्यै। तं प्राव्यं यथावण्णमों दिवे नमः पृथिव्या इत्याह। यथायजुरेवैतत्। दिविधां इमं यज्ञं यज्ञमिमं दिविधा इत्याह। सुवर्गमेवैनं लोकं गंमयति। दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गच्छेत्यांह। एष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठापयति। पश्चं प्रदिशों गच्छेत्यांह॥७२॥

दिक्ष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धंर्म्पान्गंच्छ पितॄन्धंर्म्-पान्गच्छेत्याह। उभयेंष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पिन्वंते। वर्षुकः पूर्जन्यों भवति। तस्मात्पिन्वंमानः पुण्यः। यत्प्राङ्घिन्वंते। तद्देवानांम्। यद्दंक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मंनुष्यांणाम्। यदुदङ्कं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्चमुदेश्चं पिन्वयति। देवृत्राकंः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशंः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःप्रिधि पिन्वयति॥७४॥

तेज्सोऽस्कंन्दाय। इषे पीपिह्यूर्जे पीपिहीत्यांह। इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। यजंमानाय पीपिहीत्यांह। यजंमानायैवैतामाशिषमाशांस्ते। मह्यं ज्यैष्ठ्यांय पीपिहीत्यांह। आत्मनं एवैतामाशिषमाशांस्ते। त्विष्यें त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। यथायुजुरेवैतत्। धर्मासि सुधर्मा में न्यस्मे ब्रह्मांणि धारयेत्यांह॥७५॥

ब्रह्मंत्रेवैनं प्रतिष्ठापयति। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयादिति यद्यंभिचरैत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयाम्यमुनां सह निर्धं गच्छेतिं ब्र्याद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्ठिं। तेनैन सह निर्धं गमयति। पूष्णे शरमे स्वाहेत्याह। या एव देवतां हुतभांगाः। ताभ्यं एवैनं जुहोति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या एवान्तरिक्षे वार्चः॥७६॥

ताभ्यं पृवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रतिराः। तेभ्यं पृवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं जुहोति। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वांनः। ते पितरों धर्मपाः। तेभ्यं पृवैनं जुहोति॥७७॥

रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भांगुधेयेंन् समर्धयति। सुर्वतः समनिक्ति। सुर्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उद्श्रं निर्रस्यति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपस्पृशित मेध्यत्वायं। नान्वीक्षेत। यदन्वीक्षेत॥७८॥

चक्षुंरस्य प्रमायुंक इस्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यंः। अपींपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया समिध्यस्वायुंमें दा वर्चसा माऽऽञ्जीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपींपरो मा रात्रिया अह्यों मा पाह्येषा ते अग्ने स्मित्तया समिध्यस्वाऽऽयंर्मे दा वर्चसा माऽऽञ्जीरित्यांह। आयंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्रा(३)न्न होत्व्या(३)मिति॥७९॥

यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परांभवेत्। भूः स्वाहेत्येव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। हुतः ह्विर्मधुं ह्विरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतमेऽग्नावित्यांह॥८०॥

प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण एवैन्मिन्द्रंतमेऽग्नौ जुंहोति। पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। अश्यामं ते देव घर्म मध्रंमतो वाजंवतः पितुमत् इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। स्वधाविनोंऽशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। तेजंसा वा एते व्यृध्यन्ते। ये प्रवृग्येण चरन्ति। प्राश्ञंन्ति। तेजं एवात्मन्दंधते॥८१॥

संवथ्सरं न मार्समंश्जीयात्। न रामामुपंयात्। न मृन्मर्येन पिबेत्। नास्यं राम उच्छिष्टं पिबेत्। तेज एव तथ्सङ्श्यंति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विंज्यमुंपयन्तः। विभ्राजि सौर्ये ब्रह्मसन्त्रंदधत। यत्किं चं दिवाकीर्त्यम्॥ तदेतेनैव ब्रतेनांगोपायत्। तस्मांदेतद्वृतं चार्यम्। तेजंसो गोपीथायं। तस्मांदेतानि यजू १ विभ्राजंः सौर्यस्येत्यांहुः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिश्मिभ्य इति प्रातः सश्सांदयति। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रभ्य इति सायम्। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैनश समर्धयति॥८२॥

अक्र्िश्वेनेत्यांह प्रदिशों गुच्छेत्यांह पितृणामंन्तःपिरिधि पिन्वयित धार्येत्यांह वाचों घर्मपास्तेभ्यं पुवैनं जुहोत्यन्वीक्षेत होत्व्या(३)मित्युग्नावित्यांह दधतेऽगोपायथ्सुप्त चं॥————[८]

घर्म् या ते दिवि शुगिति तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोभिरेवास्यैभ्यो लोकेभ्यः शुचमवं यजते। इयत्यग्रें जुहोति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुं-मतिरित्याहानुंमत्ये। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्यांह। दिव एवेमाँ ह्लोकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्यांह॥८३॥

पृष्वंव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा पर्स्पाया इत्यांह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तं यद्दंक्षिणा प्रत्यश्चमुदंश्चमुद्वासर्यंत्। जिह्मं यज्ञस्य शिरों हरेत्। प्राश्चमुद्वांसयति। पुरस्तांदेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति॥८४॥

प्राश्चमुद्वांसयित। तस्मांद्रसावांदित्यः पुरस्तादुदेति। शफोप्यमान्धवित्रांणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मांनमेवैन् क् सत्तेनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं ह्लोके भविति। य एवं वेदे। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥

युज्ञ रक्षा रेसि जिघा रसन्ति। साम्ना प्रस्तोताऽन्ववैति। साम् वै रक्षोहा। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिर्निधन्मुपैति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य एव लोकेभ्यो रक्षा इस्यपंहन्ति। पुरुषः पुरुषो निधन्मुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रक्षस्वी। रक्षंसामपंहत्यै॥८६॥

यत्पृंथिव्यामुद्वासयैत्। पृथिवी शुचाऽपयित्। यद्पस्। अपः शुचार्पयेत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः शुचाऽपंयेत्। यद्वन्स्पतिषु। वन्स्पतीं ञ्छुचार्पयेत्। हिरंण्यं निधायोद्वांसयति। अमृतं वै हिरंण्यम्॥८७॥

अमृतं प्वैनं प्रतिष्ठापयति। वृल्गुरंसि शं युधाया इति त्रिः पंरिषिञ्चन्पर्येति। त्रिवृद्वा अग्निः। यावांनेवाग्निः। तस्य श्चरं शमयति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवास्य शुचरं शमयति। चतुंः स्रक्तिर्नाभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

ड्यं वा ऋतम्। तस्यां एष एव नाभिः। यत्प्रंवर्ग्यः। तस्मादेवमांह। सदो विश्वायुरित्यांह। सदो हीयम्। अप द्वेषो अप ह्वर् इत्यांह् भ्रातृंव्यापनुत्त्यै। घर्मेतत्तेऽन्नंमेतत्पुरींष्मितिं द्वा मंधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जेवनंमन्नाद्येन् समर्थयति॥८९॥

अनंशनायुको भवति। य पुवं वेदं। रन्तिर्नामांसि दिव्यो

गंन्ध्रवं इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमान् रित्तं बन्धुतां व्याचेष्टे। समहमायुषा सं प्राणेनेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। व्यंसौ योंऽस्मान्द्वेष्ट्रि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचिक्रदृदृषा हरिरित्यांह। वृषा ह्यंषः॥९०॥

वृषा हरिः। महान्मित्रो न देर्श्वत इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्। चिदंसि समुद्रयोनिरित्यांह। स्वामेवैनं योनिं गमयति। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंमित्यांह। यदेवास्यं क्रियमांण-स्यान्त्यंन्ति। तदेवास्यैतेना प्यांययति। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणात्वित्यांह॥९१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्मैं कल्पयति। प्राऽऽसां गन्धर्वो अमृतांनि वोच्दित्यांह। प्राणा वा अमृताः। प्राणानेवास्मैं कल्पयति। पृतत्त्वं देव घर्म देवो देवानुपांगा इत्याह। देवो ह्येष सं देवानुपैतिं। इदमृहं मनुष्यों मनुष्यांनित्यांह॥९२॥

म्नुष्यों हि। एष सन्मंनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वै प्रंवर्ग्यमुद्वासयन्। प्रजां पृशून्थ्सोमपीथमंनूद्वासः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणेत्याह। प्रजामेव प्शून्थ्सोमपीथमात्मन्धंते। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्त्वत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्योऽस्मान्द्वेष्ट्रि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। प्र वा एषोंऽस्मालोकाच्यंवते। यः प्रंवर्ग्यमुद्वासयितं। उदुत्यं चित्रमितिं सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। अयं वे लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतिंतिष्ठति। असौ खलु वा आंदित्यः सुंवर्गो लोकः। यथ्सौरी भवंतः। तेनैव सुंवर्गालोकान्नेतिं॥९३॥

प्रजापंतिं वै देवाः शुक्रं पयोंऽदुह्नन्। तदैंभ्यो न व्यंभवत्। तद्ग्निर्व्यंकरोत्। तानि शुक्रियाणि सामांन्यभवन्। तेषां यो रसोऽत्यक्षंरत्। तानि शुक्रयज्जू इष्यंभवन्। शुक्रियाणां वा पुतानि शुक्रियाणि। सामप्यसं वा पुतयोंर्न्यत्। देवानांमन्यत्पर्यः। यद्गोः पर्यः॥९४॥

तथ्साम्नः पर्यः। यद्जाये पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यजुंर्भिश्चरंन्ति। तत्पर्यसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्येन समर्धयन्ति। एष ह त्वे साक्षात्प्रंवर्ग्यं भक्षयति। यस्यैवं विदुषंः प्रवर्ग्यः प्रवृज्यतें। उत्तर्वेद्यामुद्धांस-येत्तेजंस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥९५॥

तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्थयित। उत्तर्वेद्यामुद्वांसये-दन्नंकामस्य। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। मुखंमुत्तरवेदिः। शीर्ष्णेव मुख्र सन्दंधात्यन्नाद्यांय। अन्नाद एव भंवति। यत्र खलु वा एतमुद्वांसितं वयार्श्स पूर्यासंते। परि वै तार समां प्रजा वयार्श्रस्यासते॥९६॥

तस्मांदुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो वां पृश्चाद्वोद्वांसयेत्। पुरस्ताद्वा एतज्योतिरुदेति। तत्पृश्चान्निम्नोचित। स्वामेवैनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा एतन्मध्याज्योतिरजायत। ज्योतिः प्रवर्ग्यः। स्वयैवेनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥९७॥

यं द्विष्यात्। यत्र् स स्यात्। तस्यां दिश्युद्वांसयेत्। एष वा अग्निर्वेश्वान्रः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवैनं वैश्वान्रेणाभि प्रवंतयित। औदुंम्बर्या्ष् शाखायामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। अन्नं प्राणः। शुग्धर्मः॥९८॥

इदमहम्मुष्यांमुष्यायणस्यं शुचा प्राणमपिं दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमपिं दहित। ताजगार्तिमार्च्छति। यत्रं दर्भा उपदीकंसन्तताः स्यः। तदुद्वांसयेद्वृष्टिंकामस्य। एता वा अपामनूज्झावंर्यो नामं। यद्दर्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदींरयति। असावेवास्मां आदित्यो वृष्टिं नियंच्छति। ता आपो नियंता धन्वंना यन्ति॥९९॥ गोः पर्यं उत्तरवेदिरांसते स्थापयित घुर्मो यंन्ति॥————[१०]

प्रजापंतिः सिम्भ्यमाणः। सम्राट्थ्सम्भृतः। घृमः प्रवृंक्तः। महावीर उद्वांसितः। असौ खलु वावेष आदित्यः। यत्प्रवृंग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदे। विदुरेनं नाम्नां। ब्रह्मवादिनों वदन्ति॥१००॥

यो वै वसीया १ सं यथाना ममुप्चरित। पुण्यां तिं वै स तस्में कामयते। पुण्यां तिंमस्मे कामयन्ते। य पृवं वेदं। तस्मां देवं विद्वान्। घुर्म इति दिवाऽऽचं क्षीत। सम्माडिति नक्तम्। पृते वा पृतस्यं प्रिये तुनुवौं। पृते अस्य प्रिये नामंनी। प्रिययैवैनं तनुवां॥१०१॥

प्रियेण नाम्ना समेर्धयति। कीर्तिरेस्य पूर्वागेच्छति जनतामायतः। गायत्री देवेभ्योऽपाकामत्। तां देवाः प्रवग्येणैवानु व्यंभवन्। प्रवग्येणाप्रवन्। यचंतुर्वि शतिकृत्वंः प्रवग्ये प्रवृणक्ति। गायत्रीमेव तदनु विभवति। गायत्रीमाप्रोति। पूर्वाऽस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छति। वैश्वदेवः सश्संन्नः॥१०२॥

वसंवः प्रवृंक्तः। सोमोऽभिकीर्यमाणः। आश्विनः पर्यस्यानीयमाने। मारुतः क्वथन्। पौष्ण उदंन्तः। सारुस्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरो गृहीतः। तेज उद्यंतः। वायुर्ह्वियमाणः। प्रजापंतिर्हूयमानो वाग्युतः॥१०३॥

असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स पुतानि

नामाँन्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरेंनं नाम्नाँ। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यन्मृन्मयमाहुंतिं नाश्जुतेऽथं। कस्मादेषौऽश्जुत इतिं। वागेष इतिं ब्रूयात्। वाच्येव वाचं दधाति॥१०४॥

तस्मादश्जुते। प्रजापंतिर्वा एष द्वांदश्धा विहिंतः। यत्प्रंवर्ग्यः। यत्प्रागंवकाशेभ्यः। तेनं प्रजा अंसृजत। अवकाशैर्देवासुरानंसृजत। यदूर्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंम-सृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥१०५॥

वृदुन्ति तुनुवा सरसंन्नो हूयमानो वाग्धुतो दंधात्येषः॥————[११]

स्विता भूत्वा प्रंथमेऽह्नप्रवृंज्यते। तेन् कामा १ एति। यद्वितीयेऽहंनप्रवृज्यतें। अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंनप्र-वृज्यतें। वायुर्भूत्वा प्राणानेति। यत्तंतुर्थेऽहंनप्रवृज्यतें। आदित्यो भूत्वा रश्मीनेति। यत्पंश्चमेऽहंनप्रवृज्यतें। चन्द्रमां भूत्वा नक्षंत्राण्येति॥१०६॥

यत्षष्ठेऽहंन्प्रवृज्यतें। ऋतुर्भूत्वा संवथ्सरमेति। यथ्मंप्तमेऽहंन्प्रवृज्यतें। धाता भूत्वा शक्कंरीमेति। यदंष्ट्रमेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृह्स्पतिंर्भूत्वा गांयत्रीमेति। यन्नंवमेऽहंन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ छोकानेति। यदंशमेऽहंन्प्रवृज्यतें। वरुणो भूत्वा विराजंमेति॥१०७॥

यदेकाद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्वांद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेति। यत्पुरस्तांदुप्सदां प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङ्मूँ श्लोका ॥ स्तपंत्रेति। यदुपरिष्टादुप्सदां प्रवृज्यतें। तस्मांदुमुतोऽर्वा-ङिमाँ श्लोका ॥ स्तपंत्रेति। य पुवं वेद। ऐव तंपति॥१०८॥

नक्षंत्राण्येति विराजंमेति तपति॥-----[१२]

ॐ शं नुस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥

#### ॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

प्रेयुवारसं प्रवतीं महीरनं बहुभ्यः पन्थांमनपस्पशानम्। वैवस्वतर सङ्गमंनं जनांनां यमर राजांनर ह्विषां दुवस्यत। इदं त्वा वस्त्रं प्रथमन्वागृत्रपैतदूंह यदिहाबिंभः पुरा। इष्टापूर्तमनु सम्पंश्य दक्षिंणां यथां ते दत्तं बंहुधा विबंन्धुष्। इमौ युंनज्मि ते वृह्णी असुंनीथाय वोढवें। याभ्यां यमस्य सादंनर सुकृतां चापि गच्छतात्। पूषा त्वेतश्च्यां वयतु प्रविद्वाननंष्टपशुर्भुवंनस्य गोपाः। स त्वैतेभ्यः परिददात्पितृभ्योऽग्निर्देवभ्यः सुविदत्रेंभ्यः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्मार अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन्पुर एतु प्रविद्वान्॥१॥

आयुंर्विश्वायुः परिपासित त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तांत्। यत्राऽऽसंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। भुवंनस्य पत इद॰ ह्विः। अग्नयं रियमते स्वाहां। पुरुषस्य सयाव्यंपेद्घानि मृज्महे। यथां नो अत्र नापंरः पुरा जरस् आयंति। पुरुषस्य सयावरि वि ते प्राणमंसि स्रसम्। शरीरेण महीमिहि स्वधयेहि पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं माङ् स्ता प्रियेऽहं देवी सती

पिंतृलोकं यदैषिं। विश्ववारा नर्भसा संव्ययन्त्युभौ नो लोकौ पर्यसाऽभ्यावंवृथ्स्व॥२॥

इयं नारीं पतिलोकं वृंणाना निपंचत् उपं त्वा मर्त्य् प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयंन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेहि। उदीष्वं नार्यभि जीवलोकमितासुमेतमुपंशेष एहि। ह्स्तग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्युंर्जनित्वम्भि सम्बंभूव। सुवर्ण् हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये ब्रह्मंणे तेजंसे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्पुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम। धनुरहस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये क्षत्रायौजंसे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय स्पुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम। मणि हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पृष्टमे बलाय। अत्रैव त्वमिह वय सुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयम॥३॥

ड्रममंग्ने चम्सं मा विजींहरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानांम्। एष यश्चंमसो देवपान्स्तस्मिन्देवा अमृतां मादयन्ताम्। अग्नेर्वर्म् परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोणुंष्व मेदंसा पीवंसा च। नेत्त्वां धृष्णुरहरंसा जरहंषाणो दधंद्विधक्ष्यन्पर्यङ्खयांते। मैनंमग्ने विदंहो माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम्। यदा शृतं क्रवों जातवेदोऽथेंमेनं प्रहिंणुतात्पितृभ्यंः। शृतं यदा क्रसीं जातवेदोऽथेंमेनं परिंदत्तात्पितृभ्यंः। यदा गच्छात्यसुंनीतिमेतामथां देवानां वश्नीर्भवाति। सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छतु वातंमात्मा द्यां च् गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वो गच्छ् यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरेः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं ते शोचिस्तंपतु तं ते अर्चिः। यास्ते शिवास्तनुवीं जातवेदस्ताभिविहेम स्पृकृतां यत्रं लोकाः। अयं वै त्वम्स्मादिध त्वमेतद्यं वै तदस्य योनिरिस। वैश्वानरः पुत्रः पित्रे लोककुश्चांतवेदो वहंम स्पृकृतां यत्रं लोकाः॥४॥

य एतस्यं पृथो गोप्तार्स्तेभ्यः स्वाह्य य एतस्यं पृथो रिक्षेतार्स्तेभ्यः स्वाह्य य एतस्यं पृथोभिऽरिक्षेतार्स्तेभ्यः स्वाहांऽऽख्यात्रे स्वाहांऽपाख्यात्रे स्वाहांऽभिलालंपते स्वाहांऽपुलालंपते स्वाहाऽग्नयं कर्मकृते स्वाह्य यमत्र नाधीमस्तस्मै स्वाहां। यस्तं इध्मं जुभरिष्सिष्विद्यानो मूर्धानं वात् तपंते त्वाया। दिवो विश्वंस्माथ्सीमघायत उरुष्यः। अस्मात्त्वमधि जातोऽसि त्वद्यं जांयतां पुनः। अग्नयं विश्वान्तरायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥५॥

य एतस्य त्वत्पश्चं॥———[२]

प्र केतुनां बृह्ता भाँत्यग्निराविर्विश्वांनि वृष्भो रोरवीति। दिवश्चिदन्तादुप मामुदानंडपामुपस्थे महिषो वंवर्ध। इदं त एकं पुर ऊत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशंनस्तुनुवै चार्रुरेधि प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थें। नाकें सुप्णमुप् यत्पतंन्त हूदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिर्रण्यपक्षं वर्रुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुरुण्युम्। अतिंद्रव सारम्यो श्वानौ चतुरक्षौ श्वलौ साधुनां पथा। अथां पितृन्थ्सुंविदत्रा अपीहि यमेन ये संधमादं मदन्ति। यो ते श्वानौ यमरिक्षतारौ चतुरक्षौ पंथिरक्षी नृचक्षंसा। ताभ्या राजन्परि देह्येन इस्विस्ति चौस्मा अनमीवं चं धेहि॥६॥

उरुणसावंसुतृपांवुलुम्बलौ यमस्यं दूतौ चंरतो वशा क्ष्यां। तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनंदत्ता वसुम्छेह भ्द्रम्। सोम् एकैंभ्यः पवते घृतमेक उपांसते। येभ्यो मधुं प्रधावंति ता अश्वेदेवापि गच्छतात्। ये युध्यंन्ते प्रधनेषु शूरांसो ये तंनुत्यजः। ये वां सहस्रंदक्षिणास्ता अश्वेदेवापि गच्छतात्। तपसा ये अनाधृष्यास्तपंसा ये सुवंर्गताः। तपो ये चंित्रिरे महत्ता अश्वेदेवापि गच्छतात्। सक्ष्यंदक्षिणास्ता अश्वेनवती रेवतीः सक्ष्यं महत्ता अश्वेदेवापि गच्छतात्। अश्वेनवती रेवतीः सक्ष्यं प्रतिष्ठत प्रतिरता सखायः। अत्रां जहाम् ये असन्नशेवाः शिवान् वयमि वाजानुत्तरेम॥७॥

यह्रै देवस्यं सिवतुः पवित्र सहस्रंधारं वितंतम्नतिरक्षे। येनापुनादिन्द्रमनौर्तमार्त्ये तेनाहं मा स्वतंनं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप् यन्ति शाखां अभिमृता नृपतिमिच्छमानाः। धातुस्ताः सर्वाः पवनेन पूताः प्रजयास्मान्नय्या वर्चसा स॰सृंजाथ। उद्घयं तमंस्परि पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगंन्म ज्योतिरुत्तंमम्। धाता पुंनातु सविता पुंनातु। अग्नेस्तेजंसा सूर्यंस्य वर्चसा॥८॥

धृह्युत्तरिमाष्टौ चं॥\_\_\_\_\_[3]

यन्ते अग्निममंन्थाम वृष्भायेव पक्तेव। इमन्तर शंमयामिस क्षीरेणं चोदकेनं च। यन्त्वमंग्ने समदंहस्त्वमु निर्वापया पुनः। क्याम्बूरत्रं जायतां पाकदूर्वा व्यंत्कशा। शीतिके शीतिकावित ह्लादुंके ह्लादुंकावित। मण्डूक्यां सुसङ्गमयेम स्वंग्निर श्वमयं। शं ते धन्वन्या आपः शमुं ते सन्त्वनूक्याः। शं ते समुद्रिया आपः शमुं ते सन्त् वर्ष्याः। शं ते स्वन्तीस्त्नुवे शमुं ते सन्तु कूप्याः। शन्ते नीहारो वंर्षतु शमु पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥

अवं सृज् पुनंरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुंत्श्चरंति स्वधाभिः। आयुर्वसान् उपं यातु शेषु सङ्गंच्छतां तन्वां जातवेदः। सङ्गंच्छस्व पितृभिः सङ् स्वधाभिः सिमेष्टापूर्तेनं पर्मे व्योमन्। यत्र भूम्यं वृणसे तत्रं गच्छ् तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। यत्तं कृष्णः शंकुन आंतुतोदं पिपीलः सर्प उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृणोतु सोमंश्च यो ब्राह्मणमांविवेशं। उत्तिष्ठातंस्तनुव सम्भंरस्व मेह गात्रमवंहा मा शरीरम्। यत्र भूम्यं वृणसे तत्रं गच्छ् तत्रं

त्वा देवः संविता दंधातु। इदं त एकं प्र ऊंत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरिध प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थें। उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवौकः कृणुष्व पर्मे व्योमन्। यमेन त्वं यम्यां संविदानोत्तमं नाक्मिधं रोहेमम्। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वै देवस्यं सवितः प्वितं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंस्स्पिरं धाता पुनातु। अस्मात्त्वमिधं जातौंऽस्ययं त्वदिधंजायताम्। अग्नयं वैश्वान्रायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥१०॥

आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिर्यमो हेवेह प्रयंताभिर्क्ता। आसींदता सप्रयतेह ब्रहिष्यूर्जाय जात्यै ममं शत्रुहत्यै। यमे इंव यतमाने यदेतं प्रवाम्भरन्मानुषा देवयन्तः। आसींदत् स्वमुं लोकं विदाने स्वास्स्थे भंवत्मिन्दंवे नः। यमाय सोम स्मृत यमायं जुहुता ह्विः। यम हं यज्ञो गंच्छत्यग्निद्तेतो अर्रङ्कृतः। यमायं घृतवंद्धविर्जुहोत् प्र चं तिष्ठत। स नो देवेष्वायमद्दीर्घमायुः प्र जीवसें। यमाय मधुमत्तम् राज्ञे ह्व्यं जुंहोतन। इदं नम् ऋषिभ्यः पूर्वजभ्यः पूर्वेभ्यः प्रिकृद्धः॥११॥

योऽस्य कौष्ठ्य जगंतुः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। युमं भंज्ञाश्रुवो गांय यो राजांनपुरोध्यः। युमङ्गायं भङ्गाश्रवो यो राजांनप्रोध्यः। येनापो नृद्यो धन्वांनि येन द्यौः पृंथिवी दृढा। हिर्ण्यकक्ष्यान् सुधुरान् हिर्ण्याक्षानंयः शुफान्। अश्वांननश्यंतो दानं यमो राजाभि तिष्ठंति। यमो दाधार पृथिवीं यमो विश्वंमिदं जगंत्। यमाय सर्वमित्रंस्थे यत्प्राणद्वायुरंक्षितम्। यथा पश्च यथा षड्यथा पश्चं दृशर्षंयः। यमं यो विद्याध्स ब्रूंयाद्यथैक ऋषिर्विजान्ते॥१२॥

त्रिकंद्रुकेभिः पर्तित् षडुर्विरेक्मिद्धृहत्। गायत्री त्रिष्टुप्छन्दार्रस् सर्वा ता यम आहिता। अहंरहूर्नयमानो गामश्वं पुरुषं जगत्। वैवस्वतो न तृंप्यति पश्चंभिर्मानंवैर्यमः। वैवस्वते विविच्यन्ते यमे राजंनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृंतवादिनः। ते राजिन्निह विविच्यन्तेऽथा यन्ति त्वामुपं। देवाङ्श्च ये नमस्यन्ति ब्राह्मणाङ्श्चापचित्यंति। यस्मिन्वृक्षे सुंपलाशे देवैः सम्पिबंते यमः। अत्रां नो विश्पतिः पिता पुंराणा अनुवेनति॥१३॥

वैश्वानरे ह्विर्दि जुंहोमि साह्स्रमुथ्स श्रेतधारमेतम्। तस्मिन्नेष पितरं पितामहं प्रपितामहं बिभर्त्पिन्वमाने। द्रफ्सश्चेस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वः। तृतीयं योनिमनुं स्थ्ररंन्तं द्रफ्सं जुंहोम्यनुं सप्त होत्राः। इम समुद्र श्रेतधारमुथ्संव्यच्यमानं भुवनस्य मध्ये। घृतं दुहानामदितिं जनायाग्ने मा हि स्सीः पर्मे व्योमन्। अपेत वीत वि चं सर्पतातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तिभिर्व्यक्तं यमो दंदात्ववसानंमस्मै। स्वितेतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिर्युज्यन्तामघ्नियाः॥१४॥

शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषतु लाङ्गंलम्। शुनं वर्त्रा बध्यन्ता शुनमष्ट्रामुदिङ्गय शुनांसीरा शुनम्स्मास् धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि चंक्रथः पर्यः। तेनेमामुपं सिश्चतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाचीं सुभगे भव। यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिरदिते शं भव। विमुंच्यध्वमिष्ट्रया देवयाना अतांरिष्म तमंसस्पारम्स्य। ज्योतिरापाम सुवंरगन्म॥१५॥

प्र वाता वान्ति प्तयंन्ति विद्युत् उदोषंधीर्जिहते पिन्वंते सुवंः। इरा विश्वंस्मै भुवंनाय जायते यत्पूर्जन्यः पृथिवी रेत्साऽवंति। यथां यमायं हार्म्यमवप्न्पश्चं मानवाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासाम जीवलोके भूर्रयः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरो देवता। प्रजापंतिर्वः सादयतु तयां देवत्या। आप्यांयस्व सन्ते॥१६॥

अ्षिया अंगन्म सप्त चं॥\_\_\_\_\_[६]

उत्ते तभ्नोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अहर रिषम्। पृताङ् स्थूणौं पितरों धारयन्तु तेऽत्रां यमः सार्वनात्ते मिनोतु। उपंसर्प मातर् भूमिमेतामुंरुव्यर्चसं पृथिवी स्मुशेवाम। ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत्येषा त्वां पातु निर्ऋत्या उपस्थे। उष्ट्रंश्चस्व पृथिवि मा विबाधिथाः सूपायनास्मे भव सूपवश्चना। माता पुत्रं यथांसिचाभ्येनं भूमि वृण्। उष्ट्रश्चमाना पृथिवी हि तिष्ठंसि सहस्रं मित उप हि श्रयंन्ताम्। ते गृहासो मधुश्चतो विश्वाहाँस्मै शर्णाः सन्त्वत्रं। एणींर्धाना हरिणीर्ज्नीः सन्तु धेनवंः। तिलंबथ्सा ऊर्जमस्मै दुहांना विश्वाहां सन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥

पुषा ते यमसादंने स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते असौ। इदं पितृभ्यः प्रभेरेम ब्रहिर्देवेभ्यो जीवन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं यमेन त्वं यम्यां संविदानः। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिष्टां मा माता पृथिवि त्वम्। पितृन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यमराज्यें। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिथां मा माता पृथिवी मही। वैवस्वत हि गच्छांसि यमराज्ये विराजिस। नळं प्रवमारोहैतं नळेनं पृथोऽन्विहि। स त्वं नळप्रंवो भूत्वा सन्तरं प्रतरोत्तर॥१८॥

स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्यै मातुरुपस्थ आदंधे। तेभ्यंः पृथिवि शं भंव। षड्ढोता सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छतु वातंमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां

यस्ते स्व इतंरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि मा नंः प्रजा र्रीरिषो मोत वीरान्। शं वातः शर् हि ते घृणिः शम् ते सन्त्वोषंधीः। कल्पंन्तां मे दिशंः शृग्माः। पृथिव्यास्त्वां लोके सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरो देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा नाकंस्य त्वा पृष्ठे ब्रथ्नस्यं त्वा विष्ठपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरो देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥१९॥

अपूपवाँन्धृतवा ईश्चरुरेह सींदतूत्तभ्रुवन् पृंथिवीं द्यामुतोपरिं। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत ये देवानां घृतभागा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहें उसौ। दशांक्षरा ता र रंक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अपूपवाँञ्छृतवाँन् क्षीरवान्दिधवान्मधुंमाङ्ब्ररुरेह सींदतूत्तभुवन् पृथिवीं द्यामुतोपरि। योनिकृतंः पथिकृतंः सपर्यतं ये देवानार् शृतमांगाः क्षीरभांगा दिधेभागा मधुंभागा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहेंऽसौ। शुताक्षंरा सहस्रौक्षरायुतौक्षराऽच्युताक्षरा ता र रक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरो देवता। प्रजापितिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥२०॥

अनंपस्फुरन्तीरुत्तंर देवतंया द्वे चं॥\_\_\_\_

प्तास्तें स्वधा अमृताः करोमि यास्ते धानाः परिकिराम्यत्रं। तास्ते यमः पितृभिः संविदानोऽत्रं धेनः कामदुधाः करोत्। त्वामर्जुनौषधीनां पयो ब्रह्माण् इद्विदः। तासां त्वा मध्यादादेदे चरुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाः स्तम्बमाहंरैतां प्रियतंमां ममं। इमां दिशं मनुष्याणां भूयिष्ठानु वि रोहतु। काशांनाः स्तम्बमाहंर् रक्षंसामपहत्यै। य पुतस्यै दिशः प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभंवान्युनंः। दर्भाणाः स्तम्बमाहंर पितृणामोषधीं प्रियाम्। अन्वस्यै मूलं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥

लोकं पृंण ता अस्य सूर्द्वोहसः। शं वातः शक् हि ते घृणिः शम् ते सन्त्वोषधीः। कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः। इदमेव मेतोऽपंरामार्तिमाराम् काश्चन। तथा तदिश्वभ्यां कृतं मित्रेण वर्रणेन च। वर्णो वार्यादिदं देवो वनस्पतिः। आर्त्ये निर्ऋत्ये द्वेषांच वनस्पतिः। विधृतिरिस् विधारयासमद्घा द्वेषा सि शमि शमयासमद्घा द्वेषा सि यव यवयासमद्घा द्वेषा सि। पृथिवीं गच्छान्तरिक्षं गच्छ दिवं गच्छा दिशों गच्छ सुवंगच्छ सुवंगच्छ दिशों गच्छ दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गच्छाऽऽपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरः। अश्मंन्वती रेवतीयद्वे देवस्यं सिवतः प्वित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परि धाता पुनातु॥२२॥

फर्लं पुनातु॥———[८]

आ रोह्ताऽऽयुंर्ज्रसं गृणाना अनुपूर्वं यतमाना यितृष्ट। इह त्वष्टां सुजिनमा सुरत्नों दीर्घमायुंः करतु जीवसें वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवंन्ति यथर्तवं ऋतुभिर्यन्तिं क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपेरो जहाँत्येवा धांत्रायू धि कल्पयैषाम्। न हिं ते अग्ने तनुवैं कूरं चकार् मर्त्यः। कृपिर्बमस्ति तेजेनं पुनेर्ज्रायु गौरिव। अपं नः शोश्चंद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोश्चंद्घं मृत्यवे स्वाहाँ। अनुङ्वाहंमन्वारंभामहे स्वस्तयै। स न इन्द्रं इव देवेभ्यो विह्नेः सम्पारंणो भव॥२३॥

इमे जीवा वि मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भद्रा देवहूंतिं नो अद्य। प्राञ्जोगामानृतये हसाय द्राघीय आयुंः प्रत्रां दर्धानाः। मृत्योः पदं योपयंन्तो यदैम् द्राघीय आयुंः प्रत्रां दर्धानाः। आप्यायंमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवथ यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः परिधिं दंधामि मा नोऽनुंगादपंरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु श्ररदः पुरूचीस्तिरो मृत्युं दंद्महे पर्वतेन। इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जेनेन सपिषा सम्मृंशन्ताम्। अनुश्रवो अनमीवाः सुशेवा आरोहन्तु जनयो योनिमग्रे। यदाञ्जेनं त्रैककुदं जात् हिमवंतस्परि। तेनामृतंस्य मूलेनारातीर्जम्भयामिस। यथा त्वमुंद्भिनथ्स्योषधे पृथिव्या अधि। प्विमम उद्भिन्दन्तु कीत्या यशंसा ब्रह्मवर्चसेन। अजौऽस्यजास्मद्घा द्वेषाः सेस यवोऽसि यवयास्मद्घा

#### द्वेषा ५सि॥२४॥

भुव जुम्भुयामुसि त्रीणि च॥———[९]

अपं नः शोशंचद्घमग्नं शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशंचद्घम्। सुक्षेत्रिया संगात्या वंसूया चं यजामहे। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकांसश्च सूर्यः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्गेः सहंस्वतो विश्वतो यन्तिं सूर्यः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयत्ते अग्ने सूर्यो जायेमहि प्रते व्यम्। अपं नः शोशंचद्घम्॥२५॥

त्व १ हि विश्वतोमुख विश्वतः पिर्भूरिसं। अपं नः शोशंचद्घम्। द्विषों नो विश्वतोमुखाऽतिं नावेवं पारय। अपं नः शोशंचद्घम्। स नः सिन्धंिमव नावयातिं पर्षा स्वस्तयें। अपं नः शोशंचद्घम्। आपं प्रवणादिंव यतीरपास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। उद्वनादंदकानीवापास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। अन्वन्द्वयं प्रमोदाय पुनरागाङ् स्वान्गृहान्। अपं नः शोशंचद्घम्। आन्न्दायं प्रमोदाय पुनरागाङ् स्वान्गृहान्। अपं नः शोशंचद्घम्। न व तत्र प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः पृशुः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियते परिधिर्जीवंनायकमपं नः शोशंचद्घम्॥२६॥

अ्घम्घं चुत्वारिं च॥———[१०]

अपंश्याम युवृतिमाचरंन्तीं मृतायं जीवां पंरिणीयमांनाम्। अन्थेन या तमंसा प्रावृंताऽसि प्राचीमवांचीमवयन्नरिष्टौ। मयैतां मा्ड्स्तां भ्रियमाणा देवी स्ती पिंतृलोकं यदैषिं। विश्ववांरा नर्भसा संव्यंयन्त्युमौ नो लोकौ पयसाऽऽवृंणीहि। रियंष्ठामृिशं मधुंमन्तमूर्मिणमूर्जः सन्तं त्वा पयसोप् सर्भदेम। सर् र्य्या सम् वर्चसा सचंस्वा नः स्वस्तयें। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्याः। तेभ्यो घृतस्यं धारियतुं मधुंधारा व्यन्दती। माता रुद्राणां दृहिता वसूंना्ड् स्वसांऽऽदित्यानांमृमृतंस्य नाभिः। प्रणुवोचं चिकितुषे जनांय मागामनांगामिदंतिं विधष्ट। पिबंतूदकं तृणांन्यत्त्। ओमुथ्मृजत॥२७॥

विधिष्ट दे चं॥-----[१९]

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सुमङ्ग्लीरियं वधूरिमा संमेत पश्यंत। सौभाँग्यम्स्ये द्त्त्वायाथास्तं वि परेतन। इमां त्विमंन्द्र मीद्वः सुपुत्रा स्मुभगां कुरु। दशाँस्यां पुत्राना धेहि पतिमेकाद्शं कृषि॥ आवहंन्ती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासा सि मम् गावंश्व। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



## ॥ सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली ॥

शं नो मित्रः शं वर्रुणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृहस्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मं वदिष्यामि। ऋतं वंदिष्यामि। सत्यं वंदिष्यामि। तन्मामंवतु। तद्वक्तारंमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥१॥

सत्यं वंदिष्यामि पश्चं च॥

शीक्षां व्यांख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। सामे सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः॥२॥

शीक्षां पश्चं॥. **-**[२]

स्ह नौ यशः। स्ह नौ ब्रंह्मवर्चसम्। अथातः स॰हिताया उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधिज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजंमध्यात्मम्। महास हिता इंत्याचक्षते। अर्थाधिलोकम्। पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तररूपम्। आकांशः सन्धिः॥३॥

वार्युः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्वरूपम्। आदित्य उत्तररूपम्। आपः सन्धिः। वैद्युतंः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूँर्वरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विंद्या सन्धिः। प्रवचन ५ सन्धानम्। इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूर्वरूपम्। पितोत्तंररूपम्। प्रंजा सन्धिः। प्रजननर् सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥

अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूँर्वरूपम्। उत्तराहनुरुत्तंररूपम्। वाख्सन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा महास्रहिताः। य एवमेता महास्रहिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजंया पृशुभिः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्यणं लोकेन॥६॥

सुन्धिराचार्यः पूर्वरूपमित्यधिप्रजं लोकेन॥

[३

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृतांध्सम्बभूवं। स मेन्द्रों मेधयां स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरीरं मे विचंर्षणम्। जिह्वा मे मधुंमत्तमा। कर्णांभ्यां भूरि विश्रुंवम्। ब्रह्मंणः कोशोंऽसि मेधयाऽपिंहितः। श्रुतं में गोपाय। आवहंन्ती वितन्वाना॥७॥

कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासारंसि मम् गावंश्च। अन्नपानं चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। लोमशां पृश्भिः सह स्वाहाँ। आ मां यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। शमायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥

यशो जर्नेऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भगु प्रविंशानि स्वाहाँ। स मां भगु प्रविंशु स्वाहाँ। तस्मिन्थ्सहस्रंशाखे। निर्भगाहं त्वयि मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः प्रवंता यन्ति। यथा मासां अहर्जुरम्। एवं मां ब्रह्मचारिणः। धात्रायन्तु सर्वतः स्वाहाँ। प्रतिवेशोऽसि प्र मां भाहि प्र मां पद्यस्व॥९॥

[8]

भूर्भृवः सुवृरिति वा एतास्तिस्रो व्याह्नंतयः। तासांमृहस्मै तां चंतुर्थीम्। माहांचमस्यः प्रवंदयते। मह् इतिं। तद्भक्षां। स आत्मा। अङ्गांन्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तरिक्षम्। सुवृरित्यसौ लोकः॥१०॥

मह् इत्यांदित्यः। आदित्येन् वाव सर्वे लोका महीयन्ते। भूरिति वा अग्निः। भुव इतिं वायुः। सुव्रित्यांदित्यः। मह् इतिं चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती १षि महीयन्ते। भूरिति वा ऋचः। भुव इति सामानि। सुव्रिति यज्र १षि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते। भूरिति वै प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुवरितिं व्यानः। मह् इत्यन्नम्। अन्नेन वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते। ता वा एताश्चंतस्रश्चतुर्धा। चतंस्रश्चतस्रो व्याहंतयः। ता यो वेदं। स वेंद् ब्रह्मं। सर्वेंऽस्मै देवा बलिमावंहन्ति॥१२॥

असौ लोको यजू ५ षि वेद द्वे चं॥=

स य एषों उन्तर्हंदय आकाशः। तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमयः। अमृंतो हिर्ण्मयः। अन्तरेण तालुंके। य एष स्तनं इवावलम्बंते। सेन्द्रयोनिः। यत्रासौ केशान्तो विवर्तते। व्यपोह्यं शीर्षकपाले। भूरित्युग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इतिं वायौ॥१३॥

सुवरित्यांदित्ये। मह् इति ब्रह्मंणि। आप्नोति स्वारांज्यम्। आप्नोति मनंस्स्पितिम्। वाक्पंतिश्वक्षंष्पितिः। श्रोत्रंपतिर्वि-ज्ञानंपितः। एतत्ततों भवति। आकाशशंरीरं ब्रह्मं। स्त्यात्मंप्राणारांमं मनं आनन्दम्। शान्तिंसमृद्धमृतम्। इतिं प्राचीनयोग्योपांस्व॥१४॥

वायावमृत्मेकं च॥----[६]

पृथिव्यंन्तिरेक्षं द्यौर्दिशोंऽवान्तरिद्धाः। अग्निर्वायुरादित्य-श्चन्द्रमा नक्षंत्राणि। आप ओषंधयो वनस्पतंय आकाश आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोंऽपान उंदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्कक्। चर्म मार्स् स्नावास्थि मुजा। पृतदंधि विधायर्षिरवोचत्। पाङ्कं वा इदर सर्वम्। पाङ्कंनैव पाङ्कः स्मृणोतीति॥१५॥

ओमिति ब्रह्मं। ओमितीदः सर्वम्ं। ओमित्येतदंनुकृति ह स्म वा अप्योश्रांवयेत्याश्रांवयन्ति। ओमिति सामांनि गायन्ति। ओश्शोमितिं शस्त्राणिं शश्सन्ति। ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिग्रं प्रतिंगृणाति। ओमित् ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यंग्निहोत्रमनुंजानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रवृक्ष्यन्नांह् ब्रह्मोपांप्रवानीतिं। ब्रह्मैवोपांप्रोति॥१६॥

ओन्दर्श॥\_\_\_\_\_[८]

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निश्चश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यमिति सत्यवचां राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टः। स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाकों मौद्गल्यः। तिद्धि तपंस्तिद्धि तपः॥१७॥

प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च षट्वं॥———[९]

अहं वृक्षस्य रेरिवा। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपंवित्रो वाजिनीव स्वमृतंमस्मि। द्रविण् सर्वर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदानुवचनम्॥१८॥

अहर षद्॥-----[१०]

वेदमनूच्याऽऽचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायाँन्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यंवच्छेथ्सीः। सत्यान्न प्रमंदितव्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्यै न प्रमंदित्व्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदित्व्यम्॥१९॥

देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृंदेवो भव। पितृंदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिंदेवो भव। यान्यनवद्यानिं कर्माणि। तानि सेविंतव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माकश् सुचंरितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥

नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेया स्मो ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम्। भिया देयम्। संविंदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकिथ्सा वा वृत्तविचिकिथ्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदंनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैतंदुपास्यम्॥२२॥

स्वाध्यायप्रवचनाभ्यान्न प्रमंदित्व्यं तानि त्वयोपास्यानि स्यात्तेषुं वर्तेरन्थ्सप्त चं॥——[११]

शं नों मित्रः शं वर्रणः। शं नों भवत्वर्यमा। शं

न् इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमंस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांविषम्। ऋतमंवादिषम्। सत्यमंवादिषम्। तन्मामांवीत्। तद्वक्तारंमावीत्। आवीन्माम्। आवींद्वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥२३॥

सत्यमेवादिषं पश्चं च॥

**-**[१२]

## ॥ अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्ँ। तदेषाभ्यंक्ता। सृत्यं ज्ञानमंनन्तं ब्रह्मं। यो वेद निहितं गुहांयां पर्मे व्योमन्। सौंऽश्जृते सर्वान्कामाँन्थ्सह। ब्रह्मंणा विपश्चितेतिं। तस्माद्वा एतस्मादात्मनं आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायः। वायोरग्निः। अग्नेरापंः। अन्धः पृंथिवी। पृथिव्या ओषंधयः। ओषंधीभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नंरस्मयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पृक्षः। अयमुत्तंरः पृक्षः। अयमात्मां। इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥१॥

अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवीः श्रिताः। अथो अन्नेनैव जीवन्ति। अथैनदिपं यन्त्यन्ततः। अन्नुः

हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मां ध्सर्वीष्धमुंच्यते। सर्वं वै तेऽन्नंमाप्नुवन्ति। येऽन्नं ब्रह्मोपासंते। अन्न हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्माथ्सर्वोष्धमुंच्यते। अन्नाद्भूतानि जायंन्ते। जातान्यन्नेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति च भूतानि। तस्मादन्नं तदुच्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादन्नंरसमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां प्राणुमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्राणं एव शिरः। व्यानो दक्षिणः पक्षः। अपान उत्तरः पक्षः। आकांश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥२॥ प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मनुष्याः पृशवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामार्युः। तस्माध्मर्वायुषम्चयते। सर्वमेव त् अायुर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतांनामायुः। तस्माथ्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्यैष एव शारींर आत्मा। यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मौत् प्राणमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यज्रीरेव शिरः। ऋग्दक्षिणः पक्षः। सामोत्तरः पक्षः। आदेश आत्मा। अथर्वाङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥३॥ यतो वाचो निवंर्तन्ते। अप्रौप्य मनसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कदांचनेति। तस्यैष एव

शारीर आत्मा। यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मौन्मनोमयात्।

अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञान्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य श्रेद्धैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पृक्षः। सत्यमुत्तरः पृक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भ्वति॥४॥

विज्ञानं युज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपिं च। विज्ञानं देवाः सर्वे। ब्रह्म ज्येष्ट्रमुपांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरं पाप्मंनो हित्वा। सर्वान्कामान्थ्समश्जेत इति। तस्येष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञान्मयात्। अन्योऽन्तर आत्मांऽऽनन्दमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पृक्षः। प्रमोद उत्तरः पृक्षः। आनंन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥५॥

असंत्रेव सं भवति। अस्द्रह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेतिं चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विंदुरिति। तस्यैष एव शारींर आत्मा। यः पूर्वस्य। अथातोंऽनुप्रश्ञाः। उता विद्वानमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छ्ती(३)॥ आहों विद्वानमुँ लोकं प्रेत्यं। कश्चिम्मंश्जुता(३) उ। सोंऽकामयत। बहु स्यां प्रजांयेयेतिं। स तपांऽतप्यत। स तपंस्तृत्वा। इद श्

सर्वमसृजत। यदिदं किं चं। तथ्मृष्ट्वा। तदेवानु प्राविंशत्। तदेनुप्रविश्यं। सच्च त्यचांभवत्। निरुक्तं चानिंरुक्तं च। निलयनं चानिलयनं च। विज्ञानं चाविंज्ञानं च। सत्यं चानृतं च संत्यम्भवत्। यदिदं किं च। तथ्सत्यमित्याच्क्षते। तदप्येष श्लोंको भवति॥६॥

असृद्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वे सदंजायत।
तदात्मानः स्वयंमकुरुत। तस्मात्तथ्सुकृतमुच्यंत इति। यद्वें
तथ्सुकृतम्। रंसो वे सः। रसः ह्येवायं लब्ध्वाऽऽनंन्दी
भवति। को ह्येवान्यांत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश
आनंन्दो न स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्येवैष्
एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां
विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भवति। यदा ह्येवैष्
एतस्मिन्नदृरमन्तंरं कुरुते। अथ तस्य भंयं भवति। तत्त्वेव
भयं विदुषोऽमंन्वानस्य। तदप्येष श्लोंको भवति॥७॥

भीषाऽस्माद्वातंः पवते। भीषोदेति सूर्यः। भीषाऽस्मादिग्ने-श्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावित पश्चेम इति। सैषाऽऽनन्दस्य मीमा रेसा भवति। युवा स्याथ्साधु युवाऽध्यायकः। आशिष्ठो दिढष्ठों बिल्ष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आन्नदः। ते ये शतं मानुषां आन्नदाः। स एको मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दः। श्लोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दाः। स एको

देवगन्धर्वाणांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतुस्य।

ते ये शतं देवगन्धर्वाणांमान्नदाः। स एकः पितृणां चिरलोकलोकानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकार्नामानुन्दाः। स एक आजानजानां देवार्नामानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकार्महतस्य।

ते ये शतमाजानजानां देवानांमानुन्दाः। स एकः कर्मदेवानां देवानांमानुन्दः। ये कर्मणा देवानंपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य।

ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमान्न्दाः। स एको देवानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं देवानांमान्नदाः। स एक इन्द्रंस्यान्नदः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतमिन्द्रंस्याऽऽन्न्दाः। स एको बृहस्पतेंरान्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य।

ते ये शतं बृहस्पतेरानुन्दाः। स एकः प्रजापतेरानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतुस्य।

ते ये शतं प्रजापतेरानुन्दाः। स एको ब्रह्मणे आनुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतुस्य।

स यश्चीयं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकंः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्ग्रामित। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्ग्रामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्ग्रामित। एतमानन्द-मयमात्मानमुपंसङ्कामित। तदप्येष श्लोंको भवति॥८॥

यतो वाचो निवंतन्ते। अप्रांप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मंणो विद्वान्। न बिभेति कुतंश्चनेति। एत ह वावं न तपति। किमह साधुं नाक् रवम्। किमहं पापमक रविमिति। स य एवं विद्वानेते आत्मांन इस्पृणुते। उभे ह्यें वैष् एते आत्मांन इस्पृणुते। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥९॥

सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

# ॥ नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वर्रणं पितंरुमुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। तस्मां पृतत्प्रोवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाचमितिं। तः होवाच। यतो वा इमानि भूतांनि जायंन्ते। येन जातांनि जीवंन्ति। यत्प्रयंन्त्यभि संविंशन्ति। तद्विजिंज्ञासस्व। तद्वह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स

### तपंस्तस्वा॥१॥

अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अन्नाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। अन्नेन जातांनि जीवंन्ति। अन्नं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तद्विज्ञायं। पुनरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥२॥

प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणास्येव खिल्वमानि भूतांनि जायन्ते। प्राणेन जातांनि जीवन्ति। प्राणं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनर्व वर्रुणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुस्वा॥३॥

मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्यंव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। मनंसा जातांनि जीवंन्ति। मनः प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥४॥

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञानास्येव खल्विमानि भूतांनि जायन्ते। विज्ञानेन जातांनि जीवंन्ति। विज्ञानं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीति। तद्विज्ञाये। पुनेरेव वर्रणं पितरमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥५॥

आनन्दो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायन्ते। आनन्देन जातांनि जीवंन्ति। आनन्दं प्रयंन्त्यिभ संविश्वन्तीति। सेषा भाँग्वी वांरुणी विद्या। प्रमे व्योमन् प्रतिष्ठिता। य एवं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भंवति। महान्भंवति प्रजयां प्शुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥६॥

अत्रं न निंन्द्यात्। तद्भृतम्। प्राणो वा अत्रम्ं। शरीरमत्रादम्। प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदत्रमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदत्रमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अत्रंवानन्नादो भंवति। महान्भवित प्रजयां पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥७॥

अत्रं न परिचक्षीत। तद्वतम्। आपो वा अन्नम्। ज्योतिरन्नादम्। अपसु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवित प्रजयां पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥८॥

अर्न्न बहु कुंर्वीत। तद्भृतम्। पृथिवी वा अन्नम्।

आकाशौंऽत्रादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नंवानन्नादो भंवति। महान्भंवति प्रजयां पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥९॥

न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्वतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंत्रं प्राप्नुयात्। अराध्यस्मा अन्नमित्याचक्षते। एतद्वे मुखतौँ ५न्न १ राद्धम्। मुखतो ५ समा अन्न १ राध्यते। एतद्वै मध्यतौँऽन्न राद्धम्। मध्यतोऽस्मा अन्न राध्यते। एतद्वा अन्तर्तो ऽन्न र राद्धम्। अन्तर्तो ऽस्मा अन्न राध्यते। य एवं वेद। क्षेम इति वाचि। योगक्षेम इति प्राणापानयोः। कर्मेति हस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति पायौ। इति मानुषीं समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिति वृष्टौ। बलमिति विद्युति। यश इति पशुषु। ज्योतिरिति नेक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इंत्युपस्थे। सर्वमिंत्याकाशे। तत्प्रतिष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवान्भवति। तन्मह इत्युंपासीत। मंहान्भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानंवान्भवति। तन्नम इत्यूपासीत। नम्यन्ते उस्मै कामाः। तद्वह्मेत्यूपासीत। ब्रह्मवान्भवति। तद्ब्रह्मणः परिमर इत्युंपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तः सपत्नाः। परि येंऽप्रियां भ्रातृव्याः। स यश्चांयं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य।

प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कम्य। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमय-मात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ ल्लोकान्कामान्नी कामरूप्यंनु-स्थरन्। एतथ्साम गांयन्नास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) वुं। अहमन्नमहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादो(२)ऽहमन्नादो(२)-ऽहमन्नादः। अहङ् श्लोक्कृद्हङ् श्लोक्कृद्हङ् श्लोक्कृत्। अहमस्मि प्रथमजा ऋता(३) स्य। पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाइ। यो मा ददाति स इदेव मा(३) वाः। अहमन्नमन्नम्यन्तमा(३) द्या। अहं विश्वं भुवंनमभ्यंभ्वाम्। सुवर्न ज्योतीः। य एवं वेदं। इत्यंपनिषंत्॥१०॥

सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



# ॥दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

# ॥अम्भस्य पारे॥

अम्भेस्य पारे भुवंनस्य मध्ये नाकंस्य पृष्ठे मंह्तो महीयान्। शुक्रेण ज्योती शिष समनुप्रविष्टः प्रजापंतिश्चरित् गर्भे अन्तः॥ यस्मिन्निद्दः सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदः। तदेव भूतं तद् भव्यंमा इदं तदक्षरे पर्मे व्योमन्॥ येनांऽऽवृतं खं च दिवं महीं च येनांऽऽदित्यस्तपंति तेजंसा भ्राजंसा च। यमन्तः संमुद्रे क्वयो वयंन्ति यद्क्षरे पर्मे प्रजाः॥ यतंः प्रसूता ज्गतंः प्रसूती तोयंन जीवान् व्यसंसर्ज् भूम्यांम्। यदोषंधीभिः पुरुषांन्पशूङ्श्च विवेश भूतानि चराचराणि॥ अतंः परं नान्यदणीयसः हि परांत्परं यन्महंतो महान्तम्। यदेकम्व्यक्तमनंन्तरूपं विश्वं पुराणं तमंसः परंस्तात्॥१॥

तदेवर्तं तद् स्त्यमांहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं केवीनाम्। इष्टापूर्तं बंहुधा जातं जायंमानं विश्वं बिंभर्ति भुवंनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तथ्सूर्यस्तदुं चन्द्रमाः। तदेव शुक्रम्मृतं तद्वह्म तदापः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा ज्ञिरं विद्युतः पुरुषादिधं। कुला मृंहूर्ताः काष्ठांश्वाहोरात्राश्चं सर्वशः॥ अर्धमासा मासां ऋतवः संवथ्सरश्चं कल्पन्ताम्। स आपः प्रदुघे उभे इमे अन्तरिक्षमथो सुवः॥ नैनंमूर्धं न तिर्यश्चं न मध्ये परिजग्रभत्। न तस्येशे कश्चन तस्यं नाम मृहद्यशः॥२॥

न स्न्हशें तिष्ठति रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यति कश्चनैनम्ं। ह्दा मंनीषा मनंसाऽभिकृष्तो य एंनं विदुरमृंतास्ते भवन्ति॥ अद्भः सम्भूंतो हिरण्यग्भं इत्यष्टौ॥ एष हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायमानः स जिन्ष्यमाणः प्रत्यङ्गुखांस्तिष्ठति विश्वतोमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोहस्त उत विश्वतंस्पात्। सं बाहुभ्यां नमंति सं पतंत्रैर्द्यावांपृथिवी जनयन्देव एकः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भवनानि विद्वान् यत्र विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मिन्निदश्च सं च विचैक्श् स ओतः प्रोतंश्व विभुः प्रजासुं। प्र तद्वोचे अमृतं नु विद्वान्गंन्थ्वी नाम निहितं गृहांसु॥३॥

त्रीणि पदा निहिता गुहांसु यस्तद्वेदं सिवतुः पिताऽसंत्। स नो बन्धुंर्जिनिता स विधाता धामानि वेद भुवंनानि विश्वां। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामांन्यभ्यैरंयन्त। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः परि लोकान् परि दिशः परि सुवंः। ऋतस्य तन्तुं विततं

विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासं। प्रीत्यं लोकान्प्रीत्यं भूतानिं प्रीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्याऽऽत्मनाऽऽत्मानमभिसम्बंभूव। सदंसस्पित्मद्भंतं प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सिनं मेधामंयासिषम्। उद्दींप्यस्व जातवेदोऽपष्नित्रर्र्ऋतिं ममं॥४॥

पृश्र्श्च मह्यमावंहु जीवंनं च दिशों दिश। मा नों हिश्सीज्ञातवेदो गामश्वं पुरुषं जगंत्। अविंभ्रदग्न आगंहि श्रिया मा परिपातय।

# ॥गायत्रीमन्त्राः॥

पुरुषस्य विद्य सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दिन्तः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दिन्तः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें चक्रतुण्डायं धीमहि॥५॥

तन्नों नन्दिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें महासेनायं धीमित। तन्नेः षण्मुखः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें सुवर्णपक्षायं धीमित। तन्नों गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विद्यहें हिरण्यगर्भायं धीमित। तन्नों ब्रह्मं प्रचोदयाँत्। नारायणायं विद्यहें वासुदेवायं धीमित। तन्नों विष्णुः प्रचोदयाँत्। वृज्जन्खायं विद्यहें तीक्ष्णद्र्ष्ट्रायं धीमित॥६॥

तन्नों नारसि॰हः प्रचोदयाँत्। भास्करायं विद्महें महद्युतिकरायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वानरायं विद्महें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयाँत्। कात्यायनायं विद्महें कन्यकुमारिं धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

# ॥ दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरंमा देवी शतमूंला शताङ्कंरा। सर्वर् हरतुं मे पापं दूर्वा दुःस्वप्रनाशंनी। काण्डांत्काण्डात् प्ररोहंन्ती परुषः परुषः परि॥७॥

पुवानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रेण श्तेनं च। या श्तेनं प्रत्नोषिं सहस्रेण विरोहंसि। तस्यांस्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां व्यम्। अश्वंक्रान्ते रंथक्रान्ते विष्णुक्रांन्ते वसुन्धंरा। शिरसां धारियष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

# ॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन शंतबाहुना। मृत्तिके हनं मे पापं यन्मया दुंष्कृतं कृतम्। मृत्तिके ब्रह्मदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमित्रिता। मृत्तिके देहिं मे पुष्टिं त्विय संवं प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिकै प्रतिष्ठिते सुर्वं तुन्मे निर्णुद् मृत्तिके। तयां हुतेनं पापेन गुच्छामि पंरमां गतिम्।

### ॥ रात्रुजयमन्त्राः॥

यतं इन्द्र भयांमहे ततों नो अभयं कृषि। मघंवन्छ्गि तव् तन्नं ऊतये विद्विषो विमृधों जिहा स्वस्तिदा विशस्पतिर्वृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपान्तमन्युस्तृपलंप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छरुंमा श्रक्जीषी। सोमो विश्वान्यत्सावनानि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानानिदेभुः॥९॥

ब्रह्मंजज्ञानं प्रंथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुचो वेन आंवः। सबुध्नियां उपमा अस्य विष्ठाः सृतश्च योनिमसंतश्च विवेः। स्योना पृंथिवि भवांऽनृक्षरा निवेशंनी। यच्छांनः शर्म सप्रथाः। गृन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपृष्टां करीषिणीम्। ईश्वरी सर्वभूतानां तामिहोपंह्वये श्रियम्। श्रीमें भृजतु। अलक्ष्मीमें नृश्यतु। विष्णुमुखा वै देवाश्छन्दोभिरिमाँ ह्रोकानंनप-ज्य्यम्भ्यंज्यन्। मृहा इन्द्रो वज्रबाहुः षोड्शी शर्म यच्छतु॥१०॥

स्वस्ति नों मुघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं योंऽस्मान् द्वेष्टिं। सोमान् स्वरंणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कुक्षीवन्तं य औशिजम्। शरीरं यज्ञशम्लं कुसीदं तस्मिन्थ्सीदतु योंऽस्मान् द्वेष्टिं। चरंणं पवित्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानि। तेनं प्वित्रेण शुद्धेनं पूता अति पाप्मान्मरांतिं तरेम। स्जोषां इन्द्र सगणो म्रुद्धिः सोमं पिब वृत्रहञ्छूर विद्वान्। ज्रिह शत्रूर् रप मृधों नुद्स्वाथाभयं कृणुहि विश्वतों नः। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यौं ऽस्मान् द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयो भुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन॥११॥

महेरणांय चक्षंसे। यो वेः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नेः। उशतीरिव मातरेः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ। आपों जनयंथा च नः।

# ॥ अघमर्षणसूक्तम्॥

हिरंण्यशृङ्गं वर्रणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। यन्मयां भुक्तम्साधूनां पापेभ्यश्च प्रतिग्रंहः। यन्मे मनसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वर्रुणो बृह्स्पितः सिवता चं पुनन्तु पुनः पुनः। नमोऽग्नयेंऽफ्सुमते नम् इन्द्रांय नमो वर्रुणाय नमो वारुण्यें नमोऽन्न्यः॥१२॥

यद्पां ऋूरं यदेमेध्यं यदेशान्तं तदपेगच्छतात्। अत्याशनादेतीपानाद्यच उग्रात् प्रतिग्रहात्। तन्नो वर्रणो राजा पाणिना ह्यवमर्शतु। सोऽहमपापो विरजो निर्मुक्तो मुक्तिकिल्बिषः। नाकस्य पृष्ठमारुह्य गच्छेद्वह्यंसलोकताम्। यश्चापसु वर्रणः स पुनात्वधमर्षणः। इमं में गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुंद्रि स्तोम र सचता परुष्णिया। असिक्रिया मंरुद्वृधे वितस्त्याऽऽर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया। ऋतं चं सत्यं चाभीं द्वात्तप्सोऽध्यंजायत। ततो रात्रिरजायत ततंः समुद्रो अर्णवः॥१३॥

स्मुद्रादंर्ण्वादिधं संवथ्सरो अंजायत। अहोरात्राणिं विदधिक्षंस्य मिष्तो वृशी। सूर्याचन्द्रमसौं धाता यंथापूर्वमंकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो सुवंः। यत्पृथिव्याः रजः स्वमान्तरिक्षे विरोदंसी। इमाः स्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुष भूतस्यं मध्ये भुवंनस्य गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्। द्यावांपृथिव्योर्हिर्ण्मयः सङ्श्रितः सुवंः॥१४॥

स नः सुवः सर्शिशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिंर्हमंस्मि। ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमेवाहं मां जुंहोमि स्वाहाँ। अकार्यकार्यंवकीणीं स्तेनो भ्रूंणहा गुंरुतल्पगः। वर्रुणोऽपामघमर्षणस्तस्मात्पापात् प्रमुंच्यते। रजो भूमिंस्त्वमार रोदंयस्व प्रवंदन्ति धीराः। आक्रांन्थ्समुद्रः प्रथमे विधंमं जनयंन्य्रजा भुवंनस्य राजाः। वृषां प्रवित्रे अधि सानो अव्यं बृहथ्सोमो वावृधे सुवान इन्दुः॥१५॥

# ॥दुर्गासूक्तम्॥

जातवेदसे सुनवाम सोमंमरातीयतो निजंहाति वेदः। स नंः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यग्निः। तामुग्निवंणां तपंसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कंर्मफलेषु जुष्टांम्। दुर्गां देवी र शरणमहं प्रपद्ये सुतर्रसि तरसे नर्मः। अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्थ्स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वां। पूर्श्व पृथ्वी बंहुला नं उर्वी भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वानि नो दुर्गहां जातवेदः सिन्धुं न नावा दुरितातिं पर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनंसा गृणानौं ऽस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पृतनाजित र सहंमानमग्निमुग्र र हुंवेम परमाथ्सधस्थांत्। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा क्षामद्वेवो अति दुरिताऽत्यग्निः। प्रतोषिं कमीड्यों अध्वरेषुं सुनाच्च होता नव्यंश्च सिथ्सं। स्वाश्चौग्ने तनुवं पिप्रयंस्वास्मभ्यं च सौभंगमायंजस्व। गोभिर्जुष्टंमयुजो निषिक्तं तवैन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नाकस्य पृष्ठमभि संवसानो वैष्णवीं लोक इह मादयन्ताम्॥१६॥

[२]

# ॥ व्याहृतिहोमन्त्राः॥

भूरत्रंमुग्नयं पृथिव्यै स्वाहा भुवोऽत्तं वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुव्रत्नंमादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुव्रत्नं चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः

# सुवरन्नमोम्॥१७॥

३

भूरग्नयें पृथिव्यै स्वाहा भुवों वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवंरादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुव्रग्न ओम्॥१८॥

<u>—</u>[გ]

भूरग्नयें च पृथिव्यै चं मह्ते च स्वाहा भुवों वायवें चान्तरिक्षाय च मह्ते च स्वाहा सुवंरादित्यायं च दिवे चं मह्ते च स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे च नक्षंत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्चं मह्ते च स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवर्मह्रोम्॥१९॥

**-**[५]

# ॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः॥

पाहि नो अग्न एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावंसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतर्ऋतो स्वाहा॥२०॥

**-**[६]

पाहि नो अग्न एकंया। पाह्यंत द्वितीयंया। पाह्यूर्जं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्चं तुसृभिवसो स्वाहां॥२१॥

**-**[り]

# ॥वेदविस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूप्श्छन्दौभ्यश्छन्दा ईस्याविवेशं। सता १ शिक्यः पुरोवाचोपिन्षिदिन्द्रौ ज्येष्ठ इन्द्रियाय ऋषिंभ्यो नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवश्छन्द ओम्॥२२॥

**-**[८]

नमो ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्वनिराकरणं धारयिता भूयासं कर्णयोः श्रुतं मा च्यौंद्वं ममामुष्य ओम्॥२३॥

**-**[ ⟨ ⟨ ⟩ ]

#### ॥तपः प्रशंसा॥

ऋतं तर्पः सृत्यं तर्पः श्रुतं तर्पः शान्तं तर्पा दम्स्तपः शम्स्तपो दानं तपो यज्ञं तपो भूर्भुवः सुवुर्ब्रह्मैतदुपाँस्यैतत्तर्पः॥२४॥

**-**[80]

# ॥ विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सम्पुष्पितस्य दूराद्गन्धो वाँत्येवं पुण्यंस्य कर्मणों दूराद्गन्धो वांति यथांऽसिधारां कर्तेऽवंहितामवृक्तामे यद्युवे युवे ह वां विह्नयिंष्यामि कर्तं पंतिष्यामीत्येवमृनृतांदात्मानं जुगुफ्सेंत्॥२५॥

[88]

## ॥ दहरविद्या ॥

अणोरणीयान्महृतो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः। तमंक्रतुं पश्यित वीतशोको धातुः प्रसादाँन्मिह्मानं-मीशम्। सप्त प्राणाः प्रभवंन्ति तस्माँथ्सप्तार्विषंः समिधंः सप्त जिह्वाः। सप्त इमे लोका येषु चरंन्ति प्राणा गुहाशंयां निहिताः सप्त सप्त। अतंः समुद्रा गिरयंश्च सर्वेऽस्माथ्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वंरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसाँच येनैष भूतस्तिष्ठत्यन्तरात्मा। ब्रह्मा देवानां पद्वीः केवीनामृषिविप्राणां मिह्षो मृगाणांम्। श्येनो गृप्राणाः स्विधित्वनानाः सोमः पवित्रमत्येति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्रकृष्णां बह्वीं प्रजां जनयंन्तीः सर्रूपाम्। अजो ह्येको जुषमांणोऽनुशेते जहाँत्येनां भूक्तभौगामजौँऽन्यः॥२६॥

ह् सः श्रुंचिषद्वसुं रन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दुरोण्सत्।
नृषद्वं रसदंत्सद्धोमसद्बा गोजा ऋतजा अद्विजा ऋतं
बृहत्। घृतं मिमिक्षिरे घृतमस्य योनिधृते श्रितो घृतम् वस्य
धामं। अनुष्वधमावंह मादयंस्व स्वाहांकृतं वृषभ
विक्षे ह्व्यम्। समुद्रादूर्मिर्मधुंमा उदांरदुपा शुना
सममृत्त्वमांनद्। घृतस्य नाम् गृह्यं यदस्तिं जिह्ना
देवानां मृतंस्य नाभिः। वयं नाम् प्रब्रंवामा घृतेनास्मिन्
यज्ञे धारयामा नमोभिः। उपं ब्रह्मा शृंणवच्छ्रस्यमानं चतुंः

-[१२]

शृङ्गोऽवमीद्गौर एतत्। चृत्वारि शृङ्गा त्रयों अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तांसो अस्य। त्रिधां बृद्धो वृष्भो रोरवीति महो देवो मर्त्याप् आविवेश॥२७॥

त्रिधां हितं पणिभिंगुंह्यमानं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्। निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो मृहर्षिः। हिरण्यगर्भं पंश्यत जायमान स देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्तु। यस्मात्परं नापर्मस्त किश्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायौऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्। न कर्मणा न प्रजया धर्नेन त्यागेनैके अमृतत्वमानश्ः। परेण नाकं निहितं गुहांयां विभाजते यद्यतंयो विशन्ति। वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः सन्त्र्यांसयोगाद्यतंयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रह्मलोके तु परान्तकाले परामृतात्परिमुच्यन्ति सर्वै। दहं विपापं प्रमेशमभूतं यत्पुंण्डरीकं पुरमध्यसङ्स्थम्। तुत्रापि दहं गुगर्नं विशोकस्तस्मिन् यदन्तस्तदुपांसितव्यम्। यो वेदादौ स्वंरः प्रोक्तो वेदान्तं च प्रतिष्ठितः। तस्य प्रकृतिंलीनस्य यः परंः स महेश्वंरः॥२८॥

### ॥ नारायणसूक्तम्॥

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुवम्। विश्वं नारायणं देवमृक्षरं पर्मं प्दम्। विश्वतः परमान्नित्यं विश्वं नारायणः हिरम्। विश्वंमेवेदं पुरुषस्तिद्वश्वमुपंजीवति। पितं विश्वंस्याऽऽत्मेश्वंर् शाश्वंतः शिवमंच्युतम्। नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मांनं परायणम्। नारायणपरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। नारायण परः। नारायणः परः। यचं किश्विज्ञंगथ्स्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा॥ अन्तंर्ब्वहिश्चं तथ्स्वं व्याप्य नारायणः स्थितः॥२९॥

अनंन्तमव्यंयं क्विश् संमुद्रेऽन्तं विश्वशंम्भुवम्। पद्मकोश प्रतीकाश्र हृदयं चाप्यधोमंखम्। अधो निष्ठा वितस्त्यान्ते नाभ्यामंपरि तिष्ठति। ज्वालमालाकुलं भाती विश्वस्यांऽऽयत्नं मंहत्। सन्तंतः शिलाभिंस्तु-लम्बंत्याकोश्यत्त्रिभम्। तस्यान्तं सृषिरः सूक्ष्मं तस्मिन्थ्यवं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानंग्निर्विश्वाचिंविश्वतोमुखः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहांरमज्रः कृविः। तिर्यगूर्ध्वमधः शायी रश्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमापादतल्मस्तंकः। तस्य मध्ये विह्रंशिखा अणीयौध्वा व्यवस्थितः। नीलतोयदंमध्यस्थाद्विद्युष्ठंखेव भास्वरा। नीवारशूकंवत्तन्वी पीता भास्वत्यणूपंमा। तस्याः शिखाया मध्ये प्रमात्मा

व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हिर्ः सेन्द्रः सोऽक्षरः परमः स्वराट्॥३०॥

नारायुणः स्थितो व्यवस्थितश्चत्वारिं च॥-----[१३]

# ॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपंति तत्र ता ऋचस्तद्दचा मंण्डल्र॰ स ऋचां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिदीप्यते तानि सामानि स साम्रां मण्डल्र॰ स साम्रां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिषि पुरुषस्तानि यजू॰षि स यजुषा मण्डल्र॰ स यजुषां लोकः सैषा त्र्य्येवं विद्या तपति य एषौऽन्तरांदित्ये हिर्ण्मयः पुरुषः॥३१॥

**-[**88]

# ॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज् ओजो बलं यश्श्वक्षुः श्रोत्रंमात्मा मनों मन्युर्मनुंर्मृत्युः सत्यो मित्रो वायुरांकाशः प्राणो लोंकपालः कः किं कं तथ्सत्यमन्नंममृतों जीवो विश्वः कत्मः स्वंयम्भु ब्रह्मैतदमृत एष पुरुष एष भूतानामिधंपित्र्व्रह्मणः सायुंज्य सलोकतांमाप्रोत्येतासांमेव देवतांना सायुंज्य समानलोकतांमाप्रोति य एवं वेदैंत्युपनिषत्॥ ३२॥

-[१५]

### ॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निर्धनपतये नमः। निर्धनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वायं नमः। ऊर्ध्वलिङ्गायं नमः। हिरण्यायं नमः। हिरण्यालिङ्गायं नमः। दिव्यायं नमः। दिव्याव् नमः। दिव्याव् नमः। दिव्याव् नमः। प्रविलङ्गायं नमः। भवावं नमः। भविलङ्गायं नमः। शर्वावं नमः। शर्वावं नमः। शर्वालङ्गायं नमः। शिवायं नमः। शिवलङ्गायं नमः। ज्वलायं नमः। ज्वललिङ्गायं नमः। आत्मायं नमः। आत्मायं नमः। आत्मालङ्गायं नमः। परमालङ्गायं नमः। एतथ्सोमस्यं सूर्यस्यं सर्वलिङ्गाः स्थाप्यति पाणिमन्नं पवित्रम्॥३३॥

**-**[१६]

## ॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपाद्क-मन्त्रः॥

स्द्योजातं प्रंपद्यामि स्द्योजाताय वै नमो नर्मः। भवे भंवे नाति भवे भवस्व माम्। भवोद्भवाय नर्मः॥३४॥

[ev?]<del>-</del>

### ॥ उत्तरवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमों ज्येष्ठाय नमेः श्रेष्ठाय नमों रुद्राय नमः कालाय नमः कलंविकरणाय नमो बलंविकरणाय नमो बलाय नमो बलंप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मुनोन्मनाय नमः॥३५॥ 

### ॥ दक्षिणवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

अघोरैंभ्योऽथ घोरैंभ्यो घोरघोरंतरेभ्यः। सर्वैभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥

**-**[१९]

### ॥ प्राग्वऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

तत्पुरुषाय विदाहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्॥३७॥

-[२०]

# ॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणो-ऽधिपतिर्ब्रह्मां शिवो में अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥

-[२१]

#### ॥ नमस्कारमन्त्राः॥

नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्यपतयेऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥

-[२२]

ऋतः सत्यं पंरं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गंलम्। ऊर्ध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपाय वै नमो नमः॥४०॥

स्तिष्ठन्त्यथो प्रतिष्ठित्यै॥४३॥

कृणुष्व पाज् इति पश्चं॥४४॥

**-**[२७]

-[२६]

# ॥ भूदेवताकमन्त्रः॥

अदितिर्देवा गंन्ध्वां मंनुष्याः पितरोऽसुंरास्तेषाः सर्वभूतानां माता मेदिनीं महता मही सांवित्री गांयत्री जगंत्युर्वी पृथ्वी बंहुला विश्वां भूता कंतुमा का या सा सत्येत्यमृतेतिं वसिष्ठः॥४५॥

-[२८]

# ॥ सर्वदेवता आपः॥

आपो वा इद सर्वं विश्वां भूतान्यापेः प्राणा वा आपेः पृशव आपोऽन्नमापोऽमृतमापेः सम्राडापो विराडापेः स्वराडापृश्छन्दा ड्स्यापो ज्योती ड्ष्यापो यजू ड्ष्यापेः सत्यमापः सर्वा देवता आपो भूर्भुवः सुवराप ओम्॥४६॥

[२९]

### ॥ सन्ध्यावन्दनमन्त्राः॥

आपंः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मण्स्पति ब्रह्मपूता पुनातु माम्। यद्चिष्ठंष्ट्रमभौज्यं यद्वी दुश्चरितं ममं। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चे प्रतिग्रह्ड् स्वाहां॥४७॥

[३०]

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यदह्रा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शि्षञा। अह्स्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृंतयोनौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोंिम स्वाहा॥४८॥

[३१]

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों

रक्षन्ताम्। यद्रात्रिया पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरंण शिष्ट्ञा। रात्रिस्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयोनौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोंिम स्वाहा॥४९॥

·[३२]

### ॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विनियोगम्॥५०॥

-[33]

#### ॥ गायत्र्यावाहनमन्त्राः ॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रीं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे। यदह्रांत्कुरुते पापं तदह्रांत्प्रतिमुच्यंते। यद्रात्रियांत्कुरुते पापं तद्रात्रियांत्प्रतिमुच्यंते। सर्व वर्णे महादेवि सन्ध्याविद्ये स्रस्वंति॥५१॥

[३४]

ओजोंऽसि सहोंऽसि बलंमसि भ्राजोंऽसि देवानां धाम् नामांसि विश्वंमसि विश्वायुः सर्वमिस सर्वायुरिभभूरों गायत्रीमावांहयामि सावित्रीमावांहयामि सरस्वतीमावांह-यामि छन्दऋषीनावांहयामि श्रियमावांहयामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निर्मुखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदयः रुद्रः शिखा पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्क्ष्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्विःशत्यक्षरा त्रिपदां षद्भुक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग् ओं भूः। ओं भुवः। ओः सुवः। ओः महः। ओं जनः। ओं तपः। ओः सृत्यम्। ओं तथ्मंवितुर्वरेण्यं भर्गां देवस्यं धीमहि। धियो यो नंः प्रचोदयात्। ओमापो ज्योती्रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्॥५२॥

-[३५]

# ॥गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पर्वतमूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनु-ज्ञाता गुच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवने द्विजाता। आयुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रह्मवर्चसं मह्यं दत्वा प्रजातुं ब्रह्मलोकम्॥५३॥

**-**[३६]

# ॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरन्ति तद्रंसम्। सत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भवः सुवरोम्॥५४॥

**-**[ミッ]

# ॥ त्रिसुपर्णमन्त्राः ॥

ब्रह्मंमेतु माम्। मधुंमेतु माम्। ब्रह्मंमेव मधुंमेतु माम्। यास्ते सोम प्रजाव्थ्सोभि सो अहम्। दुःस्वंप्रहन्दुंरुष्यह। यास्ते सोम प्राणाः स्तां जुंहोमि। त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। ब्रह्महृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नवन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५५॥

[3८

ब्रह्मं मेधयाँ। मधुं मेधयाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयाँ। अद्या नों देव सिवतः प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्रियः सुव। विश्वांनि देव सिवतर्दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुंव। मधु वातां ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धंवः। माध्वींर्नः सन्त्वोषंधीः। मधु नक्तंमुतोषिस मधुंमृत्पार्थिवः रजः। मधु द्यौरंस्तु नः पिता। मधुंमात्रो वनस्पित्मधुंमाः अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भूणहृत्यां वा पृते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आस्हस्रात्पिङ्कः पुनन्ति। ओम्॥५६॥

[३९]

ब्रह्मं मेधवाँ। मधुं मेधवाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधवाँ। ब्रह्मा देवानां पद्वीः केवीनामृषि्विप्राणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्राणाः स्वधितिर्वनांनाः सोमः प्वित्रमत्येति रेभन्।

ह्र्सः श्रुंचिषद्वस्रं रन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दुरोण्सत्।
नृषद्वं रसहं तसद्धोम्सद्बा गांजा ऋतजा अद्विजा ऋतं
बृहत्। ऋचे त्वां रुचे त्वा सिमथ्स्रं वन्ति स्रितो न
धेनाः। अन्तर्ह्दा मनंसा पूयमांनाः। घृतस्य धारां
अभिचांकशीमि। हिर्ण्ययों वेत्सो मध्यं आसाम्।
तिस्मन्ध्रमुपणी मंधुकृत्कुंलायी भजंन्नास्ते मधुंदेवतांभ्यः।
तस्यांसते हर्रयः सप्ततीरे स्वधां दुहांना अमृतंस्य धारांम्।
य इदं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीर्हृत्यां वा
पृते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति।
आसहस्रात्पङ्किं पुनन्ति। ओम्॥५७॥

[۷۰]

# ॥ मेधासूक्तम्॥

मेधा देवी जुषमांणा न आगाँ द्विश्वाची भूद्रा सुमन्स्यमाना। त्वया जुष्टां जुषमांणा दुरुक्तांन्बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः॥ त्वया जुष्टं ऋषिभंवति देवि त्वया ब्रह्मांऽऽगृतश्रीरुत त्वयां। त्वया जुष्टंश्चित्रं विन्दते वसु सा नो जुषस्व द्रविणो न मेधे॥५८॥

[४४]

मेथां म् इन्द्रों ददातु मेथां देवी सरस्वती। मेथां में अश्विनांवुभावार्धत्तां पुष्कंरस्रजा। अफ्सरासुं च या मेथा गंन्ध्वेषुं च यन्मनंः। देवीं मेधा सरंस्वती सा मां मेधा सुरभिर्जुषता्ड् स्वाहाँ॥५९॥

[૪૨]

आ माँ मे्धा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जगम्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वंमाना सा माँ मे्धा सुप्रतीका जुषन्ताम्॥६०॥

[४३]

मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मियं सूर्यो भ्राजों दधातु॥६१॥

**-**[88]

# ॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

अपैतु मृत्युर्मृतंं न् आगंन्वैवस्वतो नो अभंयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेरिवाभिनः शीयता र्याः स चं तान्नः शचीपतिः॥६२॥

[૪५]

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नंः प्रजाः रीरिषो मोत वीरान्॥६३॥

-[૪૬]

वार्तं प्राणं मनसाऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नों मृत्योस्रायतां पात्वश्हंसो ज्योग्जीवा जरामंशीमहि॥६४॥

[88]

अमुत्र भूयादध् यद्यमस्य बृहंस्पते अभिशंस्तेरम्ंश्चः। प्रत्यौहतामिश्वनां मृत्युमंस्माद्देवानांमग्ने भिषजा शचींभिः॥६५॥

**-**[86]

हरि १ हरेन्तमनुंयन्ति देवा विश्वस्येशानं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागादयनं मा विवंधीर्विक्रंमस्व॥६६॥

·[88]

शल्कैर्ग्निमिन्धान उभौ लोकौ संनेमहम्। उभयौर्लोकयोर्-ऋध्वाऽति मृत्युं तराम्यहम्॥६७॥

-[५०]

मा छिंदो मृत्यो मा वंधीमां मे बलं विवृंहो मा प्रमोंषीः। प्रजां मा में रीरिष आयुंरुग्र नृचक्षंसं त्वा हविषां विधेम॥६८॥

-[५१]

मा नों महान्तंमुत मा नों अर्भुकं मा न उक्षंन्तमुत मा नं उक्षितम्। मा नोंऽवधीः पितरं मोत मातरंं प्रिया मा नंस्तनुवों रुद्र रीरिषः॥६९॥

·[ ५૨<sup>]</sup>

मा नंस्तोके तनंये मा न आयुंषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः। वीरान्मा नो रुद्र भामितोऽवंधीर्ह्विष्मंन्तो नर्मसा विधेम ते॥७०॥

-[५३]

### ॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः ॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयङ् स्याम् पर्तयो रयीणाम्॥७१॥

-[५४]

# ॥इन्द्रप्रार्थनामन्त्रः॥

स्वस्तिदा विशस्पतिवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अभयङ्करः॥७२॥

**-**[44]

### ॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः ॥

त्र्यंम्बकं यजामहे सुगुन्धिं पृष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्। ७३॥

-[५६]

ये ते सहस्रम्युतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान् यज्ञस्यं मायया सर्वानवं यजामहे॥७४॥

**-**[५७]

मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥

**-**[46]

### ॥ पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृंतस्यैनंसोऽव्यजनंमिस् स्वाहाँ। मृनुष्यंकृतस्यैनंसो-ऽव्यजनंमिस् स्वाहाँ। पितृकृंतस्यैनंसोऽव्यजनंमिस् स्वाहाँ। आत्मकृंत्स्यैनंसोऽव्यजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-अन्यकृंत्स्यैनंसोऽव्यजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-ऽव्यजनमिस् स्वाहाँ। यिद्वा च नक्तं चैनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस् स्वाहाँ। यथ्स्वपन्तंश्च जाग्रंतश्चेनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस् स्वाहाँ। यथ्सुषुप्तंश्च जाग्रंतश्चेनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस् स्वाहाँ। यिद्वद्वाः स्श्चाविद्वाः स्थ्वेनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस् स्वाहाँ। यिद्वद्वाः स्थाविद्वाः स्थ्वेनंश्चकृम तस्यांव्यजनमिस् स्वाहाँ। एनस एनसोऽवयजनमिस् स्वाहा॥७६॥

-[५९]

# ॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः ॥

यद्वो देवाश्चकृम जिह्नयां गुरुमनंसो वा प्रयुंती देव हेर्डनम्। अरांवा यो नो अभि दुंच्छुनायते तस्मिन्तदेनो वसवो निधेतन् स्वाहाँ॥७७॥

-[६०]

# ॥कामोऽकार्षीत्-मन्युरकार्षीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षीं त्रमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कार्यिता नाहं कारियता एष ते काम कामाय स्वाहा॥७८॥

-[६१]

मन्युरकार्षीं न्नमो नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युंः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते मन्यो मन्यवे स्वाहा॥७९॥

-[६२]

### ॥ विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसा सिपष्टान् गन्धार मम चित्ते रमन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं धनमन्नपान सर्वेषा श्रिये स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पुष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रजाः सन्दर्दातु स्वाहा॥८०॥

-[६३]

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या वंशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यत्किश्चिद्द्रितं मीये स्वाहा। चोर्स्यान्नं नेवश्राद्धं ब्रह्महा गुरुतुल्पगः। गोस्तेयः सुरापानं भ्रूणहत्या तिला शान्ति । शमयंन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः सन्दर्दातु स्वाहा॥८१॥

-[६४]

प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजीं विपापमा भूयास् स्वाहाँ। वाङ्गनश्चक्षःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतो- बुद्धाकृतिःसङ्कल्पा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजी विपापमा भूयास् स्वाहाँ। त्वक्रममाश्सरुधिरमेदोमञ्जास्रायवो- उस्थीनि में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजी विपापमा भूयास् स्वाहाँ। शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्गशिश्ञोपस्थपायवो में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजी विपापमा भूयास् स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापयिता में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजी विपापमा भूयास् स्वाहाँ॥ अस्वान्तां ज्योतिंर्हं विरजी विपापमा भूयास् स्वाहाँ॥ अस्वान्तां ज्योतिंर्हं विरजी विपापमा भूयास् स्वाहाँ॥ अस्वान्तां स्वाहाँ॥ अस्वान्तां स्वान्तां स्वान्तां स्वान्तां विपापमा भूयास् स्वाहाँ॥ अस्वान्तां स्वान्तां स्वान्तां विपापमा भूयास् स्वाहाँ॥ अस्वान्तां स्वान्तां स्वान्ता

[६५]

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशा में शुद्धान्तां ज्योतिर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में शुद्धान्तां ज्योतिर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। भूयास् स्वाहाँ। अव्यक्तभावैरहङ्कारैज्योतिर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। अव्यक्तभावैरहङ्कारैज्योतिर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिर्हं

विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। अन्तरात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। परमात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। क्षुये स्वाहाँ। क्षुत्यिपासाय स्वाहाँ। विविद्ये स्वाहाँ। ऋग्विधानाय स्वाहाँ। कृषोत्काय स्वाहाँ। क्षुत्पिपासामेलं ज्येष्ठामुलक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्। अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे पाप्मान स्वाहा। अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहा॥८३॥

**-**[६६]

# ॥ वैश्वदेवमन्त्राः॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुवक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतक्षितंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्टकृते स्वाहाँ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अज्ञ्यः स्वाहाँ। ओषधिवनस्पतिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥

रक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्याँभ्यः स्वाहाँ। अवसानैभ्यः स्वाहाँ। अवसानेपितिभ्यः स्वाहाँ। सर्वभूतेभ्यः स्वाहाँ। कामाय स्वाहाँ। अन्तिरक्षाय स्वाहाँ। यदेजित् जगिति यच चेष्टिति नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्ये स्वाहाँ। अन्तिरक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षंत्रेभ्यः स्वाहाँ। इन्द्रांय स्वाहाँ। बृह्स्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। ब्रह्मणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमो रुद्रायं पशुपतंये स्वाहाँ॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नर्मः। मनुष्यँभ्यो हन्ताँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। प्रमेष्ठिने स्वाहाँ। यथा कूपः शतधारः सहस्रंधारो अक्षितः। एवा मे अस्तु धान्यश् सहस्रंधारमक्षितम्। धनंधान्यै स्वाहाँ। ये भूताः प्रचरन्ति दिवानक्तं बिलिमिच्छन्तों वितुदंस्य प्रेष्याः। तेभ्यो बिलि पृष्टिकामो हरामि मिय पृष्टिं पृष्टिंपतिर्दधातु स्वाहाँ॥८७॥

**-**[ミッ]

औं तद्घृह्म। ओं तद्घायुः। ओं तदात्मा। ओं तथ्मत्यम्। ओं तथ्सर्वम्। ओं तत्पुरोर्नमः॥ अन्तश्चरति भूतेषु गुहायां विश्वमूर्तिषु। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्कारस्त्वमिन्द्रस्त्व रहस्त्वं विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापितः। त्वं तंदाप आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्॥८८॥

-[६८]

# ॥ प्राणाहुतिमन्त्राः॥

श्रृद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रृद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रृद्धायां व्याने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमुद्दाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायारं समाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। ब्रह्मणि म आत्माऽमृत्त्वायं॥ अमृतोपस्तरंणमसि॥ श्रद्धायां प्राणे निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। प्राणाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायांमपाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। अपानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायां व्याने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। श्रद्धायांमुदाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायां समाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायारं समाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। समानाय स्वाहाँ॥ ब्रह्मणि म आत्माऽमृतत्वायं। अमृतापिधानमंसि॥८९॥

–[६९]

# ॥ भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रुद्धायां प्राणे निर्विषयामृत हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व। श्रुद्धायां मपाने निर्विषयामृत हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रुद्धायां व्याने निर्विषयामृत हुतम्। व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रुद्धायां स्वाने निर्विषयामृत हुतम्। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रुद्धायां समाने निर्विषयामृत हुतम्। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रुद्धाया समाने निर्विषयामृत हुतम्। समानमन्नेनाप्या-यस्व॥९०॥

# ॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं चं समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातिं विश्वभुक्॥॥९१॥

-[७१]

## ॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः॥

वाङ्कं आसन्। नसोः प्राणः। अक्ष्योश्चक्षुंः। कर्णयोः श्रोत्रम्। बाहुवोर्बलम्। ऊरुवोरोजः। अरिष्टा विश्वान्यङ्गानि तुनूः। तुनुवां मे सह नमस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः॥९२॥

**-**[७२]

# ॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवादमन्त्रः॥

वयंः सुपूर्णा उपं सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बुद्धान्।

[\$e]·

### ॥ हृदयालम्भनमन्त्रः॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्या-यस्व॥९३॥

**-**[り8]

## ॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

·[७५]

## ॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः॥

त्वमंग्रे द्युभिस्त्वमांशुशुक्षणिस्त्वमुद्धस्त्वमश्मंनस्परिं। त्वं वनैभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिंः॥९५॥

**-**[७६]

# ॥ अभीष्टयाचनामन्त्राः॥

शिवनें में सन्तिष्ठस्व स्योनेनं में सन्तिष्ठस्व सुभूतेनं में सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्चसेनं में सन्तिष्ठस्व यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम् उपं ते नम् उपं ते नमः॥९६॥

[しの]

### ॥परतत्त्व-निरूपणम्॥

सत्यं परं परं सत्यः सत्येन न संवर्गाश्चोकाच्यंवन्ते कदाचन स्ताः हि सत्यं तस्मांध्यत्ये रंमन्ते व तप् इति तपो नानशंनात्परं यद्धि परं तपस्तद्दर्धर्षं तद्दरांधर्षं तस्मात्तपंसि रमन्ते व दम् इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्माद्दमें रमन्ते व शम् इत्यरंण्ये मुनयस्तस्माच्छमें रमन्ते वानमिति सर्वाणि भूतानि प्रशःसन्ति दानान्नाति दुष्करं तस्माद्दाने रंमन्ते धर्म इति धर्मेण सर्वमिदं परिंगृहीतं धर्मान्नाति दुष्करं तस्माद्द्यमें रंमन्ते प्रमन्ते प्रमन्ते व प्रमाद्द्योष्ठाः प्रजायन्ते तस्माद्द्ययेष्ठाः प्रजायन्ते तस्माद्द्ययेष्ठाः प्रजानने रमन्तेऽग्नय् इत्याह् तस्माद्ग्रय् आधातव्या अग्निहोत्रमित्याह् तस्मादिग्नहोत्रे

रंमन्ते व्यज्ञ इति यज्ञो हि देवास्तस्माँ यज्ञे रंमन्ते व् मानसमिति विद्वा श्सरतस्माँ द्विद्वा श्सं एव मांनसे रंमन्ते न्यास इति ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परो हि ब्रह्मा तानि वा एतान्यवंराणि परा श्री न्यास एवात्यंरेचयुद्य एवं वेदें त्युपनिषत्॥९७॥

**-**[り0]

### ॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हार्रुणिः सुपूर्णेयः प्रजापंतिं पितरमुपंससार किं भंगवन्तः पंरमं वंदन्तीति तस्मै प्रोवाच ॰ सत्येन वायुरावांति सत्येनांऽऽदित्यो रोचते दिवि सत्यं वाचः प्रतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मां थ्सत्यं पेरमं वदेन्ति 。 तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्तपसर्षयः सुवरन्वविन्दं तपंसा सपत्नान् प्रणुंदामारांतीस्तपंसि सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपंः पर्मं वर्दन्ति 。 दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवरगच्छन्दमो भूतानां दुराधर्षं दमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माह्मः परमं वदन्ति ॰ शमेन शान्ताः शिवमाचरंन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविंन्दञ्छमों भूतानां दुराधर्षञ्छमे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माच्छमेः परमं वदन्ति ॰ दानं यज्ञानां वरूथं दक्षिणा लोके दातार ई सर्वभूतान्युंपजीवन्तिं दानेनारांतीरपांनुदन्त दानेनं द्विषन्तो मित्रा भेवन्ति दाने सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्दानं पंरमं

वदंन्ति ॰ धर्मो विश्वंस्य जगंतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसर्पन्ति धर्मेणं पापमंपनुदिति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्धर्मं पर्मं वदेन्ति 🌣 प्रजनेनं वै प्रतिष्ठा लोके साधु प्रजायाँस्तुन्तुं तन्वानः पितृणामनृणो भवंति तदेव तस्यानृणं तस्मौत् प्रजनेनं परमं वदेन्त्यग्नयो वै त्रयी विद्या ॰ देवयानः पन्थां गार्हपत्य ऋक्पृंथिवी रथन्तरमन्वाहार्यपर्चनं यर्जुरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः सामं सुवर्गो लोको बृहत्तस्मादुग्नीन्पर्मं वदन्त्यग्निहोत्र सायं प्रातर्गृहाणां निष्कृतिः स्विष्टं सुहुतं यज्ञकतूनां प्रायणं सुवर्गस्य लोकस्य ज्योतिस्तस्मादिग्निहोत्रं परमं वदन्ति । यज्ञ इति यज्ञेन हि देवा दिवंं गृता युज्ञेनासुंरानपांनुदन्त युज्ञेनं द्विषन्तो मित्रा भंवन्ति युज्ञे सुर्वं प्रतिष्ठितं तस्माँ द्यज्ञं पंरमं वदंन्ति ॰ मानसं वै प्रांजापत्यं पवित्रं मानसेन मनंसा साधु पंश्यति मानसा ऋषंयः प्रजा अंसृजन्त मानसे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मान्मानसं पेर्मं वदन्ति ॰ न्यास इत्याहंर्मनीषिणौं ब्रह्माणं ब्रह्मा विश्वः कत्मः स्वंयम्भुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति संवथ्सरोऽसावादित्यो य एष आंदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा ॰ याभिंरादित्यस्तपंति रश्मिभिस्ताभिः पर्जन्यो वर्षित पूर्जन्येनौषधिवनस्पृतयः प्रजायन्त ओषधिवनस्पतिभिरन्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं बलेन तपस्तपंसा श्रद्धा श्रद्धयां मेधा मेधयां मनीषा

मंनीषया मनो मनंसा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति इ स्मृत्या स्मार् स्मारेण विज्ञानं विज्ञानंनात्मानं वेदयति तस्मोदन्नं ददन्थ्सर्वाण्येतानि ददात्यन्नौत् प्राणा भवन्ति 。 भूतानां प्राणैर्मनो मनसश्च विज्ञानं विज्ञानांदानन्दो ब्रह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पश्चधा पश्चात्मा येन सर्विमिदं प्रोतं पृथिवी चान्तरिक्षं च द्यौश्च दिशंश्चावान्तरदिशाश्च स वै सर्विमिदं जगथ्म च भूत र स भव्यं जिज्ञासकूप्त ऋतजा रियष्ठा अद्धा सत्यो महंस्वान्तपसो वरिष्ठाद्भात्वा तमेवं मनसा हदा च भूयों न मृत्युमुपंयाहि विद्वान्तस्मौन्यासमेषां तपंसामतिरिक्तमाहुंर्वसुरण्वों विभूरंसि प्राणे त्वमसिं सन्धाता ब ब्रह्मन् त्वमिसं विश्वधृत्तं जोदास्त्वमंस्यग्निरंसि वर्चोदास्त्वमंसि सूर्यस्य द्युम्नोदास्त्वमंसि चन्द्रमंस उपयामगृहीतोऽसि ब्रह्मणै त्वा ॰ महस् ओमित्यात्मानं यु औतेतद्वे महोपनिषदं देवानां गृह्यं य एवं वेदं ब्रह्मणों महिमानंमाप्नोति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमित्युप्निषत्॥ ९८॥

[68]

#### ॥ ज्ञानयज्ञः ॥

तस्यैवं विदुषों यज्ञस्याऽऽत्मा यजंमानः श्रद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिलीमांनि बर्हिर्वेदः शिखा हृदयं यूपः काम् आज्यं मृन्यः पृशुस्तपोऽग्निर्दमः

शमयिता दक्षिणा वाग्घोतां प्राण उद्गाता चक्षुंरध्वर्युर्मनो ब्रह्मा ॰ श्रोत्रंमग्नीद्यावद्धियंते सा दीक्षा यदश्जांति तद्धविर्यत्पिबंति तदंस्य सोमपानं यद्रमंते तदुंपसदो यथ्सश्चरंत्युपविशंत्युत्तिष्ठंते च स प्रवर्गो यन्मुखं तदाहवनीयो या व्याहंतिराहुतिर्यदंस्य विज्ञानं तज्जुहोति यथ्सायं प्रातरंत्ति तथ्समिधं यत्प्रातर्मध्यं दिन सायं च तानि सर्वनानि ये अंहोरात्रे ते दंर्शपूर्णमासौ येंऽर्धमासाश्च मासाँश्च ते चांतुर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंशुबन्धा ये संवथ्सराश्चं परिवथ्सराश्च तेऽहंर्गणाः संववेदसं वा 。 एतथ्सत्रं यन्मरेणं तदेवभृथं एतद्वे जरामर्यमग्निहोत्र । स्त्रं य एवं विद्वानुंदगयंने प्रमीयंते देवानांमेव मंहिमानं गुत्वाऽऽदित्यस्य सायुंज्यं गच्छत्यथ ॰ यो देक्षिणे प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गत्वा चन्द्रमंसः सायुंज्य र सलोकतामाप्रोत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसौमहिमानौ ब्राह्मणो विद्वानभिजंयति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमाप्नोति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥९९॥

[८०]

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



# ॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

### ॥प्रथमः प्रश्नः॥

स्ंज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानमुप्कल्पंमानमुपंक्कृतं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आयथसम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः प्रभानाभान्थसम्भान्। ज्योतिष्माङ्क्तेजस्वानातपङ्क्तपंत्रभितपन्। रोचनो रोचमानः शोभनः शोभमानः कल्याणः। दर्शां दृष्टा दर्शता विश्वरूपा सुदर्शना। आप्यायंमाना प्यायंमाना प्यायं सूनृतेरां। आपूर्यमाणा पूर्यमाणा पूर्यन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रदाताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः॥१॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्थ्संवेशनः स॰शांन्तः शान्तः। आभवंन्प्रभवंन्थ्सम्भवन्थ्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुंतं विष्टुंत्॰ सङ्स्तुंतं कृत्याणं विश्वरूपम्। शुक्रमृमृतं तेज्स्वि तेजः समिंद्धम्। अरुणं भांनुमन्मरींचिमदिभृतपृत्तपंस्वत्। स्विता प्रंसिवता दीप्तो दीपयन्दीप्यंमानः। ज्वलंञ्चिता तपंन्वितपंन्थ्यन्तपन्। रोचनो रोचमानः शुम्भः शुम्भंमानो वामः। सुता सुन्वती प्रसुता सूयमांनाऽभिषूयमांणा। पीतीं प्रपा सम्पा तृप्तिंस्त्पयंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुंष्मती कामदुघाँ। अभिशास्ताऽनुंमन्ताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः। आसादयंत्रिषा- दयँन्थ्स् स्सादंनः सर्संत्रः स्त्रः। आभूर्विभूः प्रभूः शम्भूर्भृवंः। प्वित्रं पवियुष्यन्यूतो मेध्यः। यशो यशंस्वानायुर्मृतः। जीवो जीविष्यन्थ्स्वर्गो लोकः। सहंस्वान्थ्सहीयानोजंस्वान्थ्सहंमानः। जयंत्रभिजयंन्थ्सु-द्रविणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोदः प्रमोदः॥३॥

अरुणोऽरुणरंजाः पुण्डरीको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वमानोऽन्नंवान्नसंवानिरांवान्। सर्वोष्धः संम्भरो महंस्वान्। एजत्का जोवत्काः। क्षुष्ठकाः शिपिविष्टकाः। सरिस्रराः सुशेरंवः। अजिरासो गमिष्णवंः। इदानीं तदानीमेतर्हि क्षिप्रमंजिरम्। आशुर्निमेषः फणो द्रवंन्नतिद्रवन्। त्वर्ङ्स्त्वरंमाण आशुराशीयाञ्चवः। अग्निष्टोम उक्थ्योऽतिरात्रो द्विरात्रस्निरात्रश्चंतूरात्रः। अग्निर्ऋतुः सूर्य ऋतुश्चन्द्रमां ऋतुः। प्रजापंतिः संवथ्सरो महान्कः॥४॥

[8]

भूरिम्नें चे पृथिवीं च मां चे। त्री इश्चे लोकान्थ्संवथ्सरं चे।
प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद।
भुवो वायुं चान्तरिक्षं च मां चे। त्री इश्चे लोकान्थ्संवथ्सरं चे।
प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद।
स्वरादित्यं च दिवं च मां चे। त्री इश्चे लोकान्थ्संवथ्सरं चे।
प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा

सींद। भूर्भुवः स्वेश्चन्द्रमंसं च दिशंश्च मां चे। त्री श्चे लोकान्थ्संवथ्सरं चे। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्वद्भुवा सींद॥५॥

[२]

त्वमेव त्वां वैत्थ योऽसि सोऽसिं। त्वमेव त्वामंचैषीः। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। यत्ते अग्ने न्यूनं यदु तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरस-श्चिन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन माऽति च येनाऽऽयुरावृंक्षि। सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्यद्दावुदेति। तपंसो जातमिनंभृष्टमोर्जः। तत्ते ज्योतिरिष्टके। तेनं मे तप। तेनं मे ज्वल। तेनं मे दीदिहि। यावंद्वाः। यावदसांति सूर्यः। यावंदुतापि ब्रह्मं॥६॥

3]

संवथ्सरोऽसि परिवथ्सरोऽसि। इदाव्थ्सरोऽसीद्वथ्सरो-ऽसि। इद्वथ्सरोऽसि वथ्सरोऽसि। तस्यं ते वस्नन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। शुरदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपुरपृक्षाः पुरीषम्॥७॥

अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋषभोंऽसि स्वर्गो लोकः। यस्यौं दिशि महीयंसे। ततों नो महु आवंह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश् आवांहि। सर्वा दिशोऽनुविवांहि। सर्वा दिशोऽनुसंवांहि। चित्त्या चितिमापृण। अचित्त्या चितिमापृण। चिदंसि समुद्रयोंनिः॥८॥

इन्दुर्दक्षंः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंर्ण्युः। महान्थ्स्थस्थं ध्रुव आनिषंत्तः। नमस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। दिवं मे यच्छ। अह्य प्रसारय। रात्र्या समेच। रात्र्या प्रसारय। अह्य समेच। काम् प्रसारय। काम् समेच॥९॥

[8]

भूर्भृवः स्वंः। ओजो बलम्ँ। ब्रह्मं क्ष्र्त्रम्। यशों महत्। सत्यं तपो नामं। रूपमृगृतम्ँ। चक्षुः श्रोत्रम्ँ। मन् आयुः। विश्वं यशों मृहः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसिं। वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसिं। शं प्रजाभ्यो यजमानाय लोकम्। ऊर्जं पृष्टिं दद्दभ्यावंवृथ्स्व॥१०॥

·[५]

राज्ञीं विराज्ञीं। सम्माज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृह्स्पतिंः। विश्वें देवा भुवंनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशंसा स॰सृंजन्तु॥११॥ असंवे स्वाहा वसंवे स्वाहाँ। विभुंवे स्वाहा विवंस्वते स्वाहाँ। अभिभुवे स्वाहाऽधिपतये स्वाहाँ। दिवां पतंये स्वाहाऽ रहस्पत्याय स्वाहाँ। चाक्षुष्मत्याय स्वाहाँ। उयोतिष्मत्याय स्वाहाँ। राज्ञे स्वाहां विराज्ञे स्वाहाँ। सम्म्राज्ञे स्वाहाँ स्वराज्ञे स्वाहाँ। शूषांय स्वाहाँ सूर्याय स्वाहाँ। स्वराज्ञे स्वाहाँ। शूषांय स्वाहा सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहा ज्योतिषे स्वाहाँ। सुरसर्पाय स्वाहां कल्याणांय स्वाहाँ। अर्जुनाय स्वाहाँ॥१२॥

[り]

विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मृही न धाराऽत्यन्धीं अर्षित। अहिंर्ह जीणीमितिंसपीति त्वचम्। अत्यो न क्रीडंन्नसरृद्धृषा हिरेः। उपयामगृंहीतोऽसि मृत्यवै त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिंमृत्यवै त्वा। अपमृत्युमपृक्षुधम्। अपेतः शपर्थं जिह। अधा नो अग्र आवंह। रायस्पोष सहस्रिणम्॥१३॥

ये ते सहस्रंम्युतं पाशाः। मृत्यो मर्त्यायं हन्तेवे। तान् यज्ञस्यं माययाः। सर्वानवयजामहे। भृक्षाःऽस्यमृतभृक्षः। तस्यं ते मृत्युपीतस्यामृतंवतः। स्वगाकृतस्य मधुंमतः। उपहूत्स्योपहूतो भक्षयामि। मन्द्राऽभिभूतिः केतुर्यज्ञानां वाक्। असावेहिं॥१४॥

अन्थो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बुधिर आंऋन्दयितरपान।

असावेहिं। अहुस्तोस्त्वा चक्षुंः। असावेहिं। अपादाशो मर्नः। असावेहिं। कवे विप्रंचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥

सुह्स्तः सुंवासाः। शूषो नामाँस्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं तथा वेदं। असावेहिं। अग्निर्मे वाचि श्रितः। वाग्धृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। वायुर्में प्राणे श्रितः॥१६॥

प्राणो हदये। हदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। सूर्यो मे चक्षुंषि श्रितः। चक्षुर्हदये। हदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। चन्द्रमां मे मनसि श्रितः॥१७॥

मनो हदये। हदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। दिशों मे श्रोत्रें श्रिताः। श्रोत्र हदये। हदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आपों मे रेतिस श्रिताः॥१८॥

रेतो हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर्॰ हृदये। हृदयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ओष्धिवनस्पतयों मे लोमंसु श्रिताः॥१९॥

लोमांनि हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। इन्द्रों मे बलें श्रितः। बल् हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पूर्जन्यों मे मूर्धि श्रितः॥२०॥

मूर्धा हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृते। अमृतं ब्रह्मणि। ईशानो मे मृन्यौ श्रितः। मृन्युर्ह्दये। हृदयं मिये। अहम्मृते। अमृतं ब्रह्मणि। आत्मा मे आत्मिनि श्रितः॥२१॥ आत्मा हृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। पुनर्म आत्मा पुनरायुरागांत। पुनः प्राणः पुनराकृतमागांत। वैश्वानरो रिश्मिभवाविधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतंस्य गोपाः॥२२॥

[८]

प्रजापंतिर्देवानंसृजत। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्त। तान्व्यंद्यत्। यद्यद्यत्। तस्माद्विद्युत्। तमंवृश्चत्। यदवृश्चत्। तस्माद्वृष्टिः। तस्माद्यत्रैते देवते अभिप्राप्नुंतः। वि चं है्वास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सैषा मीमा साऽग्निहोत्र एव संम्पन्ना। अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञकृतुष्वितिं। होष्यंत्रप उपंस्पृशेत्। विद्युंदिस् विद्यं मे पाप्मान्मितिं। अथं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरिस् वृश्चं मे पाप्मान्मितिं। युक्ष्यमांणो वृष्ट्वा वां। वि चं है्वास्यैते देवतें पाप्मानं द्यतः॥२४॥

वृश्चतंश्च। अत्युर्हो हाऽऽर्रुणिः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्यु प्रजिघाय। परेहि। प्रक्षं दय्यौम्पातिं पृच्छ। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैषीत्। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। स होवाच वेदेतिं॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित इति। प्रोरंजुसीति। कस्तद्यत्प्रोरंजा

इतिं। एष वाव स प्रोरंजा इतिं होवाच। य एष तपंति। एषोंऽर्वाग्रंजा इतिं। स कस्मिन्त्वेष इतिं। सृत्य इतिं। किं तथ्सत्यमितिं। तप इतिं॥२६॥

कस्मिन्न तप् इति। बल् इति। किं तद्वल्मिति। प्राण इति। मा स्मं प्राणमितिपृच्छ् इति माऽऽचार्यौऽब्रवीदिति होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रक्षो दय्याँम्पातिः। यद्वै ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहम्तंत आचार्याच्छ्रेयाँ-भविष्यामि। यो मां सावित्रे समवादिष्टेति॥२७॥

तस्माँथ्सावित्रे न संवंदेत। स यो ह वै सांवित्रं विदुषां सावित्रे संवदंते। सहाँस्मिञ्छ्रियं दधाति। अनुं ह वा अस्मा असौ तपृञ्छ्रियं मन्यते। अन्वंस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वंस्मै तपो बर्ल मन्यते। अन्वंस्मै वर्ल प्राणं मन्यते। स यदाहं। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एष एव तत्॥२८॥

अथ यदाहै। प्रस्तुंतं विष्टुंत स्मृता सुन्वतीति। एष एव तत्। एष ह्यंव तान्यहांनि। एष रात्रयः। अथ यदाहै। चित्रः केतुर्दाता प्रदाता संविता प्रसिवताऽभिशास्ताऽनुंमन्तेति। एष एव तत्। एष ह्यंव तेऽह्यं मुहूर्ताः। एष रात्रैः॥२९॥

अथ् यदाहं। प्वित्रं पवियष्यन्थ्यहंस्वान्थ्सहीयानरुणीं-ऽरुणरंजा इतिं। एष एव तत्। एष ह्येव तेंंऽर्धमासाः। एष मासाः। अथ् यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्यों ऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्मर इति। एष एव तत्। एष ह्येव ते यंज्ञऋतवंः। एष ऋतवंः॥३०॥

पुष संवथ्सरः। अथ यदाहं। इदानीं तदानीमिति। पुष पुव तत्। पुष ह्यंव ते मुंहूर्तानां मुहूर्ताः। जनको ह वैदेहः। अहोरात्रेः समाजंगाम। त॰ होचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहत्त्पाप्मानमिति॥३१॥

सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिँ ह्लोके-ऽन्नं क्षीयत् इति। विजहिंद्ध वै पाप्मानंमिति। सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिँ ह्लोके ऽन्नं क्षीयते। य एवं वेदं। अहीना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥

स है हुर्सो हिर्ण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिर्मियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। हुर्सो हु वै हिर्ण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदे। देवभागो है श्रौतर्षः। सावित्रं विदां चेकार। तर ह वागर्दश्यमानाऽभ्युंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौतमो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होवाच। कैषा वागुसीतिं। अयमहरू सांवित्रः। देवानांमुत्तमो लोकः। गृह्यं महो बिभ्रदितिं। एतावंति ह गौतमः। युज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम इतिं॥३४॥ स होवाच। मा भैषीर्गीतम। जितो वै ते लोक इति। तस्माद्ये के चं सावित्रं विदुः। सर्वे ते जितलोकाः। स यो हु वै सावित्रस्याष्टाक्षरं पदक्ष श्रियाऽभिषिक्तं वेदं। श्रिया हैवाभिषिच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरें। सूर्य इति त्रीणि। आदित्य इति त्रीणि॥३५॥

पृतद्वै सांवित्रस्याष्टाक्षंरं पृदः श्रियाऽभिषिक्तम्। य पृवं वेदं। श्रिया हैवाभिषिच्यते। तदेतदृचाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरें पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वं निषेदुः। यस्तं न वेद् किमृचा कंरिष्यति। य इत्तद्विद्स्त इमे समांसत् इतिं। न ह वा पृतस्यूर्चा न यजुंषा न साम्नाऽर्थोंऽस्ति। यः सांवित्रं वेदं॥३६॥

तदेतत्पंरि यद्देवच्क्रम्। आर्द्रं पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एति। विजहिद्धश्वां भूतानि सम्पश्यंत्। आर्द्रो ह वै पिन्वंमानः। स्वर्गे लोक एति। विजहिन्वश्वां भूतानि सम्पश्यन्। य एवं वेदं। शूषो ह वै वार्ष्ण्यः। आदित्येनं समाजंगाम। तः होवाच। एहिं सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वर्ग्योऽग्निः पारियष्णुरमृताथ्सम्भूत इतिं। एष वाव स सांवित्रः। य एष तपंति। एहि मां विद्धि। इतिं हैवेनं तद्वाच॥३७॥

**-**[ ?.

इयं वाव स्रघौ। तस्यो अग्निरेव सार्घं मधुं। या एताः पूर्वपक्षापरपक्षयो रात्रयः। ता मधुकृतः। यान्यहानि। ते मंधुवृषाः। स यो ह् वा एता मंधुकृतंश्च मधुवृषा ॥ वेदं। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्यैष्टापूर्तं धंयन्ति। अथ यो न वेदं॥ ३८॥

न हाँस्यैता अग्नौ मधुं कुर्वन्ति। धयंन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह् वा अंहोरात्राणां नामधेयांनि वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एतावंनुवाकौ पूर्वपक्षस्यां-होरात्राणां नामधेयांनि। प्रस्तुंतं विष्टंत स्तुता सुन्वतीतिं। एतावंनुवाकावंपरपक्षस्यांहोरात्राणां नामधेयांनि। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं॥३९॥

यो हु वै मुंहूर्तानां नामधेयांनि वदं। न मुंहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। वित्रः केतुर्दाता प्रदाता संविता प्रंसिवताऽभिंशास्ताऽनुं-मन्तेतिं। एतेंऽनुवाका मुंहूर्तानां नामधेयांनि। न मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो हु वा अर्धमासानां च मासानां च नामधेयांनि वेदं। नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। प्वित्रं पविष्यस्थ्यहं-स्वान्थ्यहीयानरुणोंऽरुणरंजा इतिं। एतेंऽनुवाका अर्धमासानां च मासानां च नामधेयांनि॥४०॥

नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो हु वै यंज्ञऋतूनां चंतूनां चं संवथ्सरस्यं च नाम्धेयांनि वेदं। न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छित। अग्निष्टोम उक्थ्यौऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति। एतेऽनुवाका यंज्ञऋतुनां चर्तूनां चं संवथ्सरस्यं च नाम्ध्यांनि॥४१॥ न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छिति। य एवं वेदं। यो ह वै मृंहूर्तानां मृहूर्ताच्छिति। य एवं मृंहूर्ताचार्तिमार्च्छिति। इदानीं तदानीमिति। एते वै मृंहूर्तानां मृहूर्ताचार्तिमार्च्छित। इदानीं तदानीमिति। एते वै मृंहूर्तानां मृहूर्ताचार्तिमार्च्छित। इदानीं तदानीमिति। एते वै मृंहूर्तानां मृहूर्ताः। न मृंहूर्तानां मृहूर्ताचार्तिमार्च्छित। य एवं वेदं। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यान्नमिति। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यान्नमिति। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यान्नमिति। स एतेषांमेव संलोकताः सायुंज्यमश्रुते। अपं पुनर्मृत्युं जंयित। य एवं वेदं॥४२॥

[80]

कश्चिंद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयम्हम्स्मीतिं। कश्चिथ्स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अग्निम्ंग्धो हैव धूमतान्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अथ् यो हैवेतम्ग्नि॰ सांवित्रं वेदं। स एवास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहमस्मीतिं॥४३॥

स स्वं लोकं प्रतिप्रजानाति। एष उं वेवैनं तथ्सांवित्रः। स्वर्गं लोकम्भिवंहति। अहोरात्रैर्वा इदः स्युग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं व्रतमुपांगुरिति। तानिहानेवं विदुषंः। अमुष्मिं लोके शेव्धिं धंयन्ति। धीतः हैव स शेंवधिमनु परैति। अथ यो हैवैत्मग्नि॰ सांवित्रं वेदं॥४४॥

तस्यं हैवाहों रात्राणिं। अमुष्मिं छोके शेंवधिं न धंयन्ति। अधींत १ हैव स शेंवधिमनु परैति। भ्रद्धांजो ह त्रिभिरायुं भिं ब्रह्मचर्यमुवास। त १ ह जीणिं १ स्थविं र १ शयां नम्। इन्द्रं उपव्रज्यों वाच। भरंद्वाज। यत्ते चतुर्थमायुं द्वाम्। किमें नेन कुर्या इतिं। ब्रह्मचर्यमे वैनेन चरेयमितिं होवाच॥ ४५॥

त १ ह् त्रीन्गिरिरूपानविज्ञातानिव दर्श्यां चंकार। तेषा १ हैकैंकस्मान्मुष्टिनाऽऽदंदे। स होवाच। भरंद्वाजेत्यामञ्च्यं। वेदा वा एते। अनुन्ता वै वेदौं। एतद्वा एतैस्त्रिभिरायुंर्भिरन्वं-वोचथाः। अर्थत् इतंर्दनंनूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अयं वै संविवद्येति॥४६॥

तस्मै हैतम्ग्निश् सांवित्रमुंवाच। तश्स विंदित्वा। अमृतों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदं। एषो एव त्रयीं विद्या॥४७॥

यावंन्तः हु वै त्रय्या विद्ययां लोकं जयिति। तावंन्तं लोकं जयिति। य एवं वेदं। अग्नेर्वा एतानि नामधेयांनि। अग्नेरेव सार्युज्यः सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। वायोर्वा एतानि नाम्धेयांनि। वायोरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वा एतानिं नामधेयांनि॥४८॥

इन्द्रंस्यैव सायुंज्य सलोकर्तामाप्नोति। य एवं वेदं। बृह्स्पतेर्व एतानि नाम्धेयांनि। बृह्स्पतेरे्व सायुंज्य सलोकर्तामाप्नोति। य एवं वेदं। प्रजापतेर्वा एतानि नाम्धेयांनि। प्रजापतेरे्व सायुंज्य सलोकर्तामाप्नोति। य एवं वेदं। ब्रह्मणो वा एतानि नाम्धेयांनि। ब्रह्मण एव सायुंज्य सलोकर्तामाप्नोति। य एवं वेदं। स वा एषोंऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुरे्व। तस्याग्निर्मुखम्ं। असावांदित्यः शिरंः। स यदेते देवते अन्तरेण। तथ्सर्व सीव्यति। तस्मांथ्सावित्रः॥४९॥

[88]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके प्रथमः प्रश्नः समाप्तः॥१॥

## ॥द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकोऽसि स्वर्गोऽसि। अनुन्तौऽस्यपारोऽसि। अक्षितो-ऽस्यक्षय्योऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपद्ये कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१॥ तपोंऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयितृ। तत्त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥२॥

तेजोऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियृत्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥३॥

समुद्रोऽसि तेर्जिस श्रितः। अपां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥४॥

आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूत्रों विश्वंस्य जनियृत्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५॥

पृथिव्यंस्यपस् श्रिता। अग्नेः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतीं विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे कामदुघामक्षिताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥६॥

अग्निरंसि पृथिव्याः श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥७॥

अन्तरिक्षमस्यग्नौ श्रितम्। वायोः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयित्। तत्त्वोपंदधे कामदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥८॥

वायुरंस्यन्तिरंक्षे श्रितः। दिवः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१०॥

आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्ता विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघ्मिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥११॥

चन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१२॥

नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानिं। संवथ्सरस्यं प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भृतॄंणि विश्वंस्य जनियृतॄणिं। तानिं व उपंदधे काम्दुघान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१३॥

संव्थ्सरोऽसि नक्षंत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रंतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१४॥

ऋतर्वः स्थ संवथ्सरे श्रिताः। मासानां प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे कामृदुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्वद्भुवा सींद॥१५॥

मासाः स्थतंषुं श्रिताः। अर्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मास्। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनियतारंः। तान् व उपंदधे कामृदुघानिक्षंतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१६॥

अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयौः प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः स्भूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनियतारः। तान् व उपंदधे काम्दुघानिक्षंतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तया देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१७॥

अहोरात्रे स्थौंऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य प्रतिष्ठे। युवयोरिदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूत्रौं विश्वंस्य जनियत्रौं। ते वामुपंदधे काम्दुधे अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१८॥

पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्यां। अन्नादाः स्थान्नदुघो युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भृर्त्यो विश्वंस्य जनियुत्र्यः। ता व उपंदधे कामृदुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिरुस्वद्भुवा सीद॥१९॥

राडंसि बृह्ती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२०॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि। बलंमिस भ्राजोंऽसि। देवानां धामामृतम्। अमेर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२१॥

·[ \( \} \)

त्वमंग्ने रुद्रो असुंरो महो दिवः। त्वः शर्धो मार्रतं पृक्ष ईशिषे। त्वं वातैंररुणैर्यांसि शङ्ग्यः। त्वं पूषा विंधतः पांसि नु त्मनां। देवां देवेषुं श्रयध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु श्रयध्वम्। द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम्। तृतीयाश्चतुर्थेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्थाः पंश्रमेषुं श्रयध्वम्। पश्चमाः षष्ठेषुं श्रयध्वम्॥२२॥

षुष्ठाः संप्तमेषुं श्रयध्वम्। सप्तमा अष्टमेषुं श्रयध्वम्। अष्टमा

नंवमेषुं श्रयध्वम्। न्वमा दंशमेषुं श्रयध्वम्। दृश्मा एंकाद्शेषुं श्रयध्वम्। एकाद्शा द्वांद्शेषुं श्रयध्वम्। द्वाद्शास्त्रंयोद्शेषुं श्रयध्वम्। त्रयोद्शाश्चंतुर्दशेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्द्शाः पंश्चद्शेषुं श्रयध्वम्। पश्चदशाः षोंडशेषुं श्रयध्वम्॥२३॥

षोड्शाः संप्तद्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तद्शा अष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविद्शा विद्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविद्शा विद्शेषुं श्रयध्वम्। विद्शा एकविद्शेषुं श्रयध्वम्। एकविद्शोषुं श्रयध्वम्। एकविद्शोषुं श्रयध्वम्। प्रक्रविद्शोषुं श्रयध्वम्। द्याविद्शोषुं श्रयध्वम्। न्युर्विद्शाः पंश्रविद्शोषुं श्रयध्वम्। न्युर्विद्शाः पंश्रविद्शोषुं श्रयध्वम्॥२४॥

षृड्विष्शाः संप्तिविष्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तिविष्शाः अष्टाविष्शोषुं श्रयध्वम्। अष्टाविष्शाः एंकान्नित्र्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नित्र्शेषुं श्रयध्वम्। त्रिष्शाः एंकित्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। एकित्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। एकित्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। द्वात्रिष्शोषुं श्रयध्वम्। द्वात्रिष्शास्त्रंयस्त्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। देवास्त्रिरेकादशास्त्रिस्त्रंयस्त्रिष्शाः। उत्तरे भवत। उत्तरवर्त्मान् उत्तरसत्त्वानः। यत्कांम इदं जुहोमिं। तन्मे समृध्यताम्। वय् स्यांम् पत्तयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥२५॥

**—**[२]

अग्नांविष्णू स्जोषंसा। इमा वंधन्तु वां गिरंः। द्युम्नैर्वाजेंभिरागंतम्। राज्ञीं विराज्ञीं। सम्राज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृह्स्पतिः। विश्वें देवा भुवंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्यं। इदं मे प्रावंता वर्चः। वयः स्याम पत्यो रयीणाम्। भूभृवः स्वंः स्वाहां॥२६॥

₹]

अन्नप्तेऽन्नंस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणः। प्र प्रंदातारं तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्नें पृथिवीपते। सोमं वीरुधां पते। त्वष्टंः समिधां पते। विष्णंवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वर्रण धर्मणां पते॥२७॥

मुरुतो गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौंजसां पते। बृहंस्पते ब्रह्मणस्पते। आ रुचा रोंचेऽह इस्वयम्। रुचा रुचे रोचंमानः। अतीत्यादः स्वराभरेह। तस्मिन् योनौं प्रजनौ प्रजायेय। वय इस्याम् पत्रयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहां॥२८॥

[૪]

स्प्त तें अग्ने स्मिधंः स्प्त जिह्नाः। स्प्तर्षयः स्प्त धामं प्रियाणि। स्प्त होत्रां अनुविद्वान्। स्प्त योनीरापृणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्निः स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्ये दिशोंऽभिदासंति। दक्षिणा दिक्। इन्द्रों देवतां॥२९॥

इन्द्र स दिशां देवं देवतानामृच्छत्। यो मैतस्यै

दिशों ऽिमदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवतां। सोम् स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशों ऽिमदासंति। उदींची दिक्। मित्रावर्रुणो देवतां। मित्रावर्रुणो स दिशां देवौ देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशों ऽिमदासंति॥३०॥

ऊर्ध्वा दिक्। बृह्स्पतिंद्वतां। बृह्स्पति स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति। इयं दिक्। अदिंतिर्देवतां। अदिंति स दिशां देवीं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति। पुरुषो दिक्। पुरुषो मे कामान्थ्समंध्यतु॥ ३१॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आँक्रन्दयितरपान। असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोऽशीय। वय स्यांम् पत्रयो रयीणाम्। भूर्भवः स्वंः स्वाहाँ॥३२॥

[५]

यत्तेऽचितं यदं चितं ते अग्ने। यत्तं ऊनं यद् तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गंरसिश्चन्वन्तु। विश्वं ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चंतश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयांङ्श्चास्यग्ने। लोकं पृण च्छिद्रं पृण। अथों सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥

तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। ता अस्य सूर्ददोहसः। सोमई श्रीणन्ति पृश्नंयः। जन्मं देवानां विशंः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अग्ने देवा॰ इहाऽऽवंह। जज्ञानो वृक्तबंर्हिषे। असि होतां न ईड्यः। अगन्म महा मनसा यविष्ठम्॥३४॥

यो दीदाय सिमंद्ध स्वे दुंरोणे। चित्रभांनू रोदंसी अन्तरुवीं। स्वांहुतं विश्वतंः प्रत्यश्चम्। मेधाकारं विदर्थस्य प्रसाधंनम्। अग्निश् होतांरं परिभूतंमं मृतिम्। त्वामर्भस्य हुविषंः समानमित्। त्वां महो वृंणते नरो नान्यं त्वत्। मृनुष्वत्त्वा निधीमहि। मृनुष्वथ्समिधीमहि। अग्ने मनुष्वदंङ्गिरः॥३५॥

देवान्देवायते यंज। अग्निर्हि वाजिनं विशे। ददांति विश्वचंर्षणिः। अग्नी राये स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्। इष इंस्तोतृभ्य आभर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषंधीराविंवेश। वैश्वानुरः सहंसा पृष्टो अग्निः। स नो दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥

•[દ્

अयं वाव यः पवंते। सौंऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पवंते। तदंस्य शिरंः। अथ् यदंक्षिणा। स दक्षिणः पृक्षः। अथ् यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्। यदुदङ्ङ्ं। स उत्तरः पृक्षः॥३७॥

अथ यथ्संवाति। तदंस्य समर्श्वनं च प्रसारंणं च। अथों सम्पदेवास्य सा। स॰ हु वा अस्मै स कार्मः पद्यते। यत्कांमो यजते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। यो हु वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्। यो हृ वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेति। हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरम्। य एवं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेति। अथो यथां रुका उत्तंप्तो भाय्यात्॥३९॥

पुवमेव स तेर्जसा यशंसा। अस्मिङ्श्चं लोकेंऽमुष्मिंङ्श्च भाति। उरवों हु वै नामैते लोकाः। येऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैते वरीया॰सो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्त॰ हु वा एष क्ष्रय्यं लोकं जंयति। योऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैषोंऽनन्तमंपारमंक्षय्यं लोकं जंयति। यः परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥

अनुन्त १ हु वा अपारमेक्षय्यं लोकं जंयित। यौँऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उ चैनमेवं वेदे। अथो यथा रथे तिष्ठन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपेक्षते। एवमहोरात्रे प्रत्यपेक्षते। नास्याहोरात्रे लोकमाप्तुतः। यौँऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे॥४१॥ उशन् हु वै वांजश्रव्सः संविवेद्सं देदो। तस्यं हु नचिंकेता नामं पुत्र आंस। त॰ हं कुमार॰ सन्तम्। दक्षिणासु नीयमानासु श्रृद्धाऽऽविंवेश। स होवाच। तत् कस्मै मां दांस्यसीति। द्वितीयं तृतीयम्। त॰ हु परीत उवाच। मृत्यवें त्वा ददामीति। त॰ ह स्मोत्थितं वागुभिवंदति॥४२॥

गौतंम कुमारमिति। स होवाच। परेहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे वे त्वांऽदामिति। तं वे प्रवसंन्तं गुन्तासीतिं होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यदिं त्वा पृच्छेत्। कुमांर् कित रात्रीरवाथ्सीरितिं। तिस्र इति प्रतिंबूतात्। किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इति॥४३॥

प्रजां त इति। किं द्वितीयामिति। पृश्र्इस्त इति। किं तृतीयामिति। साधुकृत्यां त इति। तं वै प्रवसन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृह उंवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमांर कित रात्रीरवाथ्सीरिति। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥

किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इति। प्रजां त इति। किं द्वितीयामिति। प्रशू इति। किं तृतीयामिति। साधुकृत्यां त इति। नमस्ते अस्तु भगव इति होवाच। वरं वृणीष्वेति। पितरमेव जीवंत्रयानीति। द्वितीयं वृणीष्वेति॥४५॥

इष्टापूर्तयोर्मेऽक्षिंतिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतम्ग्रिं नांचिकेतम्वाच। ततो वै तस्येष्टापूर्ते ना क्षीयेते। नास्यें ष्टापूर्ते क्षीयते। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयंं वृणीष्वेतिं। पुनुर्मृत्योर्मेऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मै हैतमृग्निं नांचिकेतम्वाच। ततो वै सोऽपं पुनर्मृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिन्ते। य उं चैनमेवं वेदं। प्रजापंतिर्वे प्रजाकांम्स्तपोंऽतप्यत। स हिरण्यमुदांस्यत्। तद्ग्नौ प्रास्यत्। तदंस्मै नाच्छंदयत्। तिद्वितीयं प्रास्यत्। तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयं प्रास्यंत्॥४७॥

तदंस्मे नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हंद्य्येंऽग्नो वैंश्वान्रे प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किनेष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतंमम्। हृद्युजः हि। स वै तमेव नाविंन्दत्। यस्मै तां दक्षिणामनेष्यत्। ताः स्वायेव हस्तांय दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

दक्षांय त्वा दिक्षंणां प्रतिगृह्णामीति। सोऽदक्षत् दिक्षंणां प्रतिगृह्यं। दक्षेते हु व दिक्षंणां प्रतिगृह्यं। य एवं वेदं। एतर्द्धं स्म व तिद्विद्वा १ सो वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यां दिक्षंणां प्रतिगृह्णन्ति। उभयंन व्यं दिक्षेष्यामह एव दिक्षंणां प्रतिगृह्यंते। तेऽदक्षन्त् दिक्षंणां प्रतिगृह्यं। दक्षंते हु व दिक्षंणां प्रतिगृह्यं। य एवं वेदं। प्र हान्यं द्वीनाति॥४९॥

त॰ हैतमेके पशुबन्ध एवोत्तंरवेद्यां चिन्वते। उत्तर्वेदिसंम्मित एषों ऽग्निरिति वदंन्तः। तन्न तथां कुर्यात्। एतमृग्निं कामेन व्यंध्येत्। स एनं कामेन व्यंध्येत्। कामेन व्यंध्येत्। स्त्रे वा कामेन व्यंध्येत्। सौम्ये वावैनंमध्वरे चिन्वीत। यत्रं वा भूयिष्ठा आहुंतयो हूयेरन्। एतमृग्निं कामेन समर्ध्यति। स एनं कामेन समृद्धः॥५०॥

कामेन समर्धयित। अर्थ हैनं पुरर्षयः। उत्तर्वेद्यामेव स्त्रियंमचिन्वत। ततो वै तेऽविंन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकं जयित। योऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं वायुर्ऋद्धिकामः॥५१॥

यथान्युप्तमेवोपंदधे। ततो वै स एतामृद्धिंमार्भ्रोत्। यामिदं वायुर्ऋद्धः। एतामृद्धिंमृभ्रोति। यामिदं वायुर्ऋद्धः। योऽभ्रिं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थं हैनं गोब्लो वार्ष्णः पृशुकांमः। पाङ्कंमेव चिंक्ये। पश्चं पुरस्तांत्॥५२॥

पश्चं दक्षिणतः। पश्चं पृश्चात्। पश्चोंत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वै स सहस्रं पृश्नम्प्राप्नौत्। प्र सहस्रं पृश्नमाप्नोति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनं प्रजापंति ज्येष्ठमंकामो यशंस्कामः प्रजनंनकामः। त्रिवृतं मेव चिक्ये॥५३॥

स्प्त पुरस्तांत्। तिस्रो दंक्षिण्तः। स्प्त पृश्चात्। तिस्र उत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वे स प्र यशो ज्यैष्ठांमाप्नोत्। एतां प्रजांतिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्वै ज्यैष्ठ्यम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥

त्रिवृत्प्रजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठांमाप्नोति। एतां प्रजांतिं प्रजांयते। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे। अथं हैन्मिन्द्रो ज्यैष्ठांकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठांमगच्छत्॥५५॥

ज्यैष्ठमं गच्छति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचींरेवोपंदधे। ततो वै सोंऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥

तेज्स्वी यंशस्वी ब्रह्मवर्चसी स्यामिति। प्राङाहोतुर्धिष्णया-दुथ्संपेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोणीत्। तेजंसा यशंसा ब्रह्मवर्चसेनेति। तेज्रस्येव यंशस्वी ब्रह्मवर्चसी भंवति। अथ् यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्दंधीरन्। भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरिति। दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राची जुषाणा वेत्वाऽऽज्यंस्य स्वाहेति स्रुवेणोपहत्यांऽऽहवनीये जुहुयात्॥५७॥ भूयिष्ठमेवास्मै श्रद्दंधते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति। पुरीषमुप्धायं। चितिक्कुप्तिभिर्राभृष्यं। अग्निं प्रणीयोप-समाधायं। चतंस्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्। अग्नांविष्णू इतिं वसोर्धारांयाः। अन्नपत् इत्यंन्नहोमः। सप्त ते अग्ने स्मिधः सप्त जिह्वा इतिं विश्वप्रीः॥५८॥

[९]

यां प्रथमामिष्टंकामुप्दधांति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ छोके देवताः। तासा स् सायुंज्य स् सलोकतांमाप्रोति। यां द्वितीयांमुप्दधांति। अन्तिरक्षिलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तिरक्षिलोके देवताः। तासा स् सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। यां तृतीयांमुप्दधांति। अमुं तयां लोकमभिजंयति॥५९॥

अथो या अमुष्मिं होके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्रोति। अथो या अमूरितंरा अष्टादंश। य एवामी उरवंश्च वरीयार सश्च लोकाः। तानेव ताभिर्भिजंयति॥ कामचारों ह् वा अस्योरुषुं च वरीयः सु च लोकेषुं भवति। यो ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संव्थ्सरो वा अग्निर्माचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः॥६०॥

ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षा उत्तरः। श्रत्युच्छम्। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे शंतरुद्रीयम्। पूर्जन्यो वसोर्धारां। यथा

वै पूर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयंति। एवमेव स तस्य सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयति। योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदं। संवथ्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वस्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपुरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौंऽग्निरंग्निमयंः पुनर्णवः। अग्निमयों हु वै पुनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

**-**[१०]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीय काठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः॥२॥

## ॥ तृतीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अंङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं कामंमग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। कामो भूतस्य काम्स्तदग्रें। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। यज्ञो रायोऽयं यज्ञः। आपो भूद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यं भरिन्त् यो देह्यः। पूर्वं देवा अपंरेण प्राणापानौ। हृव्यवाहु इस्विष्टम्॥१॥ देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टि-त्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥२॥

तमाशाँऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्राँम्यसि। अहमु वा आशाँऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। आशायै चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्याऽऽशांऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सृत्या हु वा अस्याऽऽशां भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहाऽऽशाये स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगांयं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥३॥

तं कामों ऽब्रवीत्। प्रजांपते कामेंन् वै श्रांम्यसि। अहम् वै कामों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते स्त्यः कामों भविष्यति। अनुं स्व्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। कामांय च्रम्। अनुंमत्ये च्रम्। ततो वै तस्यं स्त्यः कामों ऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। स्त्यो ह् वा अस्य कामो भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यज्तेत। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहां कामाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥४॥

तं ब्रह्माँऽब्रवीत्। प्रजांपते ब्रह्मंणा वै श्राँम्यसि। अहमु वै ब्रह्माँऽस्मि। मां नु यर्जस्व। अथं ते ब्रह्मण्वान् यृज्ञो भंविष्यिति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। ब्रह्मंणे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वे तस्यं ब्रह्मण्वान् यृज्ञोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। ब्रह्मण्वान् हु वा अस्य यृज्ञो भंवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यर्जते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहा ब्रह्मणे स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगांये लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥५॥

तं युज्ञों ऽब्रवीत्। प्रजांपते युज्ञेन वै श्रांम्यसि। अहमु वै युज्ञों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यो युज्ञो भंविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामाय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। युज्ञायं चुरुम्। अर्नुमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यो युज्ञो ऽभवत्। अर्नु स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यो हु वा अस्य युज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहां यज्ञाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥६॥

तमापों ऽब्रुवन्। प्रजांपते ऽफ्सु वै सर्वे कामाः श्रिताः। वयमु वा आपः स्मः। अस्मान्नु यंजस्व। अथ् त्विय् सर्वे कामाः श्रियिष्यन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम् ग्रये कामांय पुरोडाशं मृष्टाकंपालं निरंवपत्। अन्त्र्यश्चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्मिन्थ्सर्वे कामां अश्रयन्त। अनुं स्वर्गं लोकमं विन्दत्। सर्वे ह् वा अस्मिन्कामाः श्रयन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यज्ञते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहा ऽग्न्यः स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहा ऽग्नये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहा ऽग्नये स्वाहाँ स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ स्वर्गि॥ ७॥

तम् ग्निर्बिल्मानं ब्रवीत्। प्रजांपते ऽग्नये वै बंलिमते सर्वाणि भूतानि बुलिश् हं रन्ति। अहमु वा अग्निर्बिल्मानं स्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सर्वाणि भूतानि बुलिश् हं रिष्यन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम् ग्नये कामांय पुरोडाशं मुष्टाकं पालं निरंवपत्। अग्नये बिल्मते चुरुम्।

अनुंमत्यै च्रुम्। ततो वै तस्मै सर्वाणि भूतानि बुलिमंहरन्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि हु वा अस्मै भूतानि बुलि॰ हंरन्ति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहाऽग्नये बिल्मते स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥८॥

तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वर्गं वै लोकमनुंविविथ्ससि।
अहमु वा अनुंवित्तिरस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्याऽनुंवित्तिर्भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अनुंवित्त्ये च्रुम्। अनुंमत्ये च्रुम्। ततो वै तस्यं सत्याऽनुंवित्तिरभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्यानुंवित्तिर्भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यज्ञते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽनुंवित्त्ये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रये स्विष्टकृते स्वाहेति॥९॥

ता वा एताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारेः। दिवःश्येनयोऽनुंवित्तयो नामं। आशाँ प्रथमाः रेक्षति। कामौं द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। यज्ञश्चंतुर्थीम्। आपेः पश्चमीम्। अग्निर्बलिमान्थ्वष्ठीम्। अनुंवित्तिः सप्तमीम्। अनुं ह् वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोके भवति। य एताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदे। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीव्रां दद्यात्कुर्सं चं। स्त्रियैं चाऽऽभारर समृद्धौ॥१०॥

[२]

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तपसर्षयः स्वंरन्वंविन्दन्। तपंसा सपत्नान्त्रणुंदामारातीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति। प्रथमजं देव हिवषां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपो ह यक्षं प्रथम सम्बंभूव। श्रद्धया देवो देवत्वमंश्रुते। श्रद्धा प्रतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥

सा नों जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। कामंवथ्साऽमृतं दुहांना। श्रृद्धा देवी प्रथम्जा ऋतस्यं। विश्वस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ता श्रृद्धा श्रृह्वा सहिषां यजामहे। सा नों लोकम्मृतं दधातु। ईशांना देवी भुवंनस्याधिपत्नी। आगाँथ्सत्य हिविरिदं जुषाणम्। यस्माँद्देवा जिज्ञिरे भुवंनं च विश्वें। तस्मै विधेम हिवषां घृतेनं॥१२॥

यथां देवैः संधमादं मदेम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तरिक्षम्। यस्मौद्देवा जंजिरे भुवनं च सर्वै। तथ्सत्यमर्चदुपं यज्ञं न आगौत्। ब्रह्माऽऽहुंतीरुपमोदंमानम्। मनसो वशे सर्विमिदं बंभूव। नान्यस्य मनो वश्मनिवंयाय। भीष्मो हि देवः सहंसुः सहीयान्। स नो जुषाण उपं यज्ञमागात्। आकूतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥

सङ्कल्पर्जूतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजानिम्ह वर्धयन्तः। उपहुवेंऽस्य सुमृतौ स्याम। चरणं प्वित्रं वितंतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रंण शुद्धेनं पूताः। अति पाप्मान्मरातिं तरेम। लोकस्य द्वारंमिर्चिमत्पवित्रम्। ज्योतिष्मद्भाज्ञेमानं महंस्वत्। अमृतंस्य धारां बहुधा दोहंमानम्। चरणं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिन्वदंनुमते त्वम्। हृव्यवाह्ङ् स्विष्टम्॥१४॥

[३]

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेति। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमिष्टिभि-रन्वैच्छत्। तिमिष्टिभिरन्वंविन्दत्। तिदिष्टीनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥१५॥

तं तपौंऽब्रवीत्। प्रजांपते तपंसा वै श्राम्यसि। अहमु वै तपौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यं तपों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालुं निरंवपत्। तपंसे चुरुम्। अनुमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं तपोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सृत्यः हु वा अस्य तपों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहां। अनुमत्यै स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१६॥

तः श्रद्धाऽब्रंवीत्। प्रजापते श्रद्धया वै श्रांम्यसि। अहमु वै श्रद्धाऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्या श्रद्धा भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाश्रेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। श्रद्धायें चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सत्या श्रद्धाऽभंवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्य श्रद्धा भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां श्रद्धाये स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥१७॥

त १ स्त्यमंब्रवीत्। प्रजांपते स्त्येन् वै श्रांम्यसि। अहमु वे स्त्यमंस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थं ते स्त्य १ स्त्यं भंविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमां ग्रेयमृष्टाकंपालुं निरंवपत्। स्त्यायं च्रुम्। अनुंमत्ये च्रुम्। ततो वे तस्यं स्त्य १ स्त्यमंभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्य १ हु वा अस्य स्त्यं भंवति। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्य १ हु वा अस्य स्त्यं भंवति। अनुं स्वृगं

लोकं विन्दिति। य एतेनं हृविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां सृत्याय स्वाहां। अनुमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१८॥

तं मनोंऽब्रवीत्। प्रजांपते मनंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै मनोंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्यं मनों भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमांग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। मनंसे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं मनोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्य ह वा अंस्य मनों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये स्वाहा मनंसे स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगीयं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥१९॥

तं चरणमब्रवीत्। प्रजांपते चरणेन वै श्रांम्यसि। अहमु वै चरणमस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यं चरणं भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। चरणाय चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यं चरणमभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्य ह् वा अंस्य चरणं भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेन ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा चरणाय स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंत्ये स्वाहाँ।

स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयं स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥२०॥

ता वा एताः पश्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुंवित्तयो नामं। तपः प्रथमाः रक्षिति। श्रद्धा द्वितीयांम्। सत्यं तृतीयांम्। मनश्चतुर्थीम्। चरणं पश्चमीम्। अनुं हु वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोके भंवित। य एताभिरिष्टिभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीवरां दंद्यात्कर्सं चं। स्नियै चाऽऽभारः समृंद्धौ॥२१॥

8

ब्रह्म वै चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिंयुज्ञो निर्मितः। नैन १ श्रप्तम्। नाभिचंरितमागंच्छति। य एवं वेदं। यो ह् वै चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वं वेदं। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशंः कल्पन्ते। वाचस्पतिर्होता दशंहोतृणाम्। पृथिवी होता चतुंर्होतृणाम्॥२२॥

अग्निर्होता पश्चेहोतॄणाम्। वाग्घोता षड्ढोतॄणाम्। महाहंविर्होतां सप्तहोतॄणाम्। एतद्वे चतुर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। अथो पश्चेहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशंः कल्पन्ते। य एवं वेदे। एषा वै संविवद्या। एतद्वेषजम्। एषा पङ्किः स्वर्गस्यं लोकस्यांश्वसाऽयंनिः स्रुतिः॥२३॥

पुतान् योऽध्यैत्यछंदिर्दर्शे यावंत्तरसम्। स्वंरेति। अनुपुब्रवः सर्वमायुंरेति। विन्दतें प्रजाम्। रायस्पोषं गौपत्यम्। ब्रह्मवर्चसी भंवति। एतान् योऽध्यैतिं। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितृन्। एतान् वा अंरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥

पुतैरंधिवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंर्ययौ। पुतान्योऽध्यैतिं। अधिवादं जंयति। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंरेति। पुतैर्ग्निं चिन्वीत स्वर्गकांमः। पुतैरायुंष्कामः। प्रजापशुकांमो वा॥२५॥

पुरस्ताद्दशंहोतार्मुदंश्चमुपंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यजुंषी पत्न्यौ च। दक्षिणतः प्राश्चं चतुंर्होतारम्। पृश्चादुदंश्चं पश्चंहोतारम्। उत्तर्तः प्राश्चन् षङ्कांतारम्। उपरिष्टात्प्राश्चन्ं सप्तहोतारम्। हृदंयं यजून्ंषि पत्न्यश्च। यथावकाशं ग्रहान्ं। यथावकाशं प्रतिग्रहाँ ह्यों कं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥

सदेवम्गिं चिनुते। रथसंम्मितश्चेत्रव्यः। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पृक्षः संम्मितश्चेत्व्यः। एतावान् वै रथः। यावंत्पक्षः। रथसंम्मितमेव चिनुते। इममेव लोकं पंशुबन्धेनाभिजंयति। अथो अग्निष्टोमेनं॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्येन। स्वरितरात्रेणं। सर्वां ह्योकानंहीनेनं। अथो स्त्रेणं। वरो दक्षिणा। वरेणैव वर स्पृणोति। आत्मा हि वरंः। एकंविस्शतिर्दक्षिणा ददाति। एकविस्शो वा इतः स्वर्गो लोकः। प्र स्वर्गं लोकमाप्रोति॥२८॥

असार्वादित्य एंकविश्वाः। अमुमेवाऽऽदित्यमाँप्रोति। शृतं दर्वाति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सहस्रं ददाति। सहस्रंसम्मितः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। अन्विष्ट्कं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि वयारंसि॥२९॥

सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धै। यदि न विन्देतं। मन्थानेतावतो दंद्यादोदनान् वाँ। अश्रुते तं कामम्। यस्मै कामायाग्निश्चीयतें। पृष्ठौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि सर्वाणि वया रेसि। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धै॥३०॥

हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वर्गं लोकमेंति। वासों ददाति। तेनाऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि देवाः। स संत्यमृग्निं चिन्ते। तदेतत्पंशुबन्धे ब्राह्मणं ब्रूयात्। नेतरेषु य्ज्ञेषुं। यो ह् वै चतुरहोतॄननुसव्नं तंपियत्व्यान् वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। उपैन सोमपीथो नमिति। पृते वै चतुरहोतारोऽनुसवनं तर्पयित्व्याः। ये ब्राह्मणा बंहुविदः। तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयेत्। दुरिष्ट स्यात्। अग्निमंस्य वृश्जीरन्। तेभ्यो यथाश्रद्धं दंद्यात्। स्विष्टमेवैतित्र्र्णयते। नास्याग्निं वृंञ्जते॥३२॥

हिर्ण्येष्टको भेवति। यावंदुत्तममंङ्गुलिकाण्डं यंज्ञपुरुषा सिम्नितम्। तेजो हिर्ण्यम्। यदि हिर्ण्यं न विन्देत्। शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजो घृतम्। सर्तेजसमेवाग्निं चिनुते। अग्निं चित्वा सौत्रामण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वाँ। वीर्येण वा एष व्यृध्यते। याँऽग्निं चिनुते॥३३॥ यावंदेव वीर्यम्। तदिस्मन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतांनाश् सायुंज्यश् सार्थिताश् समानलोकतांमाप्नोति। य एतम्ग्निं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। एतदेव सावित्रे ब्राह्मणम्। अथो नाचिकते॥३४॥

[५]

यचामृतं यच मर्त्यम्। यच प्राणिति यच न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृद्घां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मंणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। सर्वाः स्त्रियः सर्वांन्पुर्सः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वास्ताः। यावंन्तः पार्सवो भूमैः॥३५॥

सङ्ख्यांता देवमाययां। सर्वास्ताः। यावंन्त ऊषाः पशूनाम्। पृथिव्यां पृष्टिरिह्ताः। सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः। अपस्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शर्करा धृत्यै। अस्यां पृथिव्यामधि॥३६॥

सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मांनोऽस्यां पृंथिव्याम्। प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः। यावंतीर्वीरुधः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः॥३७॥

यावंन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामिषं। सर्वास्ताः। यावंन्तो ग्राम्याः पृशवः सर्वे। आरुण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपादश्चतुंष्पादः। अपादं उदरस्पिणंः। सर्वास्ताः। यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥

देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंत्कृष्णायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। यावं छोहायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्व सीस् सर्वं त्रपुं। देवत्रा यर्च मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्वर् हिरंण्यर रज्तम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वर् सुर्वर्ण्र् हिरंतम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं काम्दुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्बद्धवा सीद॥४०॥

 $[oldsymbol{arepsilon}]$ 

सर्वा दिशों दिक्षु। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुर्घा दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्बद्धवा सींद। अन्तरिक्षं च केवंलम्। यच्चास्मिन्नंन्त्राहितम्। सर्वास्ताः। आन्तरिक्ष्यंश्च याः प्रजाः॥४१॥

गुन्धर्वापस्रसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सिललान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सिल्लान्। स्थावराः प्रोष्याश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धुनिष् सर्वान्ध्वष्टसान्। हिमो यर्च शीयते॥४२॥

सर्वास्ताः। सर्वान्मरींचीन् वितंतान्। नीहारो यर्च शीयतैं। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वान्थ्स्तनियृत्न्। ह्रादुनीर्यर्चं शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः स्रितंः। सर्वमप्सुच्रं च् यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैश्-तीरुत प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तप्स्तेजं आकाशम्। यचांऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वया रेसि सर्वाणि॥४४॥

अन्तिरिक्षचरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्निश् सूर्यं चन्द्रम्। मित्रं वर्रुणं भगम्। सर्वास्ताः। सृत्यः श्रृद्धां तपो दमम्। नामं रूपं चे भूतानाम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥४५॥

·[り]

सर्वान्दिव् सर्वान्देवान्दिव। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृद्घां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्बद्धुवा सींद। यावंतीस्तारंकाः सर्वाः। वितंता रोचने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजूर्रषि सामानि॥४६॥

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चे। सर्पदेवजनाश्च ये। सर्वास्ताः। ये चे लोका ये चोलोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच् ब्रह्म यचौब्रह्म। अन्तर्बुह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥

सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासाः श्रृ केवंलान्। सर्वास्ताः। सर्वानृतून्थ्सर्वान्मासान्। संवथ्सरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भूत्र सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुषां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥४८॥

[८]

ऋचां प्राचीं मह्ती दिगुंच्यते। दक्षिणामाहुर्यजुंषामपाराम्। अथविणामङ्गिरसां प्रतीचीं। साम्नामुदींची मह्ती दिगुंच्यते। ऋग्भिः पूर्वाह्णे दिवि देव ईयते। युजुर्वेदे तिष्ठिति मध्ये अहं। साम्बेदेनांऽस्तम्ये महीयते। वेदैरशूंन्यस्त्रिभिरेति सूर्यः। ऋग्भ्यो जाता सर्विशो मूर्तिमाहुः। सर्वा गतिर्याजुषी हैव शर्श्वत्॥४९॥

सर्वं तेजः सामरूप्य हं शश्वत्। सर्व हेदं ब्रह्मणा हैव सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं वैश्यं वर्णमाहुः। युजुर्वेदं क्षंत्रियस्यां ऽऽहुर्योनिम्। सामवेदो ब्राह्मणानां प्रसूतिः। पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूचुः। आदर्शमृग्निं चिन्वानाः। पूर्वे विश्वसृजोऽमृताः। शृतं वर्रषसहस्राणि। दीक्षिताः सत्रमांसत॥५०॥

तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवथ्स्वयम्। स्त्य हि होतैषामासीत्। यिद्वेश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवथ्सरान्। भूत हं प्रस्तोतैषामासीत्। भविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अध्वर्युरंभवत्। इद सर्व स् सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतंः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्त्वा उपगातारंः। सदस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासांश्व। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्वरंसद्भक्षणस्तेजः। अच्छावाकोऽभवद्यशंः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसीत्। यद्विश्वसृज् आसंत॥५२॥

ऊर्ग्राजान्मुदंवहत्। ध्रुवृगोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यंष्टौ-

द्राव्णणंः। यद्विश्वसृज् आसंत। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्ञित्विषिः। आग्नींद्धाद्विदुषीं सृत्यम्। श्रद्धा हैवायंज्ञथ्स्वयम्। इरा पत्नीं विश्वसृजांम्। आकूंतिरिपन-हृविः॥५३॥

इध्म १ ह क्षुचैंभ्य उग्ने। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वागेषा १ सुब्रह्मण्याऽऽसींत्। छुन्दोयोगान् विजानती। कुल्पृतृत्राणिं तन्वानाऽहंः। सृङ्स्थाश्चं सर्वशः। अहोरात्रे पंशुपाल्यौ। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्नो विशां पतिः॥५४॥

विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। सहस्रंसम् प्रस्ंतेन् यन्तंः। ततो ह जज्ञे भुवंनस्य गोपाः। हिर्ण्मयः शकुनिर्ब्रह्म नामं। येन सूर्यस्तपंति तेजंसेद्धः। पिता पुत्रेणं पितृमान् योनियोनो। नावंदविन्मनुते तं बृहन्तम्। सूर्वानुभुमात्मान र् सम्पराये। एष नित्यो मंहिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्॥५५॥

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पश्चंपश्चाशतिस्त्रवृतः संवथ्सराः। पश्चंपश्चाशतिः पश्चंपश्चाशतिः पश्चंपश्चाशतिः पश्चंपश्चाशतिः पश्चंपश्चाशतिः पश्चंपश्चाशतिः पश्चंपश्चाशतिः पश्चंपश्चाशतिः पश्चंपश्चाशति एकविश्वाः। विश्वसृजार्थः सहस्रंसंवथ्सरम्। एतेन् वे विश्वसृजं इदं विश्वंमसृजन्त। यद्विश्वमसृजन्त। तस्मौद्विश्वसृजः। विश्वंमेनानन् प्रजांयते। ब्रह्मणः सायुंज्यश्

सलोकतां यन्ति। एतासांमेव देवतांनाः सायुंज्यम्। सार्ष्टिताः समानलोकतां यन्ति। य एतदुंप्यन्तिं। ये चैनुत्प्राहुः। येभ्यंश्चेनुत्प्राहुः॥५६॥ ॐ॥

**-**[3]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः समाप्तः॥३॥ ॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हरिः ॐ॥